मुकम्मल व मुदल्लल

मसाइले हज-व-उमरा

कुरआन व हदीस की रौशनी में

हज़रत मुफ़्तियाने किराम दारूलउलूम देवबंद की तस्दीक़ व ताईद करदा
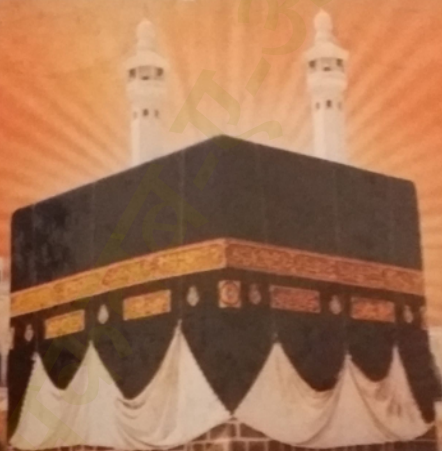
मुअल्लिफ़

मौलाना क़ारी मुहम्मद रफ़अत क़ासमी

(मुदर्रिस दारूलउलूम देवबंद)

मुकम्मल व मुदल्लल

मसाइले हज-व-उमरा

(मअ़ मसाइले हज्जे बदल व मसाइले ख़्वातीन)

कुरआन व हदीस की रोशनी में

हज़रात मुफ़्तियाने किराम दारुलउलूम देवबंद की तस्दीक़ के साथ

मुअल्लिफ़

मौलाना कारी मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी
(मुदर्रिस दारुलउलूम देवबंद)

लिप्यान्तर:
मो० मोकर्रम ज़हीर

नाशिर

अन्जुम बुक डिपो
मटिया महल, जामा मस्जिद (दिल्ली)

किताब का नामः... मुकम्मल व मुदल्लल
मसाइले हज-व-उम्रा

मुसन्निफ़ः.......... मौलाना क़ारी मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी

लिप्यान्तरः......... मो० मोकर्रम ज़हीर

ज़ेरे निगरानीः...... शकील अन्जुम देहलवी

तादादः........... 1100

Masaile Haj-O-Umra

By:Maulana Qari Md. Rafat Qasmi

Published by

Anjum Book Depot

466, Matia Mahal, Jama Masjid, Delhi - 6

फ़ेहरिस्ते मज़ामीन मसाइले हज-व-उम्रा

उन्वानात सफ़्हात

इंतिसाब

मैं अपनी इस काविश "मुकम्मल व मुदल्लल मसाइले हज व उम्रा" व हज्जे बदल को रूये ज़मीन पर सब से मुक़द्दस, सब से ज़्यादा बाबरकत और सब से ज़्यादा क़ाबिले एहतेराम इमारत जिसको अल्लाह तआला ने "अपना घर" क़रार दिया है, जो तौहीद और नमाज़ का मरकज़ है और रूये ज़मीन पर सब से पहली इमारत है, जिसको अल्लाह तआला की इबादत के लिए तामीर किया गया है और जो हिदायत व बरकत का सर चश्मा है और सारी इंसानियत का मरजअ़ और पनाहगाह है।

और तमाम हुज्जाजे किराम जो सिर्फ़ अल्लाह तआला के लिए ही हज व उम्रा करते हैं उनकी तरफ़ मनसूब करने की सआ़दत हासिल कर रहा हूं।

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

❖❖❖

अर्ज़े मुअल्लिफ़

الحمد لله رب العالمين، والصلوٰة والسلام على خاتم الانبياء و سيد المرسلين، محمد و على آله و اصحابه وازواجه اجمعين.

अम्मा बाद! अल्लाह तआला का फ़ज़्ल व करम है कि मसाइल के इंतिख़ाब का जो सिलसिला शुरू किया गया था उन्ही मुन्तख़बा मसाइल की अट्ठारहवीं किताब- "मसाइले हज व उम्रा व हज्जे बदल" पेश है जिसमें फ़ज़ाइले हज व आदाबे हज, व हज्जे बदल के आ़म फ़हम व ज़रूरी मसाइल कि हज किस किस पर फ़र्ज़ है, क्या क्या शराइत हैं और जाइज़ माल के अलावा हराम कमाई से फ़रीज़ए हज अदा करना दुरुस्त है या नहीं?

नीज़ सरकारी पैसे से हज करना, क़ानून की ख़िलाफ़ वरज़ी करते हुए हज वग़ैरा करना, हज के फ़राइज़ व वाजिबात और मुतअ़ल्लिक़ा मसाइल, मर्दों, औरतों, बच्चों, मजनूं, मरीज़ और माज़ूरों के मसाइल।

मवाक़ीत क्या हैं और कितने हैं, नीयत, एहराम, तवाफ़े क़ुदूम, तवाफ़े ज़ियारत, तवाफ़े वदाअ़, तवाफ़े दोगाना, मिना, मुज़दलिफ़ा, अ़रफ़ात, जमरात, रमी, क़ुर्बानी, ज़मज़म, सअ़ी, हल्क़, क़स्र हरमैन शरीफ़ैन और रौज़ए अतहर मुक़द्दसा से मुतअ़ल्लिक़ तक़रीबन तमाम ज़रूरी मसाइल हैं। "الحمد لله على ذالك"

अल्लाह तआला इस किताब को भी साबिक़ा कुतुब की तरह

क़बूले आम व ख़्वास फ़रमा कर बंदा के लिए ज़ादे आख़िरत बनाए और आइंदा भी दीनी ख़िदमत की तौफ़ीक़ इनायत फ़रमाए।

"ربنا تقبل منا انک انت السمیع العلیم، آمین"

हज व उम्रा करने वालों से दुआओं का तालिब!

मुहम्मद रफ़अत क़ासमी
ख़ादिमुत्तदरीस, दारुलउलूम देवबंद

तक़रीज़

फ़क़ीहुन्नफ़्स हज़रत मौलाना मुफ़्ती सईद अहमद साहब मद्दा ज़िल्लहू पालनपूरी मुहद्दिसे कबीर दारुलउलूम देवबंद।

بسم الله الرحمٰن الرحيم

نحمده ونصلى على رسوله الكريم

हज: इस्लाम के अरकाने अरबआ में शामिल है और हज की एक ख़ुसूसियत ये है कि अगर हज्जे मक़बूल नसीब हो जाए तो आदमी गुमराही और इरतिदाद से महफ़ूज़ हो जाता है। हदीस में है-

"जो शख़्स ज़ाद व राहिला का मालिक हो जाए, जो उसे बैतुल्लाह तक पहुंचाए फिर भी वह हज न करे तो वह यहूदी और ईसाई हो कर मरे तो हक़ तआला उससे बेनियाज़ है।"

(रवाहु तिर्मिज़ी)

इस हदीस में इशारा है कि इस्तिताअ़त के बावजूद हज न करना गुमराही या इरतिदाद का बाइस हो सकता है। और मुत्तफ़क़ अलैहि रिवायत में है कि हज्जे मबरूर (मक़बूल) की जज़ा जन्नत ही है और जन्नत मोमिन के लिए है। पस इस हदीस में इशारा है कि अगर हज्जे मक़बूल नसीब हो जाए तो ईमान पर मुहर लग जाती है।

मगर ये बात उस वक़्त हासिल हो सकती है जबकि हज्जे मक़बूल नसीब हो। और हज्जे मक़बूल की ज़ाहिरी अलामत ये है

कि वह मसाइल की पूरी रिआयत के साथ अदा किया हो, माले हलाल से किया हो, गुनहों से बचते हुए किया हो, फ़राइज़, वाजिबात, मुस्तहब्बात व आदाब की रिआयत मलहूज़ रही हो, मकरूहात व मुफ़सिदात से पूरी तरह इजतिनाब किया हो, पस उसके लिए मसाइले हज की मारफ़त ज़रूरी है।

और चूंकि आम तौर पर हज ज़िन्दगी में एक ही मरतबा किया जाता है इसलिए भी हज में जाने से पहले मसाइल का इस्तेहज़ार ज़रूरी है। मुझे ख़ुशी है कि बिरादर मुकर्रम जनाब मौलाना मुहम्मद रफ़अत साहब क़ासमी ने मौज़ूअ का इस किताब में एहाता किया है। मैंने अगरचे ये किताब बिलइस्तीआब नहीं देखी सिर्फ़ फ़ेहरिस्ते मज़ामीन देखी है, मगर इससे किताब की जामेईयत का बख़ूबी अंदाज़ा हो जाता है, नीज़ मौसूफ़ अपनी इस तस्नीफ़ के दौरान बाज़ मसाइल में मुराजअत भी करते रहे हैं। और मुफ़्तियाने दारुलउलूम ने मुलाहज़ा फ़रमा कर तस्दीक़ भी की है। इसलिए पूरे एतेमाद के साथ तस्दीक़ की जाती है। अल्लाह तआला इस किताब को क़बूल फ़रमाए और उम्मत के लिए नाफ़ेअ बनाए। आमीन!

कतबहू: सईद अहमद अफ़ल्लाहु अन्हु पालनपुरी
ख़ादिम दारुलउलूम देवबंद
25 जमादिल ऊला 1426 हिजरी

❑❑❑

तस्दीक़

हज़रत मौलाना मुफ़्ती ज़फ़ीरुद्दीन साहब दामत बरकातुहुम
मुरत्तिबः फ़तावा दारुलउलूम व मुफ़्ति दारुलउलूम देवबंद

بسم الله الرحمٰن الرحيم
نحمده ونصلى على رسوله الكريم

दारुलउलूम देवबंद मुसलमानाने हिन्द का धड़कता दिल है, यहां मुसलमान नौजवानों की तालीम व तरबियत का नज़्म 1283 हिजरी से मुसलसल चला आ रहा है और अलहमदुल्लिाह दिन रात इसमें इज़ाफ़ा हो रहा है। बानियाने दारुलउलूम देवबंद बिला शुब्हा अल्लाह वाले थे और उनकी ग़रज़ इस्लाम और तालीमाते इस्लाम की इशाअ़त व तरवीज मक़सूद थी, वह पूरे तौर पर बहुस्न व ख़ूबी अदा हो रही है और इंशाअल्लाह ताक़यामत ये सिलसिला जारी रहेगा। "فالله خير حافظا و هوارحم الراحمين"

मौलाना क़ारी रफ़अ़त क़ासमी साहब उस्ताज़े दारुलउलूम देवबंद एक अरसा से मुख़्तसर मसाइले दीनिया को अलग अलग किताबों में शाये कर रहे हैं जो मुल्क व ग़ैर मुल्क में काफ़ी मक़बूल है। इस वक़्त उनकी इस सिलसिला की अट्ठारवीं कितबा "मसाइले हज व उम्रा" सामने है। मौलाना मौसूफ़ ने पहली किताबों की तरह इस किताब को भी बड़ी मेहनत से मुरत्तब किया है। हज व उम्रा के तमाम तर मसाइल यकजा करने की सअ़ी की है। मुख़्तलिफ़

मुस्तनद कुतुबे फ़तावा से इन मसाइल को हवालाजात के साथ जमा किया है।

अल्लाह तआला ने उनकी मदद की है और कार आमद मसाइल जिनकी हाजी और उम्रा करने वालों को ज़रूरत होती है। तक़रीबन वह तमाम मसाइल इस किताब में किसी न किसी उनवान से जमा हो गए हैं, हज व उम्रा करने वालों के लिए बड़ी सहूलतें पैदा हो गई हैं। हज व उम्रा से पहले इस किताब का बग़ौर मुतालआ करना उनके लिए ज़रूरी है।

दुआ है कि रब्बे करीम उनकी इस ख़िदमते जलीला को क़बूल फ़रमाए और मौलाना के लिए ज़ादे आख़िरत बनाए।

तालिबे दुआ:
मुहम्मद ज़फ़ीरुद्दीन ग़ुफ़िरलहू
मुफ़्तिये दारुलउलूम देवबंद
29 रबीउलअव्वल 1426 हिजरी

❑❑❑

इरशादे गिरामी

मौलाना मुफ़्ती कफ़ीलुर्रहमान नशात साहब उस्मानी मुफ़्तिये दारुलउलूम देवबंद, नबीरए हज़रत मौलाना मुफ़्ती अज़ीज़ुर्रहमान (रह.)

मौलाना रफ़अत साहब क़ासमी उस्ताज़े दारुलउलूम देवबंद चंद गिने चुने अफ़राद में से हैं जो ख़ामोशी व यकसूई के साथ तसनीफ़ी काम में लगे रहते हैं। तदरीस की ज़िम्मादारी के साथ मौसूफ़ की ये इल्मी लगन क़ाबिले रश्क और लाइक़े तक़लीद है।

इस वक़्त मौलाना की तालीफ़ "मसाइले हज व उम्रा" सामने है इसके मुतालआ से अंदाज़ा हुआ कि हज व उम्रा के नाज़ुक मसाइल और उसकी तशफ़्फ़ी बख़्श तफ़सीलात का कोई गोशा तश्ना नहीं छोड़ा गया। हर हर मस्अला के मुस्तनद व मोतबर हवाला का भी हसबे साबिक़ एहतेमाम है जिससे किताब का एतेबार बढ़ जाता है।

उम्मीद है कि ये किताब मौसूफ़ की दीगर सत्तरह किताबों की तरह मक़बूले ख़्वास व अवाम होगी और अब तक इस मौज़ूअ़ पर तबअ़ किताबों में नुमायां और इम्तियाज़ी इफ़ादियत की हामिल होगी।

अल्लाह तआला साहबे तालीफ़ की इस इल्मी, दीनी ख़िदमत को क़बूल फ़रमाए और क़ारेईन को बेश अज़ बेश इस्तिफ़ादे की

तौफ़ीक़ अता फ़रमाए।

ईं दुआ अज़ मन व अज़ जुमला जहां आमीन बाद

कफ़ीलुर्रहमान नशात

15 सफ़रुलमुज़फ़्फ़र **1426** हिजरी

❑❑❑

राये गिरामी

हज़रत मौलाना मुफ़्ती महमूद हसन साहब दामत बरकातुहुम
मुफ़्ती व मुदर्रिस दारुलउलूम देवबंद

بسم الله الرحمٰن الرحیم

الحمد لله الذی جعل الکعبة قبلة للا حیاء والا موات وبتوفیقه ونعمته تتم الصالحات والصلوٰة والسلام علٰی سید المرسلین وعلٰی اله واصحابه اجمعین ومن تبعهم الٰی یوم الدین و بعد.

मौलाना कारी मुहम्मद रफ़अत साहब क़ासमी मद्दज़िल्लहू ने मौजूदा ज़माना की ज़रूरीयात को मद्देज़र रखते हुए हज व उम्रा के मसाइल में बहुत उम्दा व मुदल्लल किताब तालीफ़ फ़रमाई है अहकर ने उसको हरफ़न हरफ़न बग़ौर देखा और जहां मुनासिब समझा हज़्फ़ व इज़ाफ़ा भी कर दिया, ताहम ख़ता व निसयान ज़ल्लत व सबक़ते क़लम फिर भी मुहतमल है। जो हज़रात इसको देखें बराहे करम उससे मुत्तलअ़ करने की ज़हमत फ़रमाऐं "واجرهم علی الله" अदाए मनासिके हज व उम्रा में ये किताब इंशाअल्लाह मुफ़ीद तर साबित होगी। हरमैन शरीफ़ैन "زادهما الله شرفا وكرامة وهيبة" के ज़ाएरीने किराम ज़ुयुफ़ुर्रहमान के हक़ में बेश बहा और नादिर तोहफ़ा क़रार देना भी ख़िलाफ़े हाज़ा को बेजा नहीं। हज, अरकाने इस्लाम में से बुनियादी रुक्न है। इसी पर इस्लाम की तक्मील व तत्मीम हुई है। इसलिए सारे मसाइल और

रिआयते आदाब के साथ इसको अदा किया जाए तो तमाम गुनाहों से पाक साफ़ हो कर बेशुमार फ़ज़ाइल और सआदते दारैन का ज़रीआ है। अल्लाह जल्ला शानहू और उसके पाक रसूल (स.अ.व.) से ख़ुसूसी तक़र्रुब हासिल होने में इसको ख़ास दख़ल है।

"اللّٰهم تقبله منابفضلک العظیم و ارنا مناسکنا وتب علینا انک انت التواب الرحیم. و آخر دعوانا ان الحمد للّٰه رب العالمین.

فقط

هذا ما کتبه احقر الزمن العبد

محمود حسن بلند شهری

غفر اللّٰه له و لوالدیه و احسن الیهما والیه

خادم الافتاء والتدریس

دارالعلوم دیوبند

۱۴۲۶/۴/۲۸ھ

❑❑❑

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

وَلِلّٰهِ عَلَى النَّاسِ حِجُّ الْبَيْتِ مَنِ اسْتَطَاعَ إِلَيْهِ سَبِيْلًا ؕ وَمَنْ كَفَرَ فَإِنَّ اللّٰهَ غَنِيٌّ عَنِ الْعٰلَمِيْنَ ۝

तर्जुमा: और अल्लाह का हक़ है लोगों पर हज करना उस घर का जो शख़्स कुदरत रखता हो उसकी तरफ़ राह चलने की और जो न माने तो फिर अल्लाह परवाह नहीं रखता जहान के लोगों की।"

हज्जे बैतुल्लाह का फ़र्ज़ होना:

आयत में बैतुल्लाह की तीसरी ख़ुसूसियत ये ब्यान फ़रमाई कि अल्लाह तआला ने अपनी मख़लूक़ पर बैतुल्लाह का हज करना लाज़िम व वाजिब क़रार दिया है, बशर्तेकि वह बैतुल्लाह तक पहुंचने की कुदरत व इस्तिताअत रखते हों. कुदरत व इस्तिाअत की तफ़सील ये है कि उसके पास ज़रूरीयाते अस्लीया से फ़ाज़िल इतना माल हो जिससे वह बैतुल्लाह तक आने जाने और वहां के क़याम का ख़र्चा बरदाश्त कर सके, और अपनी वापसी तक उन अह्ल व अयाल का भी बंदोबस्त कर सके जिनका नफ़क़ा उनके ज़िम्मा वाजिब है। नीज़ हाथ पांव और आंखों से माज़ूर न हो। क्योंकि ऐसे माज़ूर को तो अपने वतन में चलना फिरना भी मुश्किल है। वहां जाने और अरकाने

हज अदा करने पर कैसे कुदरत होगी। इसी तरह औरत के लिए चूंकि बग़ैर महरम के सफ़र करना शरअन जाइज़ नहीं। इसलिए वह हज पर क़ादिर उस वक़्त समझी जाएगी जबकि उसके साथ कोई महरम हज करने वाला हो, ख़्वाह महरम अपने ख़र्च से हज कर रहा हो, या ये औरत उसका ख़र्च भी बरदाश्त करे, इसी तरह वहां तक पहुंचने के लिए रास्ता का मामून होना भी इस्तिताअत का एक जुज़्व है। अगर रास्ता में बदअम्नी हो, जान माल का क़वी ख़तरा हो तो हज की इस्तिताअत नहीं समझी जाएगी।

लफ़्ज़े हज के लुग़वी माना क़स्द करने के हैं, शरई माना की ज़रूरी तफ़सील तो ख़ुद क़ुरआन करीम ने ब्यान फ़रमाई कि तवाफ़े काबा और वक़ूफ़े अरफ़ा व मुज़दलिफ़ा वग़ैरा हैं और बाक़ी तफ़सीलात रसूल करीम (स.अ.व.) ने अपने ज़बानी इरशादात और इल्मी ब्यानात के ज़रीआ वाज़ेह फ़रमा दी हैं। इस आयत में हज्जे बैतुल्लाह के फ़र्ज़ होने का ऐलान फ़रमाने के बाद आख़िर में फ़रमाया– "وَمَنْ كَفَرَ فَإِنَّ اللّٰهَ غَنِيٌّ عَنِ الْعٰلَمِيْنَ" यानी जो शख़्स मुनकिर हो तो अल्लाह तआला बेनियाज़ है तमाम जहान वालों से, इसमें वह शख़्स तो दाख़िल है ही जो सराहतन फ़रीज़ए हज का मुनकिर हो, हज को फ़र्ज़ न समझे, उसका दाएरए इस्लाम से ख़ारिज होना व काफ़िर होना तो ज़ाहिर है, इसलिए "وَمَنْ كَفَرَ" का लफ़्ज़ सराहतन सादिक़ है। और जो शख़्स अक़ीदा के तौर पर फ़र्ज़ समझता है, लेकिन बावजूद इस्तिताअत व कुदरत के हज नहीं करता, वह भी एक हैसियत से मुनकिर ही है, उस पर लफ़्ज़ "وَمَنْ كَفَرَ" का इतलाक़ तहदीद और ताकीद के लिए है कि ये शख़्स

काफ़िरों जैसे अमल में मुब्तला है, जैसे काफ़िर व मुनकिरे हज नहीं करते ये भी ऐसा ही है। इसलिए फ़ुकहा (रह.) ने फ़रमाया कि आयत के इस जुमला में उन लोगों के लिए सख़्त वईद है जो बावजूद कुदरत व इस्तिताअत के हज नहीं करते कि वह अपने इस अमल से काफ़िरों की तरह हो गए। अलअयाज़ुबिल्लाह!

(मआरिफ़ुल कुरआन जिल्द–2 सफ़्हा–122)

फ़ज़ाइल व मसाइले हज:

हज इस्लमा का अज़ीमुश्शान रुक्न है। इस्लाम की तकमील का ऐलान हज्जतुलवदअ के मौक़ा पर हुआ और हज ही से अरकाने इस्लाम की तकमील होती है। अहादीसे तैयबा में हज व उम्रा के फ़ज़ाइल बहुत कसरत से इरशाद फ़रमाए गए हैं। एक हदीस में है कि– "जिस ने महज़ अल्लाह तआला की रज़ा के लिए हज किया फिर उसमें न कोई फ़हश बात की और न नाफ़रमानी की वह ऐसा पाक साफ़ हो कर आता है जैसा वलादत के दिन था।"

एक और हदीस में है कि– "आंहज़रत (स.अ.व.) से दरयाफ़्त किया गया कि सब से अफ़ज़ल अमल कौन सा है?" फ़रमाया– "अल्लाह तआला और उसके रसूल (स.अ.व.) पर ईमान लाना।" अर्ज़ किया गया इसके बाद, फ़रमाया– "अल्लाह की राह में जिहाद करना।" अर्ज़ किया गया इसके बाद, फ़रमाया– "हज्जे मबरूर! एक उम्रा के बाद दूसरा उम्रा दरमियानी अरसा के गुनाहों का कफ़्फ़ारा है। और हज्जे मबरूर की जज़ा जन्नत के सिवा कुछ और हो ही नहीं सकती।"

एक और हदीस में है कि– "पै–दर–पै हज व उम्रे

किया करो। क्योंकि ये दोनों फ़क्र और गुनाहों से इस तरह साफ़ कर देते हैं जैसे भट्टी लोहे और सोने चांदी के मैल को साफ़ कर देती है। और हज्जे मबरूर का सवाब सिर्फ़ जन्नत है।''

हज इश्क़े इलाही का मज़हर है और बैतुल्लाह शरीफ़ मरकज़े तजल्लीयाते इलाही है। इसलिए बैतुल्लाह शरीफ़ की ज़ियारत और आंहज़रत (स.अ.व.) की बारगाहे आली में हाज़िरी पर मोमिन की जाने तमन्ना है। अगर किसी के दिल में ये आरज़ू चुटकियां नहीं लेतीं तो समझना चाहिए कि उसके ईमान की जड़ें ख़ुश्क हैं। एक और हदीस में है कि– ''जो शख़्स बैतुल्लाह तक पहुंचने के लिए ज़ाद–व–राहिला रखता था उसके बावजूद उसने हज नहीं किया तो उसके हक़ में कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि वह यहूदी व नसरानी होर मरे।''

एक और हदीस में है कि– ''जिस शख़्स को हज करने से न कोई ज़ाहिरी हाजत मानेअ़ थी न सुलतान, न बीमारी का उज़्र था तो उसे इख़्तियार है कि ख़्वाह यहूदी हो कर मरे या नसरानी हो कर।''

(मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–211)

ज़राए मुवासलात की सहूलत और माल की फ़रावानी की वजह से साल ब साल हुज्जाजे किराम की मरदुम शुमारी में इज़ाफ़ा हो रहा है। लेकिन बहुत ही रंज व सदमा की बात है कि हज के अनवार व बरकात मध्धिम होते जा रहे हैं और जो फ़वाइद व समरात हज पर मुरत्तब होने चाहिऐं उनसे उम्मत महरूम हो रही है। अल्लाह तआ़ला के बहुत थोड़े बंदे ऐसे रह गए हैं जो फ़रीज़ए

हज को उसके शराइत व आदाब की रिआयत करते हुए ठीक ठीक बजा लाते हों, वरना अक्सर हाजी साहबान अपना हज ग़ारत कर के "नेकी बरबाद, गुनाह लाज़िम" का मिस्दाक़ बन कर आते हैं, न हज का मक़सद उनका मतमहे नज़र होता है न हज के मसाइल व अहकाम से उन्हें वाक़िफ़ीयत होती है, न ये सीखते हैं कि हज कैसे किया जाता है? और न उन पाक मक़ामात की अज़मत व हुरमत का पूरा लिहाज़ करते हैं। बल्कि अब तो ऐसे मनाज़िर देखने में आ रहे हैं कि हज के दौरान उन मुहर्रमात का इरतिकाब एक फ़ैशन बन गया है और ये उम्मत गुनाहों को गुनाह मानने के लिए तैयार नहीं–

"انا للہ و انا الیہ راجعون"

ज़ाहिर है कि ख़ुदा और रसूले ख़ुदा (स.अ.व.) के अहकाम से बग़ावत करते हुए हज किया जाए, वह अनवार व बरकात का किस तरह हामिल हो सकता है? और रहमते ख़ुदावंदी को किस तरह मुतवज्जेह कर सकता है?

हाजी साहबान के क़ाफ़िले घर से रुख़्सत होते हैं तो फूलों के हार पहनाना पहनना गोया हज का लाज़िमा है कि उसके बग़ैर हाजी का जाना ही मायूब है। चलते वक़्त जो ख़शीयत व तक़्वा, हुक़ूक़ की अदाएगी, मआमलात की सफ़ाई और सफ़र शुरू करने के आदाब का एहतेमाम होना चाहिए, उसका दूर दूर तक कहीं निशान नज़र नहीं आता। गोया सफ़रे मुबारक का आग़ाज़ ही आदाब के बग़ैर महज़ नुमूद व नुमाइश और रियाकारी के माहौल में होता है। अब एक अरसा से सदरे ममलकत, गवरनर या आला हुक्काम की तरफ़ से जहाज़ पर हाजी साहबान को

अलवदअ कहने की रस्म शुरू हुई है। इस मौक़ा पर बैंड बाजे, फ़ोटू ग्राफ़ी और नाराबाज़ी का सरकारी तौर पर एहतेमाम होता है। ग़ौर फ़रमाया जाए कि ये कितने मुहर्रमात का मजमूआ है।

कुरआन करीम में हज के सिलसिला में जो अहम हिदायात दी गई हैं वह ये हैं– "हज के दौरान न फ़हश कलामी हो, न हुक्म उदूली और न लड़ाई झगड़ा।"

और अहादीसे तैयबा में भी हज्जे मक़बूल की अलामत यही बताई गई है कि वह फ़हश कलामी और नाफ़रमानी से पाक हो। लेकिन हाजी साहबान में बहुत कम लोग ऐसे हैं जो इन हिदायात को पेशे नज़र रखते हों और अपने हज को ग़ारत होने से बचाते हों। गाना बजाना और दाढ़ी मुंडवाना, बग़ैर किसी इख़्तिलाफ़ के हराम और कबीरा गुनाह हैं। लेकिन हाजी साहबान ने उनको गोया गुनाहों की फ़ेहरिस्त ही से ख़ारिज कर दिया है। हज का सफ़र हो रहा है और बड़े एहतेमाम से दाढ़ियाँ साफ़ की जा रही हैं– "انا للہ و انا الیہ راجعون" इस नौइयत के बीसयों गुनाह कबीरा और हैं जिनके हाजी साहबान आदी होते हैं और ख़ुदा तआला की बारगाह में जाते हुए भी उनको नहीं छोड़ते। हाजी साहबान की ये हालत देख कर ऐसी अज़ीयत होती है जिसके इज़हार के लिए मौज़ूं अलफ़ाज़ नहीं मिलते।

इसी तरह सफ़रे हज के दौरान औरतों की बे हिजाबी भी आम है। बहुत से मर्दों के साथ औरतें भी दौराने सफ़र नंगे सर नज़र आती हैं और ग़ज़ब ये है कि बहुत सी औरतें शरई महरम के बग़ैर सफ़रे हज पर जाती हैं।

और झूट मूट किसी को महरम लिखवा देती हैं। इससे जो गंदगी फैलती है वह– "अगर गोयम ज़बां सोज़द" (अगर कहूं तो ज़बान जल जाए) की मिस्दाक़ है।

जहां तक इस इरशाद का तअल्लुक़ है कि हज के दौरान लड़ाई झगड़ा नहीं होना चाहिए, इसका मंशा ये है कि इस सफ़र में चूंकि हुजूम बहुत होता है और सफ़र भी बहुत तवील होता है इसलिए दौराने सफ़र एक दूसरे से नागवारियों का पेश आना और आपस के जज़बात में तसादुम का होना यक़ीनी है। और सफ़र की नागवारियों को बरदाश्त करना और लोगों की अज़ीयतों पर बर अफ़्रोख़्ता न होना बल्कि तहम्मुल से काम लेना ही इस सफ़र की सब से बड़ी करामत है। इसका हल यही हो सकता है कि हर हाजी अपने रुफ़क़ा (साथी) के जज़बात का एहतेराम करे, दूसरों की तरफ़ से अपने आईनए दिल को साफ़ व शफ़्फ़ाफ़ रखे और इस रास्ता में जो नागवारी पेश आए उसे ख़न्दा पेशानी से बरदाश्त करे। ख़ुद इसका पूरा एहतेमाम करे कि उसकी तरफ़ से किसी को ज़रा भी अज़ीयत न पहुंचे और दूसरों से जो अज़ीयत उसको पहुंचे उस पर किसी रद्देअमल का इज़हार न करे। दूसरों के लिए अपने जज़बात की कुर्बानी देना इस सफ़रे मुबारक की सब से बड़ी सौग़ात है और इस दौलत के हुसूल के लिए बड़े मुजाहदा व रियाज़त और बुलंद हौसला की ज़रूरत है और ये चीज़ अह्लुल्लाह की सोहबत के बग़ैर नसीब नहीं होती।

आज़िमीने हज की ख़िदमत में बड़ी ख़ैर ख़्वाही और निहायत दिल सोज़ी से गुज़ारिश है कि अपने इस मुबारक सफ़र को ज़्यादा से ज़्यादा बरकत व सआदत का ज़रीआ

बनाने के लिए मुन्दरजा जैल मअरूजात को पेशे नज़र रखें। चूंकि आप महबूबे हकीकी के रास्ता में निकले हुए हैं। इसलिए आप के इस मुक़द्दस सफ़र का एक एक लम्हा कीमती है और शैतान आपके औक़ात ज़ाये करने की कोशिश करेगा।

जिस तरह सफ़रे हज के लिए साज़ो सामान और ज़रूरीयाते सफ़र मुहैया करने का एहतेमाम किया जाता है उससे कहीं बढ़ कर हज के अहकाम व मसाइल सीखने का एहतेमाम होना चाहिए। और अगर सफ़र से पहले इसका मौक़ा नहीं मिला तो कम अज़ कम सफ़र के दौरान इसका एहतेमाम कर लिया जाए। किसी आलिम से हर मौक़ा के मसाइल पूछ पूछ कर उन पर अमल किया जाए।

इस मुबारक सफ़र के दौरान तमाम गुनाहों से परहेज़ करे और उम्र भर के लिए गुनाहों से बचने का अज़्म करे और इसके लिए हक़ तआला शानहू से ख़ुसूसी दुआएँ भी मांगें। ये बात ख़ूब अच्छी तरह ज़ेहन में रहनी चाहिए कि हज्जे मक़बूल की अलामत ही ये है कि हज के बाद आदमी की ज़िन्दगी में इंक़िलाब आ जाए। जो शख़्स हज के बाद भी बदस्तूर फ़राइज़ का छोड़ने वाला और नाजाइज़ कामों का मुरतकिब है उसका हज मक़बूल नहीं। आपका ज़्यादा से ज़्यादा वक़्त हरम शरीफ़ में गुज़रना चाहिए और सिवाए बहुत ज़्यादा ज़रूरत के बाज़ारों का गश्त क़तअन नहीं होना चाहिए। दुनिया का साज व सामान आपको मंहगा सस्ता, अच्छा बुरा, अपने वतन में भी मिल सकता है लेकिन हरम शरीफ़ से मुयस्सर आने वाली सआदतें आपको किसी दूसरी जगह मुयस्सर नहीं आएँगी। वहां

ख़रीदारी का एहतेमाम न करें।

नीज़ चूंकि हज के मौक़ा पर अतराफ़ व अकनाफ़ से मुख़्तलिफ़ मसलक के लोग जमा होते हैं। इसलिए किसी को कोई अमल करता हुआ देख कर वह अमल शुरू न कर दें। बल्कि ये तहक़ीक़ कर लें कि आया ये अमल आपके हनफ़ी मसलक के मुताबिक़ सही भी है या नहीं? मसलन यहां एक मरअला ज़िक्र करता हूं–

नमाज़े फ़ज्र के बाद इशराक़ तक और नमाज़े अस्र के बाद गुरूबे आफ़ताब तक दोगाना तवाफ़ पढ़ने की इजाज़त नहीं। इसी तरह मकरूह औक़ात में भी इसकी इजाज़त नहीं। लेकिन बहुत से लोग दूसरों की देखा देखी पढ़ते रहते हैं। अलग़रज़ सिर्फ़ लोगों की देखा देखी कोई काम न करें। बल्कि अह्ले इल्म से मसाइल की ख़ूब तहक़ीक़ कर लिया करें।

(आपके मसाइल और उनका हल जिल्द–4 हाकज़ा (ऐसे ही) मआरिफुल क़ुरआन जिल्द–1 व मुआरिफ़ुल हदीस जिल्द–4 किताबुलहज। अत्तरग़ीब व अत्तरहीब व मज़ाहिरे हक़ जदीद। इल्मुलफ़िक्ह जिल्द–5 किताबुलफ़िक्ह अलल मज़ाहिबिल अरबआ जिल्द–1 किताबुलहज व फ़ज़ाइले हज)

OOO

हज व उम्रा की इस्तिलाहात

हज के मसाइल में बाज़ अरबी अलफ़ाज़ इस्तेमाल होते हैं। इसलिए "मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज" से नक़्ल कर के चंद अलफ़ाज़ के माना लिखे जाते हैं।

इस्तिलाम: हजरे अस्वद को बोसा देना और हाथ से छूना या हजरे अस्वद और रुक्ने यमानी को सिर्फ़ हाथ लगाना।

इज़्तिबाअ़: एहराम की चादर को दाहिनी बग़ल के नीचे से निकाल कर बाएँ कंधे पर डालना।

तवाफ़: बैतुल्लाह के चारों तरफ़ सात चक्कर मख़सूस तरीक़े से लगाना।

शौत: एक चक्कर बैतुल्लाह के चारों तरफ़ लगाना।

रमल: तवाफ़ के पहले तीन फेरों में अकड़ कर शाना हिलाते हुए क़रीब क़रीब क़दम रख कर ज़रा तेज़ी से चलना अगर जगह हो और दूसरों को तकलीफ़ भी न हो।

मताफ़: तवाफ़ करने की जगह, जो बैतुल्लाह के चारों तरफ़ है और उसमें संगेमरर लगा हुआ है।

रुक्ने यमानी: बैतुल्लाह के जुनूबी मग़रिबी गोशा को कहते हैं। चूंकि ये यमन की जानिब है।

मक़ामे इब्राहीम: जन्नती पत्थर है। हज़रत इब्राहीम

अलैहिस्सलाम ने उस पर खड़े हो कर बैतुल्लाह को बनाया था। मताफ़ के मशरिकी किनारे पर मिम्बर और ज़मज़म के दरमियान एक जालीदार कुब्बा में रखा हुआ है।

मुलतज़मः हजरे अस्वद और बैतुल्लाह के दरवाज़ा के दरमियान की दीवार जिस पर लिपट कर दुआ मांगना मसनून है।

ज़मज़मः मस्जिदे हराम में बैतुल्लाह के करीब एक मशहूर चश्मा है जो अब कुवें की शक्ल में है। जिसको हक तआला ने अपनी कुदरत से अपने नबी हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम और उनकी वालिदा मुहतरमा के लिए जारी किया था।

दमः एहराम की हालत में बाज़ ममनूअ़ अफ़आल करने से बकरी वग़ैरा ज़िब्ह करना वाजिब होता है उसको दम कहते हैं।

आफ़ाक़ीः वह शख़्स है जो मीक़ात की हुदूद से बाहर रहता हो जैसे हिन्दुस्तानी, पाकिस्तानी, मिस्री, शामी, इराक़ी और ईरानी वग़ैरा।

तल्बियाः लब्बैक لبیک पूरा पढ़ना।

अैयामे तशरीकः ज़िलहिज्जा की ग्यारहवीं, बारहवीं और तेरहवी, तारीख़ें "अैयामे तशरीक़" कहलाती हैं। क्योंकि इनमें भी (नवीं, दसवीं, ज़िलहिज्जा की तरह) हर नमाज़े फ़र्ज़ के बाद "तकबीरे तशरीक" पढ़ी जाती है। यानी–

"الله اكبر الله اكبر لااله الا الله و الله اكبر الله اكبر ولله الحمد"

अैयामे नहरः दस ज़िलहिज्जा से बारहवीं ज़िलहिज्जा तक।

इफ़रादः सिर्फ़ हज का एहराम बांधना और सिर्फ़ हज

के अफ़आल करना।

मुफ़रिदः हज करने वाला जिसने मीक़ात से अकेले हज का एहराम बांधा हो।

क़िरानः हज और उम्रा दोनों का एहराम एक साथ बांध कर पहले उम्रा करना फिर हज करना।

क़ारिनः क़िरान करने वाला।

तमत्तोअ़ः हज के महीनों में पहले उम्रा करना फिर उसी साल में हज का एहराम बांध कर हज करना।

उम्राः हिल्ल या मीक़ात से एहराम बांध कर बैतुल्लाह का तवाफ़ और सफ़ा और मरवा की सओ़ी करना।

जमरात या जिमारः मिना में तीन मक़ाम हैं जिन पर क़द्दे आदम सुतून बने हुए हैं, यहां पर कंकरियाँ मारी जाती हैं। उनमें से जो मस्जिदे ख़ीफ़ के क़रीब मश्रिक़ की तरफ है उसको जमरतुलऊला कहते हैं। और उसके बाद मक्का मुकर्रमा की तरफ़ बीच वाले को जमरतुलवुस्ता और उसके बाद वाले को जमरतुलकुबरा और जमरतुलअक़बा और जमरतुलउख़रा कहते हैं।

रमीः कंकरया फेंकना, मारना।

सओ़ीः सफ़ा व मरवा के दरमियान मख़सूस तरीक़े से सात चक्कर लगाना।

मरवाः बैतुल्लाह के मश्रिकी शुमाली गोश के क़रीब एक छोटी सी पहाड़ी है जिस पर सओ़ी ख़त्म होती है।

मीलैन अख़ज़रैनः सफ़ा व मरवा के दरमियान मस्जिदे हराम की दीवार में दो सब्ज़ मील लगे हुए हैं (ट्यूब लाइट लगी हुई हैं) जिनके दरमियान सओ़ी करने वाले दौड़ कर चलते हैं।

अरफ़ात या अरफ़ा: मक्का मुकर्रमा से तक़रीबन नौ मील मश्रिक़ की तरफ़ एक मैदान है जहां पर हाजी लोग नवीं ज़िलहिज्जा को ठहरते हैं।

यौमे अरफ़ा: नवीं ज़िलहिज्जा जिस रोज़ हज होता है और हाजी लोग अरफ़ात में वक़ूफ़ करते हैं।

मौक़फ़: ठहरने की जगह। हज के अफ़आल में इससे मुराद मैदाने अरफ़ात या मुज़दलफ़ा में ठहरने की जगह होती है।

वक़ूफ़: वक़ूफ़ के माना ठहरना, और अहकामे हज में इससे मुराद मैदाने अरफ़ात या मुज़दलिफ़ा में ख़ास वक़्त में ठहरना।

मीक़ाती: मीक़ात का रहने वाला।

मीक़ात: वह मक़ाम जहांसे मक्का मुकर्रमा जाने वाले के लिए एहराम बांधना वाजिब है।

हरम: मक्का मुकर्रमा के चारों तरफ़ कुछ दूर तक ज़मीन हरम कहलाती है। उसके हुदूद पर निशानात लगे हुए हैं। उसमें शिकार खेलना, दरख़्त काटना, घास जानवर को चराना हराम है।

हिल्ल: हरम के चारों तरफ़ मीक़ात तक जो ज़मीन हैं उसको हिल्ल कहते हैं। क्योंकि उसमें वह चीज़ें हलाल हैं जो हरम के अन्दर हराम थीं।

हल्क़: सर के बाल मुंडवाना।

क़स्र: बाल कतरवाना।

हतीम: बैतुल्लाह की शुमाली जानिब बैतुल्लाह से मुत्तसिल क़द्दे आदम दीवार से कुछ हिस्सा ज़मीन का घिरा हुआ है उसको हतीम और हतीरा कहते हैं। जनाबे

रसूल (स.अ.व.) को नुबूवत मिलने से ज़रा पहले जब ख़ानए काबा को कुरैश ने तामीर करना चाहा तो सब ने ये इत्तिफ़ाक़ किया कि हलाल कमाई का माल इसमें सर्फ़ किया जाए लेकिन सरमाया कम था इस वजह से शुमाल की जानिब अस्ल क़दीम बैतुल्लाह में से तक़रीबन छः गज़ शरई जगह छोड़ दी। इस छुटी हुई जगह को हतीम कहते हैं। अस्ल हतीम छः गज़ शरई के क़रीब है अब कुछ एहाता ज़ाइद बना हुआ है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–67 व अहकामे हज सफ़्हा–8)

सफ़रे हज से पहले ज़रूरी काम की बातें

मस्अला: हज का सफ़र हर एतेबार से बहुत मुबारक सफ़र है। इस मुबारक सफ़र और हज्जे मबरूर पर बड़े बड़े वादे हैं। हाजी ऐसे मुबारक और मुक़द्दस मक़ामात पर पहुंचता है जहां दुआओं की क़बूलियत के वादे हैं। लिहाज़ा सफ़रे हज से पहले अपने रिश्तादारों और मुतअल्लिक़ीन से मिलना और एक दूसरे से दुआओं की दरख़्वास्त करना जाइज़ है। ख़ास कर उन रिश्तेदारों और मुतअल्लिक़ीन से जिनसे बात चीत बंद हो, और आपस में रंजिश और कुदूरत हो उनसे मिल कर मआफ़ी मांग लेना और दिलों का साफ़ कर लेना बहुत ज़रूरी है। इसी तरह अगर किसी का हक़ बाक़ी है, किसी पर ज़ुल्म किया हो, क़र्ज़ लिया हो और अभी तक अदा न कर सका हो तो सफ़रे हज से पहले पहले उसका हक़ अदा कर देना या उसका इंतिज़ाम कर देना या उससे मोहलत लेकर उसको इत्मीनान दिलाना ज़रूरी है, ताकि इस मुबारक सफ़र की बरकतें पूरी तरह हासिल कर सके, जिस क़दर दिल की सफ़ाई के साथ और हुक़ूक़ुलइबाद अदा कर के हरमैन शरीफ़ैन की हाज़िरी, ममनूआत व मकरूहात से बचते हुए और तमाम आदाब की रिआयत करते हुए होगी तो इंशाअल्लाह वहां की बरकतें

ख़ूब हासिल होंगी।

फ़ज़ाइले हज में है– "अपने सब पिछले गुनाहों से तौबा करे और किसी का माल जुल्म से ले रखा हो उसको वापस करे और किसी क़िस्म का किसी पर जुल्म किया हो तो उससे मआफ़ कराये।" और जिन लोगों से अक्सर साबिक़ा पड़ता रहता हो उनसे कहा सुना मआफ़ कराये, अगर कुछ क़र्ज़ अपने ज़िम्मा वाजिब हो तो उसको अदा करे या अदाएगी का कोई इंतिज़ाम करे।

उलमा ने लिखा है कि जिस शख़्स पर जुल्म कर रखा हो या उसका कोई हक़ अपने ज़िम्मा हो तो वह बमंज़िला एक क़र्ज़ ख़्वाह के है जो उससे ये कहता है कि तू कहां जा रहा है? क्या तू इस हालत में शहन्शाह के दरबार में हाज़िरी का इरादा करता है कि तू उसका मुजरिम है। उसके हुक्म को ज़ाए कर रहा है, हुक्म उदूली की हालत में हाज़िर हो रहा है, नहीं डरता कि वह तुझ को मरदूद कर के वापस कर दे, अगर तो क़बूलियत का ख़्वाहिश मंद है तो इस जुल्म से तौबा कर के हाज़िर हो। उसका मतीअ, फ़रमांबरदार बन कर पहुंच, वरना तेरा ये सफ़र इब्तिदा के एतेबार से मशक़्क़त ही मशक़्क़त है और इंतिहा के एतेबार से मरदूद होने के क़ाबिल है।

नीज़ चलने के वक़्त मक़ामी रुफ़क़ा, अइज़्ज़ा व अहबाब से मुलाक़ात कर के उनको अलवदा कहे और उनसे अपने लिए दुआ की दरख़्वास्त करे कि उनकी दुआएं भी उसके हक़ में ख़ैर का सबब होंगी।

(फ़तवा रहीमिया जिल्द–10 सफ़्हा–180)

मस्अला: सफ़रे हज में जाने से पहले अपनी नीयत

ख़ालिस अल्लाह तआला और सवाबे आख़िरत के लिए करें।

मस्अला: जिस किसी का माली हक़ आप के ज़िम्मे है अगर वह मर गया है तो उसके वारिसों को अदा करें या उनसे मआफ़ करायें। और अगर अस्हाबे हक़ बहुत ज़्यादा हैं और उनके पते वग़ैरा मालूम नहीं तो जिस क़दर माली हक़ उनका आपके ज़िम्मे है उनकी तरफ़ से सदक़ा कर दें और अगर हाथ या ज़बान से उनको तकलीफ़ पहुंचाई थी तो उनके लिए कसरत से दुआए मग़फ़िरत करते रहें। इंशाअल्लाह हुकूक़ के वबाल से नजात हो जाएगी।

मस्अला: बालिग़ होने के बाद की क़ज़ा शुदा नमाज़, रोज़ा, ज़कात, इतनी मिक़्दार में है जिनको सफ़रे हज से पहले आप पूरा नहीं कर सकते या लोगों के हुकूक़ इतने ज़्यादा आपके ज़िम्मा हैं कि उन सब से मआफ़ कराना या अदा करना उस वक़्त इख़्तियार में नहीं है तो ऐसा कीजिए कि उन सब फ़राइज़ व हुकूक़ की अदाएगी या मआफ़ कराने का पुख़्ता अज़्म अभी से कर लीजिए और जिस क़दर अदा किया जा सके उसको अदा कर दीजिए और जो बाक़ी रह जायें उनके लिए एक वसीयत नमा लिखये और अपने किसी अज़ीज़ या हमदर्द या दोस्त को ज़िम्मादार बना दीजिए कि अगर आप ज़िन्दगी में अदा न कर सकें तो आप के बाद वह अदा कर दें।

(अहकामे हज: मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी (रह.) सफ़हा–23 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1094)

□□□

सफ़रे हज की तैयारी वग़ैरा के मुतअ़ल्लिक़ मश्वरे

(1) अगर आप का हज कमेटी से जाने का इरादा है तो कमेटी की तरफ़ से अख़बारात में ऐलान आने के बाद शराइत के मुताबिक़ अपनी दरख़्वास्त इरसाल कर दें और फ़ॉर्म की ख़ाना पुरी ऐसे शख़्स से करायें जो जानकार और तजरबाकार हो।

(2) अगर आप इन्टरनेशनल पास्पोर्ट पर सफ़र करना चाहते हैं तो ज़ीक़अदा की 25 तारीख़ से पहले पहेल सऊदी सिफ़ारत ख़ाने से हज का वीज़ा हासिल कर लें इस तारीख़ के बाद उमूमन वीज़ा मिलना बंद हो जाता है।

(3) मौजूदा ज़माने में वीज़े के हुसूल के लिए मुअल्लिमीन की सरविस फ़ीस और ट्रांसपोर्ट की उजरत के चेक पेश करने ज़रूरी हैं।

(4) सामाने सफ़र में दर्ज ज़ैल अश्या ख़ास तौर पर साथ रखें–

(1) अहकामे हज के रसाइल। (2) वज़ीफ़ा और दुआ की किताबें। (3) सूई धागा। (4) फ़ाज़िल बटन। (5) छोटा चाकू। (6) क़िब्ला नुमा। (7) जानमाज़। (8) लोटा। (9) गिलास। (10) रंगीन चश्मा। (11) सर्दी का मौसम हो तो गर्म चादर या हल्की रज़ाई। (12) एहराम की दो दो चादरें।

(13) औरतें अपने परदे के लिए ऐसा हैट ख़रीद लें जिसके ऊपर से नक़ाब डालने से कपड़ा चेहरे पर न लगे। (14) एहराम पर बांधने के लिए मर्द हज़रात कोई पेटी या चमड़े का पर्स ले लें ताकि बक़द्र ज़रूरत रुपया वग़ैरा रखने में आसानी रहे। सिर्फ़ पांच जोड़े कपड़े काफ़ी हैं, जूतों के लिए बैग थैला वग़ैरा, जूते थैले में रख कर अपने साथ ही रखें, क्योंकि हरम शरीफ़ में एक ही गेट से वापसी मुश्किल हो जाती है।

(5) खाने पीने का सब सामान आटा चावल वग़ैरा यहां से ले जाने की क़तअन ज़रूरत नहीं है। अलबत्ता मिना वग़ैरा में इस्तेमाल के लिए बिसकिट या ख़ुश्क नमकीन या मेवेजात रख लिए जायें तो कोई हरज नहीं। दीगर अश्याए ख़ुरदोनोश मक्का मुअज़्ज़मा वग़ैरा में बाआसानी दस्तियाब हैं। इसलिए खाने पीने का ज़्यादा बोझ न ले जाया जाए।

(6) जो सामान इटैची या बैग वग़ैरा ले जायें वह इतना मज़बूत होना चाहिए कि जहाज़ वग़ैरा से उतारने चढ़ाने और एक जगह से दूसरी जगह मुन्तक़िल करने में टूट फूट न हो।

(7) अपने सामानों पर मोटे हुरूफ़ से अपना नाम और पता लिख दें। और अगर हज कमेटी से जा रहे हों तो कवर नम्बर भी लिख दें ताकि गुम हो जाने की सूरत में मिलना आसान हो।

(8) दौराने सफ़र रुपया पैसा की हिफ़ाज़त का ख़ास ध्यान रखें और अपनी सब रक़म एक जगह न रखें बल्कि मुतअद्दद सामानों में मुतफ़र्रिक़ कर दें।

(9) हज के सफ़र से पहले मसाइले हज को अच्छी तरह से जानना ज़रूरी है, इसलिए तजरबाकार उलमा से राबता कर के और रुफ़का के साथ मसाइल का मुज़ाकरा कर के सही मालूमात हासिल करनी चाहिऐं।

(10) और सफ़र में ज़ौक़ व शौक़ के साथ इस सआदत पर अल्लाह तआला का तिही दिल से शुक्रगुज़ार रहना भी ज़रूरी है, क्योंकि ये सआदत हर एक को मुयस्सर नहीं होती।

(11) बिलखुसूस इस सफ़र में आँख, कान, ज़बान और तमाम आज़ा व जवारेह को गुनाहों से बचाने का भरपूर एहतेमाम करना चाहिए और मुकम्मल यकसूई और कामिल ख़ुशूअ और तवाजो के साथ रियाकारी से बचते हुए सफ़र का आग़ाज़ करना चाहिए और दौराने सफ़र फ़ुज़ूल बातों में मशगूल न रह कर ज़िक्र व अज़कार में ज़्यादा वक़्त गुज़ारना चाहिए।

जद्दा एयरपोर्ट पर

(12) हिन्दुस्तान से जद्दा की मसाफ़त उमूमन हवाई जहाज़ पाँच साढ़े पाँच घंटे में तय करते हैं। सऊदी अरब का मेयारी वक़्त हिन्दुस्तान से ढाई घंटा पीछे है। इसलिए एयरपोर्ट पर उतरते ही अपनी घड़ियां वहां के वक़्त से मिला लेनी चाहिए ताकि नमाज़ों का एहतेमाम रहे।

(13) जहाज़ से उतरने के बाद हुज्जाज को एक बड़े हॉल में पहुंचा दिया जाता है। उस हॉल में इस्तिंजा वुज़ू वग़ैरा का बेहतरीन नज़्म है। इसलिए अगर किसी नमाज़ का वक़्त हो तो वहां बाआसानी अदा की जा सकती है।

(14) हॉल में सबसे पहले आपको एक मालूमाती फ़ॉर्म

ख़ाना पुरी के लिए दिया जाएगा उसे आप खुद पुर करें या अपने अहबाब वग़ैरा की मदद से पुर कर दें।

(15) इसके बाद पास्पोर्ट की तफ़तीश की कारवाई शुरू होगी इस कारवाई में बसा औक़ात कई कई घंटे लग जाते हैं। इसलिए सब्र व सुकून का मुज़ाहरा करें, दिल बरदाश्ता न हों।

(16) पास्पोर्ट की कारवाई के बाद अगला मरहला कस्टम का है। कस्टम से पहले अपने सामान की अच्छी तरह से शनाख़्त कर लें।

(17) कस्टम के बाद अपना सामान अच्छी तरह से बांध कर हरे रंग के लिबास में मलबूस कुलियों के हवाला कर दें ये कुली आपका सामान बिला उजरत हिन्दुस्तानी हज कमेटी के दफ़्तर तक पहुंचा देंगे।

(18) कस्टम हॉल से बाहर निकलने पर सामने ही मकतबुलवुकला अल मुवह्हद "مكتب الوكلاء الموحد" के काउन्टर लगे रहते हैं उन्हें आप सरविस और ट्रांसपोर्ट चेक हवाला कर दें और ट्रांसपोर्ट टिकट वसूल कर लें।

(19) वहां से निकल कर तिरंगे झंडे को देख कर हिन्दुस्तानी हज ऑफ़िस के करीब जायें, जहां तलाश करने पर आपका सामान मिल जाएगा। सामान एक जगह निकाल कर इकट्ठा कर के खुद उसकी हिफ़ाज़त करें।

(20) जद्दा के अज़ीमुश्शान ऐयरपोर्ट पर जगह जगह आरामदेह वुज़ूख़ाने, इस्तिंजाख़ाने हैं यहां आप अपनी ज़रूरीयात से फ़ारिग़ हो सकते हैं।

(21) ज़रेमुबादला के चेक या ड्राफ़्ट वग़ैरा भी आप यहां भुना सकते हैं। यहां कई अहम बैंकों की शाख़ें काम

करती हैं।

(22) ज़रूरीयात से फ़ारिग़ हो कर हज ऑफ़िस के मुलाज़िमीन और ज़िम्मादारान से मिलें और अपने पास्पोर्ट पर मुअल्लिम और जाए क़याम की तफ़सीलात पर मुश्तमल स्टीकर लगवालें और ये मालूम कर लें कि आपकी रवानगी कितनी देर में होगी।

जद्दा से रवानगी

(23) जद्दा से मक्का मुकर्रमा रवानगी से क़ब्ल गुस्ल वग़ैरा कर के तैयार हो जायें।

(24) जब आप बस में बैठने लगेंगे तो मुअल्लिम के नुमाइंदे आपका पास्पोर्ट लेकर बस ड्राइवर के हवाले कर देंगे और अब आपका ये पास्पोर्ट हज से वापसी ही में मिलेगा। दरमियान में आप उसकी ज़ियारत भी न कर सकेंगे।

(25) जद्दा से चल कर बस मक्का मुअज़्ज़मा से बाहर मरकज़ुलइस्तिक़बाल "مركز الاستقبال" पर रुकेगी और हर बस में एक रहबर सवार होगा जो हुज्जाज को अपने अपने मुअल्लिमीन के दफ़ातिर या उनकी रिहाइश गाहों पर पहुंचाएगा।

(26) मरकज़ुलइस्तिक़बाल पर आप अपनी बसों से बाहर न निकलें, अगर जायें भी तो साथियों को बता कर जायें और जल्द वापस आ जायें।

मक्का मुकर्रमा में हाज़िरी

(27) जब बस आपके मुअल्लिम के मकतब के सामने जा कर खड़ी हो तो आप बस से बाहर निकलने की कोशिश न करें, बल्कि अपनी अपनी सीटों पर बैठे रहें और जो पूछा जाए उसका सही जवाब दें।

(28) बस में आपको मुअल्लिम की तरफ़ से एक पीला पटका दिया जाएगा। जिसमें आपके मुअल्लिम का पता दर्ज होगा और बिलडिंग नम्बर लिखा होगा उसको आप अपने हाथ में बांध लें और मस्तूरात को भी पहना दें। खुदा नख़्वास्ता गुम होने की शक्ल में ये पट्टा बहुत काम आता है।

(29) जब आपकी बस रिहाइशी बिलडिंग तक पहुंच जाए तो उतर कर सब से पहले अपने सामान को बस से उतरवा कर चेक करें।

(30) उसके बाद बिलडिंग के अपने मुक़र्ररा कमरे में जिसका तअैयुन अब कंप्यूटर के ज़रीआ होता है मुनतक़िल हो जायें।

(31) और जो लोग हज कमेटी से न जा रहे हों वह मुअल्लिम के दफ़्तर पर पहुंच कर अपनी रिहाइशगाह का ख़ुद इंतिज़ाम करें, अगर किसी वाकिफ़कार के यहां ठहरना हो तो उसकी कारवाई मुकम्मल करें।

(32) मक्का मुअज़्ज़मा पहुंचने के बाद दो एक रोज़ में मुअल्लिम की तरफ़ से एक फोटू वाला कार्ड हर हाजी को दिया जाता है ये कार्ड दरअस्ल आपके पास्पोर्ट की जगह पर है। जिसमें मुअल्लिम और रिहाइश वग़ैरा की तमाम तफ़सीलात दर्ज होती हैं। हरमैन शरीफ़ैन के पूरे ज़मान–ए–क़याम में उस कार्ड को हमा वक़्त साथ रखना चाहिए ये बहुत क़ीमती और ज़रूरी चीज़ है।

(33) इसी तरह मिना जाने से पहले और अ़रफ़ात के जाए क़याम वग़ैर के बारे में एक कार्ड मुअल्लिम की तरफ़ से दिया जाता है उसे लेना न भूलें और सफ़र में

हर वक़्त उसे साथ रखें। (अज़– मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद सलमान साहब मन्सूरपुरी, बशुक्रिया निदाए शाही हज व ज़ियारत नम्बर जनवरी 2001 ई0)

क़ियामे मक्का व मदीना के मुतअल्लिक़ ज़रूरी हिदायतें

(1) अपने हज के पूरे सफ़र में ये क़तअन न भूलें कि आप एक हाजी होने के नाते अल्लाह तआला के मेहमान हैं, चुनाचें अपना क़ीमती वक़्त ज़्यादा से ज़्यादा इबादत, तिलावत, ज़िक्र व अज़कार और ख़ैर के कामों में सर्फ़ करें। इसी तरह अपने हर क़ौल, अमल और बरताव में इस अज़ीम हैसियत का ख़्याल रखें।

(2) मुअल्लिम साहब की तरफ़ से दिया गया शनाख़्ती कार्ड हर वक़्त अपने साथ रखें। रास्ता भूलने पर मंज़िल तक पहुंचाने में मुईन व मददगार साबित होगा।

(3) अगर कभी गुम हो जायें और अपनी इमारत का पता न मालूम हो पा रहा हो तो उसे ढूंडने में मज़ीद भाग दौड़ करने से बेहतर होगा कि आप हिन्दुस्तानी हज ऑफ़िस का पता मालूम करें ताकि कोई भी बाआसानी आपको वहां तक पहुंचा दे, जहां ऑफ़िस के कारकुनान फ़ौरन आपको मतलूबा रिहाइशगाह तक पहुंचा सकें।

(4) मक्का मुकर्रमा में उसी इमारत और कमरे में क़याम करें जो बज़रीआ कंप्यूटर आपके लिए अलाट किए गए हैं और जिनके दरवाज़ों पर आपके नाम मअ़ हवाला हाजी पास नम्बर चस्पां हैं। आपको अभी ख़ाली दिखाई देने वाले कमरे ख़ाली नहीं हैं, बल्कि उनमें रहने वाले हुज्जाज किराम भी आप ही की तरह आज कल में पहुंचने वाले होंगे। वैसे भी अपनी जगह छोड़ कर किसी और की

जगह पर कब्ज़ा करना अख़लाक़ी और शरई दोनों ही एतेबार से निहायत ही नामुनासिब अमल होगा।

(5) सफ़ाई पर पूरा ध्यान दें चाहे वह कमरे की हो या लिबास की या जिस्म की हो या आम मआमलात की, क्योंकि सफ़ाई मोमिन की शान और जुज़्वे ईमान है।

(6) खाना पकाने के लिए बावरची ख़ानों का ही इस्तेमाल करें। रिहाइशी कमरों में खाना पकाना सख़्त मना है। इससे जहां आग लगने का अंदेशा है वहीं ये भी मुमकिन है कि मक़ामी अम्न व सलामती के ज़िम्मादारों की तरफ़ से जो वक़्तन फ़वक़्तन इमारतों का दौरा करते रहते हैं आपका चूल्हा ज़ब्त कर लिया जाए।

(7) अपनी रिहाइशगाह से हरम शरीफ़ के क़रीब गेटों को जिन पर नम्बर भी पड़े हुए हैं ख़ुद भी पहचान लें और अपने साथ के कमज़ोर और उम्र रसीदा लोगों को भी पहचान करा दें। चूंकि गुमशुदगी के वाक़िआत आम तौर पर हरम शरीफ़ जाते हुए नहीं, बल्कि वहां से अपनी रिहाइशगाह को लौटते हुए होते हैं। लिहाज़ा मताफ़ की तरफ़ से बाहर निकलने वालों की रहनुमाई के लिए जो मुख़्तलिफ़ रंगों के पांच एलेक्ट्रानिक बोर्ड लगे हुए हैं उन्हें ख़ूब अच्छी तरह से पहचान लें। ये बोर्ड हरम शरीफ़ के पांच मैन गेटों की सीध में लगाए गए हैं। चूंकि उनमें का हर गेट मक्का मुकर्रमा के मुख़्तलिफ़ मुहल्लों में खुलता है, लिहाज़ा उन बोर्डो को पहचान लेने में जो सब से बड़ा फ़ाएदा है वह ये है कि अगर हरम शरीफ़ से निकलते हुए ख़ुदा न ख़्वास्ता आप खो भी गए तो अपने मतलूबा मुहल्ला में ही रहेंगे किसी दूसरे मुहल्ला में नहीं निकलेंगे।

(8) सफ़रे हज में कई छोटे मोटे असफ़ार करने पड़ते हैं जैसे जद्दा से मक्का मुकर्रमा, मक्का मुकर्रमा से मदीना मुनव्वरा, मिना, अरफ़ात, मुज़दलिफ़ा वग़ैरा के असफ़ार, आम तौर पर अपने असफ़ार के हर मरहला में सामान कम से कम रखने की कोशिश करें, नीज़ हर सामान पर अपने नाम के साथ पिलग्रिम पास या हवाला नम्बर खिलना न भूलें। जैसा कि क़ीमती सामानों पर अपना या केयर ऑफ़ कर के किसी दूसरे जानने वाले का टेलीफ़ून नम्बर लिख देना भी गुमशुदगी की शक्ल में फिर दोबारा दस्तयाबी बेहतरीन ज़रीआ साबित हो सकती है।

(9) बसों पर सामान रखवाते या उन पर से उतरवाते हुए अपने सामानों की पूरी निगरानी रखें, ताकि कोई सामान छूटने न पाए।

(10) कभी भी, किसी हाल में भी और किसी के कहने पर भी दस, बीस या बहुत हुए तो पचास रियाल से ज़्यादा रक़म लेकर भीड़ की जगहों में न जायें, चाहे वह हरम शरीफ़ ही क्यों न हो, क्योंकि उस मुक़द्दम मक़ाम पर दिल व दिमाग़ अगर पैसों की हिफ़ाज़त में मशग़ूल रहते हैं तो ये उस मक़ाम की बेअदबी है और अगर ऐसा नहीं तो हरम की होश रुबा भीड़ में आपके पैसे महफ़ूज़ रह जायेंगे कैसे यक़ीन किया जा सकता है?

(11) मौक़ा मिलते ही पहली फ़ुरसत में अपनी क़ीमती चीज़ें हों या दीगर रुक़ूमात अपने मुअल्लिम साहब के पास बतौरे अमानत जमा कर के रसीद ले लें फिर बवक़्ते ज़रूरत उनमें से लेते और ख़र्च करते रहें। वक़्तन फ़वक़्तन जो पैसे लेते रहें उनका अपनी अमानत रसीद में इन्दिराज

करवाते रहना न भूलें, ताकि जमा शुदा पैसों में शक शुब्हा या भूल चूक की गुंजाइश न रहे। आपको मालूम होना चाहिए कि हर मुअल्लिम के ऑफ़िस में अपने हुज्जाज की अमानतें जमा करने का माकूल इंतिज़ाम होता है। इसके अलावा भी एहतियात का जो मुनासिब तरीक़ा मालूम हो इख़्तियार करें, मगर अपनी जेब, बटुवा या बेल्ट में रखने का मतलब ज़ाये होने के तजरबे को हरगिज़ दुहराने की कोशिश न करें।

(12) नमाज़ों की ख़ातिर या दूसरे कामों से कमरा बंद कर के बाहर जाते हुए कमरा का एयरकंडीशन, बिजली बंद करना न भूलें।

(13) जानदारों के लिए सरचश्मए हयात, पानी का भी अल्लाह तअ़ला के यहां हिसाब होगा। लिहाज़ा अपने हर इस्तेमाल में उमूमन और ज़िलहिज्जा की पहली तारीख़ से पन्द्रह तारीख़ तक ख़ुसूसन पूरी किफ़ायत शिआ़री बरतें।

(14) यहां सऊदी अरब में चूंकि एक नई और गर्म आबो हवा से आपका साबिक़ा है, चुनांचे दोपहर की तेज़ धूप से जहां तक मुमकिन हो सके बचने की कोशिश के साथ साथ मशरूबात और पनी ख़ूब कसतर से पिया करें ताकि ख़ुदानख़्वास्ता मुतअस्सिर न हों।

(15) हिन्दुस्तानी हज ऑफ़िस मक्का मुकर्रमा, मुअ़ल्लिम साहब के ऐलान के मुताबिक़ जो मदीना मुनव्वरा की रवानगी से मुतअल्लिक़ आपकी इमारत में लगा हुआ मिलेगा मदीना मुनव्वरा जाने के लिए तैयार रहें और रवानगी को जो वक़्त मुक़र्रर किया गया है उसके मुताबिक़ अपनी बसों में सवार हो जायें। किसी की ग़ैर हाज़िरी या इंतिज़ार की

वजह से अगर बस लेट हुई जिसकी वजह से बस में सवार दूसरे हुज्जाजे किराम को तकलीफ़ उठानी पड़ी तो उसका गुनाह यक़ीनन उसके सर जाएगा, चाहे देरी का सबब बड़े से बड़ा सवाब का काम ही क्यों न हो। मालूम रहे कि जो हुज्जाज हज से क़ब्ल मदीना मुनव्वरा जा रहे हों उन पर तवाफ़े वदाअ अभी वाजिब नहीं, क्योंकि ये तवाफ़ वतन वापसी से पहले आखिरी औक़ात में करना है। जबकि उन हुज्जाजे किराम को तो हज से क़ब्ल अभी फिर लौट कर मक्का मुकर्रमा आना है।

(16) मदीना मुनव्वरा का सफर अगर हज से क़ब्ल हो रहा हो तो हल्का फुलका सामान साथ रखें, जैसे दो जोड़े पहनने के कपड़े जिनमें एक जोड़ा गर्म कपड़ों का भी हो तो बेहतर है, ओढ़ने की चादर या कम्बल, क्योंकि मदीना मुनव्वरा में बाज़ मरतबा मौसम में यकायक खुशगवार खुनकी बढ़ जाती है। एहराम की चादरें, क्योंकि आते वक़्त आपको ज़ुलहुलैफ़ा से (जिसको बीरे (कुआँ) अली भी कहते हैं ये मक़ाम मदीना मुनव्वरा या उसके अतराफ़ व जवानिब से मक्का मुकर्रमा आने वालों के लिए मीक़ात है) उम्रे का एहराम भी बांधना है, दीगर ज़रूरीयात की चीज़ें जो आप मुनासिब समझते हों क्योंकि आपको वहां नौ दस रोज़ रुक कर चालीस नमाज़ें भी पढ़नी हैं।

(17) ज़ुलहुलैफ़ा की मीक़ात पर एहराम बांधने के लिए जब अपनी बसों से उतरें तो उतरते वक़्त अपनी बसों का नम्बर वग़ैरा देख कर अच्छी तरह पहचान लें, नीज़ दूसरे रुफ़क़ाए सफ़र खुसूसन औरतों और उम्र रसीदा व कम पढ़े लिखे लोगों को पहचान करा दें, ताकि वहां की मस्जिद

से एहराम बांध कर वापस अपनी बसों तक पहुचने में किसी तरह की दुश्वारी न हो, क्योंकि उन दिनों में वहां एक जैसी सैकड़ों बसे खड़ी रहती हैं।

(18) आपकी मतलूबा राहत व आराम और हर मरहले में पूरे पूरे तआउन की ख़ातिर, ख़ुसूसन जबकि पिछले सालों के मुक़ाबले में इमसाल हुज्जाज की तादाद कहीं ज़्यादा है, हज का स्टॉफ़ काफ़ी बढ़ा दिया गया है। चुनांचे अगर आप किसी वजह से अपने क़रीबी हज ऑफ़िस व डिस्पेंसरी न पहुंच सके तो भी वहां से कोई न कोई दिन में कम अज़ कम एक बार आपके हाल व अहवाल और आपकी इमारत से मुतअल्लिक़ा हालात की जांच पड़ताल के लिए आप तक पहुंचेगा। अगर ऐसा नहीं तो आप ज़रूर अपने क़रीबी हज ऑफ़िस व डिस्पेंसरी के ज़िम्मादार को सूरते हाल से आगाह करें।

(19) अपने हुज्जाज की बढ़ती हुई तादाद के पेशेनज़र हुकूमते हिन्दुस्तान ने मक्का मुकर्रमा के मिस्फ़ला मुहल्ला में वाक़ेअ पूरे साल ख़िदमत अंजाम देते रहने वाले मैन हज ऑफ़िस व डिस्पेंसरी के अलावा मज़ीद नौ ब्रांच हज ऑफ़िस व डिस्पेंसरियां खोली गई हैं। मदीना मुनव्वरा में भी सित्तीन रोड पर क़त्तान होटल के सामने और नेशनल कम्पनी के पास वाकेअ साल भर ख़िदमत अंजाम देने वाला मैन हज व डिस्पेंसरी के अलावा मज़ीद दो ब्रांच हज ऑफ़िस डिस्पेंसरियां खोली गई हैं ताकि बसिलसिलए तिब्बी हों या दीगर उमूमी ख़िदमात, आपकी हर आवाज पर फ़ौरी लब्बैक कहा जा सके।

(20) आपकी रिहाइशी इमारतों के हर कमरे के लिए

मख़सूस हुज्जाजे किराम की कंप्यूटर लिस्ट कमरे के दरवाज़े पर तो होगी ही साथ ही साथ उस कमरे की तादाद बताने वाला स्टीकर भी होगा। अगर मुक़र्रा तादाद के मुताबिक़ कमरे में क़याम करने वाले सारे हुज्जाजे किराम अभी न पहुंचे हों और इसी बीच हसबे प्रोग्राम आप मदीना मुनव्वरा जा रहे हों तो जाते वक़्त या तो कमरे में ताला लगा कर न जायें या चाबी किसी ज़िम्मेदार के हवाला कर के जायें, ताकि आपके ग़ाएबाना में अगर कमरे के बक़िया हुज्जाज आ गए तो उन्हें ठहराने के लिए कमरे का ताला न तोड़ना पड़े।

(21) अपने वक़्ती चंद रोज़ा क़याम के मराहिल में से हर मरहले में हमेशा अपना कीमती वक़्त इबादत, तिलावत, ज़िक्र व अज़कार और हज के मसाइल सीखने, समझने में सर्फ़ करें, बिला वजह किसी भी अजनबी और अंजान शख़्स से राबता न बढ़ायें, चाहे वह आपकी इमारत का दरबान ही क्यों न हो, क्योंकि उसके नताइज अच्छे नहीं पाए गए।

(22) अगर आप को किसी हाजी के बारे में मालूमात हासिल करनी हो तो उसके लिए कॉनसलेट जनरल ऑफ़ इंडिया ने मुहल्ला मिस्फ़ला के इब्राहीम ख़लील रोड पर एक पिलग्रीम इन्फ़ॉरमेशन सेन्टर खोल रखा है यहां से हज कमेटी के ज़रीए हुए किसी भी हाजी साहब का सिर्फ़ नाम या पिलग्रीम पास नम्बर, हवाला नम्बर, बता कर उनकी रिहाइश और आमदो रफ़्त के बारे में सारी मालूमात हासिल की जा सकती हैं।

(23) ख़ुदा न ख़्वास्ता अगर आपका कोई सामान खो

जाए तो जहा हज ऑफ़िस में अपनी शिकायत दर्ज करायें वहीं मिस्फला मुहल्ला के हिजरत रोड पर वाकेअ ब्रांच हज ऑफ़िस नम्बर (1) से भी रूजूअ करें यहां कॉनसलेट ने हुज्जाजे किराम के खोये हुए सामानों को रखने के लिए कमरए अमानात के नाम से एक कमरा खास कर रखा है।

(24) मुअल्लिम साहब की तरफ़ से दिया गया पीला कलाई बंद हो या हज कमेटी की तरफ़ से मिला हुआ स्टील का कडा उन्हें खुद भी पहने रहें और अपनी जमाअत के कमज़ोरों, ज़ईफ़ों और औरतों को भी पहने रहने की ताकीद करते रहें, ताकि हज की ज़बरदस्त भीड़ में भूलने भटकने की सूरत में उन कलाई बंदों पर दर्ज तफ़सीलात की मदद से उनका पता ठिकाना मालूम करना आसान हो सके।

(25) मिना, अरफ़ात, मुज़दलिफ़ा वगैरा की चंद साअती कयामगाहें हों या मक्का मुकर्रमा और मदीना मनव्वरा की तवीलुलमुद्दती, दामन से लिपटी परेशानी छोटी मोटी हो या खुदा न ख़्वास्ता बड़ी से बड़े, कभी भी ख़ौफ़ व हरास को अपने पास न फटकने दें, बल्कि– "दिल और बढ गया कोई मुश्किल जो आ पड़ी" के उसूल के तहत मज़ीद हौसला मंदी और बुलंद हिम्मती से उनका मुकाबला करें। इसी तरह ये बात भी याद रहे कि किसी भी आफ़त व मुसीबत के गुज़रने के बाद उनमें गिरफ़्तार आदमियों को वहीं ढूंडा जाएगा जो उनकी मख़सूस जगहें हैं या जहां से वह बिछड़े हैं, लिहाज़ा ऐसे हज़रात को या तो अपनी जगहों से हटना ही नहीं चाहिए या अगर वक्त का तकाज़ा

हटना ही हो तो भी दोबारा मौका मिलते ही फिर अपनी जगह पर आ मौजूद होना चाहिए, ताकि कॉनसलेट का अमला या आपके रुफ़काए सफ़र आपको पाने और ख़बर गीरी में जल्द अज़ जल्द कामियाब हो सकें।

(26) पिछले सालों के तजरबात की रौशनी में आपको ये बता देना निहायत ही जरूरी है कि तकरीबन हर साल ही हज के अैयाम में कुछ धोकेबाज़ किस्म के लोग हुज्जाजे किराम से किसी न किसी तरह अपने रवाबित बढ़ाते हैं फिर उन्हें पूरी तरह अपने एतेमाद में लेकर सस्ती कुर्बानियों का झांसा देते हुए एक लम्बी रक़म ऐंठने में कामियाब हो जाते हैं, जबकि उनका मक़सद सिर्फ़ और सिर्फ़ हुज्जाजे किराम को ठगना होता है। आप इस किस्म के लोगों से हमेशा होशियार रहें। अपनी कुर्बानी या तो ख़ुद अपने हाथ से करें या अपने रुफ़क़ाए सफ़र में से किसी मोतबर शख़्स के ज़रीआ करायें या फिर बैंक से कुर्बानी का कूपन ख़रीद कर अंजाम दें।

(27) सफ़रे हज के दौरान तो हमेशा ही मगर ख़ुसूसन भीड़ की जगहों में अपने से कमज़ोरों, बूढ़ों, औरतों और बच्चों का पूरा पूरा ख़्याल और तआउन करते हुए सवाब का कोई भी मौक़ा हाथ से न जाने दें।

(28) यहां पर मुक़ीम अपने किसी भी मुलाक़ाती को अपने कमरे में बुलाने से परहेज़ करें, क्योंकि मक़ामी ज़िम्मादारों की तरफ़ से किसी को अपने कमरे में बुलाना मना है। इसके अलावा जिस कमरे में आप मुक़ीम हैं वहां दूसरे हुज्जाज भी तो रहते हैं? हो सकता है कि अजनबी का वजूद उनके लिए तकलीफ़ का बाइस हो। सब से अहम

बात ये है कि ख़ुदा न ख़्वास्ता उसी दौरान इमारत में अगर कोई गड़बड़ी पेश आ जाती है तो उस मुलाक़ाती के साथ साथ आपको भी पूछ गछ और इनक्वाइरी के मराहिल से गुज़रना पड़ेगा और इस तरह ख़्वाह मख़्वाह एक ग़ैर ज़रूरी मआमले में उलझ कर आप की इबादत व रियाज़त के क़ीमती औक़ात मुतअस्सिर होंगे। लिहाज़ा अगर किसी मुलाक़ाती से मिलना हो तो बाहर ही मिल कर रुख़सत कर दिया करें।

(29) अपने अइज़्ज़ा व अक़ारिब को बतौर तोहफ़ा देने के लिए तस्बीह, जानमाज़ और रूमाल जैसी जो भी छोटी मोटी चीज़ें ख़रीदनी हों उन्हें हज के बाद ख़रीदें, ख़रीदारी का इरादा करते वक़्त दो बातों का ख़्याल रखें। (1) मार्किट में जाने से क़ब्ल हर हाल में ज़रूरी चीज़ों की एक लिस्ट बना लें और उसी के मुताबिक़ ख़रीदें, ये लिस्ट मार्किट में पहुंच कर न बनायें, वरना ग़ैर ज़रूरी चीज़ें ख़रीद ली जाएंगी और ज़रूरी चीज़ें रह जाएंगी। (2) हवाई जहाज़ पर अपने साथ ले जाने के लिए एक महदूद वज़न की ही इजाज़त है, जिससे बढ़ने की सूरत में आपको हर किलो के हिसाब से ज़्यादा वज़न का चार्ज देना पड़ेगा। जबकि हिन्दुस्तान पहुंच कर कस्टम के मरहिल भी दरेपश होंगे। लिहाज़ा जिस हद तक हो सके कम से कम सामान ख़रीदें।

(30) हरम शरीफ़ की तक़रीबन हर फ़र्ज़ नमाज़ के बाद जनाज़े की नमाज़ का ऐलान होता है और नमाज़े जनाज़ा पढ़ी जाती है। चूनांचे फ़र्ज़ नामज़ों के बाद एहतियातन दो चार मिनट रुक कर ही उनकी सुन्नतें व नवाफ़िल की नीयत बांधे ताकि इतने बड़े मजमा में हरम शरीफ़ के

अन्दर पढ़ी जाने वाली नमाज़े जनाज़ा के सवाब से आप भी मुस्तफ़ीज़ हो सकें। जिसमें शिरकत की हदीस शरीफ़ में बड़ी फ़ज़ीलत है।

(31) मुअ़ल्लिम साहब की तरफ़ से आपको जो फ़ोटो वाला शनाख़्ती कार्ड दिया गया है वह सिर्फ़ मक्का मुकर्रमा, मिना, अ़रफ़ात और मुज़दलिफ़ा के लिए ही कारआमद है जद्दा के लिए नहीं। जैसा कि ख़ुद उस कार्ड पर भी सुर्ख़ हरफ़ों में लिखा हुआ है। लिहाज़ा क़तअ़न उस कार्ड के बल बूते पर जद्दा वग़ैरा का सफ़र न करें, क्योंकि ख़ुदा न ख़्वास्ता अगर आप रास्ते में पकड़े गए और अपनी तमाम तर कोशिशों के बावजूद हज से क़ब्ल न छूट सके तो फिर आपके हज का क्या होगा।

(32) अपने रुफ़क़ाए सफ़र बल्कि आ़म लोगों के साथ भी हमा वक़्त बुलंद तरीन अख़लाक़ का मुज़ाहरा करें जिसकी मामूली झलक ये है कि आपकी ज़ात से किसी को अदना सी भी तकलीफ़ न पहुंचे, यहां के सारे मुक़द्दस मक़ामात का तिही दिल से एहतेराम करें, जिसका सब से कमतर नमूना ये है कि हर उस अमल, बरताव, बात यहां तक कि ख़्याल से भी परहेज़ करें जिस पर आपका दिल थोड़ी सी भी बेइत्मीनानी महसूस करता हो।

(33) हरम शरीफ़ जाते हुए कपड़े या पलास्टिक की एक थैली रख लिया करें ताकि उसमें अपने जूते चप्पल रख सकें। नीज़ उसे ऐसी जगह रखना भी न भूलें जहां गुम होने या हरम शरीफ़ में सफ़ाई सुथराई करने वाले कारकुनों के हाथों फेंके जाने का अंदेशा न हो। (जूते अगर अपने साथ हों तो किसी भी गेट से निकल कर जा

सकते हैं।)

(34) हज की सख़्त भीड़ में हरम शरीफ़ के गेटों में खड़े हो कर अपने जूते चप्पल पहनना भी अपने पीछे निकलने वाले लोगों को अज़ीयत पहुंचाने के बराबर है, लिहाज़ा इससे बचते हुए अपने जूते चप्पल उन गेटों से थोड़ी दूर निकल कर पहना करें। (बशुक्रिया निदाए शाही हज व ज़ियारत नम्बर जनवरी 2001 ई0)

क्या मालदार ही हज कर के जन्नत के मुस्तहिक़ हैं?

सवालः हज कर के सिर्फ़ अमीर आदमी ही जन्नत में जा सकता है? क्योंकि उसके पास हज पर जाने के लिए मुनासिब रक़म है, जबकि ग़रीब महरूम है? और आज के ज़माना में किसी का हज भी क़बूल नहीं हो रहा है, क्योंकि मैदाने अरफ़ात में इस्लाम के दुश्मनों के नाबूद होने (मिटने) की दुआ बड़े खुशूअ व खुजूअ से करते हैं और उनका बाल भी बीका नहीं होता। दुनिया से बुराई ख़त्म होने की दुआ करते हैं, लेकिन बढ़ रही हैं, गोया ये उनके दुआ के न मक़बूल होने की अलामात हैं?

जवाबः हज सिर्फ़ साहबे इस्तिताअत लोगों पर फ़र्ज़ है। मगर जन्नत सिर्फ़ हज करने पर नहीं मिलती। बहुत से आमाल ऐसे हैं कि ग़रीब आदमी उनके ज़रीआ जन्नत कमा सकता है। हदीस शरीफ़ में तो ये आता है कि-- ''फ़ुक़रा व मुहाजिरीन, उमरा से आधा दिन पहले जन्नत में जाएँगे।''

हज किस का क़बूल होता है किसका नहीं? ये फ़ैसला तो क़बूल करने वाला ही कर सकता है, ये काम मेरे और आपके करने का नहीं और न हम किसी के बारे में ये

कहने के मजाज़ हैं कि उसकी फ़लां इबादत क़बूल हुई या नहीं। अलबत्ता हम ये कह सकते हैं कि जिसने शराइत की पाबंदी के साथ हज के अरकान सही तौर पर अदा किए उसका हज क़बूल हो गया। रहा दुआओं का क़बूल होना या न होना, ये अलामत हज के क़बूल होने या न होने की नहीं। बाज़ औक़ात नेक आदमी की दुआ बज़ाहिर क़बूल नहीं होती और बुरे आदमी की दुआ ज़ाहिर में क़बूल हो जाती है, इसकी हिकमतें और मसलिहतें भी अल्लाह तआला ही को मालूम हैं। और कभी ऐसा भी होता है कि बुराई और शर के ग़लबा की वजह से नेक लोगों की दुआऐं भी क़बूल नहीं होतीं। हदीस शरीफ़ में आता है– "कि एक वक़्त आएगा कि नेक आदमी आ़म लोगों के लिए दुआ करेगा, हक़ तआला शानहू फ़रमाऐंगे तू अपने लिए जो कुछ मांगना चाहता है मांग, मैं तुझ को अता करूंगा, लेकिन आ़म लोगों के लिए नहीं, क्योंकि उन्होंने मुझ को नाराज़ कर लिया है।"

(किताबुर्रक़ाइक़ सफ़्हा–155, 384)

और ये मज़मून भी अहादीस शरीफ़ में आता है कि तुम लोग नेकी का हुक्म करो और बुराई को रोको, वरना क़रीब है कि अल्लाह तआला तुम को अज़ाबे आ़म की लपेट में ले लें, फिर तुम दुआऐं करो तो तुम्हारी दुआऐं भी न सुनी जाएगी। (तिर्मिज़ी शरीफ़ जिल्द–2 सफ़्हा–39)

इस वक़्त उम्मत में गुनाहों की खुले बंदों इशाअ़त हो रही है और अल्लाह तआला के बहुत कम बंदे रह गए हैं जो गुनाहों पर रोक टोक करते हों।

इसलिए अगर इस ज़माने में नेक लोगों की दुआऐं भी

उम्मत के हक़ में क़बूल न हों तो इसमें कुसूर उन नेक लोगों या उनकी दुआओं का नहीं बल्कि हमारी शामते आमाल का कुसूर है। अल्लाह तआला हमें मआफ़ फ़रमाए। अमीन! (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–29)

झूट इन्दिराज कर के हज के लिए जाना?

सवालः हज के दरख़्वास्त फ़ॉर्म में इस बात का भी इक़रार होता है कि पांच साल के अन्दर हज न किया हो अगर कोई शख़्स जा चुका है, तो क्या ये शख़्स धोका देने वाला कहलाएगा या नहीं?

जवाबः हज अज़ीम इबादत है जिसके ज़रीआ सब गुनाह मआफ़ हो जाते हैं, झूट गुनाह है। इबादत के लिए गुनाह की इजाज़त नहीं, वैसे भी ख़िलाफ़े क़ानून चीज़ का इरतिकाब अपने माल और इज़्ज़त को ख़तरा में डालना है जो क़रीने दानिशमंदी नहीं।

(फ़तावा महमूदिया हिल्द–17 सफ़्हा–199)

मस्अलाः धोका देने वाला कहलाने में क्या शुब्हा है?

मस्अलाः उसके लिखने या दस्तख़त करने की इजाज़त नहीं। अगर ऐसा लिख देगा या दस्तख़त कर देगा तो गुनहगार होगा, मगर इससे जो हज्जे फ़र्ज़ अदा कर चुका है वह बातिल हो कर दोबारा हज करना फ़र्ज़ नहीं होगा, अलबत्ता हज्जे फ़र्ज़ के ज़रीआ से गुनाह से साफ़ हो कर पाक व साफ़ हो गया वह पाकी बादे ख़ता अब बाक़ी नहीं रहेगी, गुनाह में मलव्वस हो जाएगा। इसलिए ऐसा हरगिज़ न किया जाए।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–17 सफ़्हा–187)

मस्अलाः झूट, ज़बानी हो या तहरीरी, बहरहाल झूट

है और दरोग़ (झूट) हलफ़ी इससे भी ज़्यादा क़बीह और बुरा है। हलफ़िया दरोग़ ब्यानी की ज़रूरत नहीं, क्योंकि क़ानून की मुख़ालफ़त तो और भी ख़तरनाक है। जअ़ल (धोका) खुल जाने पर माल व इज़्ज़त दोनों का ख़तरा है। ऐसा ख़तरा मोल लेना क़रीने दानिशमंदी नहीं है। ताहम हज्जे फ़र्ज़ अदा हो ही जाएगा।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–171)

मस्अला: एक मरतबा हज करने के बाद पाँच साल तक हज को नहीं जा सकता, ऐसी पाबंदी लगाने का कोई शरअ़न हक़ नहीं है। झूटी क़सम खाना और झूटे हलफ़ नामा पर दस्तख़त करना गुनाह है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–171)

सवाल: ज़ैद सरकारी डॉक्टर है। इस साल हुकूमत की जानिब से वह बहैसियते मुलाज़िम सऊदिया अरबीया चार माह के लिए भेजा जा रहा है। ज़मानए हज में वह सऊदिया अरबीया में मुक़ीम रहेगा। ऐसी सूरत में अगर वह फ़रीज़ए हज अदा करेगा तो क्या उसके ज़िम्मा से फ़र्ज़ उतर जाएगा या साहबे इस्तिताअ़त होने के बाद दोबारा अपने ज़ाती मसारिफ़ से हज करना क्या ज़रूरी होगा?

जवाब: अगर वह सरकार के दिए हुए मसारिफ़ से हज करेगा तब भी फ़रीज़ए हज अदा हो जाएगा फिर साहबे इस्तिताअ़त होने से दोबारा हज फ़र्ज़ नहीं होगा।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–14 सफ़्हा–173)

सरकारी रुपया से हज करना?

सवाल: हुकूमत हज के ज़माना में हाजियों की देख भाल के लिए किसी को अफ़सर मुन्तख़ब कर के उसके

तमाम मसारिफ़ बरदाश्त करती है और उसके लिए बक़द्रे ज़रूरत तमाम रकम पेशगी दे देती है, वह मुन्तख़ब ऑफ़ीसर अपने फ़राइज़ अंजाम देने के साथ साथ हज्जे बैतुल्लाह भी अदा कर लेते हैं। उनका ये हज कैसा होगा? उनका ये हज फ़रज़ियते हज में शुमार होगा या नफ़्ल में?

जवाबः जब कोई शख़्स खुद साहबे निसाब नहीं जिससे उस पर हज फ़र्ज़ हो, यानी ज़ादे राह पर कादिर नहीं मगर वह पैदल पहुंच जाए या कोई उसको साथ ले जाए या किसी ने उसको रुपया दे दिया जिससे वह वहां पहुंच गया और हज अदा कर लिया तो उस का हज अदा हो जाएगा। फिर मालदार हो जोने पर उसके ज़िम्मा दोबारा हज फ़र्ज़ नहीं होगा। अलअशबाह वन्नज़ाइर में है कि– किसी फ़र्ज़ की अदाएगी के लिए जो शराइत हों उनकी तहसील मक़सूद नहीं बल्कि उनका हुसूल हो जाए ख़्वाह किसी तरीक़ा से हो तो भी काफ़ी है। इसी तरह यहां भी उसका हज अदा हो जाएगा।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–17 सफ़्हा–211)

"सरकारी मुलाज़िम, सरकारी मसारिफ़ से हज करने के लिए जाए या सरकारी दौरा पर जाए या किसी भी इदारा का मुलाज़िम सऊदी दौरा पर जाए तो सफर के दौरान हज करते हुए आ जाए तो उससे उसका फ़रीज़ए हज अदा हो जाएगा जब कि उस पर हज फ़र्ज़ हो गया हो। और अगर हज फ़र्ज़ नहीं था हज अदा करने के बाद मालदार हो गया यानी साहबे इस्तिताअ़त हो गया तो फिर भी

अपने पैसे से हज करना लाज़िम न होगा, क्योंकि ज़िन्दगी में सिर्फ़ एक मरतबा हज के जमाना में पहुंच कर हज अदा करने से ये फ़रीज़ा अदा हो जाता है, चाहे जिस तरीक़ा से भी पहुंच जाए। लेकिन मुतलक़ हज की नीयत करनी चाहिए अगर नफ़्ल हज की नीयत करेगा तो आइंदा का फ़रीज़ए हज अदा न होगा।" (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

क्या बैतुल्लाह शरीफ़ को देखने से हज फ़र्ज़ हो जाता है?

मस्अला: जिसने अपना हज न किया हो उसको हज्जे बदल मकरूह यानी ख़िलाफ़े औला है और जब वह (हज्जे बदल या उम्रा करने वाला) काबा शरीफ़ पहुंचता है तो वह दूसरे का एहराम (हज्जे बदल का) बांधे हुए होता है इस वास्ते उसको (देखने वाले पर) ज़ियारते काबा से हज फ़र्ज़ नहीं होता।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–2 सफ़्हा–199)

ताजिर व दुकानदार के लिए हज का हुक्म

मस्अला: जिस शख़्स के पास पचास हज़ार का सामान दुकान में मौजूद है। अगर उसमें से बक़द्र मसारिफ़े हज के फ़रोख़्त कर के इतना सरमाया दुकान में बाक़ी रहे कि उसमें तिजारत कर के ये शख़्स मअ़ अह्ल व अ़याल के मुतवस्सित हाल से गुज़र कर सके तो बक़द्र मसारिफ़े हज के सामान का बेचना लाज़िम है और उस पर हज फ़र्ज़ है। और बाक़ी में तिजारत कर के गुज़र न हो सके तो हज वाजिब नहीं है। बशर्तेकि उस शख़्स का गुज़र तिजारत पर ही हो।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–2 सफ्हा–153)

जिसके पास सिर्फ़ मवेशी या गल्ला हो उसके लिए हज का हुक्म

मस्अला: चालीस हज़ार के मवेशी (जानवर) हों तो अगर ये शख़्स काश्तकार या ज़मीनदार है और ये मवेशी सब के सब खेती के काम में मशगूल हैं या ये जानवर सवारी के लिए हैं और कभी कभी सवारी के काम में आते हैं तो इस हालत में उस पर हज फ़र्ज़ नहीं, न उन मवेशी का बेचना लाज़िम है। और अगर ये जानवर दूध पीने के लिए हैं और उसके अह्ल व अयाल का गुज़र उनके दूध ही पर है उसके सिवा और कोई सूरत मआश (कमाई) की नहीं, न ज़मीन का गल्ला है न और कुछ, तब भी उस पर उनका बेचना लाज़िम नहीं, बशर्तेकि अगर मसारिफ़े हज के लिए बाज़ को फ़रोख़्त किया जाए तो बाक़ी मवेशी से गुज़ारा न हो सके वरना हज फ़र्ज़ है। और अगर उसकी मआश उन जानवरों के दूध पर मौक़ूफ़ नहीं है या मौक़ूफ़ है, लेकिन उनमें से बक़द्र मसारिफ़े हज के एक दो या ज़्यादा जानवरों के फ़रोख़्त करने के बाद बाक़ी मांदा मवेशी गुज़ारा को काफ़ी हैं या ये जानवर तिजारती हैं और उनकी तिजारत पर उसका गुज़र मौक़ूफ़ नहीं या मौक़ूफ़ है, मगर मसारिफ़े हज के लिए दो या ज़्यादा बेचने के बाद बाक़ी मांदा की तिजारत उसके गुज़र को काफ़ी है तो बक़द्रे हज के एक या दो ज़्यादा जानवर को बेच कर उस पर हज करना फ़र्ज़ होगा। रहा गल्ला जो पचास हज़ार का है तो अगर ये सारा गल्ला सिर्फ़ खाने के ही इस्तेमाल में आता है तब तो हज फ़र्ज़ नहीं और अगर कुछ खाया जाता है बाक़ी बेचा जाता है तो

जितना ज़रूरत से ज़ायद है उसको बेच कर हज फ़र्ज़ होगा। जबकि वह ज़ाएद गल्ला फ़रोख़्त होने के बाद ज़ाद व राहिला व मसारिफ़े हज को काफ़ी हो। यानी उसके हज का ख़र्चा और सफ़रे हज के दौरान अह्ल व अयाल का ख़र्च काफ़ी हो।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–2 सफ़हा–153 व मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–79)

क्या माल ज़ाये होने पर हज साक़ित हो जाएगा?

मस्अला: अगर उसके पास माल बक़द्रे हज ऐसे वक़्त था कि लोग हज को नहीं जा रहे थे, बल्कि वक़्ते हज में देर थी और वक़्ते हज आने से पहले ही वह माल ज़ाये हो गया तो उसके ज़िम्मा हज नहीं, अगर ज़मानए हज में माल था और उसने इरादा कर लिया था, मगर बग़ैर उसके इख़्तियार के माल ज़ाये हो गया तब भी उसके ज़िम्मा हज फ़र्ज़ नहीं। अगर खुद अपने इख़्तियार से माल ऐसी जगह ख़र्च कर दिया जहां शरीअ़त की तरफ़ से ख़र्च करने का हुक्म नहीं था तो उसके ज़िम्मा हज लाज़िम होगा। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–179)

ज़मीन बेच कर हज करना?

सवाल: जिस शख़्स के पास ज़मीन है, नक़द रुपये मौजूद नहीं तो क्या ज़मीन फ़रोख़्त कर के हज करना ज़रूरी है?

जवाब: जिस शख़्स के पास इतनी ज़्यादा ज़मीन हो कि उसका एक टुकड़ा हज के ख़र्चा के लिए फ़रोख़्त करने के बाद भी इतनी ज़मीन बाक़ी रहे जो उसके और अह्ल व अयाल के गुज़र के लिए काफ़ी है तो ऐसे शख़्स

के ज़िम्मा अपनी ज़मीन का कुछ हिस्सा हज के लिए फ़रोख़्त करना लाज़िम है और उस पर हज फ़र्ज़ है। और अगर मसारिफ़े हज के वास्ते एक टुकड़ा ज़मीन का बेचने के बाद बाक़ी ज़मीन उसके और उसके अह्ल व अ़याल के गुज़रा को काफ़ी नहीं रहती तो इस हालत में उस पर हज फ़र्ज़ नहीं और न ज़मीन का फ़रोख़्त करना फ़र्ज़ है।

(इमदादुल अहकाम जिल्द–2 सफ़्हा–152, बहवाला ख़ानिया, जिल्द–1 सफ़्हा– व हाकज़ा अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–516, मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–79)

मस्अला: अगर जाएदाद व सहराई ज़मीन इस क़दर है कि उसकी आमदनी और पैदावार उसके और अह्ल व अ़याल के सालाना ख़र्च से ज़्यादा नहीं है तो उस पर हज फ़र्ज़ नहीं और फ़रोख़्त करना ज़मीन का उसके ज़िम्मा लाज़िम नहीं। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–515 बहवाला रद्दुलमुह्तार किताबुलहज जिल्द–2 सफ़्हा–196 व हाकज़ा अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–532)

मस्अला: जो ज़मीन जाएदाद गुज़र औक़ात से ज़्यादा न हो उसको फ़रोख़्त न करने की वजह ये है कि दूसरे की मिलकियत से बसर औक़ात करना शरअ़न मोतबर नहीं। अपनी आमदनी का लिहाज़ किया जाता है और शरीअ़त में लिहाज़ जाइज़ आमदनी का है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–537)

जाएदाद गिरवी रख कर हज को जाना

मस्अला: अगर हज फ़र्ज़ हो चुका हो तो क़र्ज़ लेकर हज कर सकते हो, और रिहन करना जाएदाद का इस तरह कि नफ़ा उसका मुरतहिन लेवे तो जाइज़ नहीं और

अगर मुनाफ़ा ज़मीन का मुरतहिन न लेवे तो दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–517 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–5 सफ़्हा–462)

मस्अला: मालिके मकान खुद अपने मकान में ऊपर रहता है और नीचे का मकान ज़ाएद अज़ हाजत है तो उस पर हज फ़र्ज़ नहीं हुआ। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–537 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–194)

मस्अला: किसी के पास इतना बड़ा मकान है कि उसका थोड़ा सा हिस्सा रहने के लिए काफ़ी है और बाक़ी को बेच कर हज कर सकता है तो उसका बेचना वाजिब नहीं है, लेकिन अगर ऐसा करे तो अफ़ज़ल है।

मस्अला: अगर किसी शख़्स के पास इतना बड़ा मकान है कि उसको बेच कर हज भी कर सकता है और छोटा सा मकान भी ख़रीद सकता है तो उसका बेचना ज़रूरी नहीं है अगर ऐसा करे तो अफ़ज़ल है।

मस्अला: किसी के पास ज़रूरत से ज़ाएद मकान है, या ज़रूरत से ज़ाएद सामान है या ज़मीन वग़ैरा है कि उसकी आमदनी का मुहताज नहीं है और उनकी इतनी मालियत है कि उनको बेच कर हज कर सकता है तो उनको हज के लिए बेचना वाजिब है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज जिल्द– सफ़्हा–79)

नाजाइज तौर पर क़ब्ज़ा की गई रक़म से हज करना?

सवाल: किसी की ज़ाती चीज़ पर दूसरा आदमी क़ब्ज़ा करे और उसका मालिक बन बैठे तो क्या वह हज कर सकता है?

जवाब: दूसरे की चीज़ पर नाजाइज़ कब्ज़ा कर के

उसका मालिक बन बैठना गुनाहे कबीरा और संगीन जुर्म है। ऐसा शख़्स अगर हज पर जाएगा तो हज से जो फ़वाइद मतलूब हैं वह उसको हासिल नहीं होंगे। हज पर जाने से पहले आदमी को इस बात का एहतेमाम करना चाहिए कि उसके ज़िम्मा जो किसी का हक़ वाजिब हो उसे अदा कर दे। किसी की अमानत उसके पास हो तो उसे वापस कर दे। किसी की चीज़ क़ब्ज़ा कर रखी हो तो उसको वापस कर दे। किसी का हक़ दबा रखा हो तो उसको अदा कर दे। इसके बग़ैर अगर हज पर जाएगा तो महज़ नाम का हज होगा। हदीस शरीफ़ में है– "एक शख़्स दूर से (बैतुल्लाह शरीफ़ के) सफ़र पर जाता है, उसके बाल बिखरे हुए हैं, बदन (सफ़र की वजह से) मैल कुचैल से अटा हुआ है वह रो रो कर अल्लाह को या रब या रब कह कर पुकारता है, हालांकि उसका खाना हराम, लिबास हराम, उसकी ग़िज़ा हराम, उसकी दुआ कैसे क़बूल हो।"

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–41 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–116)

मस्अला: ग़सब की हुई रक़म से हज करेगा तो ज़िम्मा से हज साक़ित हो जाएगा मगर मक़्बूल न होगा। और किसी का हक़ दबा लेने का गुनाह भी होगा।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–172)

रिश्वत लेने वाले का हलाल कमाई से हज करना?

सवाल: मैं जिस जगह काम करता हूं उस जगह पर ऊपर की आमदनी बहुत है, लेकिन मैं अपनी तन्ख़्वाह जो कि हलाल है अलाहिदा रखता हूं। क्या मैं अपनी तन्ख़्वाह

से हज कर सकता हूं जबकि मेरी तन्ख़्वाह में एक पैसा भी हराम नहीं है?

जवाब: जब आप की तन्ख़्वाह हलाल है तो उससे हज करने में क्या इश्काल है?

ऊपर की आमदनी, से मुराद अगर हराम का रुपया है तो उसके बारे में आपको पूछना चाहिए था कि हलाल की कमाई तो मैं जमा करत हूं और हराम की कमाई खाता हूं। मेरा ये तर्ज़े अमल कैसा है? हदीस शरीफ़ में है– "कि जिस जिस्म की ग़िज़ा हराम की हो दोज़ख़ की आग उसकी ज़्यादा मुस्तहिक़ है।" अलग़रज़ आप हज के लिए जाना चाहते हैं तो हराम कमाई से तौबा करें।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–42)

तोहफ़ा या रिश्वत की रक़म से हज करना?

सवाल: मैं एक दफ़्तर में मुलाज़िम हूं मेरी तन्ख़्वाह इतनी नहीं है कि पैसे जमा कर के हज कर सकूं। मेरे पास दफ़्तर में थोड़ी थोड़ी कर के बतौर तोहफ़ा रक़म मिली हुई है। मैंने कभी हुकूमत से कोई बेईमानी या धोका दे कर रक़म नहीं ली, बल्कि ज़बरदस्ती रक़म दी गई है बतौरे तोहफ़ा, क्या इस रक़म से हज करना जाइज़ है?

जवाब: हज एक मुक़द्दम फ़रीज़ा है मगर ये उसी पर फ़र्ज़ है जो उसकी इस्तिताअ़त रखता हो। आपको जो रक़म तोहफ़ा में मिली है अगर आप मुलाज़िम न होते, क्या तब भी ये रक़म आप को मिलती? अगर जवाब नफ़ी में है तो ये तोहफ़ा नहीं है रिश्वत है और इससे हज करना जाइज़ नहीं, बल्कि जिन लोगों से ये रक़म ली गई उनको लौटाना ज़रूरी है।

(आपके मसाइल जिल्द--4 सफ़्हा--43 व हाकज़ा फ़तावा रशीदिया सफ़्हा–463 किताबुलहज)

रिश्वत के ज़रीआ मुलाज़मत हासिल करने वाले का हज?

मस्अला: रिश्वत दे कर मुलाज़मत हासिल करना नाजाइज़ है, मगर मुलाज़मत हो जाने के बाद अपनी मेहनत से उसने जो रुपया कमाया है वह हलाल है। उस रक़म से हज करना या अपने वालिदैन को हज कराना जाइज़ है। (आपके मासाइल जिल्द–4 सफ़्हा–47)

मस्अला: दफ़ए ज़ुल्म और अपने जाइज़ हक़ हासिल करने के लिए रिश्वत देनी पड़े तो गुंजाइश है मगर दूसरे की हक़ तल्फ़ी न हो, इसकी रिआयत ज़रूरी है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–113 व हाकज़ा दुर्रेमुख़्तार मअ शामी जिल्द–1 सफ़्हा–198)

हराम कमाई से हज करना?

सवाल: ये तो मुत्तफ़क़ा मस्अला है कि हज हराम की कमाई का क़बूल नहीं होता, लेकिन मैंने एक मौलवी साहब से सुना है कि ये शख़्स किसी ग़ैर मुस्लिम से क़र्ज़ लेकर हज के वाजिबात अदा करे तो उम्मीद की जाती है अल्लाह से कि उसका हज क़बूल हो जाएगा। पूछना ये है कि ग़ैर मुस्लिम का माल तो वैसे भी हराम है तो ये कैसे हज अदा होगा?

जवाब: ग़ैर मुस्लिम तो हराम व हलाल का क़ाएल ही नहीं, इसलिए हलाल व हराम उसके हक़ में यकसां है और मुसलमान उससे क़र्ज़ लेगा तो वह रक़म मुसलमान के लिए हलाल होगी। उससे सदक़ा कर सकता है, हज कर सकता है। बाद में जब उसका क़र्ज़ हराम पैसे से

अदा करेगा तो ये गुनाह होगा, लेकिन हज में हराम पैसे इस्तेमाल न होंगे। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–42)

मस्अला: ग़ैर मुस्लिम से रुपया क़र्ज़ लेकर हज को जाने की अस्ल ये है कि कुफ़्फ़ार मुख़ातब बिलफ़ुरूअ नहीं, इसलिए ग़ैर मुस्लिम से जो क़र्ज़ लिया जाएगा वह शुब्हात से ख़ाली होगा, दूसरे अगर हज को जाने वाले के पास मुश्तबह रक़म हो तो उस मुश्तबह रक़म से हज करना बेहतर नहीं, उसको चाहिए कि क़र्ज़ लेकर हज को जाए, मगर मुसलमान से क़र्ज़ लेकर उसके क़र्ज़ को मुश्तबह माल से अदा करना अशद है और ग़ैर मुस्लिम के क़र्ज़ को उससे अदा करना अशद नहीं गो शदीद है।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–2 सफ़्हा–159 व हाकज़ा (ऐसा ही) फ़तावा रहीमिया जिल्द–6 सफ़्हा–403)

हिजड़ा पन की कामई से हज करना?

मस्अला: हिजड़ा पन की ज़िन्दगी गुज़ारने वाला उन तमाम ग़ैर शरई अफ़आल से तौबा करे और जो रुपया उनके पास जमा है, जो उस (धंदा व तरीक़े) से कमाया है उससे हज न करें, बल्कि किसी ग़ैर मुस्लिम से हज के लिए क़र्ज़ लेकर हज करें। और जो रक़म उसके पास जमा है उससे क़र्ज़ अदा कर दें। आइंदा के लिए ज़नाना वज़्अ छोड़ दें मर्दाना लिबास पहनें और उसका डेरा (ठिकाना, अड्डा) भी ख़त्म कर दें।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–159)

बॉंड की रक़म से हज करना?

मस्अला: पराइज़ बॉंड पर जो रक़म मिलती है वह जुवा है और सूद भी, जुवा इस तरह है कि बॉंड ख़रीदने

वालों में से किसी को मालूम नहीं होता कि उसको इस बॉंड के बदला में दस रुपये ही मिलेंगे या मसलन पचास हज़ार। और सूद इस तरह है कि पराइज़ बॉंड ख़रीद कर उस शख़्स ने मुतअल्लिक़ा इदारा को दस रुपये क़र्ज़ दिए और इदारा ने उस रुपये के बदला उसको पचास हज़ार दस रुपये वापस किए, अब ये ज़ाएद रक़म जो इनआम के नाम पर उसको मिली है ख़ालिस सूद है और ख़ालिस सूद की रक़म से उम्रा और हज करना जाइज़ नहीं है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–45)

मस्अला: हराम माल से हज करना नहीं चाहिए, ताहम अगर कर लिया जाएगा तो फ़रीज़ा अदा हो जाएगा लेकिन हज्जे मक़बूल का सवाब न होगा। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–192 बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–191 व हाकज़ा मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–81)

मस्अला: जो माल नाजाइज़ तरीक़ा से जमा किया है उसको मिन्हा करने के बाद अगर हज के लिए काफ़ी हो तो हज फ़र्ज़ होगा वरना हज फ़र्ज़ न होगा। और जो माले हराम जमा किया है उसके अस्ल मालिक को अगर वह मर चुका है तो उसके वुरसा को वापस करना ज़रूरी है अगर न मालिक मौजूद हों न उसके वुरसा मौजूद हों तो बनीयते गुलूख़लासी (छुटकारा की नीयत से) उसका सदक़ा करना ज़रूरी है। (ज़िम्मा को फ़ारिग़ करना मक़सूद है सवाब की नीयत न की जावे।)

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–207 हाकज़ा फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–516 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–191 हज बमाले हराम)

मुलाज़िमीन से चंदा लेकर हज के लिए कुरआ निकालना?

सवालः हमारी यूनियन ने एक हज स्कीम निकाली है वह हर मुलाज़िम से पच्चीस रुपया माहवार ज़बरदस्ती एक साल तक लेती है। उस पैसे से कुरआ अंदाज़ी कर के दो मुलाज़िम को हज के लिए कहा है। क्या उस पैसे से हज जाइज़ है जब कि मुलाज़िम यूनियन के ख़ौफ़ से चंदा देता है दिल से नहीं?

जवाबः जो सूरत आप ने लिखी है इस तरह हज पर जाना जाइज़ नहीं है। ज़बरदस्ती रक़म जमा कराना और उसका कुरआ निकालना ये दोनों चीज़ें नाजाइज़ हैं।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–43)

हज के लिए ड्राफ्ट पर ज़्यादा रक़म देना?

मस्अलाः ड्राफ़्ट मंगाने की जो सूरत आप ने लिखी है यानी 32 हज़ार देकर 30 हज़ार रुपया लेना ये तो समझ में नहीं आती। अलबत्ता अगर पाँच हज़ार रुपया एजेंट को बतौरे उजरत दिए जाएँ तो कुछ गुंजाइश हो सकती है। रुपया के बदले डालर या कोई और करेंसी ली जाए तो जाइज़ है।

मस्अलाः अगर कोई इदारा ड्राफ़्ट मंगवा देता हो और ज़ाएद रक़म हक़्क़े मेहनत के तौर पर वसूल करता हो तो ये भी जाइज़ है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–44)

बेटी की कमाई से हज करना?

सवालः अगर बेटी अपनी कमाई से माँ बाप को हज कराना चाहे तो क्या ये हज जाइज़ है जबकि उसके बेटे इस क़ाबिल नहीं हैं?

जवाबः बिला शुब्हा हज जाइज़ है, लेकिन औरत का

महरम के बग़ैर हज जाइज़ नहीं।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–33)

नाफ़रमान बेटे का हज को जाना?

सवाल: माँ बाप के नाराज़ होने पर क्या बेटे का हज हो जाएगा? सुना है कि बाप मआफ़ न करे तो हज नहीं होता?

जवाब: अगर उसके ज़िम्मा हज फ़र्ज़ है तो उसको हज पर जाना लाज़िम है और उसका फ़र्ज़ भी सिरे से उतर जाएगा, लेकिन हज पर जाने वाले के लिए ज़रूरी है कि हज़ पर जाने से पहले तमाम अह्ले हुकूक़ के हक अदा करे और सब से हुकूक़ मआफ़ कराये।

पस आपके बेटे को चाहिए कि वह आपको राज़ी कर ले और मआफ़ी मांग ले, अगर आप उसको मआफ़ नहीं करेंगे तो इससे उसका नुक़सान होगा (फ़र्ज़ तो अदा हो जाएगा लेकिन हुकूक़ अदा न करने का गुनाह होगा) आपका भी कोई फ़ाएदा न होगा। और अगर आप मआफ़ कर देंगे तो हो सकता है कि उसकी हालत सुधर जाए इसमें उसका भी फ़ाएदा है और आपका भी।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–35)

मस्अला: हज्जे फ़र्ज़ के लिए वालिदैन की इजाज़त ज़रूरी नहीं, अलबत्ता हज्जे नफ़्ल वालिदैन की इजाज़त के बग़ैर नहीं करना चाहिए।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–37)

मस्अला: जो शख़्स साहबे इस्तिताअत हो तो ख़्वाह उसके वालिदैन ने हज न किया हो उसके ज़िम्मा हज फ़र्ज़ है और हज्जे फ़र्ज़ के लिए वालिदैन की इजाज़त

ज़रूरी नहीं है। (आपके मसाइल जिल्द–5 सफ़हा–37)

मस्अला: वालिदा की नाराज़गी की हालत में हज को जाए तो उस शख़्स का हज तो अदा हो गया, वह एक मुस्तकिल इबादत थी जो अदा करने से अदा हो गई, लेकिन माँ (बाप) की नाराज़गी का जो गुनाह उसकी गर्दन पर है उसकी मुकाफ़ात (जबकि वालिदा का इंतिकाल हो गया हो) इसके अलावा क्या हो सकता है कि तौबा व इस्तिग़फ़ार के बाद उनके लिए ईसाले सवाब करे, मौत के बाद ईसाले सवाब ही एक ऐसा ज़रीआ है जिससे मैयत की रूह खुश होती है इसका नफ़ा पहुंचा है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़हा–531)

मस्अला: हज फ़र्ज़ न होने की सूरत में बिला इजाज़त वालिदैन के हज के लिए जाना जाइज़ नहीं है जबकि वालिदैन को उसकी ख़िदमत की ज़रूरत हो।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़हा–531)

पहले ख़ुद हज करे या वालिदैन को कराए?

सवाल: साहबे इस्तिताअत पहले अपना हज करे या ग़ैर मुस्ततीअ वालिदैन को कराए?

जवाब: सूरते मस्ऊला में अगर लड़के के पास इतनी इस्तितअत हो कि वालिदैन को अपने साथ ले जा सकता है तो वालिदैन को हमराह ले जाए। और अगर उस वक़्त वालिदैन को साथ ले जाने की हैसियत न हो, ख़ुद जाने की इस्तितअत हो, तो उस वक़्त अपना फ़रीज़ा अदा करना चाहिए, पहले वालिदैन को हज कराना, उसके बाद फिर ख़ुद जाना ये शरई हुक्म नहीं है। इस्तिताअत हो जाने पर वालिदैन को भी हज कराने की नीयत रखे और कोशिश

करता रहे। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़हा–282 व हाकज़ा फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़हा–178)

मस्अला: जब खुद अपने ज़िम्मा हज फ़र्ज़ है तो वालिदैन को हज कराने से उसका अपना फ़र्ज़ अदा न होगा उसको खुद अपना फ़र्ज़ हज अदा करना लाज़िम है।

(फ़तावा दारूलउलूम जिल्द–6 सफ़हा–542 व हाकज़ा आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–72)

मस्अला: औलाद के ज़िम्मा बाप को हज कराना ज़रूरी नहीं है, लेकिन अगर अल्लाह तआला ने औलाद को माल दिया है तो माँ बाप को हज कराना बड़ी सआदत है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–72)

मस्अला: मर्द हज के जाने के लिए बीवी की इजाज़त का पाबंद नहीं, हां ये ज़रूरी है कि उसके लिए वापसी तक नफ़क़ा (ज़रूरी ख़र्चा) का इंतिज़ाम कर के जाए।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–2 सफ़हा–156)

"यहां ये बात क़ाबिले तवज्जोह है कि बाज़ लोग नावाक़िफ़ीयत की वजह से ये समझते हैं कि जब तक वालिदैन को हज न करायें खुद उनका हज अदा ही न होगा और इस ग़लत ख़्याल की बुनियाद पर बूढ़े वालिदैन को हज के लिए रवाना कर देते हैं फिर उन ज़ईफ़ लोगों को हज में जिन परेशानियों का सामना करना पड़ता है वह नाक़ाबिले ब्यान हैं। इसलिए अच्छी तरह समझ लें कि अपने फ़र्ज़े हज की अदाएगी वालिदैन के हज पर मौक़ूफ़ नहीं है। पहले खुद को अपना फरीजा अदा करना चाहिए।

और अगर वालिदैन को हज कराने का ख़्याल हो तो ख़िदमत के लिए उनके साथ ज़रूर जाएं उन्हें दूसरों के हवाले न करें।"

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

हज मुक़द्दम है या बच्चे की शादी?

सवालः मैं सरकारी मुलाज़िम था रिटाएर होने पर सत्तर हज़ार रुपया मुझे मिला, मेरा इरादा हज का था, मगर इत्तिफ़ाक़ से इस दरमियान मेरे लड़के की शादी की उम्मीद हो रही है, तो मैं पहले हज करूं या बच्चे की शादी के लिए ये रक़म जमा करूं?

जवाबः सूरते मस्ऊला में आपके पास जो रक़म है वह आपके हवाइजे अस्लीया के अलावा मक्का मुकर्रमा तक आमदोरफ़्त के लिए किराया और दीगर इख़राजात के लिए काफ़ी हो और जिनका ख़र्चा आपके ज़िम्मा लाज़िम हो सफ़रे हज से वापसी तक के लिए उनको ख़र्चा दे सकते हों तो आप पर हज फ़र्ज़ है, पहले अपने फ़रीज़ए हज को अदा कर लिया जाए, मुमकिन है बाद में कोई रुकावट पेश आ जाए और आप हज की सआदत से महरूम रह जायें और ये अज़ीम फ़रीज़ा आपके ज़िम्मा बाक़ी रह जाए।

औलाद का निकाह भी बहुत ज़रूरी है अहादीस शरीफ़ में इसकी बहुत ताकीद आई है फ़रीज़ए हज से फ़राग़त के बाद उनकी शादी की भी फ़िक्र और इंतिज़ाम किया जाए, मगर उनकी शादी की वजह से हज मुअख़्ख़र न किया जाए, फुक़हाए किराम ने मक्का मुकर्रमा तक आमदो रफ़्त का किराया और जिनका ख़र्चा ज़रूरी है उनके ख़र्चा

का इंतिज़ाम करने पर कादिर होना ब्यान किया है, बच्चो की शादी का ख़र्च ब्यान नहीं किया, यहां तक कि मदीना तैयबा के मुबारक सफ़र का ख़र्च भी हज की फ़रज़ियत के लिए ज़रूरी क़रार नहीं दिया है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–276 बहवाला जुबदतुलमनाकसिक जिल्द–1 सफ़्हा–12 व हाकज़ा मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–91)

एक फ़तवा ये भी है कि एक शख़्स के पास इस क़दर माल था कि वह हज कर सकता था, लेकिन उसने हज तो न किया बल्कि वह रुपया औलाद की शादी में लगा दिया। अब वह मुफ़्लिस हो गया अगर वह तमाम उम्र मुफ़्लिस रहे और माल जमा न किया तो?

जवाब: उस पर हज फ़र्ज़ हो चुका था, अगर बिला हज किए मर गया तो हज्जे फ़र्ज़ का छोड़ने वाला हुआ और (हज न करने की वजह से) गुनहगार हुआ।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–518 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–14 सफ़्हा–165)

मस्अला: आज कल रस्म व रिवाज ने शादी के लिए जो पाबंदियां लाज़िम कर दी हैं वह अक्सर ऐसी हैं जो कि शरअन लाज़िम नहीं बल्कि शरअन नाजाइज़ हैं, अगर मसनून तरीक़ा से शादी की जाए तो हज को मुलतवी या मुअख़्ख़र करने की ज़रूरत पेश नहीं आए।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–178)

मुलाज़मत की तलाश में हज की नीयत करना?

सवाल: एक शख़्स की माली हालत ठीक न होने की वजह से उस पर हज फ़र्ज़ नहीं है, वह मुलाज़मत की ग़रज़ से जद्दा जाना चाहता है लेकिन मुलाज़मत के लिए

वीज़ा नहीं मिल सकता इसलिए वह हज के वीज़ा पर जद्दा का इरादा रखता है तो क्या ये हज व मुलाज़मत दोनों की नीयत करे? क्योंकि अस्ल मक़्सद मुलाज़मत है? क्या ये हज के वक़्त हज कर सकता है?

जवाबः जब उस पर हज फ़र्ज़ नहीं तो मुलाज़मत की ग़रज़ से जद्दा का सफ़र करने में कोई हरज नहीं, बल्कि हज की नीयत हो तो सवाब का मुस्तहिक़ होगा। अगर अस्बाबे हज मुयस्सर हो जाएँ तो ज़रूर हज करे, वरना लाज़िम नहीं है, और इस तरह जाने में शरअन कोई क़बाहत नहीं है। (फतावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़हा–316 व हाकज़ा अहकामुलकुरआन सफ़हा–351)

मुलाज़मत ख़त्म होने के ख़ौफ़ से हज में ताख़ीर करना?

सवालः मैं अभी तक सरकारी ग़ैर मुस्तकिल मुलाज़िम हूं और ग़ैर मुस्तकिल होने की वजह से मेरे हुक्काम को बिल्कुल इख़्तियार है चाहे जिस रोज़ और जिस वक़्त मुझे (ख़्वाह कोई कुसूर हो या न हो) बरख़्वास्त कर दें, चूंकि हज के लिए मुझ को तवील रुख़्सत की दरख़्वास्त देना होगी, लिहाज़ा बजाए रुख़्सत के मंज़ूर करने के मुझे ग़ालिब अंदेशा है कि वह यही हुक्म देंगे कि जाइये हम ने हमेशा के लिए आपको अलग कर दिया। मालूम ये करना है कि अब तक मैं फ़र्ज़ हज अदा करने नहीं गया और अभी चंद साल तक छुट्टी की वजह से जाना मुलतवी रहेगा तो मैं गुनहगार तो न हूंगा?

जवाबः ताख़ीरे हज बिला उज़्र से गुनाह होता है और जो ताख़ीर उज़्र की वजह से हो उससे गुनाह नहीं होता ये तो क़ाएदा कुल्लिया है। अब रहा ये उज़्र जो

आप ने ब्यान किया वह उज़्र है या नहीं? तो मैंने मौलाना थानवी (रह.) से दरयाफ्त किया तो उन्होंने फ़रमाया मेरे नज़दीक परेशानिये रोज़गार उज़्र है।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–2 सफ़्हा–164)

कोई हुकूमत हज न करने दे तो क्या हुक्म है?

सवालः चंद साल हो गए "बरमा" का कोई आदमी हज नहीं कर सकता, हुकूमते बरमा की तरफ़ से बिल्कुल इजाज़त नहीं है, तो इस हाल में जिस पर हज फ़र्ज़ हुआ और वह हज न कर सके तो गुनहगार होगा या नहीं?

जवाबः इमाम अबूहनीफ़ा (रह.) के नज़दीक इस सूरत में हज फ़र्ज़ नहीं हुआ। साहिबैन (इमाम अबू युसूफ़ 'रह.' व इमाम मुहम्मद 'रह.') के यहां उस पर हज्जे बदल कराना फ़र्ज़ है। फिर उज़्र ज़ाएल हो गया तो दोबारा खुद हज करें। ये क़ौल मुसह्हा है। अव्वल अगरचे औसअ़ है मगर दूसरा अहवत होने के अलावा अक्सर मशाइख़ का मुख़्तार भी है।

लिहाज़ा हज की कोई सूरत मुमकिन न हो तो इस पर अमल करना लाज़िम है। ये इख़्तिलाफ़ उस सूरत में है कि हुकूमत के मना करने से पहले हज फ़र्ज़ न हुआ हो, अगर पहले से फ़र्ज़ था उसके बाद आजिज़ हो गया तो बिला इख़्तिलाफ़ दूसरे से हज कराना फ़र्ज़ है।

(अहसनुलफतावा जिल्द–4 सफ़्हा–518 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–154)

हज और ज़कात की फ़रज़ियत में फ़र्क़

ज़कात की फ़रज़ियत और हज की फ़रज़ियत में फ़र्क़ ये है कि ज़कात तो साहबे निसाब पर एक साल पूरा

होने के बाद फ़र्ज़ होती है अगर पूरा माल साल से पहले ख़त्म या निसाब से कम हो जाए तो ज़कात वाजिब नहीं होगी, जब कभी माल निसाब के बराबर होकर साल गुज़र जाएगा तो ज़कात वाजिब हो जाएगी और जब तक भी माल निसाब के बराबर रहेगा हर साल ज़कात अदा करनी होगी।

हज की फ़रज़ियत के लिए ये ज़रूरी है कि ज़िन्दगी में एक बार मक्का मुकर्रमा तक आमदो रफ़्त का सफ़रे ख़र्च और वहां पर क़याम व तआम व कुर्बानी वग़ैरा का ख़र्च और अहल व अयाल का हज से वापसी तक ख़र्चा की रक़म का होना ज़रूरी है, क़र्ज़ अदा करने के बाद तो हज फ़र्ज़ हो जाएगा।

अगर इतनी रक़म आपको ज़िन्दगी में मिली और ख़र्च या चोरी हो गई तो भी आपके ज़िम्मा हज की फ़रज़ियत बाक़ी रहेगी। अगर आइंदा मरते दम तक इतनी रक़म जमा न हो सकी जब भी हज की फ़रज़ियत बदस्तूर बाक़ी रहेगी और आपके ज़िम्मा ज़रूरी होगा कि वसीयत कर के मरे कि मेरे तरका में से शरई तौर पर हज्जे बदल करायें।

> नीज़ हज ज़िन्दगी में इतनी रक़म होने पर
> एक बार फ़र्ज़ होता है और ज़कात साहबे
> निसाब पर हर साल। (रफ़अ़त क़ासमी)

क्या साहबे निसाब पर हज फ़र्ज़ है?

सवाल: एक मौलाना कहते हैं कि जिसके पास साढ़े सात तोला सोना या बावन तोला चांदी हो वह साहबे माल है उस पर हज फ़र्ज़ हो जाता है। यानी जो साहबे

ज़कात है उस पर हज फ़र्ज़ हो जाता है, सही क्या है?

जवाब: इससे हज फ़र्ज़ नहीं होता बल्कि हज उस पर फ़र्ज़ होता है जिसके पास हज का सफ़रे ख़र्च भी हो और गैर हाज़िरी में अह्ल व अयाल का ख़र्च भी हो।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–30)

मस्अला: अगर वालिदैन के पास रक़म न हो और बेटा उनको हज की रक़म दे दे तो उस रक़म का मालिक बनते ही बशर्तेकि उन पर कोई क़र्ज़ न हो, उन पर हज फ़र्ज़ हो जाएगा।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–72)

हज की फ़र्ज़ियत और अह्ल व अयाल की किफ़ालत

सवाल: मैं मुलाज़मत से रिटाएर हुआ हूं, फ़ंड यक मुश्त हुकूमत ने दिया है। अब ये रक़म हज के लिए और उस अरसा तक अह्ल व अयाल के ख़र्च के लिए काफ़ी होती है, मगर हज से वापस आना होगा तो रोज़गार के लिए मेरे पास कुछ भी न होगा। क्या ऐसी हालत में हज फ़र्ज़ होगा या नहीं? नीज़ क़ासिम की एक दुकान है जिसकी तिजारत से अपना व बच्चों का गुजर करता है। अगर क़ासिम दुकान बेच कर हज करने चला जाए तो पीछे बच्चों के लिए उसी रक़म से गुज़र हो सकता है। क्या इस सूरत में उस पर हज फ़र्ज़ होगा या नहीं?

जवाब: दोनों सवालों का जवाब एक ही है कि हज से वापसी तक उसके पास इतनी रक़म, पूंजी होनी चाहिए कि जिससे उसके अह्ल व अयाल की बक़द्रे ज़रूरत किफ़ालत हो सके। मज़कूरा बाला सूरतों में हज फ़र्ज़ नहीं होगा। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–31)

मस्अला: अगर किसी के पास इतना रुपया हो कि सिर्फ़ हज कर सकता है और मदीना मुनव्वरा नहीं जा सकता तो उस पर हज फ़र्ज़ हो गया, हज अदा करे, मदीना मुनव्वरा जाने के लिए रुपये जमा होने का इंतिज़ार न करे। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–518 बहवाला रद्दुलमुह्तार किताबुलहज जिल्द–2 सफ़हा–289 व हाकज़ा इमदादुलअहकाम जिल्द–2 सफ़हा–161 व किताबुल फ़िक्ह जिल्द–1 सफ़हा–1034)

मुस्ततीअ पहले हज करे या मकान बनवाए?

मस्अला: जबकि रुपया हज के मुवाफ़िक़ मौजूद है तो हज करना फ़र्ज़ है मकान बनाना ज़रूरी नहीं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–517 बहवाला बहरुर्राइक़ जिल्द–2 सफ़हा–337)

मस्अला: हज में मुख़्तार क़ौल ये है कि वाजिब होने के बाद अललफ़ौर वाजिब है, पस अगर आप पर हज वाजिब हो चुका है जिसके माना ये हैं कि साले गुज़श्ता में या उससे पहले किसी साल में हज के वक़्त आपके पास हज करने के लिए काफ़ी रक़म थी अब उस रक़म को मकान में सर्फ़ (ख़र्च) करना जाइज़ नहीं और अगर हज के वक़्त में किसी के पास साल के अन्दर रक़म जमा न थी बल्कि उस साल रक़म हज के वक़्त के बाद जमा हुई या हमेशा हज के वक़्त से पहले जमा होती और वक़्त से पहले ही सर्फ़ हो जाती थी तो इस सूरत में उस रक़म को मकान में लगा देना जाइज़ है।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–2 सफ़हा–158 व हाकज़ा फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़हा–200 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–5

सफ़्हा–214 व मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–90)

इस्तिताअ़त के बावजूद हज से पहले उम्रा करना?

मस्अलाः जिस शख़्स को अैयामे हज में बैतुल्लाह शरीफ़ तक पहुंचने और हज पूरा करने तक वहां रहने की ताक़त हो उस पर हज फ़र्ज़ हो जाता है और ये फ़रज़ियत हमेशा क़ाइम रहती है। इसलिए ऐसे शख़्स को जो सिर्फ़ एक बार बैतुल्लाह शरीफ़ पहुंचने के वसाएल रखता है, हज पर जाना चाहिए। उम्रा के लिए सफ़र करना और फ़रज़ियत के बावजूद हज न करना बहुत ग़लत बात है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–34 व हाकज़ा मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–73)

मस्अलाः अगर हज के दिनों में आदमी मक्का मुकर्रमा तक पहुंच जाए और हज तक वहां ठहरना मुमकिन भी हो तो हज फ़र्ज़ हो जाता है। और अगर ये दोनों शर्तें न पाई जायें तो हज फ़र्ज़ नहीं होता।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–35)

मस्अलाः अगर कोई शख़्स माहे हज में दाख़िल हो जाए यानी रमज़ानुलमुबारक में उम्रा के लिए जाए और शव्वाल का महीना शुरू हो जाए तो अगर वह पहले हज कर चुका है तो दोबारा हज फ़र्ज़ नहीं। अगर नहीं किया तो उस पर हज फ़र्ज़ है। बशर्तेकि ये हज तक वहां रह सकता हो या वापस हो कर दोबारा जाने और हज करने की इस्तिाअ़त रखता हो। दोनों शर्तों में से कोई एक भी न पाई जाए तो उस पर हज फ़र्ज़ नहीं होता।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–36)

सियाहत के वीज़ा पर हज करना?

सवालः बाज़ हज़रात अपनी बेगमात (बीवियों) को उम्रा और हज की नीयत से सियाहती वीज़ा (विज़िट) की हैसियत से बुलाते हैं कि वह यहां पर भी आ जाएंगी और हज या उम्रा भी कर लेंगेगी और बाज़ औक़ात उस वीज़ा के हुसूल के लिए रिश्वत भी देनी पड़ती है?

जवाबः सियाहती वीज़ा पर हज करना दुरुस्त है, मगर उसके लिए रिश्वत देना जाइज़ नहीं।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–39)

मस्अलाः बाज़ लोग उम्रा का वीज़ ले कर उम्रा करने के लिए जाते हैं और वहीं रुक कर हज कर के वापस आते हैं, ये (चोरी छुपे रुकना) हुकूमत के क़ानून की ख़िलाफ़वरज़ी है। ऐसा करना नामुनासिब है लेकिन अगर कोई शख़्स रुक जाए और हज कर ले तो फ़रीज़ा अदा हो जाएगा।

अगर हुकूमत ख़िलाफ़े क़ानून काम करने पर कोई कारवाई करे तो उसके लिए तैयार रहना होगा।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–318)

हुकूमत की इजाज़त के बग़ैर हज करना?

सवालः मेरे वालिदैन इस साल हज पर आ रहे हैं, और यहां पर सऊदी हुकूमत का क़ानून है कि यहां काम करने वाला एक दफ़ा हज कर ले तो पांच साल के बाद दूसरा हज करे। मेरा अभी एक साल बाक़ी है। मेरे वालिदैन बूढ़े हैं। मैं हज करने जाऊँ तो गुनाह तो नहीं होगा? बग़ैर इत्तिला के चला जाऊँ?

जवाबः आपका वालिदैन के साथ हज करना बिलाशुब्हा

सफ़्हा–214 व मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–90)

इस्तिताअ़त के बावजूद हज से पहले उम्रा करना?

मस्अला: जिस शख़्स को अैयामे हज में बैतुल्लाह शरीफ़ तक पहुंचने और हज पूरा करने तक वहां रहने की ताक़त हो उस पर हज फ़र्ज़ हो जाता है और ये फ़रज़ियत हमेशा क़ाइम रहती है। इसलिए ऐसे शख़्स को जो सिर्फ़ एक बार बैतुल्लाह शरीफ़ पहुंचने के वसाएल रखता है, हज पर जाना चाहिए। उम्रा के लिए सफ़र करना और फ़रज़ियत के बावजूद हज न करना बहुत ग़लत बात है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–34 व हाकज़ा मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–73)

मस्अला: अगर हज के दिनों में आदमी मक्का मुकर्रमा तक पहुंच जाए और हज तक वहां ठहरना मुमकिन भी हो तो हज फ़र्ज़ हो जाता है। और अगर ये दोनों शर्तें न पाई जायें तो हज फ़र्ज़ नहीं होता।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–35)

मस्अला: अगर कोई शख़्स माहे हज में दाख़िल हो जाए यानी रमज़ानुलमुबारक में उम्रा के लिए जाए और शव्वाल का महीना शुरू हो जाए तो अगर वह पहले हज कर चुका है तो दोबारा हज फ़र्ज़ नहीं। अगर नहीं किया तो उस पर हज फ़र्ज़ है। बशर्तेकि ये हज तक वहां रह सकता हो या वापस हो कर दोबारा जाने और हज करने की इस्तिताअ़त रखता हो। दोनों शर्तों में से कोई एक भी न पाई जाए तो उस पर हज फ़र्ज़ नहीं होता।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–36)

सियाहत के बीज़ा पर हज करना?

सवालः बाज़ हज़रात अपनी बेगमात (बीवियों) को उम्रा और हज की नीयत से सियाहती वीज़ा (विज़िट) की हैसियत से बुलाते हैं कि वह यहां पर भी आ जाऐंगी और हज या उम्रा भी कर लेंगेगी और बाज़ औक़ात उस वीज़ा के हुसूल के लिए रिश्वत भी देनी पड़ती है?

जवाबः सियाहती वीज़ा पर हज करना दुरुस्त है, मगर उसके लिए रिश्वत देना जाइज़ नहीं।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–39)

मस्अलाः बाज़ लोग उम्रा का वीज़ ले कर उम्रा करने के लिए जाते हैं और वहीं रुक कर हज कर के वापस आते हैं, ये (चोरी छुपे रुकना) हुकूमत के क़ानून की ख़िलाफ़वरज़ी है। ऐसा करना नामुनासिब है लेकिन अगर कोई शख़्स रुक जाए और हज कर ले तो फ़रीज़ा अदा हो जाएगा।

अगर हुकूमत ख़िलाफ़े क़ानून काम करने पर कोई कारवाई करे तो उसके लिए तैयार रहना होगा।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–318)

हुकूमत की इजाज़त के बग़ैर हज करना?

सवालः मेरे वालिदैन इस साल हज पर आ रहे हैं, और यहां पर सऊदी हुकूमत का क़ानून है कि यहां काम करने वाला एक दफ़ा हज कर ले तो पांच साल के बाद दूसरा हज करे। मेरा अभी एक साल बाक़ी है। मेरे वालिदैन बूढ़े हैं। मैं हज करने जाऊँ तो गुनाह तो नहीं होगा? बग़ैर इत्तिला के चला जाऊँ?

जवाबः आपका वालिदैन के साथ हज करना बिलाशुब्हा

सही है मगर क़ानून की ख़िलाफ़वरज़ी करने में इज़्ज़त और मुलाज़मत को ख़तरा लाहिक़ हो सकता है। ये आप ख़ुद देख लें। इसके बारे में मैं कोई मश्वरा नहीं दे सकता। अलबत्ता शरअन इस तरह हज अदा हो जाएगा और सवाब भी मिलेगा। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–46)

मस्अला: दिल्ली का कोटा ख़त्म हो जाने की वजह से ज़ैद दूसरे सूबे से अपना नाम वलदियत और सुकूनत ग़लत लिखवा कर हज को जाना चाहता है, हज फ़र्ज़ हो या नफ़्ल, झूट बोल कर, ग़लत बात लिखवा कर हज को जाना जाइज़ नहीं है। हज तो हो जाएगा मगर ज़ैद झूट का मुरतकिब होगा। (किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़हा–333)

चोर रास्ता से हज को जाना?

सवाल: हुकूमत की पाबंदी के बावजूद जो लोग चोरी यानी ग़लत रास्तों से हज करने जाते हैं और हज भी नफ़्ली करते हैं उनके बारे में क्या हुक्म है?

जवाब: हुकूमत के क़ानून की ख़िलाफ़वरज़ी करने में एक तो इज़्ज़त का ख़तरा है कि अगर पकड़े गए तो बेइज़्ज़ती होगी। दूसरे बाज़ औक़ात अहकामे शरईया की ख़िलाफ़वरज़ी भी लाज़िम आती है। मसलन बाज़ औक़ात मीक़ात से बग़ैर एहराम के जाना पड़ता है जिससे दम लाज़िम आता है। अगर क़ानूनी गिरफ़्त और अहकामे शरइया की मुख़ालफ़त का ख़तरा न हो तो मुज़ाएक़ा नहीं, वरना नफ़्ली हज करने के लिए वबाल सर लेना ठीक नहीं है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–47)

"उसूली एतेबार से किसी हुकूमत को हुज्जाज की तादाद पर पाबंदी लगाने का हक़ नहीं

साथ मुझ को हज करा दिया, और जब मैं वतन वापस आया तो अल्लाह तआला ने मुझे माल दिया और ग़नी (मालदार) हो गया, अब बताइए कि दोबारा हज के लिए जाऊँगा तो यह हज मेरा फ़र्ज़ होगा या नफ़्ल?

जवाबः पहला हज करने से फ़रज़ियत साकित हो जाएगी, दूसरा हज ग़नी होने के बाद जो करेगा वह हज फ़र्ज़ नहीं कहलाएगा बल्कि नफ़्ल ही समझा जाएगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–5 सफ़हा–531 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़हा–332 व हाकज़ा फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़हा–224)

मस्अलाः अगर कोई शख़्स ख़िदमत के वास्ते अपने हमराह ऐसे ही तबर्रुअन ऐसे शख़्स को हज के लिए ले जाए जिस पर फ़िलहाल हज फ़र्ज़ नहीं उसका वह फ़र्ज़ जो आइंदा (मालदार होने के बाद) होने वाला है अदा हो जाएगा। नीज़ शख़्से मज़कूरा को (यहीं) पर इस क़दर रुपया दे कर क़ब्ज़ा करा दिया जाए जिससे फ़रज़ियत आएद हो जाए तो भी फ़र्ज़ अदा हो जाएगा।

मस्अलाः मुलाज़मत की हालत (सऊदी अरब) में हज वाजिब होने से पहले जो शख़्स हज कर चुका फिर इस्तिताअ़त के बाद दोबारा उस पर हज फ़र्ज़ न होगा। हज फ़र्ज़ अदा हो चुका है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़हा–525)

<u>ग़रीब को किसी ने हज के लिए रक़म दी?</u>

सवालः एक ग़रीब शख़्स को नफ़्ल हज करने के लिए किसी ने पैसे दिए और उसने खुद अपनी तरफ़ से नफ़्ल हज अदा किया बाद में वह नफ़्ल हज करने वाला

मालदार हो गया और वह हज न करने जाए तो क्या पहला नफ़्ल हज जो उसने किया है उससे हज की फ़रज़ियत साक़ित हो जाएगी या नहीं?

जवाब: पहला हज जो उस शख़्स ने किया है अगर ख़ालिस नफ़्ल हज की नीयत की है तो वह नफ़्ल अदा होगा और फ़र्ज़ हज साक़ित न होगा। और अगर फिर वह मालदार हुआ तो हज फ़र्ज़ फिर अदा करना होगा। और अगर ख़ास नफ़्ल की नीयत न की थी मगर फ़र्ज़ की भी नीयत न की थी बल्कि मुतलक़ हज की नीयत कर ली थी तो उससे फ़र्ज़ साक़ित हो गया। अब मालदार होने से दोबारा हज फ़र्ज़ न होगा।

(इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़्हा–157 व हाकज़ा मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–81)

मस्अला: एक शख़्स पर हज फ़र्ज़ हुआ और दूसरा कोई उसको अपने ख़र्चा से हज करा दे तो अगर ख़र्चा देने वाले ने किसी और की तरफ़ से हज्जे बदल कराया तो करने वाले का फ़र्ज़ साक़ित नहीं हुआ। और अगर ख़ुद करने वाले ही को उसके हज के लिए रुपया दिया है तो फ़र्ज़ साक़ित हो गया।

(फ़तावा रशीदिया जिल्द–1 सफ़्हा–463)

"यानी जिस पर हज फ़र्ज़ था उसको किसी ने उसी के हज करने के लिए रुपया दिया है, देने वाले ने अपना या किसी और का हज्जे बदल कराने के लिए वह रक़म न दी हो और उसने उस रक़म से हज कर लिया तो उसके ज़िम्मा जो हज फ़र्ज़ था वह अदा

हो गया, हज करने के लिए अपना रुपया ज़रूरी नहीं।" (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

नफ़्ल हज की नीयत से हज करना

सवालः ज़ैद पर हज फ़र्ज़ नहीं था इसलिए उसने नफ़्ल हज की नीयत से हज किया, तो क्या उसके जिम्मा से हज का फ़रीज़ा साक़ित होगा या नहीं?

जवाबः नफ़्ल हज की नीयत से फ़रीज़ए हज अदा न होगा ख़्वाह नीयत करने वाले पर हज करने के वक़्त हज फ़र्ज़ हो या न हो। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–511 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–193)

"कोई शख़्स सऊदी गया हुआ है वह वहां पर हज कर ले या किसी ग़रीब को कोई अपने साथ अपने ख़र्चा से हज के लिए ले जाए या किसी ग़रीब को चंद अफ़राद मिल कर रक़म दें तो अगर वह मुतलक़ हज की नीयत से हज करे तो आइंदा मालदार होने पर दूसरा हज करना ज़रूरी नहीं है पहला हज किया हुआ काफ़ी होगा ऐसे मौक़ा पर मुतलक़ हज की नीयत से ही हज करने में फ़ाएदा है।" (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

जो शख़्स ज़कात न निकाले उसका हज के लिए जाना?

सवालः जो साहबे निसाब हैं मगर ज़कात अदा नहीं करते और हज के लिए तैयार हैं उनका हज को जाना कैसा है?

जवाबः अगर कोई शख़्स एक फ़र्ज़ अदा न करे और दूसरा फ़र्ज़ अदा करे तो ज़ाहिर है कि जो फ़र्ज़ अदा

किया जाएगा वह अदा हो जाएगा और जो फ़र्ज़ अदा न होगा उसका गुनाह रहेगा बिनाअन अलैहि (इसी क़ाएदे पर) हज उसका अदा हो जाएगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–524)

जिस रुपया से ज़कात नहीं निकाली हो, उससे हज करना?

मस्अला: जिस रुपया से ज़कात नहीं निकाली गई उससे अगर हज किया जाए तो हज जाइज़ हो जाएगा मगर ज़कात की ताख़ीर का गुनाह भी रहेगा, इसलिए बेहतर ये है कि पहले ज़कात अदा की जाए उसके बाद जो रक़म बचे उससे हज किया जाए, अगर वह रक़म काफ़ी न हो तो क़र्ज़ लेकर हज करना इस शर्त के साथ जाइज़ है कि क़र्ज़ अदा करने के वास्ते कुछ सरमाया पीछे छोड़ जाए, मसलन जाएदाद व मकानात वग़ैरा। अगर सरमाया कुछ न हो तो क़र्ज़ लेकर औलाद के ज़िम्मा डालना जाइज़ नहीं। और जो लड़का क़र्ज़ के अदा करने से इनकार करता है उसका कुछ कुसूर नहीं, औलाद के ज़िम्मा माँ बाप की इताअत व ख़िदमत लाज़िम है। क़र्ज़ अदा करना उनके ज़िम्मा नहीं।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–2 सफ़्हा–162)

हज के लिए रखी हुई रक़म पर ज़कात?

सवाल: एक शख़्स ने हज करने के इरादा से दरख़्वास्त दी और रक़म हज के लिए जमा कराई लेकिन जाने में नाम न आ सका और हुकूमत से वह रक़म वापस मिल गई, वह शख़्स आइंदा साल हज करने का इरादा रखता है, ये बताऐं कि हज करने के लिए जो रक़म रखी गई उस पर ज़कात अदा करना ज़रूरी है या नहीं?

जवाबः उस रक़म पर भी ज़कात वाजिब है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़हा–372)

मस्अलाः मुस्तहिक्क़े ज़कात (फ़क़ीर वग़ैरा) के पास ज़कात में मिला हुआ रुपया जमा हो तो उस रुपये से हज दुरुस्त है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–530)

हज की रक़म दूसरे मसरफ़ पर लगा देना?

सवालः मैंने अपने वालिदैन को हज के लिए रक़म दी जो उन्होंने किसी और मसरफ़ में लगा दी और वहां से यकमुश्त रक़म की वापसी एक दो साल के लिए मुमकिन नहीं। मैंने जिस नीयत से उनको पैसा दिया था उसका सवाब मुझ को मिल गया या नहीं?

जवाबः आप को तो सवाब मिल गया और आप के वालिदैन पर हज फ़र्ज़ हो गया, अगर वह हज किए बग़ैर मर गए तो गुनहगार होंगे और उन पर लाज़िम है कि वह वसीयत कर के मरें कि उनकी तरफ़ से हज्जे बदल करा दिया जाए। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–39)

फ़र्ज़ हज के लिए क़र्ज़ लेना?

सवालः क़र्ज़ लेकर ज़ैद हज कर सकता है या नहीं और क़र्ज़ देने वाला ख़ुशी से ख़ुद कहता है कि आप हज करने जायें मैं पैसा देता हूं, बाद में आ कर वापस कर देना।

जवाबः अगर हज फ़र्ज़ है और क़र्ज़ मिल सकता है तो ज़रूर लेना चाहिए। अगर फ़र्ज़ न भी हो तो भी क़र्ज़ लेकर हज करना जाइज़ है।

मस्अलाः अगर क़र्ज़ बसहूलत अदा हो जाने की तवक़्क़ो हो तो क़र्ज़ लेकर हज व उम्रा पर जाना सही है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–40 व हाकज़ा फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–226)

मक़रूज़ का हज करना?

सवाल: एक साहब मक़रूज़ हैं लेकिन पैसा आते ही बजाए क़र्ज़ वापस करने के हज करते हैं। ऐसे हज की शरई हैसियत क्या है?

जवाब: हज तो हो गया मगर किसी का क़र्ज़ा अदा न करना बड़ी बुरी बात है। सभी गुनाहों के बाद सब से बड़ा गुनाह ये है कि आदमी मक़रूज़ हो कर दुनिया से वापस जाए और इतना माल छोड़ कर न जाए जिससे उसका क़र्ज़ अदा हो सके। मैयत का क़र्ज़ जब तक अदा न किया जाए वह महबूस रहता है। इसलिए अदाए क़र्ज़ का एहतेमाम सब से अहम है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–156)

मस्अला: औलाद क़र्ज़ अदा करने का वादा करे तो मक़रूज़ बाप को हज करने के लिए जाना जाइज़ है और वह क़र्ज़ ख़्वाहों का इत्मीनान कर के जाए कि मेरी औलाद तुम्हारे क़र्ज़ का इंतिज़ाम करेगी।

(इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़्हा–156)

क़र्ज़दार हज के लिए चला जाए तो क्या हुक्म है?

मस्अला: अगर फ़िलहाल क़र्ज़ ख़्वाहों का मुतालबा न हो और वह बख़ुशी हज के लिए जाने की इजाज़त दें या क़र्ज़दार अपने क़र्ज़ का किसी को ज़िम्मादार बना दे और उस पर क़र्ज़ ख़्वाहों को इत्मीनान हो जाए और वह इजाज़त दे दें तो वह शख़्स हज के लिए जा सकता है। उस शख़्स पर जितना क़र्ज़ हो एहतियातन उसके मुतअल्लिक

एक वसीयत नामा भी लिख दे और वारिसों को ताकीद कर दे कि अगर (मेरी मौत हो जाए और) मेरे ज़िम्मा क़र्ज़ बाक़ी रह जाए तो मेरे तरका में से पहले मेरा क़र्ज़ अदा किया जाए और अगर तरका में गुंजाइश न हो तो तुम अपने पास से क़र्ज़ अदा कर देना या उससे मआफ़ करा देना, अगर क़र्ज़ ख़्वाहों की इजाज़त के बग़ैर जाएगा तो मकरूह होगा, गो फ़रीज़ा अदा हो जाएगा।

और अगर उस वक़्त क़र्ज़ अदा करने की गुंजाइश हो तो उसी वक़्त क़र्ज़ अदा कर देना चाहिए, ये हुकूकुलइबाद का मआमला है उसकी बहुत ही ज़्यादा अहमियत है। इंतिज़ाम होते हुए क़र्ज़ा अदा न करना संगीन गुनाह है। हदीस शरीफ़ में है– "मालदार का टाल मटोल करना जुल्म है।"

मस्अला: जो शख़्स फ़र्ज़ हज अदा कर चुका हो और नफ़्ली हज करने जाता हो तो नफ़्ली हज से बेहतर ये है कि क़र्ज़ अदा करे। और उसके बिलमुक़ाबिल नादारी की हालत में बिलखुसूस जबकि दूसरों के हुकूक़ अपने ज़िम्मा हों उनके हुकूक़ की अदाएगी हज्जे नफ़्ल से कहीं ज़्यादा है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–282 बहवाला शामी किताबुलहज जिल्द–2 सफ़्हा–205 व दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा–191)

मस्अला: किसी शख़्स का किसी पर हक़ हो और वह उसकी वजह से जेल भेज दिया गया और उस पर हज फ़र्ज़ है और उस हक़ के अदा करने पर कुदरत भी है तो ये जेल जाना हज के लिए उज़्र न होगा। हज करना वाजिब होगा। (जेल से रिहाई पर हज करना ज़रूरी होगा।)

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ्हा–83)

मस्अला: जिस शख़्स के ज़िम्मा लोगों के क़र्ज़ हों और क़र्ज़ से फ़ाज़िल माल नहीं है तो उसके लिए बेहतर ये है कि अदाए क़र्ज़ से पहले हज का इरादा न करे, बल्कि जो कुछ सरमाया है उसको क़र्ज़ से सुबुकदोशी में ख़र्च करे, लेकिन अगर अदाए क़र्ज़ से पहले हज कर लिया तो हज अदा हो जाएगा।

तिजारती क़र्ज़े जो आदतन हमेशा जारी रहते हैं इसमें दाख़िल नहीं हैं, ऐसे क़र्ज़ों की वजह से हज को मुअख़्ख़र नहीं किया जाएगा।

(अहकामुलहज सफ्हा–24, हज़रत मुफ़्ती शफ़ीअ "रह.")

पैदल हज करना?

मस्अला: हज की फ़रज़ियत के लिए ये शर्त है कि मक्का मुअज़्ज़मा तक सवारी पर पहुंचने के लिए रुपया हो और सफ़र के ज़रूरी मसारिफ़ और वापसी तक अह्ल व अ़याल के ख़र्चा की रक़म भी रखता हो। जिसके पास इतनी रक़म न हो कि वह सवारी पर जा सके उस पर पैदल जा कर हज करना फ़र्ज़ नहीं है। लेकिन अगर कोई शख़्स पैदल हज करे तो नाजाइज़ भी नहीं है, मगर उसके लिए ये शर्त है कि वह पैदल चलने की ताक़त भी रखता हो, ताकि रास्ता की तकलीफ़ से दिल को तंगी व दुश्वारी पेश न आए और ये पैदल जाना महज़ सवाब और रज़ाए इलाही के लिए हो, शोहरत और नामवरी मक़सूद न हो। अपने इस फ़ेल को अख़बारात और इशतिहारत के ज़रीआ शोहरत देना नाजाइज़ है क्योंकि आंहज़रत (स.अ.व.) ने न पैदल हज किया और न तरग़ीब दी। बल्कि एक

औरत ने मिन्नत मानी थी कि मैं पैदल हज करूंगी तो आप (स.अ.व.) ने उसके बारे में फ़रमाया कि– "उससे कहो सवारी पर जाए।" नीज़ पैदल चलने वाले का चंद क़दम पर नफ़्ली नमाज़ पढ़ना तो ये भी अगरचे फ़ी नफ़्सिही जाइज़ है मगर उसमें भी नफ़्स का रिया व उज्ब से महफ़ूज़ रखना सख़्त दुश्वार है। इसलिए उसका तर्क करना ही अस्लम व अह्वत (ज़्यादा बेहतर) है और रास्ता में मुसल्ला बिछा कर नमाज़ पढ़ना मकरूह भी है।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–329)

मस्अला: मक्का मुकर्रमा वाले या जो लोग मक्का मुकर्रमा के क़रीब रहते हैं और पैदल सफ़र कर सकते हैं उनके लिए सवारी शर्त नहीं। हाँ अगर चल नहीं सकते तो उनके लिए भी मिस्ल बाहर के रहने वालों के सवारी शर्त है और ज़रूरी सफ़रे ख़र्च मक्का वालों के लिए भी शर्त है।

मस्अला: अगर बाहर का रहने वाला ग़रीब शख़्स मीक़ात तक पहुंच गया और चलने पर क़ादिर है (और क़ानूनी रुकावट भी न हो) तो उसके लिए भी मक्का वालों की तरह सवारी शर्त नहीं, ज़ादेराह शर्त है।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–78)

मस्अला: ज़ादेराह में सरकारी महसूल, मुअ़ल्लिमीन की फ़ीस और दीगर इख़राजाते ज़रूरीया जो हाजी को अदा करने पड़ते हैं उसमें सब दाख़िल हैं।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–80 हाकज़ा फ़ी किताबिलफ़िक़्ह)

"जो मक़ामी लोग हज के लिए ख़िलाफ़े क़ानून
जाते हैं उनकी वजह से हुज्जाजे किराम को
भी परेशानी होती है अगरचे हज हो जाता

है।" (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

तवक्कुल पर हज करना?

मस्अला: जो हज़रात हज उम्रा के लिए बेसरोसामान के साथ निकल खड़े होते हैं और दावा ये करते हैं हम अल्लाह तआला पर तवक्कल (भरोसा) करते हैं फिर रास्ता में भीक मांगना पड़ती है वह खुद भी तकलीफ़ उठाते हैं दूसरों को भी परेशान करते हैं उनकी हिदायत के लिए हुक्म नाज़िल हुआ है कि सफ़रे हज के लिए ज़रूरीयाते सफ़र साथ लेना चाहिए। ये तवक्कुल के मुनाफ़ी नहीं है बल्कि तवक्कुल की हक़ीक़त यही है कि अल्लाह तआला के दिए हुए असबाब और वसाएल को अपनी कुदरत के मुताबिक़ हासिल और जमा करे और फिर अल्लाह तआला पर भरोसा करे। बिल्कुल तर्के असबाब (यानी असबाब को छोड़ देने का नाम) तवक्कुल नहीं है।

(मआरिफुलकुरआन जिल्द–1 सफ़्हा–430)

बीवी का महर देना मुक़द्दम है या हज?

मस्अला: हज को जाने के लिए औरत को राज़ी करना या उसका राज़ी होना शर्त नहीं है अगर हज फ़र्ज़ हो, और न महर अदा कर के जाना ज़रूरी है जब कि निकाह बाक़ी हो और महर मुअज्जल हो (फ़ौरी अदाएगी वाला महर न हो) बल्कि औरत को वापसी तक नान व नफ़क़ा (ज़रूरी ख़र्चा) दे कर जाना वाजिब है। हाँ निकाह टूट चुका हो और औरत महर का मुतालबा करे तो हज्जे दैन यानी महर का क़र्ज़ अदा करना मुक़द्दम है और ये तफ़सील उस वक़्त है जबकि दैने महर को दूसरे क़र्ज़ों के बराबर न समझा जाए, बल्कि उसकी तरफ़ से बेइलतिफ़ाती हो

जैसा कि आम अह्ले हिन्द की यही हालत है तो ऐसा दैने महर, वजूबे ज़कात व हज के मुनाफ़ी नहीं। मगर तलाक़ के वक़्त औरत के तलब करने के वक़्त। और जो शख़्स दैने महर को भी लोगों के क़र्ज़ की तरह समझता हो और उसकी अदा की फ़िक्र में हो और हसबे हिम्मत कम या ज़्यादा अदा करता हो उस पर हज उस वक़्त तक फ़र्ज़ न होगा जब तक कि देने महर अदा न हो जाए या इतनी रक़म उसके पास जमा हो जाए जो महर के क़र्ज़ अदा करने के बाद मसारिफ़े हज व ख़र्चा अह्ल व अयाल को ता वापसी काफ़ी हो। (इमदादुल अहकाम जिल्द–2 सफ़्हा–156 व हाकज़ा फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–539 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–191 व हाकज़ा आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–32)

नाबीना के लिए हज का हुक्म?

सवालः एक शख़्स नाबीना (अंधा) है, उस पर हज फ़र्ज़ है और इतनी इस्तिताअत है कि अपने साथ किसी को अपनी ख़िदमत के लिए ले जाए, ऐसी हालत में वह ख़ुद हज करे या हज्जे बदल कराए?

जवाबः इस सूरत में वह अपनी तरफ़ से हज्जे बदल करा सकता है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–559 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–327)

मस्अलाः नाबीना और मफ़लूज वग़ैरा सब माज़ूरीन का वही हुक्म है कि हज्जे बदल कराना फ़र्ज़ है, अगर ज़िन्दगी में उज़्र ख़त्म हो जाए तो दोबारा हज ख़ुद करे। वरना पहले का हज्जे बदल मोतबर होगा।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–519 व हाकज़ा

किताबुलफिक्ह जिल्द–1 सफ्हा–1035)

मस्अलाः जो शख़्स तन्दुरुस्त न हो, मरीज़ हो या लंगड़ा हो, खुद सफ़र न कर सकता है और सारे शराइत हज के मौजूद हों तो उन पर हज फ़र्ज़ हो जाता है उनको हज्जे बदल कराना और वसीयत करना वाजिब है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–83)

हज के दिनों में ग़ैर क़ानूनी तौर पर गाड़ी किराया पर चलाना?

सवालः यहां ग़ैर सऊदी को किराया पर गाडी चलाने की इजाज़त नहीं, और अक्सर रास्तों की चौकियों पर मालूम किया जाता है, तो हालते एहराम में बरमला कहते हैं कि हम दोस्त हैं किराया पर न ले जा रहे हैं और मुसाफ़िर भी कहते हैं न किराया पर जा रहे हैं जबकि ले जाने वाला और जाने वाले झूट बोलते हैं क्या हुक्म है?

जवाबः हज के लिए गाड़ी लेने और उसको किराया पर चलाने में तो कोई हरज नहीं, मगर चूंकि कानूनन मना है और उसकी खातिर झूट बोलना पड़ता है, इसलिए हज गुनाह से पाक न हुआ।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–160)

"हज तो हो जाएगा मगर झूट का गुनाह होगा।"

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

कम्पनी की गाड़ी हज के लिए इस्तेमाल करना

सवालः मुलाज़िमीन, उम्रा हज के लिए कम्पनी की गाड़ियाँ जो उनके शहर में इस्तेमाल के लिए होती है उनको लेकर ख़ामोशी से सफ़र पर चले जाते हैं या जिन के तअ़ल्लुक अफ़सरों से अच्छे होते हैं उनसे इजाजत ले कर इस मुक़द्दस फ़रीज़े के सफ़र पर जाते हैं जब कि

आम मुलाज़िम ऐसी मुराआत हासिल नहीं कर पाता और उनको कम्पनी इजाज़त नहीं देती। क्या हुक्म है?

जवाबः अगर कम्पनी की इजाज़त नहीं तो कम्पनी की गाड़ियाँ और दूसरे सामान का इस्तेमाल जाइज़ नहीं है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–160)

हज्जे अकबर क्या है?

मस्अलाः जुमा के दिन हज को "हज्जे अकबर" कहना तो अवाम की इस्तिलाह है। कुरआन मजीद में "हज्जे अकबर" का लफ़्ज़ उम्रा के मुक़ाबिला में इस्तेमाल हुआ है। बाक़ी रहा ये कि जुमा के दिन जो हज हो उसकी फ़ज़ीलत सत्तर गुना है। इस मज़मून की हदीस बाज़ किताबों में तिबरानी की रिवायत से नक़्ल की है। मुझ को उसकी सनद की तहक़ीक़ नहीं है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–56)

मस्अलाः साहबे दुर्रेमुख़्तार ने इसी को इख़्तियार फ़रमाया है कि जुमा के रोज़ वक़ूफ़े अरफ़ा हो तो वह हज सत्तर हज से ज़्यादा फ़ज़ीलत रखता है जो कि ग़ैर जुमा हो, और ये मस्अला मुसल्लमा है कि फ़ज़ाइले आमाल में हदीसे ज़ईफ़ पर भी अमल हो सकता है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़हा–543 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–1 सफ़हा–119)

मस्अलाः जुमा को जो हज होता है उसको अकबरी कहते हैं उसकी अस्ल इस क़दर है कि आंहज़रत (स.अ.व.) ने जो आख़िरी हज किया था वह जुमा के दिन हुआ था और उसके बारे में आयत नाज़िल हुई थी–

"يَوْمَ الحج الاكبر"

बाकी वैसे हज्जे अकबर बमुक़ाबला हज्जे असगर के है कि उम्रा हज्जे असग़र है और हर एक हज हज्जे अकबर है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–581)

मस्जिदे हराम में नमाज़ी के आगे से गुज़रना?

इस मौज़ूअ़ पर सऊदी स्कॉलर डॉ0 अब्दुल्लाह बिन अब्दुल अज़ीज़ ने एक किताब लिखी है जिसमें अह्ले इल्म की आरा और इस मौज़ूअ़ से मुतअ़ल्लिक़ दलाइल ज़िक्र किए हैं, ज़ैल में उनकी तहक़ीक़ के नताइज का तज़किरा किया जा रहा है।

(1) नमाज़ी के सुतरा के सामने से गुज़रना जाइज़ है। सुतरा से मुराद वह रुकावट है जो उसकी सज्दागाह के आगे हो।

(2) जमाअ़त हो रही हो तो मुक़्तदियों के सामने से गुज़रना जाइज़ है।

(3) मताफ़ यानी तवाफ़ करने की जगह में नमाज़ियों के आगे से तवाफ़ करते हुए गुज़रना जाइज़ है।

(4) नमाज़ी की सज्दागाह यानी तक़रीबन सौ मीटर जगह छोड़ कर गुज़रना दुरुस्त है।

(5) ऐसी सूरत में भी नमाज़ी के आगे से गुज़रने की गुंजाइश है जब वह मस्जिद के रास्तों और गुज़रगाहों में नमाज़ पढ़ रहा हो, और लोग मस्जिद में दाख़िल हो रहे हों या निकल रहे हों।

(6) इमाम और मुनफ़रिद की सज्दागाह के अन्दर से गुज़रना जाइज़ नहीं, सिवाए किसी शदीद तरीन मजबूरी के, जिसे शरीअ़त की इस्तिलाह में इज़तिरारी कैफ़ियत से ताबीर किया जाता है। चूंकि जिस हदीस शरीफ़ में नमाज़ी

के आगे से गुज़रने की मुमानअत आई है उसमें मस्जिदे नबवी या मस्जिदे हराम को मुस्तस्ना (अलग) नहीं किया गया, बल्कि उसमें बिलउमूम नमाज़ी के आगे से गुज़रने पर वईद है। इरशादे नबवी (स.अ.व.) है– "अगर नमाज़ी के आगे से गुज़रने वालों को ये मालूम हो जाए कि उसके गुज़रने का क्या वबाल है तो उसके लिए चालीस तक खड़ा रहना गुज़रने की निस्बत आसान हो।"

(सहीह बुख़ारी किताबुस्सलात हदीस–501)

ये तफ़सील इसलिए ब्यान कर दी गई है कि आम लोग मस्जिदे नबवी और मस्जिदे हराम में बेधड़क नमाज़ियों के आगे से गुज़रते रहते हैं और इसको शदीद तौर पर जाइज़ समझते हैं। जबकि इसका कोई सुबूत नहीं है।

(तारीख़े मक्का सफ़हा–102)

(शारेहीन ने चालीस से मुराद चालीस महीने मुराद लिए और चालीस साल भी।)

हरम और हरम से बाहर सफ़ों का शरई हुक्म?

सावालः हरम शरीफ़ और हरम के बाहर नमाज़ की सफ़ों के बारे में क्या हुक्म है? हरम में भी सफ़ों के दरमियान ख़ासा फ़ासिला रहता है और हरम में जगह होने के बावजूद हरम के बाहर भी नमाज़ होती है। हरम के बाहर तीन चार सौ गज़ बल्कि ज़्यादा फ़ासिला तक कोई सफ़ नहीं होती, सुरंग, मिसफ़ला में सफ़ें क़ाइम कर ली जाती हैं। क्या उन सफ़ों में शामिल होने से नमाज़ हो जाती है?

जवाबः हरम शरीफ़ में तो अगर सफ़ों के दरमियान फ़ासिला हो तो तब भी नमाज़ हो जाएगी और हरम शरीफ़

से बाहर अगर सफ़ें मुत्तसिल हों दरमियान में फ़ासिला न हो तो नमाज़ सही है और अगर दरमियान में सड़क हो या ज़्यादा फ़ासिला हो तो नमाज़ सही नहीं है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–118)

इमामे हरम के पीछे नमाज़ न पढ़ना?

मस्अला: हरमैन शरीफ़ैन पहुंच कर वहां नमाज़ बाजमाअ़त से महरूम रहना बड़ी महरूमी है। हरमैन शरीफ़ैन के अइम्मा इमाम हंबल (रह.) के मुक़ल्लिद हैं, अह्ले सुन्नत हैं अब अगरचे हमारा उनके साथ बाज़ मसाइल में इख़्तिलाफ़ है, लेकिन ये नहीं कि उनके पीछे नमाज़ न पढ़ी जाए।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–57)

(नमाज़ जमाअ़त के साथ पढ़नी चाहिए उनके पीछे नमाज़ हो जाती है।)

हरम शरीफ़ में जूतों के तब्दील होने का हुक्म

सवाल: हरम शरीफ़ में जूतों के बारे में क्या हुक्म है जो आ़म तौर पर तब्दील हो जाते हैं, क्या एक बार अपनी ज़ाती चप्पल पहन कर जाना और तब्दीली होने पर हर बर एक नई चप्पल पहन कर आना जैसा कि आ़म तौर पर होता है क्या ये जाइज़ है?

जवाब: जिन चप्पलों के बारे में ख़्याल हो कि मालिक उनको तलाश करेगा उनका पहनना सही नहीं और जिन चप्पलों को इस ख़्याल से छोड़ दिया गया हो कि कोई पहन ले उनका पहनना सही है। यूं भी उनको उठा कर ज़ाये कर दिया जाता है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–159)

हुदूदे हरम में जानवर ज़िब्ह करना?

सवाल: जैसा कि हुक्म है हुदूदे हरम में मासिवाए उन

कीड़े मकोड़ों के जो कि इन्सानी जान के दुश्मन हैं किसी जानदार चीज़ हत्ता कि दरख़्त की टहनी तोड़ना भी गुनाह है। लेकिन ये जो कि रोज़ाना सैंकड़ों के हिसाब से मुरग़ियाँ और दूसरे जानवर हुदूदे हरम में ज़िब्ह होते हैं उनका क्या हुक्म है?

जवाबः हुदूदे हरम में शिकार जाइज़ नहीं, पालतू जानवरों को ज़िब्ह करना जाइज़ है।

(आपके मसाइल जिल्द-4 सफ़्हा-158)

मस्अलाः एहराम की हालत में बकरी, गाय, ऊँट, भैंस, मुरग़ी, घरेलू जनवरों का ज़िब्ह करना और खाना जाइज़ है। अलबत्ता कबूतर का ज़िब्ह करना हर हाल में ममनूअ़ है ख़्वाह पालतू कबूतर हो, क्योंकि हरम शरीफ़ में रहने वाले बहुत से लोग पालतू कबूतर का ज़िब्ह करना हलाल समझते हैं जो कि ग़लत है। (अहकामे हज सफ़्हा-99)

मस्अलाः हरम शरीफ़ में शिकार करना मोहरिम और ग़ैर मोहरिम दोनों के लिए हराम है और हरम शरीफ़ के घास और दरख़्त काटना भी ममनूअ़ है नीज़ हालते एहराम में टिड्डी मारना भी मना है।

मस्अलाः मिना, मुज़दलिफ़ा, हुदूदे हरम में दाख़िल हैं यहां की घास वग़ैरा काटने से परहेज़ लाज़िम है, लेकिन अ़रफ़ात का मैदान हुदूदे हरम से बाहर है उसके घास काटने में कोई मुज़ाएक़ा नहीं है।

(अहकामे हज सफ़्हा-100 हज़रत मुफ़्ती शफ़ीअ़ रह.)

मस्अलाः ख़ुश्की के उस शिकार का गोश्त खाना जिसको हलाल शख़्स ने हिल्ल (हरम शरीफ़ से बाहर मीक़ात के अन्दर) में शिकार किया हो और उसी ने ज़िब्ह

किया हो। मोहरिम ने किसी क़िस्म की शिकरत न की हो तो जाइज़ है। (मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा-115)

हज में दुआ क़बूल होने के मुक़ामात

मस्अला: हज में ख़ास मक़ामात हैं जहां पर दुआ ज़्यादा क़बूल होती है वह मुन्दरजा ज़ैल हैं-

बैतुल्लाह पर पहली नज़र पड़ते वक़्त, मुल्तज़म के पास यानी हजरे अस्वद और ख़ानए काबा की चौखट के दरमियान। मीज़ाबे रहमत के नीचे, बैहुल्लाह के अन्दर, ज़मज़म पीते वक़्त, मक़ामे इब्राहीम के पीछे, सफ़ा मरवा पर, सओ़ी में, अ़रफ़ात के मैदान में, मिना व मुज़दलिफ़ा में, रमी के वक़्त, जमरात के पास।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द-3 सफ़्हा-182 व हाकज़ा मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा-305)

हजरे अस्वद वाले कोने और ख़ानए काबा के दरवाज़ा की दरमियानी जगह को "मुलतज़म" कहते हैं ये हिस्सा तक़रीबन दो मीटर है।

(अलत्तरीख़ुलक़वीम जिल्द-3 सफ़्हा-433)

ये क़बूलीयते दुआ की जगह है, इस मक़ाम पर सुन्नत ये है कि बैतुल्लाह की दीवार से इस तरह चिमट कर दुआएं की जाएं कि रुख़सार, सीना और हाथ चिमटे हुए हों, चुनांचे हज़रत उमर (रज़ि.) के बारे में मनक़ूल है कि उन्होंने तवाफ़ किया, नमाज़ पढ़ी फिर हजरे अस्वद का बोसा लेने के बाद हजरे अस्वद और दरवाज़ा के दरमियान इस तरह खड़े हुए कि अपने सीने, हाथ और रुख़सार बैतुल्लाह की दीवार से मिचटाया और फ़रमाया- "मैंने रसूलुल्लाह (स.अ.व.) को इसी तरह करते हुए देखा है।"

हज़रत इब्न अब्बास (रज़ि.) फ़रमाते हैं कि हजरे अस्वद और दरवाज़ा के दरमियान जो भी दुआ करता है उसकी क़बूलियत के आसार देखता है। यानी दुआ क़बूल हो जाती है।

हतीम और रुक्ने यमानी की दरमियानी जगह भी उन मक़ामात में से है जहां दुआएं क़बूल होती हैं।

हज़रत मुजाहिद (रह.) फ़रमाते हैं कि– "रुक्ने यमानी पर हाथ रख कर दुआ की जाए तो वह क़बूल होती है।"

(तारीख़े मक्का मुकर्रमा सफ़्हा–53)

तमाम मक़ामाते मुतबर्रका में मक़बूलीयते दुआ की ज़्यादा उम्मीद है और हज़रत हसन बसरी (रज़ि.) ने अह्ले मक्का की तरफ़ एक ख़त में तहरीर फ़रमाया कि मक्का मुकर्रमा में पन्द्रह जगह दुआ की मक़बूलियत मुजर्रब है। (1) तवाफ़ में और (2) मुल्तज़म के पास (यानी दरवाज़ए बैतुल्लाह और हजरे अस्वद के दरमियान जो जगह है उसमें) और (3) मीज़ाबे रहमत यानी बैतुल्लाह शरीफ़ के परनाला के नीचे, और (4) बैतुल्लाह के अन्दर और (5) चाहे (कुवाँ) ज़मज़म के पास और (6) सफ़ा व (7) मरवा पहाड़ों के ऊपर और (8) सई करने के मैदान में (जो सफ़ा व मरवा के दरमियान है) और (9) मक़ामे इब्राहीम के पीछे और (10) अरफ़ात में और (11) मुज़दलिफ़ा में और (12) मिना में और तीनों जमरात के पास (जमरात वह तीन पत्थर हैं जो मिना में नसब किए हुए हैं, जिन पर हुज्जाज कंकरियाँ मारते हैं) इमाम जज़री (रह.) फ़रमाते हैं कि अगर सरवरे आलम (स.अ.व.) के हुज़ूर में यानी रौज़ए अक़दस के पास दुआ क़बूल न होगी तो कहां होगी।

(मसाइले नमाज़ सफ़्हा--339)

बच्चों का हज

हज बालिग़ होने के बाद ही फ़र्ज़ होता है, लेकिन जिस तरह बच्चे का रोज़ा व नमाज़ सही है उसी तरह बच्चे का हज भी सही है चाहे वह बच्चा बिल्कुल छोटा हो और अक़्ल व तमीज़ न रखता हो या इतना बड़ा हो कि अक़्ल व तमीज़ वाला हो। मुस्लिम शरीफ़ में हज़रत इब्न अब्बास (रज़ि.) का ब्यान है कि एक ख़ातून नबी करीम (स.अ.व.) के पास अपने बच्चों को लेकर आई और पूछा या रसूलुल्लाह (स.अ.व.)! इसका भी हज है? इरशाद फ़रमाया जी हाँ, और तुम्हें अज्र मिलेगा। इस हदीस शरीफ़ से ये मालूम हुआ कि बच्चे का हज सही है और बच्चे के हज का अज्र व सवाब माँ बाप और वली को भी मिलता है।

हज़रत साइब इब्न यज़ीद (रज़ि.) का ब्यान है कि मेरी उम्र सात साल की थी, जब मेरे बाप ने मुझे साथ ले कर नबी करीम (स.अ.व.) की मईयत में हज अदा किया।

बच्चे पर चूंकि हज फ़र्ज़ नहीं है इसलिए उसका हज नफ़्ली हज होगा और बालिग़ होने के बाद अगर उस पर हज फ़र्ज़ हो जाए तो उसे फ़र्ज़ हज की नीयत से दोबारा हज अदा करना होगा।

हज करने वाला बच्चा या बच्ची अगर बहुत ही छोटी उम्र के हैं और अक़्ल व तमीज़ नहीं रखते तो उनके माँ बाप या वली उनकी तरफ़ से एहराम की नीयत करें मगर ये एहराम वाजिब नहीं है। अगर एहराम की नीयत न करें जब भी कोई हरज नहीं है, फिर उनकी तरफ़ से वली ही

हज के सारे अफ़आल अदा करें और उस बच्चे या बच्ची को उन तमाम बातों से बचाएँ जिनसे एक एहराम वाला मर्द व औरत बचे रहते हैं। और तवाफ़ में उनका जिस्म और कपड़े पाक रखने का एहतेमाम करें। अगर कोई ख़िलाफ़े एहराम बात पेश आ जाए तो बच्चे पर या उसकी तरफ़ से वली पर कोई दम नहीं होगा। और अगर बच्चा या बच्ची होशियार हो, अक़्ल व तमीज़ रखता हो, तो फिर माँ बाप या वली की इजाज़त से एहराम बांधे वुज़ू और पाकी व नापाकी का ख़्याल रखे और उन तमाम बातों का एहतेमाम करे जिसका एहतेमाम एक एहराम वाला मर्द और औरत करते हैं।

"और जो अफ़आल बच्चा बतौर ख़ुद अदा न कर सकता हो जैसे रमी वग़ैरा तो वह वली उसकी तरफ़ से अदा कर दे, अलबत्ता वक़ूफ़े अरफ़ा, मिना और मुज़दलिफ़ा में रात गुज़ारना, तवाफ़ और सअ़ी वग़ैरा वह करे। और अगर न कर सकता हो तो फिर माँ बाप या वली गोद में या कंधे पर बिठा कर तवाफ़ और सअ़ी करायें तवाफ़ और सअ़ी कराते वक़्त अपनी और बच्चे की भी नीयत कर लें तो दोनों की तरफ़ से अदा हो जाएगा। नीज़ अगर बच्चे से कोई ख़िलाफ़े एहराम बात सरज़द हो जाए तो कोई दम बच्चे पर या बच्चा की तरफ़ से वली पर नहीं होगा, बच्चा जो अफ़आल करेगा उसका सवाब मिलेगा। इंशाअल्लाह तआ़ला।"

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

बच्चे के साथ ले जाने से क्या बालिग होने पर हज फ़र्ज़ हो जाएगा?

सवाल: बच्चा को हज के लिए साथ ले जाना क्या मुनासिब नहीं है। क्योंकि बैतुल्लाह को देखने से हज फ़र्ज़ हो जाएगा? और बालिग होने पर मालदार न हो और मर गया तो क्या गुनहगार होगा,

जवाब: बच्चा अगर हज कर के चला आए तो बालिग होने के बाद उस पर हज फ़र्ज़ नहीं होगा। हां! अगर बुलूग़ के बाद मालदार भी हो जाए तो हज फ़र्ज़ हो जाएगा, मालदारी की वजह से होगा ज़ियारते (देखने) साबिक़ा की वजह से न होगा।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–2 सफ़्हा–163)

मस्अला: बच्चों को साथ ले जाने से बच्चों का भी हज अदा हो जाता है और माँ को भी अज्र व सवाब मिलता है, और जो अफ़आल वह ख़ुद न कर सके उनके माँ बाप या जिसके साथ बच्चा हो वह कर दें, मसलन "लब्बैक" उनकी तरफ़ से पुकार दें, जिस जगह "रमी" की जाती है वहां उनकी तरफ़ से रमी कर दें, उनको गोद में लेकर तवाफ़ वग़ैरा करा दें, एहराम बांधें, अगर बच्चा बहुत छोटा हो तो उसको बिल्कुल बरहना कर देना (कपड़े उतार देना) भी काफ़ी है। (अलजवाबुलमतीन सफ़्हा–20, मियां असग़र हुसैन साहब)

"अगर बच्चा के कपड़े न भी उतरें जब भी कोई दम वग़ैरा नहीं है, बच्चा जितने अफ़आल करेगा उतने का ही सवाब मिलेगा।"

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

बालिग़ औलाद का हज?

सवालः कोई शख़्स अपनी बालिग़ा लड़की या लड़के को हज कराए तो क्या वह हज नफ़्ल होगा?

जवाबः अगर रक़म लड़की या लड़के की मिलकियत कर दी गई थी तो उन पर हज फ़र्ज़ भी हो गया और उनका हज फ़र्ज़ भी अदा हो गया।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–37)

मस्अलाः जिस लड़के ने बाप की मौजूदगी में बाप के माल से हज किया, बाप के इंतिक़ाल के बाद जब ये लड़का बाप के माल का वारिस हुआ तो अगर पहला हज बुलूग़ के बाद हुआ तो हज फ़र्ज़ अदा हो गया दोबारा हज फ़र्ज़ नहीं है।

(फ़तवा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–530 बहवाला रद्दुलमुह्तार किताबुलहज जिल्द–2 सफ़्हा–201)

नाबालिग़ का हज?

सवालः मैं हज करने का इरादा रखती हूं मेरे साथ दो बच्चे ग्यारह साल और तेरह साल के हैं, तो जो मेरे नाबालिग़ बच्चे हैं उनका फ़र्ज़ हज होगा या नफ़्ल?

जवाबः नाबालिग़ का हज नफ़्ली होता है। बालिग़ होने के बाद अगर उनकी इस्तितआत हो तो उन पर हज फ़र्ज़ होगा। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–37)

मस्अलाः अगर लड़के ने हज किया और वह साहबे शुऊर है कि आमाले हज का मक़सद जानता हो, तो उसका हज हो जाएगा, ताहम फ़रीज़ए हज उसके ज़िम्मा से साक़ित न होगा। (क्योंकि वह बालिग़ नहीं है।)

मस्अलाः अगर कोई लड़का ज़ीशुऊर नहीं है और

अैयामे हज आ गए तो उसका वली उसकी जानिब से आमाले हज अदा करने का ज़िम्मादार होगा। हदीस शरीफ़ में है कि– "आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया अगर बच्चे ने दस हज भी किए, फिर बालिग़ हुआ तो उस पर लाज़िम है कि इस्लामी हज अदा करे।" (जब कि इस्तिताअत हो)

मस्अला: मिनजुमला शराइत वजूबे हज के आक़िल होना है, लिहाज़ा मजनून (पागल अगरचे बालिग़ हो) उस पर हज वाजिब नहीं है और न उसका हज करना सही होगा, लिहाज़ा वह इस बारे में बेशुऊर बच्चा के मानिन्द है।

मस्अला: हज वाजिब होने की एक शर्त "आज़ाद" होना है, चुनांचे गुलाम पर हज वाजिब नहीं है।

(किताबुलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1034 व हाकज़ा फ़तावा महमूदिया जिल्द–17 सफ़्हा–189)

मस्अला: बाप छोटे बे माँ के बच्चे को छोड़ कर फ़रीज़ए हज को जा सकता है। बाप के जाने के बाद बच्चे के वली ताया व चचा (हैं वह) परवरिश करेंगे अलबत्ता बच्चे का ख़र्च बाप दे कर जाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–533)

मस्अला: किसी मजनून ने हज का एहराम बांधा और वक़ूफ़े अरफ़ा से पहले होश आ गया और जुनून जाता रहा तो अगर उसके बाद दोबारा एहराम बांध लिया तो हज फ़र्ज़ अदा हो जाएगा और अगर दोबारा एहराम नहीं बांधा तो हज फ़र्ज़ अदा न होगा।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–77)

मस्अला: नाबालिग़ को बालिग़ होने और मजनून को अच्छा होने के बाद फिर हज करना होगा, बशर्तेकि कुदरत

और शराइत मौजूद हों।

मस्अला: अगर एहराम बांधने के बाद कोई शख़्स मजनून हो गया या एहराम से पहले मजनून था मगर एहराम के वक़्त इफ़ाक़ा हो गया और एहराम की नीयत कर के तल्बिया पढ़ लिया उसके बाद मजनून हो गया और तमाम अफ़आले हज उसको साथ लेकर उसके वली ने करा दिए तो उसका हज फ़र्ज़ अदा हो जाएगा, अलबत्ता तवाफ़े ज़ियारत इफ़ाक़ा होने के बाद ख़ुद अदा करना ज़रूरी है। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–88)

नाबालिग़ बच्चों का एहराम?

मस्अला: नाबालिग़ बच्चा होश्यार और समझदार है तो ख़ुद वह एहराम बांधे और अफ़आले हज अदा करे और बालिग़ की तरह सब अफ़आल करे। अगर ना समझ और छोटा बच्चा है तो उसका वली उसकी तरफ़ से उसके एहराम बांधे।

मस्अला: छोटा बच्चा ना समझ अगर ख़ुद अफ़आल अदा करे या ख़ुद एहराम बांधे तो ये अफ़आल और एहराम सही नहीं होंगे। अलबत्ता समझदार बच्चा अगर ख़ुद एहराम बांधे और अफ़आल ख़ुद अदा करे तो सही हो जायेंगे।

मस्अला: समझदार बच्चा की तरफ़ से वली एहराम नहीं बाँध सकता।

मस्अला: समझदार बच्चा जो अफ़आल ख़ुद कर सकता हो ख़ुद करे और अगर ख़ुद न कर सके तो उसका वली कर दे अलबत्ता नमाज़े तवाफ़ बच्चा ख़ुद पढे वली न पढ़े।

मस्अला: समझदार बच्चा ख़ुद तवाफ़ करे और ना

समझ को गोद में लेकर तवाफ़ कराए और यही हुक्म वकूफ़े अरफ़ात और सऔ व रमी वग़ैरा का है।

मस्अला: वली को चाहिए कि बच्चा को ममनूआते एहराम से बचाए, अगर कोई फ़ेले ममनूअ बच्चा कर लेगा तो उसकी जज़ा वाजिब न होगी न बच्चा पर न वली पर।

मस्अला: बच्चा का एहराम लाज़िम नहीं होता, बच्चा अगर तमाम अफ़आल छोड़ दे या बाज़ छोड़ दे तो उस पर कोई जज़ा व क़ज़ा वाजिब नहीं होगी।

मस्अला: वली सब से क़रीब जो साथ हो वह बच्चा के एहराम बांधे, मसलन बाप भाई अगर दोनों साथ हों तो बाप को एहराम बांधना बेहतर है। अगर भाई वग़ैरा बांधेगा तो भी जाइज़ है।

मस्अला: मजनून का हुक्म तमाम अहकाम में मिस्ल ना समझ बच्चे के है, लेकिन अगर कोई शख़्स एहराम बांधने के बाद मजनून हुआ है तो ममनूआते एहराम के इरतिकाब से उस पर जज़ा लाज़िम होने में इख़्तिलाफ़ है एहतियातन जज़ा दे दे तो अच्छा है, हज उसका बिला इख़्तिलाफ़ सही हो जाएगा।

मस्अला: और अगर एहराम के पहले से मजनून था और उसके वली ने उसकी तरफ़ से उसके एहराम बांधा और फिर वह होश में आ गया तो अगर उसने होश में आने के बाद ख़ुद दोबारा एहराम बांध कर अफ़आले हज अदा कर लिए तो हज फ़र्ज़ अदा हो जाएगा।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–190)

मस्अला: कम अक़्ल मजनून, बच्चा और बेहोश अगर बिल्कुल रमी न करें तो उन पर फ़िदया वाजिब नहीं है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़हा–87)

हज में तिजारत करना?

मस्अला: जिस सामान के यहाँ से ले जाने और वहां से लाने पर कोई क़ानूनी पाबंदी नहीं, उसका यहां से ले जाना और वहां से लाना हाजी वग़ैरा सब के लिए जाइज़ है। ऐसा करने से हज के सवाब में कमी नहीं आती। लेकिन इतना ज़रूर है कि हाजी का ध्यान फिर तिजारत में अटका रहता है। इसलिए अफ़ज़ल ये है कि तिजारत की नीयत न हो बल्कि रुपया की कमी को दूर कर के फ़राइज़ को सहूलत से अदा करना और ख़ैरात करना मक़सूद हो तो इस नीयत में अज्र व सवाब भी है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़हा–363 व हाकज़ा फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़हा–180)

मस्अला: अगर किसी शख़्स की नीयत अस्ल में दुनियवी नफ़ा, तिजारत या मज़दूरी है और ज़िमनी तौर पर हज का भी क़स्द कर लिया, या नफ़ा तिजारत और क़स्दे हज दोनों मुसावी सूरत में हैं तब भी इख़लास के ख़िलाफ़ है, हज का सवाब इससे कम हो जाएगा और बरकाते हज जैसी हासिल होनी चाहिए वह हासिल न होंगी, और अस्ल नीयत हज की है उसके शौक़ में निकला है, लेकिन मसारिफ़े हज में या घर की ज़रूरीयात में तंगी है, उसको पूरा करने के लिए कोई मामूली तिजारत या मज़दूरी कर ली, ये इख़लास के बल्कुल मुनाफ़ी नहीं है। हाँ इसमें भी बेहतर ये है कि ख़ास उन पांच अैयाम जिनमें हज के अफ़आल अदा होते हैं उनमें कोई मशग़ला तिजारत व मज़दूरी का न रखे, बल्कि उन अैयाम को ख़ालिस इबादत

व ज़िक्र में गुज़ारे, इसी वजह से बाज़ उलमा ने ख़ास उन अैयाम में तिजारत व मज़दूरी को ममनूअ़ भी फ़रमा दिया है। (मआ़रिफ़ुल कुरआन जिल्द–1 सफ़्हा–431)

कारोबारी हज?

सवाल: मौजूदा दौर में कुछ हज़रात ऐसे भी हैं जो तक़रीबन हर साल हज पर जाते हैं उनका हज एक क़िस्म का "कारोबारी हज" होता है, ये लोग यहां से मुख़्तलिफ़ दवाएें और दीगर सामान ले जाते हैं और वहां पर मुनाफ़ा के साथ फ़रोख़्त कर देते हैं और हज से वापसी पर वहां से सामान ला कर यहां पर फ़रोख़्त कर देते हैं। मालूम ये करना है कि इस कारोबारी हज की दीनी हैसियत क्या है? क्या हर साल ख़ुद जाने के बजाए किसी ग़रीब को हज पर भेज दे?

जवाब: हज के दौरान कारोबार की तो कुरआन करीम ने इजाज़त दी है, लेकिन सफ़रे हज से मक़सूद ही कारोबार हो तो ज़ाहिर है कि उसको अपनी नीयत के मुताबिक़ बदला मिलेगा। हां ये है कि अपनी जगह दूसरों को हज करा दें अपने हौसला और ज़ौक़ की बात है, उसकी फ़ज़ीलत में तो कोई शब्हा नहीं, मगर हम किसी को इसका हुक्म नहीं दे सकते।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–32)

हज या उम्रा की नज़्र करना?

मस्अला: हज या उम्रा की नज़्र करने से भी हज या उम्रा वाजिब हो जाता है, मसलन किसी ने कहा अल्लाह तआ़ला के वासते मुझ पर हज है, या सिर्फ़ ये कहा मुझ पर हज है, तो इन अलफ़ाज़ से नज़्र हो जाएगी पूरा

करना वाजिब होगा।

मस्अला: अगर किसी ने कहा कि अल्लाह तआला ने मुझ को इस मरज़ से शिफ़ा दी या मेरे मरीज़ को शिफ़ा दी तो मुझ पर हज या उम्रा है, तो शिफ़ा होने पर हज या उम्रा जिसकी नज़्र मानी हो, करना वाजिब होगा।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–291)

मस्अला: हज जिस तरह खुदा की तरफ़ से जब उसके शराइत पाये जायें फ़र्ज़ है, इसी तरह अगर कोई शख़्स हज की नज़्र माने तो वह भी वाजिब हो जाता है और उस शख़्स पर हज करना ज़रूरी हो जाता है। यही हाल तमाम इबादात का है, अगरचे वह फ़ी नफ़्सिही वाजिब न हों मगर नज़्र करने से वाजिब हो जाती हैं।

(इल्मुलफ़िक्ह जिल्द–5 सफ़्हा–75)

मस्अला: कभी हज बिला नज़्र के भी वाजिब हो जाता है, मसलन अगर कोई शख़्स मीक़ात से बिला एहराम के गुज़र जाए तो उस पर हज या उम्रा वाजिब हो जाता है, तो अगर ऐसा शख़्स हज करेगा तो ये हज वाजिब होगा नीज़ हज्जे फ़र्ज़ और हज्जे नज़्र दोनों एक ही तरह अदा किए जाते हैं। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–74)

हज्जे मक़बूल की पहचान

मस्अला: हज बहुत बड़ी इबादत है जिससे गुनाह मआफ़ हो जाते हैं, और जो ये फ़रमाया गया है हदीस शरीफ़ में "गोया वह (हज करने वाला) आज अपनी माँ के पेट से पैदा हुआ है" ये गुनाहों से पाक होने को समझाने के लिए है कि जिस तरह नौमौलूद बच्चा गुनाहों से पाक साफ़ होता है उसी तरह "हज्जे मबरूर" के बाद

आदमी गुनाहों से पाक व साफ़ हो जाता है।

मस्अला: हज्जे मक़बूल वही है जिससे ज़िन्दगी की लाइन बदल जाए, आइंदा के लिए गुनाहों से बचने का एहतेमाम हो और इताअत की पाबंदी की जाए। हज के बाद जिस शख़्स की ज़िन्दगी में खुशगवार इंक़िलाब नहीं आता उसका मआमला मशकूक है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–25)

मस्अला: हज्जे मबरूर यानी मक़बूल हज वह है कि गुनाहों से तौबा व इस्तिग़फ़ार करे और कामिल अरकाने फ़राइज़ व वाजिबात और सुनन व मुस्तहब्बात के साथ अदा करे और एहराम की हालत में ममनूआत से इजतिनाब करता रहे। रिया, नुमूद और हराम माल से बचे और जुमला इख़राजात, खाना पीना, पहनना वग़ैरा हलाल माल से हो, फिर हज के बाद दीनी हालत बेहतर हो तो समझे कि हज मक़बूल और मबरूर है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–114)

हज व उम्रा को गुनाहों से पाक रखना चाहिए

मस्अला: उम्रा और मस्जिदे नबवी (स.अ.व.) की हाज़िरी में भी लोग इतनी ग़लतियाँ करते हैं कि ख़ुदा की पनाह, दीन के मसाइल न किसी से पूछते हैं और न उसकी ज़रूरत समझते हैं।

लोग ख़ूब दाढ़ी मुंडा कर रौज़ए अतहर पर जाते हैं और उनको ज़रा भी शर्म नहीं आती कि वह आंहज़रत (स.अ.व.) से मुहब्बत का दावा करते हैं, मगर शक्ल आप के दुश्मनों जैसी बनाते हैं।

इस तहरीर से ये मक़सूद नहीं कि लोगों को हज व

उम्रा नहीं करना चाहिए, बल्कि मक़सूद ये है कि इन मुक़द्दस आमाल को गुनाहों और ग़लतियों से पाक रखना चाहिए। ऐसे हज व उम्रा ही पर पूरा सवाब मुरत्तब होता है। (आपके मसाइल जिल्द-4 सफ़्हा-28)

हज के दौरान तस्वीर बनवाना?

मस्अलाः हज के दौरान गुनाहों का काम करने से हज के सवाब में ज़रूर ख़लल आएगा। क्योंकि हदीस शरीफ़ में "हज्जे मबरूर" की फ़ज़ीलत आई है और "हज्जे मबरूर" वह कहलाएगा जिसमें गुनाहों से इजतिनाब किया जाए। अगर हज में किसी गुनाह का इरतिकाब किया जाए तो "हज्जे मबरूर" नहीं रहता। अलावा अज़ीं इस तरह तस्वीरें (एहराम बांधते वक़्त और क़ुर्बानी वग़ैरा करते वक़्त) खिंचवाना इसका मन्शा तफ़ाख़ुर और रियाकारी है कि अपने दोस्त को (हज से आने के बाद) दिखाते फिरेंगे और रियाकारी से आमाल का सवाब ज़ाये हो जाता है।

(आपके मसाइल जिल्द-4 सफ़्हा-59)

जिन्दगी में एक बार फ़रज़ीयते हज में हिकमत

सवालः नमाज़ और ज़कात में तकरार है (बार बार आना, होना) हज में तकरार क्यों नहीं? सारी उम्र में सिर्फ़ एक बार क्यों फ़र्ज़ है?

जवाबः अव्वलन तो अहकामे मनसूसा में हिकमत का मुतलाशी रहना ज़ोअफ़े ईमान की दलील है। दूसरे अक़्लन जुमला फ़राइज़ में तकरार न होना चाहिए था, मगर तकरार मुस्तल्ज़िम हुआ तकरारे अम्र को, हज का सबब यानी बैतुल्लाह वाहिद है, लिहाज़ा तकरार का तक़ाज़ा करने वाली कोई चीज़ नहीं। तीसरे हज में बनिस्बत दीगर इबादात

के मशक़्क़त ज़्यादा है। इसलिए हज को जिहाद फ़रमाया गया है। हाएज़ा से नमाज़ के ख़त्म होने और रोजा के न ख़त्म होने में भी यही हिकमत है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–551)

मस्अला: जिन्दगी में (इस्तितआत के बाद) एक मरतबा हज फ़र्ज़ है, जब एक मरतबा हज कर चुका हो तो दूसरी मरतबा हज फ़र्ज़ न होगा।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–218)

हज की फ़रज़ीयत का वक़्त

सवाल: एक शख़्स हज के महीनों में मालिक हो गया माल का तमाम शराइत के साथ और बाद में माल ख़र्च कर दिया, या तलफ़ हो गया तो क्या हज की क़ज़ा ज़रूरी है?

जवाब: हज के महीनों में मालदार हुआ तो हज फ़र्ज़ हो गया, अलबत्ता अगर ऐसे दूर दराज़ मुल्क में रहता हो कि वहां से हज के महीनों से पहले हुज्जाज रवाना होते हों तो क़ाफ़िलए हुज्जाज की रवानगी का वक़्त मोतबर होगा, अगर उस वक़्त माल है तो हज फ़र्ज़ हो गया, अगर हज नहीं किया तो क़ज़ा वाजिब होगी।

मस्अला: हज की फ़रज़ीयत अललफ़ौर है, लिहाज़ा (बिला उज़्र) ताख़ीर से गुनहगार होगा। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–528 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–152 व हाकज़ा फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–292 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1032)

नमाज़ व हज की ग़लती क्यों मआफ़ नहीं?

मस्अला: रोज़ा की ग़लती मआफ़ है, लेकिन नमाज़ व

हज की ग़लती मआफ़ न होने की वजह ये है कि रोज़ा के अन्दर कोई ऐसी हैअत नहीं है जो रोज़ा को याद दिलाती हो, इसलिए रोज़ा में मआफ़ समझा गया, बख़िलाफ़ नमाज़ व हज के कि नमाज़ में इस्तिक़बाले क़िब्ला नमाज़ को याद दिलाने वाली हैअत है और हज में एहराम (बग़ैर सिला हुआ कपड़ा पहनना) वग़ैरा याद दिलाने वाली मौजूद है इसलिए हज व नमाज़ में माज़ूर नहीं समझा गया।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–9 सफ़्हा–401)

मक्का को मुस्तक़िल वतन न बनाने वाले का हज

सवालः मैं मक्का मुकर्रमा में मुलाज़िम हूं, आज कल हुकूमते सऊदिया के क़ानून के मुताबिक़ मुल्क से एक मरतबा बाहर जाना पड़ता है, इसलिए पाकिस्तान आ गया हूं, अब मैं हज्जे तमत्तोअ़ करना चाहता हूं। इसकी क्या सूरत होगी?

जवाबः आप ने चूंकि मक्का मुकर्रमा को हमेशा के लिए मुस्तक़िल वतन नहीं बनाया, इसलिए पाकिस्तान से तमत्तोअ़ कर सकते हैं। अगर मुस्तक़िल वतन बना लेंगे तो तमत्तोअ़ नहीं कर सकेंगे। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–527 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–211)

मक्का वाला आफ़ाक़ से वापसी पर तमत्तोअ़ करे या क़िरान?

सवालः मक्का मुकर्रमा और जद्दा के रहने वाले रमज़ानुलमुबारक के आख़िरी अशरा में मदीना तैयबा जाते हैं और शुरू शव्वाल में जद्दा वाले जद्दा आते हैं और मक्का मुकर्रमा वाले मक्का मुकर्रमा आते हैं या जद्दा वाले मक्का मुकर्रमा के रास्ते से जद्दा वापस आते हैं और उसी साल हज का इरादा रखते हैं, तो वह अब जबकि मीक़ात

से बाहर चले गए तो आफ़ाक़ी हो गए तो ऐसी हालत में तमत्तोअ़ कर सकते हैं या नहीं?

जवाबः ये लोग क़िरान कर सकते हैं तमत्तोअ़ नहीं कर सकते, ये हुक्म उन लोगों का है जिनका हरम या हिल्ल में वतने अस्ली है। (हरम से बाहर और मीक़ात के अन्दर का हिस्सा "हिल्ल" कहलाता है) जिन्होंने वहां वतने अस्ली नहीं बनाया सिर्फ़ मुलाज़िमत या तिजारत वग़ैरा के लिए वहां मुक़ीम हैं वह तमत्तोअ़ भी कर सकते हैं और जो शख़्स हज के महीने शुरू होने के बाद आफ़ाक़ (मीक़ात से बाहर) में गया हो वह क़िरान भी नहीं कर सकता। ख़्वाह उसका वतन अस्ली हो या न हो।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द-4 सफ़हा-515 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द-2 सफ़्हा-214)

एहसार क्या है?

एहसार के लुग्वी माना हैं रोकना, मना करना, बाज़ रखना और इस्तिलाहे फ़िक़्ह में एहसार ये है कि कोई शख़्स हज या उम्रा का एहराम बांध ले और फिर वह हज या उम्रा करने से रोक दिया जाए, ऐसे शख़्स को इस्तिलाह में "मुहसर" कहते हैं।

एहसार की चंद सूरतें

एहराम बांधने के बाद हज से रोके जाने और हज या उम्रा न कर सकने की बहुत सी सूरतें हो सकती हैं मसलन-

(1) रास्ता पुरअम्न न हो, दुश्मन का ख़ौफ़ हो, क़त्ल व ग़ारत का ख़ौफ़ हो, या किसी और तरह का जान व माल का ख़तरा हो।

(2) मरज़ लाहिक़ हो जाए, ये अंदेशा हो कि आगे बढ़ने से मरज़ बढ़ जाएगा या ज़ोअ़फ़ और नक़ाहत की वजह से आगे बढ़ने की सकत न हो।

(3) एहराम बांधने के बाद औरत के हमराह कोई महरम न रहे, महरम बीमार हो जाए या इंतिक़ाल हो जाए या झगड़ा हो जाए और साथ ले जाने से इनकार कर दे या तलाक़ दे दे या महरम को कोई जाने से रोक दे।

(4) सफ़रे ख़र्च न रहे, कम पड़ जाए या चोरी हो जाए (और क़र्ज़ भी न मिल सके)।

(5) किसी औरत की इद्दत शुरू हो जाए, मसलन शौहर तलाक़ दे दे या औरत के एहराम बांधने के बाद शौहर की वफ़ात हो जाए।

(6) किसी औरत ने शौहर की इजाज़त के बग़ैर (नफ़्ली हज का) एहराम बांधा हो और एहराम बांधने के बाद शौहर मना कर दे।

(7) क़ैद हो जाना या बादशाह का मना करना।

(8) हड्डी टूट जाना या इतना लंगड़ा होना कि चल न सके।

(9) सफ़र की वजह से मरज़ की ज़ियादती का ख़ौफ़ होना।

जब किसी मर्द या औरत को इन उमूरे मज़कूरा में से कोई अम्र एहराम बांधने के बाद वक़ूफ़े अरफ़ा से पहले पेश आ जाए तो वह मुहसर होगा। और अगर वक़ूफ़े अरफ़ा के बाद पेश आए तो वह शरअ़न मुहसर न होगा।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–271)

एहसार का हुक्म

एहसार की सूरत में क़ुर्बानी वाजिब है, और जब तक

मुहसर की जानिब से हरम शरीफ़ में कुर्बानी न की जाए मुहसर एहराम ख़त्म न करे, कुर्बान का जानवर या रक़म भेजते वक़्त ज़िब्ह का दिन मुक़र्रर कर ले, ताकि उस दिन ये अपना एहराम खोल ले।

मस्अला: उम्रे या हज्जे इफ़राद या तमत्तोअ़ से रोका गया हो तो एक कुर्बानी और अगर क़िरान से रोका गया हो तो दो कुर्बानी वाजिब होंगी।

मस्अला: अगर मक्का मुकर्रमा में ही मोहरिम को कोई ऐसा मानेअ़ पेश आ जाए कि वकूफ़े अरफ़ात और तवाफ़े ज़ियारत दोनों न कर सके तो वह भी मुहसर है और अगर सिर्फ़ एक से रुका तो मुहसर न होगा, क्योंकि अगर वकूफ़ से रुका तो उम्रा कर के हलाल हो जाए और अगर तवाफ़े ज़ियारत से रुका हो तो ये तवाफ़ सारी उम्र में हो सकता है। अलबत्ता अैयामे नह्र के बाद करने से दम वाजिब होगा।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–511 व मज़ाहिरे हक़ जिल्द–3 सफ़्हा–384 व मआरिफुलकुरआन जिल्द–1 सफ़्हा–425)

"आसान शक्ल ये है कि हज या उम्रा करने वाला वुज़ू या गुस्ल कर के एहराम बांध कर दो रकअ़त नफ़्ल सर ढक कर पढ़ने के बाद घर से निकले, लेकिन हज की नीयत जहाज़ में रवाना होने के बाद करे, या मीक़ात के क़रीब करे, ताकि अगर कोई रुकावट पेश आ जाए तो वह मोहरिम न हो, क्योंकि नीयत करने के बाद ही एहराम की पाबंदियाँ

आएद होती हैं।" (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

मस्अलाः मुहसर की कुर्बानी के लिए ये ज़रूरी नहीं कि ये कुर्बानी अैयामे नह्र यानी दस, ग्यारह, बारह ज़िलहिज्जा ही में की जाए बल्कि इससे क़ब्ल या बाद में भी की जा सकती है। जब कुर्बानी का अपना मुक़र्रर कर्दा वक़्त गुज़र जाए एहराम खोल दे। सर मुंडवाना मुस्तहब है। ज़रूरी नहीं, फिर उस पर आइंदा साल क़ज़ा वाजिब है। अगर सिर्फ़ उम्रा का एहराम था तो सिर्फ़ उम्रा की क़ज़ा वाजिब है। और अगर सिर्फ़ हज का एहराम था तो हज व उम्रा दोनों वाजिब हैं। और हज व उम्रा दोनों का एहराम था तो एक हज और दो उम्रे क़ज़ा में वाजिब हैं। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–510 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–254)

मस्अलाः अगर उस कुर्बानी के ज़िब्ह होने से पहले ममनूआ़ते एहराम में से कोई अम्र सरज़द हो जाए तो उसकी पादाश में उस पर भी वही कुछ वाजिब होगा जो कि ग़ैर मुहसर एहराम बांधने वाले पर वाजिब होता है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1153)

मस्अलाः जिस शख़्स का हज फ़ौत हो गया या मुहसर यानी जो हज से रोक लिया गया उस पर भी तवाफ़े वदाअ़ वाजिब नहीं है। (मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–190)

मस्अलाः एहसार की कुर्बानी का गोश्त मुहसर के लिए खाना जाइज़ नहीं इसलिए कि ये जिनायत (ग़लती) की कुर्बानी है।

मस्अलाः कुर्बानी का जानवर या उसकी क़ीमत भेजने के बाद रुकावट ख़त्म होने की सूरत में अगर ये मुमकिन

हो कि जो रोक दिया था (मुहसर) कुर्बानी का जानवर ज़िब्ह होने से पहले मक्का मुकर्रमा पहुंच जाएगा और हज या उम्रा की सआदत हासिल कर सकेगा तो उस पर वाजिब है कि फ़ौरन हज के लिए रवाना हो जाए। हां अगर कुर्बानी से पहले पहुंचने और हज अदा कर सकने का इमकान न हो तो फिर रवाना होना वाजिब नहीं है।

(इल्मुलफ़िक्ह जिल्द–5 सफ़्हा–67)

क्या सफ़रे हज में मरने वाले का हज हो जाएगा?

सवालः अगर किसी शख़्स का सफ़रे हज में हज करने से पहले इंतिक़ाल हो जाए तो क्या उसके ज़िम्मा से फ़र्ज़ साक़ित हो जाएगा?

जवाबः और अगर हज पहले फ़र्ज़ हो चुका था तो उसमें ये तफ़सील है कि वक़ूफ़े अरफ़ा के बाद फ़ौत हुआ तो फ़र्ज़ अदा हो गया, उससे पहले फ़ौत हुआ तो फ़र्ज़ साक़ित नहीं हुआ, इसलिए उस पर उसके शहर से हज्जे बदल की वसीयत करना (जबकि मुमकिन हो) फ़र्ज़ है, अगर सुलुसे (तिहाई) माल उसके शहर से काफ़ी न हो तो जहां से भी सुलुसे माल में हज हो सके वहीं से कराया जाए। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–523 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–263 व हाकज़ा फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–223)

रास्ता में मरने पर दूसरे ने हज अदा किया?

सवालः एक शख़्स फ़र्ज़ हज के लिए रवाना हुआ, मीक़ात पहुंचने से पहले ही इंतिक़ाल हो गया, बाक़ी मांदा रुपया से दूसरे आदमी ने उसकी तरफ़ से हज अदा किया। इसमें क्या मैयत की तरफ़ से हज अदा हो गया

या नहीं, और बकिया रुपया वारिसों को तलब करने का हक है या नहीं?

जवाबः उस शख़्स को वह रुपया (बकिया) वुरसा को देना होगा, क्योंकि मरने वाले ने कुछ वसीयत नहीं की और रुपया बाक़ी मांदा, मीरास, वारिसों का हो गया, बहरहाल बाक़ी मांदा रुपया उसको वापस देना होगा और हज उस मैयत की तरफ़ से इंशाअल्लाह तआला अदा हो जाएगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–558 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–328)

सफ़रे हज में इंतिक़ाल वाले के लिए ख़ुशख़बरी

हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि.) से रिवायत है कि आंहज़रत (स.अ.व.) ने फ़रमाया– "जो हज के लिए निकला और रास्ता में वफ़ात पा गया उसके लिए क़यामत तक हज का सवाब मिलता रहेगा। और जो उम्रा के लिए निकला और रास्ता में इंतिक़ाल कर गया उसके लिए भी क़यामत तक उम्रा करने का सवाब मिलता रहेगा।"

एक हदीस में रोज़े महशर का आम उसूल ये बताया गया है कि जिस शख़्स को जिस चीज़ और जिस अमल पर मौत आएगी क़यामत के दिन वही करता हुआ उठेगा।

इसलिए ख़ुश नसीब हैं वह लोग जो कोई नेक अमल करते हुए दुनिया से चले जायें। (अत्तरग़ीब व अत्तरहीब जिल्द–3 सफ़्हा–36)

मस्अलाः जो शख़्स एहराम की हालत में मर जाए उसकी तजहीज़ व तकफ़ीन ग़ैर मोहरिम की तरह की जाए यानी आम मरने वालों की तरह उसका सर ढांका जाए काफ़ूर ख़ुशबू वग़ैरा लगाई जाए।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ्हा–113)

"हाजी जो हज के दौरान इंतिकाल कर जाए उसको गुस्ल और पूरा कफ़न दे कर दफ़न करना चाहिए और उसका सर भी ढाक दिया जाए, ग़रज़ ये कि जो आम मैयत के साथ अमल किया जाता है वह सब करने चाहिएं, क्योंकि मरने के बाद एहराम के मसाइल उससे ख़त्म हो गए हैं।"

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

हज में ख़्वातीन की बे-एहतियातियाँ

हज्जे बैतुल्लाहिलहराम, मुसलमान के लिए ये फ़रीज़ा अदा करना गोनागूं बरकतों का ज़रीआ है और हैरत अंगेज़ नेमतों का वसीला है। बावजूद इसके कि साबिक़ा मुश्किलात ख़त्म हो गई और बहुत कुछ आसानियाँ पैदा हो गई, ताहम दूर दराज़ का सफ़र है, हज़ारों रुपया ख़र्च होता है। अक्सर लोगों को ज़िन्दगी में एक ही मरतबा जाना मुयस्सर होता है और अब भी बहुत कुछ मुश्किलात उठाना पड़ती हैं। ऐसी सूरत में बेहद ज़रूरी था कि मुसलमान इस फ़रीज़ा की अदाएगी में इंतिहाई एहतियात बरतें, मसाइले हज से कामिल वाक़िफ़ीयत हासिल करें, इसीलिए हर ज़बान में मसाइल व अहकामे हज से मुतअल्लिक़ छोटी बड़ी किताबें शाये हो चुकी हैं ताकि शरई क़ानून के मुताबिक़ सही तौर पर हज अदा हो सके। लेकिन अफ़सोस से कहना पड़ता है कि मख़लूक़े ख़ुदा का ये अज़ीम अंबोह जो मुल्क (बल्कि दुनिया) के हर गोशा से पहुंच रहा है, अक्सर व बेशतर इस फ़रीज़ा के अहकाम व मसाइल से

बिल्कुल बेख़बर है। सुनन व मुस्तहब्बात तो दरकिनार फ़राइज़ व वाजिबात से भी ग़ाफ़िल है। उसका नतीजा ये है कि इतना ही नहीं कि महजूरात व ममनूआत का बराबर इरतिकाब होता रहता है बल्कि और तमाम गुनाहों तक पहुंचने से बचने का ज़र्रा बराबर भी एहतेमाम नहीं होता। नमाज़ों के अदा करने में तक़सीर, जमाअत की पाबंदी में कोताही, हालांकि एक फ़र्ज़ नमाज़ भी हज से बदरजहा अहमियत रखती है। अगर बग़ैर उज़्रे शरई के एक नमाज़ भी कज़ा की तो हज क़बूल होने की तवक्क़ो मुश्किल हो जाती है। सफ़र में ख़ुसूसन एहराम बांधने के बाद बजाए तल्बिया कहने और ज़िक्रुल्लाह करने के आम तौर पर ग़ीबतें करते हैं। बकवास बकते रहते हैं। न ज़बान पर क़ाबू न निगाह पर क़ाबू, न हाथ पर, बल्कि बसा औक़ात देखा गया है कि मस्जिदे हराम में बैठे हुए हैं, नमाज़ का इंतिज़ार हो रहा है और फ़ुज़ूलीयात बक रहे हैं। ग़ीबत में मुब्तला हैं, हालांकि ज़िन्दगी के इस अज़ीम मरहले पर पहुंच कर तो तमाम औक़ात इबादत में हों, गुनाहों से पाक व साफ़ हो कर ऐसे वापस हों जैसे आज ही माँ के पेट से वलादत हुई है, दुनिया में दोबारा आए हैं।

बाज़ हज़रात मुस्तहब्बात व आदाब में ग़ुलू करते हैं, लेकिन फ़राइज़ व वाजिबात में तक़सीर (कोताही) करते रहते हैं। और दौरे हाज़िर के अक्सर हुज्जाज को देख कर तो ये शुब्हा हो जाता है कि शायद किसी मेला या तमाशा के लिए इकट्ठा हुए हैं। औरतों पर परदा फ़र्ज़ है, मगर हरमैन शरीफ़ैन में पहुंच कर अक्सर औरतें बल्कि 99 फ़ीसद बुरक़ा पोश औरतें भी बुरक़ा फेंक कर बेहिजाब हो

जाती हैं और इस तरह गुनाह कबीरा की मुरतकिब होती हैं। न सिर्फ़ बेहिजाब बल्कि बसा औक़ात नीम उरयाँ लिबास में बैतुल्लाह का तवाफ़ करती हैं। और अफ़सोस इसका है कि न शौहर और न उनके महरम हज़रात इस बेहिजाबी को रोकने की तदबीर करते हैं न हुकूमत की तरफ़ से इस पर कोई पाबंदी आ़एद की जाती है। बेमहाबा मर्दों के दरमियान घुसती हैं। हजरे अस्वद को बोसा देने के लिए मर्दों की भीड़ में जान बूझ कर घुसती हैं और फंसती हैं। अजनबी मर्दों के साथ शदीद व क़बीह इख़्तिलात में मुब्तला होती है। ये सब हराम है गुनाहे कबीरा है। ऐसा हज कि जिसमें अव्वल से अख़ीर तक मुहर्रमात और कबाइर से एहतिराज़ न हो सके, क्या तवक़्क़ो है कि वह हज क़बूल होगा। हज्जे मबरूर के लिए जज़ाए जन्नत बेशक है लेकिन हज्जे मबरूर कैसे होगा? नबी करीम (स.अ.व.) ने हज्जे मबरूर के बारे में ब्यान फ़रमाया कि हज करे और उसमें कोई भी बेहयाई का काम न करे, कोई गुनाह न करे, तब गुनाहों से पाक व साफ़ होगा जैसे माँ के पेट से आज ही पैदा हुआ है।

पाकिस्तान व हिन्दुस्तान की बाज़ औरतें मिस्र व शाम वग़ैरा बाज़ मुलकों की औरतों को देख कर कि वह बे परदा हैं खुद भी परदा उठा देती हैं और हरम में इस तरह आती है जैसे तमाम मर्द उनके महरम हैं या वह घर के सेहन में फ़िर रही हैं। लेकिन ये इंतिहाई हिमाक़त है, अगर कोई क़ौम किसी गुनाह में मुब्तला है तो इससे वह गुनाह जाइज़ नहीं हो जाता। फिर देखा गया है कि उनकी बेपरदगी (यानी चेहरा का खुला होना) एक ख़ास संजीदगी

और वक़ार के साथ होता है। लिबास भी उनका सर से पाँव बाहिजाब होता है। पांव तक मोज़े होते हैं, लेकिन पाकिस्तानी औरतों का ख़ुसूसन पंजाब व सिंध की औरतों का लिबास तो इंतिहाई बेहयाई का होता है, तमाम निस्वानी आज़ा नुमायाँ होते हैं, बेमहाबा सीना तान कर चलती हैं। उसका नतीजा ये है कि वह औरतें भी इस बेहयाई की वजह से मासियत व फ़िस्क़ में मुब्तला हो जाती हैं और उनके शौहर भी उनकी इस बेहिजाबी पर गुनहगार होते हैं। क्योंकि उनको मुतलक़ मना नहीं करते, कोई इस्लाह नहीं करते न रोकते हैं न टोकते हैं, ये तो खुली बेहयाई और बेग़ैरती है।

इन सब से बढ़ कर एक और आम इब्तिला ये है कि तमाम औरतें पंज वक़्ता नमाज़ों में मर्दों की तरह हरम में पहुंचती हैं, बावजूदे कि औरतों के लिए दरवाज़े भी मख़सूस हैं, और नमाज़ पढ़ने की जगहें भी मुतऐयन हैं। मगर हज के ज़माना में चूंकि इज़्दिहाम बेहद होता है, मुस्तक़िल जगह पर नहीं पहुंच पातीं तो मर्दों के दरमियान सफ़ों में खड़ी हो जाती हैं और नमाज़ पढ़ना शुरू कर देती हैं।

<u>मस्जिदे हराम और मस्जिदे नबवी (स.) की नमाज़ और औरतें</u>

पहली बात तो ये है कि जिस तरह अपने वतन में औरतों का तन्हा नमाज़ घरों में पढ़ना अफ़ज़ल है, इसी तरह मक्का व मदीना में भी औरतों के लिए नमाज़ घरों में तन्हा बग़ैर जमाअत के पढ़ना अफ़ज़ल है। और मक्का व मदीना में नमाज़ का जो सवाब हरम और मस्जिदे नबवी का होता है वह उनको घरों पर पढ़ने में उससे ज़्यादा मिलता है, जो मस्जिद में मर्दों को मिलता है, ऐसी

सूरत में हरमैन शरीफैन में औरतों को नमाज घरों में पढनी चाहिए। बिलफ़र्ज किसी वक़्त बैतुल्लाह के देखने की ग़रज़ से या तवाफ़ करने की ग़रज़ से मस्जिदे हराम में या सलात व सलाम की ग़रज़ से मस्जिदे नबवी में आएँ और नमाज़ बाजमाअत पढ़ लें तो अदा हो जाती है, बशर्तेकि मर्दो के दरमियान न खड़ी हों। एक औरत अगर मर्दों के दरमियान खड़ी हो जाती है तो तीन मर्दों की नमाज़ ख़राब हो जाती है दाईं बाईं जानिब दो मर्दों की, उसकी मुहाज़ात (सीध में) जो मर्द खड़ा है उसकी भी, तीनों की नमाज़ें फ़ासिद हो गईं। बिलफ़र्ज़ बग़ैर किसी इरादे के कोई औरत इत्तिफ़ाक़िया तौर पर ऐन नमाज़ के वक़्त सफ़ों के दरमियान फंस जाए और निकलना दुश्वार हो जाए या तवाफ़ करने के दरमियान नमाज़ खड़ी हो जाए तो उस वक़्त उसको ख़ामोश बग़ैर नमाज़ के जहां भी हो बैठ जाना चाहिए। नमाज़ की नीयत हरगिज़ न करे, वरना मर्दों की नमाज़ भी ख़राब होगी। जब इमाम फ़ारिग़ हो जाए तो फिर तन्हा वह वहीं नमाज़ अदा करे। औरतों को बैतुल्लाह का तवाफ़ करने के लिए भी ऐसे वक़्त में जाना चाहिए जब नमाज़ का वक़्त न हो। उस वक़्त निस्बतन भीड़ भी कम होती है। और अगर इत्तिफ़ाक़न नमाज़ का वक़्त हो जाए तो अज़ान होते ही जल्दी जल्दी तवाफ़ पूरा कर के या तवाफ़ दरमियान में छोड़ दें तो जितने शौत (चक्कर) रह गए वह नमाज़ के बाद जहां छोड़े थे वहीं से पूरे कर लें या उस तवाफ़ को दाबारा कर लें।

बहरहाल गुनाह से बचना बेहद ज़रूरी है। और भी बहुत सी कोताहियाँ होती रहती हैं लेकिन उन सब में

नमाज़ और बेपरदगी का मस्अला मेरे ख़्याल में सब से ज़्यादा अहम है।

बहरहाल हज एक ऐसा फ़रीज़ा है जो ज़िन्दगी में बार बर अदा करना बेहद मुश्किल है। इसलिए चाहिए कि मर्द हों या औरतें इंतिहाई एहतियात के साथ इस फ़रीज़ा की अदाएगी से सुबुकदोश हों।

नीज़ ये भी ख़्याल रहे कि बाज़ औरतें अपने मुल्कों में भी परदा नहीं करतीं और गोया मुस्तकिल तौर पर बेपरदा रहती हैं ये बिलाशुब्हा गुनाहे अज़ीम है और एक फ़र्ज़ हुक्म की ख़िलाफ़वरज़ी है, लेकिन उन्हें भी हज्जे बैतुल्लाह के सफ़र में तो चाहिए कि इस गुनाहे अज़ीम से बचें। ताकि ये फ़रीज़ा तो सही तरीक़ा से अदा हो जाए। आज कल बहुत सी औरतें बग़ैर महरम के सफ़र करती हैं, ये भी हराम और गुनाहे कबीरा है। जिस औरत का कोई महरम न हो उस पर हज फ़र्ज़ ही नहीं होता, बल्कि अगर महरम हो भी लेकिन हज पर क़ादिर न हो या ये औरत उसके मसारिफ़ बरदाश्त करने के क़ाबिल न हो तब भी फ़र्ज़ न होगा। इंतिहाई अफ़सोस का मक़ाम है कि हज भी फ़र्ज़ न हो और फिर वहां जा कर हज में इतनी फ़रो गुज़ाश्तें भी हों? जब शरअ़न उसके ज़िम्मा हज फ़र्ज़ ही नहीं है तो ये हज का सफ़र क्यों इख़्तियार किया जाता है।

नतीजा ये कि हज्जे बैतुल्लाह में हुज्जाज किराम से इस क़िस्म की कोताहियों और ख़िलाफ़े शर्अ़ हरकातों की वजह से ही हज की बरकतें ख़त्म हो जाती हैं, और बावजूद हुज्जाज की कसरत के उम्मत जिस मक़ाम पर

खड़ी है वहां से रोज़ अफ़्ज़ूँ तनज़्ज़ुली में जा रही है अगर इतनी कसरत से हुज्जाज किराम सही तरीक़ा पर ये फ़रीज़ा अदा करते और हम सब का हज बारगाहे अक़दस में शर्फ़े क़बूल से सरफ़राज़ होता तो शायद दुनिया का नक़्शा ही बदल जाता। हक़ तआला मुसलमानों को सही फ़हम और तौफ़ीक़े ख़ैर नसीब फ़रमाए। अमीन!

(मुहद्दिसे अस्र हज़रत अल्लामा सैयद मुहम्मद यूसुफ़ बनौरी नौवरल्लाहु मरक़दहू, बशुक्रिया निदाए शाही दिसम्बर 2004 ई0)

औरतों के लिए हज में महरम की शर्त क्यों है?

मस्अलाः मैं शरई मस्अला बताता हूं "क्यों" का जवाब नहीं दिया करता। मगर आपके इत्मीनान के लिए लिखता हूं कि बग़ैर महरम के औरत को तीन दिन या इससे ज़्यादा के सफ़र की आंहज़रत (स.अ.व.) ने मुमानअत फ़रमाई है। क्योंकि ऐसे तवील सफ़र में उसका अपनी इज़्ज़त व इसमत को बचाना एक मुस्तक़िल मस्अला है और इस नाकारा के इल्म में है कि बाज़ औरतें महरम के बग़ैर हज को गईं और गंदगी में मुब्तला हो कर वापस आईं। आलावा अज़ीं ऐसे तवील सफ़र में हवादिस पेश आ सकते हैं, औरत को उठाने, बैठाने की ज़रूरत पेश आ सकती है। अगर कोई महरम साथ न होगा तो ये दुश्वारियाँ पेश आऐंगी। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–80)

तंबीहः ख़ुदा के क़ानून को महज़ अपनी राये और ख़्वाहिश से ठुकरा देना और सिर्फ़ एक पहलू पर नज़र कर के दूसरे सारे पहलुओं से आँखें बंद कर लेना दानिशमंदी नहीं है। (यानी बग़ैर महरम के हज के लिए

जाना) अफ़सोस है कि आज ये मज़ाक़ आम हो गया है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–83)

महरम किसे कहते हैं?

सवालः मियाँ बीवी हज के लिए जा रहे हैं उनके साथ बीवी की भतीजी, भांजी, या बीवी की सगी बहन जा सकती है या नहीं?

जवाबः महरम वह होता है जिससे कभी भी निकाह न हो सके। बीवी की बहन, भांजी और भतीजी शौहर के लिए नामहरम हैं। उनके साथ जाना जाइज़ नहीं।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–79)

मस्अलाः फुरूए वालिदैन यानी वह मर्द या औरत जिनकी पैदाइश के बाप या माँ (बिला वास्ता या बिलवास्ता) ज़रीआ हों, जैसे भाई, बहन, भांजा, भांजी, भतीजा, भतीजी और उनकी औलाद जहां तक नीचे के दरजा की हो सब के सब हराम हैं। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़हा–288 व हाकज़ा फ़तावा आलमगीरी उर्दू जिल्द–2 सफ़हा–5 व किताबुन्निकाह)

मस्अलाः ताया, चचा, वग़ैरा महरम हैं।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–10 सफ़हा–173)

मस्अलाः महरम से मुराद वह शख़्स है जिस के साथ निकाह हराम है, ख़्वाह नसब की वजह से या इज़्दिवाजी या दूध के रिश्ता की वजह से। नीज़ महरम का मोतमद आक़िल व बालिग़ होना भी शर्त है। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़हा–1036 व हाकज़ा फ़तावा रहीमिया जिल्द–10 सफ़हा–173 व मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़हा–84)

मस्अलाः औरत के लिए उसकी भांजी का बेटा महरम

है उनके दरमियान निकाह हराम है तो वह उसके लिए महरम हुआ, औरत अपनी भांजी के बेटे के साथ हज के लिए जा सकती है। इतना एहतियात किया जाए कि वह फ़ासिक़ व फ़ाजिर न हो, फ़ासिक़ व फ़ाजिर पर इत्मीनान नहीं होता फुक़हाए किराम उसके साथ सफ़र करने से मना करते हैं। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़हा–89 बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़हा–529)

मस्अला: महरम को भी उसी वक़्त सफ़र में साथ जाना जाइज़ है जबकि फ़ितना व शह्वत का अंदेशा न हो, अगर ज़न्ने ग़ालिब ये है कि सफ़र करने की सूरत में ख़लवत (तन्हाई) में या ज़रूरत के वक़्त छूने से शह्वत हो जाएगी तो उसको साथ जाना जाइज़ नहीं है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–97)

मस्अला: दामाद (सगी बेटी का शौहर) अपनी सास के लिए महरम है उनमें हमेशा के लिए निकाह हराम है, लिहाज़ा सास दामाद के साथ हज को जा सकती है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़हा–288 बहवाला तहतावी सफ़हा–397)

मस्अला: सौतेली सास अपने सौतेले दामाद के साथ सफ़रे हज नहीं कर सकती, क्योंकि सौतेला दामाद महरम नहीं है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़हा–308)

मस्अला: आज कल फ़ितना का ज़माना है, ससुराली रिश्ता से एहतियात की ज़रूरत है। खुसूसन जबकि जवान हों, मुअल्लिमुलहुज्जाज में है कि इस ज़माना में ससुराली रिश्ता और दूध के रिश्ता (वाले महरम के साथ सफ़र करने) से एहतियात की ज़रूरत है, क्योंकि फ़ितना का

ज़माना है। इसलिए उन लोगों के साथ हज न किया जाए। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–288 बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–529 व हाकज़ा मुअल्लिमुहुज्जाज सफ़्हा–95)

मस्अलाः औरत अपने हक़ीक़ी भतीजा के साथ हज को जा सकती है, लेकिन शौहर के भतीजा के साथ जाना जाइज़ नहीं है, क्योंकि औरत के लिए शौहर का भतीजा महरम नहीं है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–307)

मस्अलाः ख़ुन्सा मुश्किल के लिए भी (जिसकी जिन्स मालूम न हो सके कि मर्द है या औरत) महरम का साथ होना शर्त है। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–55)

मस्अलाः हवाई जहाज़ के चंद घंटों के सफ़र में भी औरत के साथ महरम का होना ज़रूरी है, क्योंकि सफ़रे शरई के अड़तालीस मील पर अहकाम जारी हो जाते हैं मसलन नमाज़ में क़स्र वग़ैरा।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–214)

बहनोई के साथ हज करना?

मस्अलाः बहनोई के साथ सफ़र करना शरअ़न दुरुस्त नहीं है।

मस्अलाः महरम वह है जिससे निकाह किसी हाल में भी जाइज़ न हो। साली महरम नहीं है, चुनांचे अगर (हज के दौरान) शौहर बीवी को तलाक़ दे दे (और इद्दत गुज़र जाए) या बीवी का इंतिक़ाल हो जाए तो साली के साथ निकाह हो सकता है। और नामहरम को साथ ले जाने से हाजी मुजरिम (गुनहगार) बन जाता है।

(आपके मसाइल जिल्द-4 सफ़्हा-84)

मुंह बोले भाई के साथ हज करना?

सवाल: एक लड़की ने मुंह बोले भाई के साथ हज किया, क्या ये उसका महरम है, उसके साथ निकाह जाइज़ है?

जवाब: किसी अजनबी आदमी को भाई बनाने से वह महरम नहीं बन जाता, इसलिए उससे निकाह जाइज़ है। औरत का बगै़र महरम के सफ़र पर जाना गुनाह है। हज तो हो जाएगा, लेकिन औरत गुनहगार होगी। मुंह बोला भाई महरम नहीं होता और उसको महरम ज़ाहिर करना ग़लत ब्यानी है। (आपके मसाइल जिल्द-4 सफ़्हा-79, 85)

शौहर के सगे चचा वगै़रा के साथ हज करना?

मस्अला: अगर आपकी बीवी की आपके चचा से और कोई क़राबत नहीं, तो ये दोनों एक दूसरे के लिए नामहरम हैं और आप के हक़ीक़ी चचा के साथ हज पर जाना जाइज़ नहीं है।

मस्अला: औरत का जेठ नामहरम है और नामहरम के साथ सफ़रे हज पर जाना जाइज़ नहीं है।

मस्अला: बहन का देवर महरम नहीं होता और महरम के बगै़र हज या उम्रा के लिए जाना जाइज़ नहीं है।

मस्अला: औरत अपने दूध शरीक भाई के साथ हज को जा सकती है, क्योंकि वह महरम है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द-3 सफ़्हा-189)

मस्अला: औरत का बेटी के ससुर के साथ हज को जाना जाइज़ नहीं है, क्योंकि वह महरम नहीं है।

मस्अला: मुमानी शरअ़न महरम नहीं, इसलिए वह शौहर

के हक़ीक़ी भाँजे के साथ हज पर नहीं जा सकती है।

मस्अला: औरत को किसी ऐसी औरत के साथ सफ़रे हज करना जिसका शौहर साथ हो, या ऐसी ख़ातून के साथ जाना जिन के साथ उसका महरम हो जाइज़ नहीं है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–86)

मस्अला: पीर ग़ैर महरम के साथ औरत को हज का सफ़र जाइज़ नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–540, बहवाला बहर्रुराइक़ जिल्द–2 सफ़्हा–38)

मस्अला: औरत के लिए देवर व जेठ (शौहर के सगे छोटे व बड़े भाई) महरम नहीं हैं।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–307)

सफ़र बग़ैर महरम के और हज महरम के साथ?

सवाल: अगर कोई औरत हज के लिए जाए, महरम साथ नहीं जा सकता, मगर वतन से सवार करा सकता है और जद्दा एयरपोर्ट पर उसका भाई मौजूद है तो ऐसी सूरत के लिए क्या हुक्म है?

जवाब: वतन से जद्दा तक बग़ैर महरम के सफ़र करने का गुनाह उसके ज़िम्मा भी होगा। हज व उम्रा अदा हो जाएगा, मगर आपका हवाई जहाज़ का सफ़र तन्हा करना जाइज़ नहीं है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–80)

हज करने के लिए ग़ैर महरम को महरम बनाना?

सवाल: जो औरतें ग़ैर महरम को महरम दिखा कर हज करने चली जाएं उनके लिए क्या हुकम है?

जवाब: महरम के बग़ैर हज का सफ़र ज़ाइज़ नहीं और नामहरम को महरम दिखा कर हज का सफ़र करना दुहरा गुनाह है। लेकिन अगर चली जाएगी हज तो हो

जाएगा। गो तन्हा सफ़र करने का गुनाह होगा।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–82)

मस्अलाः औरत चाहे कितनी ही बूढ़ी हो उसके लिए बिला महरम सफ़रे हज हराम है, अगरचे उसके साथ दूसरी औरतें अपने महरम के साथ हों तो भी जाइज़ नहीं है, अगर मरते दम तक महरम मुयस्सर न हो तो हज्जे बदल की उस पर वसीयत फ़र्ज़ है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–523)

महरम के बग़ैर बूढ़ी औरत का हज करना?

मस्अलाः औरत का बग़ैर महरम के सफ़रे हज जाइज़ नहीं, अगरचे हज तो हो जाएगा, लेकिन उस नाजाइज़ सफ़र करने का गुनाह अलग होगा। मगर चूंकि बूढ़ी माँ का सफ़र ज़्यादा फ़ितना का मोजिब नहीं, इसलिए मुमकिन है कि अल्लाह तआला के यहां उनको रिआयत मिल जाए, ताहम बूढ़ी माँ को नाजाइज़ सफ़र करने पर अल्लाह तआला से इस्तिग़फ़ार करना चाहिए। रहा ये कहना कि हज़ारों औरतें जिनका कोई महरम नहीं होता क्या वह हज न करें?

उसका जवाब ये है कि जब तक महरम मुयस्सर न हो औरत पर हज फ़र्ज़ ही नहीं होता, इसलिए हज न करें। और अगर हज का बहुत ही शौक़ है, महरम मिलता नहीं तो निकाहे सानी कर लिया करें।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–83, 84 व हाकज़ा फ़ी फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–307 व किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–321)

मुलाज़िम को महरम बना कर हज करना?

सवालः मैं अपनी मसरूफ़ियत की बिना पर बीवी के

साथ हज पर नहीं जा सकता, क्या मैं अपने मुलाज़िम को महरम की हैसियत से बीवी के साथ हज के लिए भेज सकता हूं?

जवाबः महरम ऐसे रिश्तादारों को कहते हैं जिससे उसके रिश्ता की वजह से निकाह जाइज़ नहीं होता, जैसे औरत का बाप, भाई, भतीजा, भांजा। घर का मुलाज़िम महरम नहीं और बग़ैर महरम के हज पर जाना जाइज़ नहीं है। आप ख़ुद भी गुनहगार होंगे और आपकी बेगम और मुलाज़िम भी। (आपके मसाइल जिल्द-4 सफ़्हा-86)

ख़ुद को दूसरे की बीवी ज़ाहिर कर के हज करना?

सवालः मेरा मस्अला दरअस्ल कुछ यूं है कि मेरा नाम मुहम्मद इकराम है, मेरे दोस्त कि जिसका नाम मुहम्मद अशरफ़ है। अब मेरे दोस्त का अपने कफ़ील के साथ झगड़ा हो गया। उसे अपनी बीवी को हज पर बुलाना था, सो उसने मेरे नाम पर अपनी बीवी को हज पर बुलाया यानी उसने निकाह नामा पर भी मेरा नाम लिखवाया और काग़ज़ी कारवाई में वह मेरी बीवी ही बन कर यहां आई है और मैं ही उसको लेने के लिए एयरपोर्ट गया सिकयूरीटी वालों ने मेरा इक़ामा देख कर मेरी बीवी जान कर उसको बाहर आने दिया। और औरत अपने अस्ल ख़ानदान के पास है उसने हज अपने ख़ाविंद के साथ किया, क्या ये हज सही है?

जवाबः फ़रीज़ए हज तो उस मुहतरमा का अदा हो गया। मगर जअ़ल साज़ी के गुनाह में तीनों शरीक हैं, वह दोनों मियाँ बीवी भी और आप भी।

(आपके मसाइल जिल्द-4 सफ़्हा-48)

बेवा और इद्दत वाली औरत हज कैसे करे?

मस्अला: ख़ाविंद का इंतिक़ाल अगर ऐसे वक़्त हुआ कि हज के वक़्त तक उसकी इद्दत पूरी नहीं होती तो वह औरत इद्दत पूरी होने से पहले हज का सफ़र न करे।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–33 व हाकज़ा फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–535 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–198 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–237)

मस्अला: औरत इद्दत की हालत में अगर हज करेगी तो हज हो जाएगा लेकिन गुनहगार होगी।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–86)

मस्अला: औरत को इद्दत के दौरान हज के लिए जाना जाइज़ नहीं है। इद्दत गुज़र जाने के बाद अगर महरम के साथ जा सकती हो तो जाए और अगर कोई महरम मुयस्सर न आए तो हज्जे बदल की वसीयत करे।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–307)

हामिला औरत का हज?

सवाल: क्या हामिला हज कर सकती है? अगर कर सकती है तो क्या वह बच्चा या बच्ची जो उसके पेट में है उसका भी हज हो गया है या नहीं?

जवाब: हामिला औरत हज कर सकती है। पेट के बच्चे का हज नहीं होता।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–34)

औरत का मुतबन्ना के साथ हज के लिए जाना?

मस्अला: औरत को अपने लेपालक (मुंह बोला बेटा, गोद लिया हुआ) के साथ या हमसाया औरतों के साथ हज के लिए जाना जाइज़ नहीं है। महरम न मिले तो

हज्जे बदल करा देना चाहिए। लेकिन उस औरत का हज्जे बदल कराया हुआ इस शर्त के साथ मोतबर होगा कि तमाम उम्र कोई महरम न मिले और अगर किसी वक़्त महरम मिल गया मसलन निकाह कर लिया और शौहर हज के लिए ले जाने पर राज़ी हो गया और उस वक़्त भी रुपया बक़द्र हज्जे औरत व महरम मौजूद हो या बाद को जमा हो गया तो हज दोबारा करना पड़ेगा।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–2 सफ़्हा–157)

मस्अला: वह औरत जिसने बचपन से किसी लड़के की परवरिश की और उसको अपना मुतबन्ना बेटा बनाया है जब कि बच्चा औरत को माँ और औरत लड़के को बेटा कह कर पुकारती हो वह लड़का उस औरत के हक़ में महरम नहीं है। उसके साथ हज या उम्रा के लिए जाना जाइज़ नहीं है। क्योंकि मुतबन्ना हक़ीक़ी बेटा नहीं है। कुरआन करीम की सूरए अहज़ाब में इसकी तफ़सील मौजूद है। (आपके मसाइल जिल्द–8 सफ़्हा–318)

हज के लिए तन्हा औरतों के क़ाफ़िला का हुक्म?

मस्अला: फ़ितरी और कुदरती तौर पर मर्द का मैलान औरत की तरफ़ और औरत का मर्द की तरफ़ होता ही है और शैतान मलऊन भी मआसी में मुब्तला करने के लिए ऐड़ी चोटी का ज़ोर लगाता रहता है। मिश्कात शरीफ़ सफ़्हा–267 की हदीस में है कि– "मर्दों के हक़ में औरतों से ज़्यादा ज़रर रसाँ कोई फ़ितना नहीं।" मिनजुमला ज़रूरीयाते शरईया के एक ज़रूरत हज की अदाएगी भी है जिसके लिए ज़ाबतए शरईया और फ़ितना व फ़साद से हिफ़ाज़त की एक ज़ाएद एहतियाती तदबीर ये है कि औरत के

सफ़र में दीनदार महरम या शौहर साथ हो जो उसकी पूरी तौर पर हिफ़ाज़त कर सके वरना सफ़रे हज की भी इजाज़त नहीं। अगर बग़ैर महरम के जाएगी तो शरई हुक्म की ख़िलाफ़वरज़ी की वजह से गुनहगार होगी। हालांकि सफ़र में औरतों की इसमत व नामूस की जिस क़दर हिफ़ाज़त शौहर और महरम कर सकता है वह औरतें नहीं कर सकतीं, बल्कि ख़ुद वह औरतें भी इसमत व पाकदामनी की हिफ़ाज़त के लिए दूसरों की मुहताज हैं।

औरत के हक़ में महरम की शर्त और ज़रूरत हज से महरूमी का बाइस नहीं बल्कि उसकी इसमत व नामूस की हिफ़ाज़त व बदगुमानी और बदनामी और तोहमत से बचाने के लिए है, जिसके बग़ैर औरत की कोई क़ीमत नहीं, लिहाज़ा औरतों को चाहिए कि अहकामे शरईया की क़द्र करें और शरीअ़त को अपना मुहसिन समझें। रहा हज को जाने का मआमला तो कोई महरम न मिले तो शरीअ़त हज्जे बदल की भी इजाज़त देती है जिसमें वह पूरे सवाब की मुस्तहिक़ होगी और मज़ीद बरआँ शरई हुक्म की ताबेदारी करने वाली और मुस्तहिक़्क़े अज्रे अज़ीम होगी।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–321 बहवाला बुख़ारी शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–44 व इब्न माजा–297 व मुस्लिम शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–434 व हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–213)

हुज्जाज को रुख़सत करने के लिए औरतों का जाना?

मस्अला: बाज़ जगह ये रिवाज है कि हुज्जाजे किराम जब हज के लिए जाते हैं तो स्टेशन तक रुख़सत करने के लिए औरतें भी जाती हैं। स्टेशन पर मर्द और औरतों

का इख़्तिलात होता है, बेपदरगी होती है। ये रस्म मज़मूम और बहुत सी बुराइयों पर मुश्तमल होती है, लिहाज़ा क़ाबिले तर्क है, हज के नाम पर लोगों ने औरतों का इजतिमाअ़ और इख़्तिलात वग़ैरा बहुत सी नाजाइज़ और मकरूह रुसूमात ईजाद कर रखी हैं जो बजाए सवाब के लानत की मुस्तौजिब बन रही हैं, इसलिए इस रस्म को बिल्कुल बंद कर देना चाहिए।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–6 सफ़्हा–404 व हाकज़ा फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–202)

औरत का बारीक दुपट्टा पहन कर हरमैन शरीफ़ैन में आना?

मस्अला: औरत को ऐसा कपड़ा पहन कर बाहर निकलना हराम है जिससे बदन नज़र आता हो या सर के बाल नज़र आते हैं।

मस्अला: ऐसे बारीक दुपट्टा में नमाज़ भी नहीं होती जिससे बाल नज़र आते हों।

मस्अला: मक्का व मदीना जा कर आम औरतें मस्जिद में जा कर जमाअ़त के साथ नमाज़ पढ़ती हैं और मस्जिदे नबवी (स.अ.व.) में चालीस नमाज़ें पूरी करना ज़रूरी समझती हैं। ये मस्अला अच्छी तरह याद रखना चाहिए कि हरमैन शरीफ़ैन में नमाज़ बाजमाअ़त की फ़ज़ीलत सिर्फ़ मर्दों के लिए है औरतों को वहां जा कर भी अपने घर (क़याम गाह) में नमाज़ पढ़ने का हुक्म है और घर में नमाज़ पढ़ना मस्जिद की जमाअ़त के साथ नमाज़ पढ़ने से अफ़ज़ल है।

ज़रा ग़ौर फ़रमाऐं कि आंहज़रत (स.अ.व.) जब ख़ुद बनफ़्से नफ़ीस नमाज़ पढ़ा रहे थे उसी वक़्त ये फ़रमा रहे

थे कि– "औरत को घर में नमाज़ पढ़ना मस्जिद में नमाज़ जमाअत के साथ पढ़ने से अफ़ज़ल है।" जिस नमाज़ में आंहज़रत (स.अ.व.) इमाम व सहाबए किराम रिज़वानुल्लाहि अलैहिमअलमअीन मुक़्तदी हों जब उस जमाअत के बजाए औरत का घर में नमाज़ पढ़ना अफ़ज़ल हो तो आज की जमाअत औरत के लिए कैसे अफ़ज़ल हो सकती है? हासिल ये कि मक्का मुकर्रमा और मदीना तैयबा जा कर औरतों को अपने अपने घरों में नमाज़ पढ़नी चाहिए और ये घर की नमाज़ उनके लिए हरमैन शरीफ़ैन की नमाज़ से अफ़ज़ल है। हरम शरीफ़ में तवाफ़ के लिए आना चाहिए लेकिन मर्दों के हुजूम में न घुसें और हजरे अस्वद का बोसा लेने की भी कोशिश (भीड़ में) न करें वरना गुनहगार होंगी। नेकी बरबाद, गुनाह लाज़िम का मज़मून सादिक आएगा।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–119)

हज के मुबारक सफ़र में औरतों के लिए परदा?

सवाल: हज के मौक़ा पर जब औरतों से कहा जाता है परदा के लिए, तो जवाब ये देती हैं कि इस मुबारक सफ़र में परदा की ज़रूरत नहीं है और मजबूरी भी है। क्या हुक्म है परदा का?

जवाब: एहराम की हालत में औरत को हुक्म है कि कपड़ा उसके चेहरे को न लगे, लेकिन इस हालत जहां तक अपने बस में हो ना महरमों से परदा करना ज़रूरी है और जब एहराम न हो तो चेहरा का ढकना लाज़िम है। ये ग़लत है कि मक्का मुकर्रमा में या हज के सफ़र में परदा ज़रूरी नहीं। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–120

व हाकज़ा किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़हा–154)

क्या लड़की की रुख़्सती से पहले हज हो जाएगा?

सवालः एक लड़की का निकाह हो गया है लेकिन रुख़्सती नहीं हुई, और न ही दोनों फ़रीक़ों का दो साल तक रुख़्सती का इरादा है। लड़का चाहता है कि वह अपने सऊदी अरब के क़याम के दौरान और रुख़्सती से पहले लड़की को अपने साथ हज करवाए। तो क्या बग़ैर रुख़्सती के लड़की को लड़के के साथ हज पर भेजना सही है?

जवाबः लड़का हज करा ले, दोनों काम हो जाऐंगे। रुख़्सती भी और हज भी। जब निकाह हो गया तो दोनों मियाँ बीवी हैं, रुख़्सती हुई हो या न हुई हो।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–156)

मस्अलाः अगर हज की तैयारी मुकम्मल हो जाए और लड़की की मंगनी (रिश्ता) हो जाए तो लड़की अपने माँ बाप (या महरम) के साथ हज के लिए जा सकती है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–33)

औरत पर हज की फ़र्ज़ीयत?

सवालः हज क्या मर्दों पर फ़र्ज़ है या औरतों पर भी?

जवाबः औरत पर भी हज फ़र्ज़ है जबकि कोई महरम मुयस्सर हो और अगर महरम मुयस्सर न हो तो मरने से पहले हज्जे बदल की वसीयत कर दे।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–33)

मस्अलाः हज्जे फ़र्ज़ के लिए औरत को अपने शौहर से इजाज़त लेना (जबकि उसके साथ कोई महरम जा रहा हो) और बेटे का बाप से इजाज़त लेना ज़रूरी नहीं

है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–36 व हाकज़ा फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–528 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–1 सफ़्हा–200 व किताबुलफ़िक़ह जिल्द–1 सफ़्हा–321)

मस्अलाः औरत पर हज उस वक़्त फ़र्ज़ होता है कि उसके पास इस क़दर रुपया हो कि दोनों का ख़र्च उठा सके यानी अपना ख़र्च और महरम का ख़र्च भी उठा सके। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–1 सफ़्हा–522 बहवाला आलमगीरी मिस्री जिल्द–1 सफ़्हा–203)

मस्अलाः जिस औरत को उसके शौहर या लड़के ने रुपया दिया (तो वह) उस रुपया की मालिक हो गई अगर वह रुपया इतना है कि हज के सफ़र के लिए काफ़ी है और उसके महरम का ख़र्च भी पूरा हो सकता है तो उस औरत के ज़िम्मा हज फ़र्ज़ है अपने महरम के साथ हज को जाना चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–521 बहवाला हिदाया किताबुलहज जिल्द–1 सफ़्हा–215)

औरतों के पास महरम का ख़र्च न हो तो?

मस्अलाः अगर औरत के पास बक़द्र ज़रूरते हज माल मौजूद हो मगर साथ जाने के लिए कोई महरम नहीं मिलता, या मिलता है मगर वह अपना ख़र्च बरदाश्त नहीं कर सकता और औरत के पास इतना माल नहीं कि वह अपने ख़र्च के अलावा महरम का ख़र्च भी ख़ुद बरदाश्त करे तो उस औरत पर भी लाज़िम है कि अपनी तरफ़ से हज्जे बदल कराये या वसीयत करे कि मेरे मरने के बाद मेरी तरफ़ से मेरे माल से हज्जे बदल करा दिया जाए।

(अहकामे हज सफ़्हा–188 व हाकज़ा इमदादुलफ़तावा

जिल्द–2 सफ़हा–156)

औरतों के लिए मख़सूस हिदायात

मन्दरजा जैल मसाइल में औरतों का हुक्म मर्दों से बिल्कुल अलग है

(1) औरतों का एहराम सिर्फ़ इतना है कि वह अपना सर ढांक लें और चेहरा खोले रखें।

(2) सिले हुए कपड़े औरतों के लिए मना नहीं हैं।

(3) औरतें तल्बिया आहिस्ता आवाज़ से पढ़ें।

(4) नापाकी की हालत यानी हैज़ व निफ़ास में दुआ व तल्बिया पढ़ कर एहराम बांध लें, नमाज़ न पढ़ें।

(5) सर के बालों को एक कपड़े से बांध लें ताकि कोई बाल टूट कर न गिर जाए और ये कपड़ा (रूमाल) सिर्फ़ एहतियात के लिए है। (बाज़ हज़रात इसको औरत का एहराम समझते हैं जो सही नहीं है।)

(6) सफ़ा व मरवा के दरमियान सअी के दौरान हरे खम्बों यानी हरी टियूब लाइट के दरमियान दौड़ना औरतों के लिए मसनून नहीं है।

(7) एहराम खोलते वक़्त बालों के आख़िर से सिर्फ़ उंगली के एक पोवे के बराबर बाल काट लेना काफ़ी है।

(8) नापाकी की हालत में तवाफ़ के अलावा हज के तमाम अरकान अदा कर सकती है।

(9) अैयामे नहर यानी दस, ग्यारह, बारह तारीख़ में पाकी की हालत न हो तो तवाफ़े ज़ियारत को पाक होने तक मुअख़्ख़र कर दें उन पर कोई जुरमाना न होगा।

(10) जद्दा या मक्का मुकर्रमा पहुंचने के बाद शौहर या महरम का इंतिक़ाल हो जाए तो उसी हालत में हज

के अरकान अदा कर सकती है।

(11) अगर औरतें वापसी के वक़्त माहवारी के अैयाम में मुब्तला हो जाऐं तो उनसे तवाफ़े वदाअ़ मआफ़ हो जाता है।

(12) इज़्तिबाअ़ः यानी एहराम की चादर दाहिनी बग़ल के नीचे से निकाल कर बाएँ कंधे पर डालना औरतों के लिए नहीं है।

(13) औरतों को रमी करते वक़्त हाथ इतना ऊँचा न उठाना चाहिए कि बग़ल नज़र आए।

(14) रमल यानी तवाफ़ के शुरू के तीन चक्करों में झपट कर तेज़ी से क़दम नज़दीक रख कर चलना औरतों के लिए मसनून नहीं है, औरतें अपनी ही चाल से चलें।

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

औरतों का एहराम

मस्अलाः औरतों का एहराम और हज भी मर्दों की तरह है फ़र्क़ ये है कि औरत को सिले हुए कपड़े पहने रहना चाहिए, सर को भी छुपाना चाहिए, सिर्फ़ चेहरा पर कपड़ा न लगाना चाहिए चेहरा खुला रहना चाहिए।

मस्अलाः औरत के लिए मोज़े दस्ताने पहनना जाइज़ है, न पहनना औला है। ज़ेवर भी पहन सकती है।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–110)

मस्अलाः हालते हैज़ व निफ़ास में भी एहराम बांध सकती है मगर इस हालत में दोगाना यानी दो रकअ़त नफ़्ले एहराम न पढ़े।

(अहकामे हज सफ़्हा–34 हज़रत मुफ़्ती शफ़ीअ़ रह.)

मस्अलाः औरत को हैज़ व निफ़ास में चूंकि नमाज़

पढ़नी नाजाइज़ है इसलिए गुस्ल व वुजू कर के किब्ला रू बैठ कर नीयत कर के तल्बिया पढ़ लेना चाहिए नमाज़ न पढ़े। (मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–106)

मस्अला: औरत को सर ढांकना वाजिब है और मुंह पर कपड़ा लगाना मना है, सर पर से कपड़ा इस तरह लटकाना कि चेहरा पर न लगे बेहतर है और सिले हुए कपड़े पहनने जाइज़ हैं।

मस्अला: औरत को चाहिए कि एहराम की हालत में सर पर छोटा सा रूमाल बांधे ताकि सर न खुले और ये सर पर रूमाल बांधने का हुक्म वजूबे सत्र के लिए है यानी सर के बालों को छुपाने के लिए है न कि एहराम के लिए, क्योंकि औरत के सर का ये रूमाल एहराम नहीं है, चुनांचे अगर सर खुला रहे तो जिनायत (दम वग़ैरा) न होगी। रूमाल बांधना अजनबी मर्द के आगे वाजिब है और सर खोलना गुनाह है।

मस्अला: औरत के लिए सर का रूमाल एहराम में दाख़िल नहीं है। पस अगर गुस्ल के लिए या वुजू में मसह करने के लिए खोले तो जिनायत लाज़िम न होगी। ये इसलिए भी है कि बाल टूटने से महफ़ूज रहें।

मस्अला: औरत को हैज़ में तमाम अफ़आल करने जाइज़ हैं, सिर्फ़ तवाफ़ करना और नमाज़ पढ़ना मना है। अगर एहराम से पहले हैज़ आ जाए तो गुस्ल कर के एहराम बांध कर सब अफ़आल करे मगर सई व तवाफ़ व नमाज़ न पढ़े।

मस्अला: औरत को तल्बिया ज़ोर से पढ़ना मना है सिर्फ़ इस क़दर ज़ोर से पढ़े कि ख़ुद सुन ले।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़हा-115)

मस्अला: ख़ुन्सा मुश्किल यानी जिस शख़्स का मर्द या औरत होना मालूम न हो तमाम अहकाम में वह मिस्ले औरत के है उसको किसी अजनबी औरत या मर्द के साथ तन्हाई जाइज़ नहीं है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़हा-229)

मस्अला: औरत एहराम की हालत में अगर हथेली पर मेंहदी लगाएगी तो दम वाजिब होगा।

(मुअल्लिमुहुज्जाज सफ़हा-229)

मस्अला: एहराम की हालत में रोटी पकाते हुए कुछ बाल जल गए तो सदक़ा दे और अगर मरज़ की वजह से गिर गए या सोते हुए जल गए तो कुछ वाजिब नहीं है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़हा-239)

मस्अला: औरतों को एहराम बांधने के लिए किसी ख़ास क़िस्म का लिबास पहनना लाज़िम नहीं है, इसलिए ख़्वातीन एहराम में सिले हुए कपड़े बदस्तूर पहने रहें, ख़्वाह वह किसी रंग के हों, उनका एहराम ये है कि वह चेहरा खुला रखें, और हाथों में दस्ताने न पहनें यही औला है, अलबत्ता ग़ैर महरम मर्द हों तो चेहरे पर किसी चीज़ से ओट भी कर सकती हैं और किसी कपड़े से हाथों को भी छुपा सकती हैं।

(आपके मसाइला जिल्द-4 सफ़हा-89)

मस्अला: औरत के लिए अफ़ज़ल यही है कि हालते एहराम में मोज़े पहने रहें, क्योंकि उसमें ज़्यादा परदा है, और अगर उसके कपड़े ढीले और तमाम बदन को ढांकने वाले हों तो वही कपड़े काफ़ी हैं।

मस्अला: औरत ने एहराम के वक़्त मोज़े पहने थे और बाद में उतार दिए तो भी कोई हरज नहीं है, जैसे कोई शख़्स एहराम के वक़्त जूते पहनता है, लेकिन बाद में उतार देता है तो कोई हरज नहीं।

(हज्जे बैतुल्लाह के अहम फ़तावा सफ़्हा–24)

मस्अला: एहराम के लिए गुस्ल करना सुन्नते मुअक्कदा है, गो महज़ वुज़ू कर लेना अस्ल सुन्नत के क़ाइम मक़ाम अमल है, लेकिन गुस्ल करना अफ़ज़ल है, और ये सुथराई के पेशे नज़र होगा, पाक होने के लिए नहीं, लिहाज़ा हैज़ व निफ़ास की हालत में गुस्ल करना चाहिए।

मस्अला: अगर पानी दस्तयाब न हो तो गुस्ल साक़ित हो जाएगा, उसके बजाए तयम्मुम मशरूअ़ नहीं है, इसलिए कि सफ़ाई व सुथराई जो इस गुस्ल की ग़रज़ है वह तयम्मुम से हासिल नहीं होती।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1048)

मस्अला: हालते एहराम में अक़्दे निकाह जाइज़ है, क्योंकि एहराम बांधना औरत को अक़्दे निकाह की सलाहियत से मानेअ़ नहीं, अलबत्ता हमबिस्तरी ममनूअ़ है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1056)

मस्अला: हालते एहराम में हमबिस्तरी की तरह वह हरकात जिनसे उसकी ख़्वाहिश पैदा होती है वह भी हराम हैं मसलन बोसा लेना, बदन से बदन मिलाना।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1053)

क्या औरतों को एहराम में चेहरा खुला रखना चाहिए?

मस्अला: ये सही है कि एहराम की हालत में चेहरे को ढकना जाइज़ नहीं। लेकिन उसके ये मआ़ना नहीं कि

एहराम की हालत में औरत को परदा की छुट हो गई, नहीं! बल्कि जहां तक मुमकिन हो परदा ज़रूरी है या तो सर पर कोई छज्जा (हैट, टोप) सा लगाया जाए और उसके ऊपर से कपड़ा इस तरह डाला जाए कि परदा हो जाए, मगर कपड़ा चेहरा को न लगे, या औरत अपने हाथ में पंखा वग़ैरा रखे (जहां मर्दों का सामना हो) उसे चेहरा के आगे कर लिया करें। इसमें शुब्हा नहीं कि हज के तवील और पुरहुजूम सफ़र में औरत के लिए परदा की पाबंदी बड़ी मुश्किल है, लेकिन जहां तक हो सके परदा का एहतेमाम करना ज़रूरी है और जो अपने बस से बार हो तो अल्लाह तआला मआफ़ फ़रमाऐंगे।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–88)

मस्अला: अगर किसी औरत के एहराम की हालत में चेहरा पर बुरक़ा का नक़ाब हवा से उड़ पड़े या सोते में चादर वग़ैरा, तो एक घंटा से कम हो तो जज़ा उसकी निस्फ़ साअ़ सदक़ा वाजिब है। और अगर बार बार उड़ता रहे तो एक मुट्ठी सदक़ा कर दे।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–535)

औरत का एहराम के ऊपर से मसह करना?

सवाल: आज कल देखा गया है कि औरतें जो एहराम बांधती हैं तो बाल बिल्कुल ढक जाते हैं और उसका सर के ऊपर से बार बार उतारना औरतों के लिए मुश्किल होता है तो क्या सर का मसह उसी कपड़े के ऊपर ठीक है?

जवाब: औरतें जो सर के ऊपर रूमाल (कपड़ा) बांधती हैं उसका एहराम से कोई तअ़ल्लुक़ नहीं, ये रूमाली सिर्फ़ इसलिए बांधी जाती है कि बाल बिखरें और टूटे नहीं।

औरत को उस रूमाल पर मसह करना सही नहीं। बल्कि रूमाल उतार कर सर पर मसह करना लाज़िम है।

अगर रूमाल ही पर मसह किया सर पर मसह नहीं किया तो न वुज़ू होगा, न नमाज़ होगी, न तवाफ़ होगा, न हज होगा, न उम्रा। क्योंकि ये अफ़आल बग़ैर वुज़ू जाइज़ नहीं और सर पर मसह करना फ़र्ज़ है बग़ैर मसह के वुज़ू नहीं होता। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–90)

मस्अला: औरतें एहराम में सर पर रूमाल बांधना ज़रूरी समझती हैं और उसको एहराम समझती हैं, ये जिहालत है, ग़ैर महरम से सर और चेहरा का परदा फ़र्ज़ है और बालों की हिफ़ाज़त के लिए सर पर रूमाल बांधना भी फ़ी नफ़्सिही जाइज़ है। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–456)

औरतों के लिए हज के ज़रूरी मसाइल

सवाल: मेरा हज का इरादा है मगर बहुत परेशान हूँ कि अगर हज के दौरान ख़ास अैयाम शुरू हो जायें तो क्या करना चाहिए और मस्जिदे नबवी (स.अ.व.) में चालीस नमाज़ों का क्या हुक्म है?

जवाब: आपकी परेशानी मस्अला न मालूम होने की वजह से है। हज के अफ़आल में सिवाए बैतुल्लाह शरीफ़ के तवाफ़ के कोई चीज़ ऐसी नहीं जिसमें औरतों के ख़ास अैयाम रुकावट हों, अगर हज या उम्रा का एहराम बांधने से पहले अैयाम शुरू हो जायें तो औरत गुस्ल या वुज़ू कर के हज का एहराम बांध ले, एहराम बांधने के बाद जो दो रकअतें पढ़ी जाती है वह न पढ़े, हाजी के लिए मक्का मुकर्रमा पहुंच कर पहला तवाफ़ (जिसे तवाफ़े क़ुदूम कहा जाता है) सुन्नत है, अगर औरत ख़ास अैयाम

में हो तो ये तवाफ़ छोड़ दे, मिना जाने से पहले अगर पाक हो जाएगी तो तवाफ़ कर ले वरना ज़रूरत नहीं और न उस पर कोई कफ़्फ़ारा लाज़िम है।

दूसरा तवाफ़ दस तारीख़ को किया जाता है। जिसको तवाफ़े ज़ियारत कहते हैं ये हज का फ़र्ज़ है, अगर औरत उस दौरान ख़ास अैयाम में हो तो तवाफ़ में ताख़ीर करे। पाक होने के बाद तवाफ़ करे।

तीसरा तवाफ़ मक्का मुकर्रमा से रुख़सत होने के वक़्त किया जाता है, ये वाजिब है। लेकिन अगर उस दौरान औरत ख़ास अैयाम में हो तो उस तवाफ़ को भी छोड़ दे उससे ये वाजिब भी साकित हो जाता है, बाक़ी मिना अरफ़ात मुज़दलिफ़ा में जो मनासिक अदा किए जाते हैं उनके लिए औरत का पाक होना कोई शर्त नहीं है।

और अगर औरत ने उम्रा का एहराम बांधा था तो पाक होने तक उम्रा का तवाफ़ व सअी न करे और अगर इस सूरत में उसको उम्रा के अफ़आल अदा करने का मौक़ा न मिला कि (हज के लिए) मिना की रावानगी का वक़्त आ गया तो उम्रा का एहराम खोल कर हज का एहराम बांध ले, यानी बग़ैर नफ़्ल पढ़े वुज़ू कर के हज के एहराम की नीयत कर ले और ये उम्रा का जो एहराम तोड़ दिया था उसकी जगह बाद में उम्रा कर ले।

मस्जिदे नबवी में चालीस नमाज़ें पढ़ना मर्दों के लिए मुस्तहब है। औरतों के लिए नहीं, औरतों के लिए मक्का मुकर्रमा और मदीना तैयबा में भी मस्जिद के बजाए अपने घर (क़यामगाह) में नमाज़ पढ़ना अफ़ज़ल है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–118 व हाकज़ा फ़ी

फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–546)

मस्अलाः अगर औरत को एहराम की हालत में हैज़ या निफ़ास आ जाए तो औरत पाकी का इंतिज़ार करेगी, पाक होने के बाद तवाफ़ और सअी करेगी और बाल कटवा कर उम्रा पूरा कर ले गी। और अगर उम्रा के बाद आया या आठवीं ज़िलहिज्जा को हज का एहराम बांधने के बाद हैज़ या निफ़ास आ जाए तो हज के तमाम आमाल अदा करेगी, वकूफ़े अरफ़ा, वकूफ़े मुज़दलिफ़ा कंकरियाँ मारना, तल्बिया व ज़िक्रे इलाही सब कुछ करेगी।

अगर हज के तवाफ़ व सअी के बाद हैज़ या निफ़ास आ जाए तो तवाफ़े वदाअ़ साकित हो जाएगा, क्योंकि हाएज़ा व निफ़ास वाली औरत पर तवाफ़े वदाअ़ नहीं है।

(हज्जे बैतुल्लाह के अहम फ़तावा सफ़्हा–52)

मस्अलाः औरतें हैज़ या निफ़ास की हालत में हों तो हज के तमाम आमाल अन्जाम दें, सिर्फ़ तवाफ़े बैतुल्लाह और सअी सफ़ा व मरवा न करें, तवाफ़ इसलिए न करें कि तवाफ़ के लिए पाकी शर्त है, और सअी इसलिए न करें कि सअी तवाफ़ के बग़ैर नहीं होती।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–89)

मस्अलाः औरतों के लिए इस हाल में हजरे अस्वद को चूमना बिल्कुल हराम है जबकि अजनबी मर्दों के साथ जिस्म लगने का एहतेमाल हो।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–89)

मस्अलाः हुज़ूर (स.अ.व.) के रौज़ए मुबारक के सामने हाज़िरी के लिए धक्का बाज़ी ख़ुसूसन औरतों का ग़ैर महरम के हुजूम में दाख़िल होना हराम है। ऐसी हालत में

दूर से दुरूद व सलाम पढ़े।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–568)

अरफ़ात में हाएज़ा का आयते करीमा वग़ैरा पढ़ना?

मस्अलाः औरत हैज़ या निफ़ास की हालत में कुरआन मजीद की कोई भी आयत तिलावत की नीयत से नहीं पढ़ सकती, अलबत्ता कुरआन मजीद की वह आयत या सूरत जिसमें दुआ या अल्लाह की हम्द व सना हो, दुआ और ज़िक्र की नीयत से पढ़ना चाहे तो पढ़ सकती है।

मस्अलाः औरत हैज़ या निफ़ास से हो और जिस (मर्द या औरत) पर नहाना वाजिब हो उसको मस्जिद में जाना, बैतुल्लाह शरीफ़ का तवाफ़ करना और कुरआन शरीफ़ पढ़ना और उसका छूना दुरुस्त नहीं है।

मस्अलाः अगर अलहम्दु की पूरी सूरत (सूरए फ़ातिहा) दुआ की नीयत से पढ़े या और दुआऐं जो कुरआन शरीफ़ में आई हैं, उनको दुआ की नीयत से पढ़े, तिलावत के इरादा से न पढ़े तो दुरुस्त है, उसमें कुछ गुनाह नहीं है जैसे ये दुआ "ربنا آتنا فی الدنیا حسنة وفی الآخرة حسنة وقنا عذاب النار" और ये दुआ "ربنا لا تؤاخذنا إن نسينا أو أخطأنا" आख़िर तक जो सूरए बक़रा के आख़िर में है या और कोई दुआ जो कुरआन शरीफ़ में आई हो, दुआ की नीयत से सब का पढ़ना दुरुस्त है। लिहाज़ा मज़कूरा सूरत में औरत हालते हैज़ व निफ़ास में मैदाने अरफ़ात में ज़िक्र और दुआ की नीयत से सूरए इख़लास "قل هو الله احد" ज़िक्र की नीयत से पढ़ सकती है। तिलावत की नीयत से न पढ़े। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–9 सफ़्हा–118)

आयते करीमा "لا إله الا انت سبحانک انی کنت من الظّلمین"

भी ज़िक्र की नीयत से पढ़ सकती है, अलबत्ता कुरआनी दुआओं के हुरूफ़ को न छुये, ज़िक्र के तौर पर ज़बानी पढ़े। (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

मस्अला: वकूफ़े अरफ़ात के लिए पाक होना भी शर्त नहीं है, अगर कोई औरत हैज़ या निफ़ास की वजह से नापाकी की हालत में हो तो इस हालत मे भी वकूफ़े अरफ़ात दुरुस्त हो जाएगा। (अहकामे हज सफ़्हा–65 व हाकज़ फी मुअल्लिमिलहुज्जाज सफ़्हा–163)

तवाफ़ के दौरान अगर बालिग़ हो जाए?

सवाल: एक लड़की ने अपने वालिदैन के साथ उम्रा का तवाफ़ किया और फिर सअी की और सअी के बाद लड़की ने अपनी वालिदा को हैज के शुरू होने की इत्तिला की। माँ ने उससे दरयाफ़्त किया ये कब से शुरू हुआ? तो उसने बताया कि तवाफ़ के दौरान शुरू हुआ। गोया हालते हैज़ में उसने पूरा या तवाफ़ का अक्सर हिस्सा अदा किया फिर उसी हालत में सअी भी की उसके लिए क्या हुक्म है?

जवाब: लड़की को चाहिए था कि उम्रा का एहराम न खोलती, बल्कि पाक होने के बाद दोबारा तवाफ़ व सअी करती। बहरहाल चूंकि उसने एहराम नाबालिग़ की हालत में बांधा था, इसलिए उस पर दमे जिनायत नहीं है। मनासिक मुल्ला अली क़ारी में है कि– "अगर बच्चा ने ममनूआते एहराम में से किसी चीज़ का इरतिकाब किया तो उसके ज़िम्मा कुछ नहीं।" ख़्वाह ये इरतिकाब बुलूग़ के बाद हो, क्योंकि वह उससे पहले मुकल्लफ़ नहीं था। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–115)

मस्अला: हरमैन शरीफ़ैन में नमाज़ पढ़ने के लिए और
का माहवारी को रोकने के लिए दवाई इस्तेमाल करने
कोई हरज नहीं है।

(आपके मसाइल जिल्द–1 सफ़्हा–109

मस्अला: औरत को अैयामे ख़ास में सअ़ी को तवाफ़
से पहले करना सही नहीं, पाक होने के बाद तवाफ़ व
सअ़ी कर के एहराम खोले, उस वक़्त तक एहराम में रहे।

(आपके मसाइल जिल्द–1 सफ़्हा–109)

मस्अला: अगर दौराने तवाफ़ औरत को हैज़ आ जाए
तो तवाफ़ को वहीं रोक दे और जब हैज़ से पाक हो
जाए तो नए सिरे से तवाफ़ का इआदा करे।

(ईज़ाहुलमनासिक सफ़्हा–121)

मस्अला: औरत हैज़ से ऐसे वक़्त में पाक हुई कि
बारह्वीं तारीख़ के आफ़ताब गुरूब होने में इतनी देर है
कि गुस्ल कर के मस्जिद में जा कर पूरा तवाफ़ या सिर्फ़
चार चक्कर कर सकती है और उसने नहीं किया तो दम
वाजिब होगा। और अगर इतना वक़्त न हो तो कुछ वाजिब
नहीं है। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–180)

मस्अला: औरत जानती है कि हैज़ अनक़रीब आने
वाला है और अभी हैज़ आने में इतना वक़्त बाक़ी है कि
पूरा तवाफ़ या चार फेरे कर सकती है लेकिन नहीं किया
और हैज़ आ गया फिर अैयामे नह्र गुज़रने के बाद पाक
हुई तो दम वाजिब होगा। और अगर चार फेरे नहीं कर
सकती तो कुछ वाजिब न होगा, यानी पाक होने के बाद
चार फेरे करने का वक़्त भी नहीं तो कुछ नहीं होगा।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–180 व हाकज़ फ़ी मुन्तख़बात

निज़ामुलफ़तावा जिल्द-1 सफ़्हा-156)

औरत एहराम से निकलने के लिए कितने बाल काटे?

सवालः हज में मर्द कुर्बानी के बाद सर मुंडाते हैं और औरत अपने सर के बाल कितने काटे और ये कि सर के नीचे के बाल काटे जायें या पेशानी के बाल भी काटे जा सकते हैं?

जवाबः एक उंगली के बराबर यानी एक उंगली की तिहाई मिक़्दार तमाम सर के बाल काट दे।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द-1 सफ़्हा-207)

"औरत अपने तमाम सर के बालों को मुट्ठी में पकड़ कर नीचे से उंगली के एक पोरवे के बराबर बाल ख़ुद काट ले या किसी दूसरी औरत से या किसी महरम से कटवा ले और जितने भी उम्रे करेगी उतनी ही मरतबा इतने बाल का काटना ज़रूरी हैं और इतने ही हज के मौक़ा पर काटे जायेंगे।"

(महम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

तवाफ़े ज़ियारत के वक़्त हैज़ आ जाए तो?

सवालः अगर किसी औरत की बारह ज़िलहिज्जा की फ़लाइट है और वह अपने ख़ास अैयाम में है तो क्या वह तवाफ़े ज़ियारत (हज का तवाफ़) तर्क कर के वतन आ जाए और दम दे दे या कोई मानेअ़ चीज़ मसलन दवाई वग़ैरा इस्तेमाल कर के तवाफ़ अदा करे।

जवाबः तवाफ़े ज़ियारत हज का रुक्ने अज़ीम है। जब तक तवाफ़े ज़ियारत न किया जाए मियाँ बीवी एक दूसरे के लिए हलाल नहीं होते, बल्कि इस मआमला में एहराम

बदस्तूर बाकी रहता है, इसलिए ख्वातीन को हरगिज़ तवाफ़े ज़ियारत तर्क नहीं करना चाहिए बल्कि परवाज़ छोड़ देनी चाहिए।

मस्अला: अगर कोई शख़्स इस तवाफ़ के बग़ैर वतन वापस आ गया तो उस पर लाज़िम है कि नया एहराम बांधे बग़ैर वापस मक्का मुकर्रमा जाए और जा कर तवाफ़े ज़ियारत करे जब तक नहीं करेगा मियाँ बीवी के तअल्लुक़ के हक़ में एहराम रहेगा और उसका हज भी नहीं होता और उसका कोई बदल भी नहीं। दम देने से काम नहीं चलेगा बल्कि वापस जा कर तवाफ़ करना ज़रूरी होगा। (ताख़ीर की वजह से मर्द पर दम भी वाजिब होगा)

जो ख़्वातीन उन दिनों नापाक हों, उनको चाहिए कि अपना सफ़र मुलतवी कर दें और जब तक पाक हो कर तवाफ़ नहीं कर लेतीं मक्का मुकर्रमा से वापस न जायें। अगर कोई तदबीर अैयाम के रोकने की हो सकती है तो पहले से उसका इख़्तियार कर लेना जाइज़ है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–147)

मस्अला: अगर औरत के लिए मानेअ हैज़ दवा का इस्तेमाल मुज़िर न हो, औरत उसे बरदाश्त कर सकती हो और उसका तजरबा भी हो तो हैज़ को रोकने की दवा के इस्तेमाल की सूरत भी इख़्तियार की जा सकती है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–279 व जिल्द-6 सफ़्हा–404 व हाकज़ा हज्जे बैतुल्लाह के अहम फ़तावा सफ़्हा–53)

मस्अला: अगर औरत हैज़ की वजह से तवाफ़े ज़ियारत उसके वक़्त में न कर सके तो दम वाजिब न होगा। पाक

होने के बाद तवाफ़े ज़ियारत करे।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़हा–180)

मस्अला: अगर तवाफ़ के दौरान वुज़ू टूट जाए तो उसी जगह तवाफ़ का सिलसिला रोक देना लाज़िम है और वुज़ू कर के वहां से तवाफ़ की तकमील की जा सकती है, लेकिन बेहतर यही है नए सिरे से तवाफ़ का इआदा किया जाए। सओी में वुज़ू की शर्त नहीं है।

(औजुजुलमनासिक–530)

मजबूरी के वक़्त हैज़ की हालत में तवाफ़े ज़ियारत करना?

सवाल: आज कल हज के सफ़र में आमदोरफ़्त की तारीख़ पहले ही से मुतअय्यन होती है। तब्दील कराना मुश्किल होता है और काफ़ी परेशानी होती है, तो क्या ऐसी मजबूरी की हालत में औरत हैज़ की हालत में तवाफ़े ज़ियारत कर सकती है या नहीं?

जवाब: हैज़ की हालत में हज का रुक्ने आज़म "तवाफ़े ज़ियारत" करना बहुत संगीन गुनाह है, हदसे अकबर यानी नापाकी की हालत में मस्जिदे हराम में दाख़िल होना ही हराम है, तो उस हालत में बैतुल्लाह शरीफ़ में दाख़िल होना और तवाफ़े ज़ियारत जैसे अहम रुक्न का अदा करना कैसे गवारा किया जा सकता है।

लिहाज़ा पाक होने के बाद ही तवाफ़े ज़ियारत करने की कोशिश करे। आज कल जहाज़ों की कसरत है, कोशिश करने पर कामियाबी हो सकती है। मुअल्लिम और ज़िम्मादार लोगों से मिल कर भी इसका हल निकल सकता है, नामुमकिन नहीं है। अगर वहां ठहरने में इख़राजात में तंगी का अंदेशा है तो किसी से क़र्ज़ ले कर या चंदा कर

के, यहां तक कि रक़म ख़त्म होने की सूरत में ज़कात की रक़म ले कर भी इंतिज़ाम करना जाइज़ होगा, ये सब उमूर हैज़ की हालत में तवाफ़े ज़ियारत करने से अह्वन (आसान) हैं, सहूलत पसंदी और सुस्ती से हरगिज़ काम न किया जाए।

अगर मसअला न जानने की वजह से ऐसी सूरत में तवाफ़ कर लिया गया तो हुकमन हज पूरा हो जाएगा और एहराम से भी पूरी तरह औरत हलाल हो जाती है, लेकिन पूरा ऊँट या गाय पूरी ज़िब्ह करना लाज़िम होगा, बाक़ी शरअन जान बूझ कर ऐसी हालत में तवाफ़ करने का हुक्म या फ़तवा नहीं दिया जाएगा।

और इरादतन (जान बूझ कर) ऐसी सूरत में ये काम करना और बाद में जज़ा उसकी दे कर सुबुकदोश हो जायें हरगिज़ हरगिज़ जाइज़ नहीं। न ये गुनाह फ़िदया से मआफ़ हो सकता है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–280)

सख़्त मजबूरी में गुंजाइश की एक शक्ल

एक और मसअला ख़ास तौर पर ख़्वातीन से मुतअल्लिक़ है वह ये कि अगर ऐयामे नह्र में (दस, ग्यारह, बारह ज़िलहिज्जा में) किसी औरत का नापाकी की बिना पर तवाफ़े ज़ियारत का मौक़ा न मिल सके और बाद में इतने रोज़ ठहरने का भी नज़्म न हो कि वह पाक होने के बाद तवाफ़ कर के वतन लौट सके और ऐसी नागुज़ीर मुश्किल सामने आ जाए कि पाकी के साथ उस सफ़र में तवाफ़ का मौक़ा ही न रहे। तो उसमें शरई गुंजाइश फ़ुक़हा ने दी है।

इस बारे में भी मज़कूरा फ़िक़्ही इजतिमा मुनअक़िदा ज़ीक़ादा 1417 हिजरी ने मुन्दरजा ज़ैल तजवीज़ बकमाले एहतियात मंजूर की है–

अगर तवाफ़े ज़ियारत से क़ब्ल किसी औरत को हैज़ आ जाए तो उस पर ऐसी तदाबीर इख़्तियार करना ज़रूरी है जिससे वह पाक होने के बाद तवाफ़े ज़ियारत कर के ही मक्का मुकर्रमा से वापस हो सके, जैसे टिकट और वीज़े की तारीख़ बढ़ाना। या हज कमेटी से रवानगी को मुअख़्ख़र कराना वग़ैरा। और अगर कोई ऐसी सूरत मुमकिन न हो सके और दोबरा वतन से वापसी भी मुश्किल हो और वह हालते हैज़ ही में तवाफ़े ज़ियारत करे तो अगरचे वह गुनहगार होगी, लेकिन उसका ये तवाफ़े ज़ियारत शरअन मोतबर हो जाएगा और वह पूरी तरह हलाल हो जाएगी यानी एहराम की पाबंदियाँ ख़त्म हो जाऐंगी, मगर उस पर एक बुदना यानी बड़ा जानवर (गाय या ऊँट) की कुर्बानी जिनायत में लाज़िम होगी। और अगर कुर्बानी नहीं की जा सकी और वह किसी भी मौक़ा पर तवाफ़े ज़ियारत का इआदा कर ले तो बुदना का वजूब उससे साक़ित हो जाएगा। (निदाए शाही सफ़्हा–176 जनवरी 2001 ई० हज व ज़ियारत नम्बर)

इस मस्अला की तफ़्सील देखिए मुन्तख़बात निज़ामुलफ़तावा (जिल्द–1 सफ़्हा–107 व शामी जिल्द–2 सफ़्हा–206 व ज़ुबदतुलमनासिक सफ़्हा–185)

"दोनों फ़तावा आपके सामने मौजूद हैं एहतियात पहले में है, लेकिन अमल करने में सहूलत दूसरे फ़तवा में है।" (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

तवाफ़ की सात किस्में और उनका हुक्म

मस्अला: हालते जनाबत (नापाकी) या हालते हैज़ व निफ़ास में अगर तवाफ़ किया जाएगा तो तवाफ़ की सातों किस्मों का हुक्म मुन्दरजा ज़ैल है–

(1) तवाफ़े ज़ियारत किया जाए तो जुनुबी, हाएज़ा और नुफ़सा पर जुरमाना में एक गाय पूरी या एक ऊँट की कुर्बानी वाजिब होगी। जो हुदूदे हरम में लाज़िम होगी। और अगर ऐसी हालत में तीन या उससे ज़्यादा तवाफ़ के चक्कर किए तो दम (एक बकरा, गाय या ऊँट का सातवाँ हिस्सा) लाज़िम होगा। और अगर पाकी के बाद तवाफ़ का इआ़दा कर लिया जाए तो जुर्माना ख़त्म हो जाएगा।

(2) तवाफ़े उम्रा: अगर हालते हैज़ या निफ़ास या जनाबत में तवाफ़े उम्रा करें तो जुर्माना में एक दम यानी बकरी की कुर्बानी लाज़िम होगी। और अगर पाक होने के बाद इआ़दा करें तो जुर्माना ख़त्म हो जाएगा।

(3) तवाफ़े वदाअ़: हाएज़ा व नुफ़सा पर ये तवाफ़ मआ़फ है उन पर ये तवाफ़ वाजिब नहीं है। और अगर हालते जनाबत में तवाफ़े वदाअ़ किया जाएगा तो जुर्माना में एक कुर्बानी लाज़िम होगी और इआ़दा करने से जुर्माना मआ़फ़ हो जाएगा।

(5) तवाफ़े कुदूम: हालते जनाबत व हैज़ व निफ़ास में तवाफ़े कुदूम करने से जुर्माना में दम वाजिब होगा और पाक होने के बाद इआ़दा करने से जुर्माना साकित हो जाएगा।

(6) तवाफ़े नफ़्ल।

(7) तवाफ़े तहीयाः इन दोनों का हुक्म ये है कि हालते जनाबत या हालते हैज़ व निफ़ास में किया जाएगा तो उनमें दम देना वाजिब हो जाएगा और इआदा की सूरत में दम साकित हो जाएगा। क्योंकि तवाफ़े नफ़्ल भी तवाफ़े कुदूम की तरह है।

(निदाए शाही हज व ज़ियारत नम्बर सफ़्हा–157 जनवरी 2001 ई० बहवाला गुनयतुलमनासिक सफ़्हा–247)

तवाफ़े वदाअ़ के मौक़ा पर हैज़ आ जाना?

मस्अलाः हाएज़ा औरत अगर मक्का की आबादी से निकलने से पहले पाक हो जाए तो उसको लौट कर तवाफ़े वदाअ़ करना वाजिब है (जब कि लौटना अपने इख़्तियार में हो) अगर आबादी से निकलने के बाद पाक हो तो वाजिब नहीं, लेकिन अगर मीक़ात से गुज़रने से पहले किसी वजह से वापस आएगी तो ये तवाफ़ वाजिब होगा। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–90)

मस्अलाः औरत हज से वापसी के वक़्त हाएज़ा हो जाए और तवाफ़े वदाअ़ न कर सके और वहां पर न ठहर सकती हो और शौहर (या महरम) के साथ आ जाए और तवाफ़े वदाअ़ न कर सके तो उस पर दम लाज़िम न होगा।

हाएज़ा औरत पर तवाफ़े वदाअ़ वाजिब नहीं, अगर मौक़ा हो तो पाक हाने के बाद तवाफ़े वदाअ़ कर के वापस होना अफ़ज़ल है और ये तवाफ़े वदाअ़ का हुक्म है। तवाफ़े ज़ियारत का हुक्म और है। (जो पहले गुज़र चुका है।) (फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–289)

मस्अलाः अह्ले हरम, अह्ले हिल्ल, अह्ले मीक़ात और हाएज़ा, नुफ़सा, मजनून और नाबालिग़ पर तवाफ़े वदाअ़

वाजिब नहीं है। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा-207)

मस्अला: हैज़ व निफ़ास वाली औरत तवाफ़े वदाअ न करे बल्कि हुदूदे मस्जिद से बाहर बाहर दुआ मांग कर रुख़्सत हो जाए। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा-207)

औरतों के लिए सर मुंडाने की मुमानअत क्यों?

हज़रत अली और हज़रत आइशा (रज़ि.) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने औरतों को अपना सर मुंडवाने से मना फ़रमाया है। (मिश्कात शरीफ़ हदीस-26530)

और हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ि.) से ये हदीस मरवी है कि औरतों पर हल्क़ नहीं है। औरतों पर सिर्फ़ बाल तरशवाना है। (हदीस-26540)

तशरीह: औरतों के लिए एहराम खोलते वक़्त सर मुंडवाना दो वजहों से ममनूअ है: एक ये कि इससे औरत की शक्ल बदनुमा हो जाती है और मुस्ला यानी सूरत बिगाड़ना मुतलक़न मना है।

दूसरी वजह ये है कि इससे औरत मर्द की हमशक्ल बन जाती है। औरतों के लिए मर्दों की शक्ल इख़्तियार करना भी मुतलक़न मना है।

(रहमतुल्लाहिलवासिआ जिल्द-4 सफ़्हा-248)

एक ज़रूरी हिदायत

हज कमेटी की तरफ़ से लाज़मी रिहाइशी स्कीम के तहत इमारतों में जो कमरे अलॉट किए जाते हैं उनमें एक ही कमरा में कई फ़ैमलियों को महरम वग़ैरा का लिहाज़ किए बग़ैर ठहराया जाता है, ये बहुत ही तकलीफ़देह और ख़तरनाक बात है। इसलिए अव्वलन ये कोशिश करनी चाहिए कि औरतों और मर्दों के कमरे अलग अलग हो

जायें। अगर आपस में हाजी इस तरह की बात तैय कर लें तो इसमें कोई मुश्किल भी नहीं है।

लेकिन अगर ये सूरत न हो सके तो कम अज़ कम एक ही कमरा में रह कर चादर वग़ैरा से परदे डाल लेना चाहिए, ताकि किसी हद तक रुकावट हो जाए। और हज के मुबारक सफ़र में बदनज़री और बेहयाई से हिफ़ाज़त हो सके।

"इंतिहाई अफ़सोस का मक़ाम है कि आ़म तौर पर हुज्जाज इसका बिल्कुल ख़्याल नहीं रखते। और उन क़यामगाहों में अजनबी मर्द व औरत इस तरह बेतकल्लुफ़ रहते हैं गोया वह आपस में सगे (महरम) रिश्तादार हों। और बसाऔक़ात अजनबी मर्द व औरत के दरमियान ख़लवत की नौबत भी आ जाती है जो क़तअ़न हराम है। हत्तलइमकान ऐसी बेएहतियातियों से बचना लाज़िम है। नीज़ औरत अपने सर के बालों को भी ग़ैर महरम की नज़र से बचाए। अल्लाह तआ़ला हम सब को महफ़ूज़ रखे। आमीन!" (मुहम्म्द रफ़अ़त क़ासमी)

"हजरे अस्वद शुरू में एक ही था अब उसके छोटे छोटे आठ टुकड़े हैं, उन टुकड़ों को पत्थर के बड़े टुकड़े में जोड़ा गया है और फिर उस पर चांदी का फ़्रेम लगा दिया गया है, यही वह टुकड़े हैं जिनको बोसा देना मसनून है न कि वह बड़ा पत्थर और न ही चांदी का वह ख़ोल जो उस बड़े पत्थर पर चढ़ा हुआ है।" (मुहम्म्द रफ़अ़त क़ासमी)

OOO

हज की रहनुमाई क़दम बक़दम

एहराम कहां से बांधें?

❑ अगर सीधे मक्का मुकर्रमा जाने का इरादा हो तो जहाज़ में सवार होने से पहले एयरपोर्ट पर एहराम बांधें और तल्बिया पढ़ना शुरू कर दें। अगर जहाज़ पर सवार होने से पहले एहराम नहीं बांधा है तो जद्दा पहुंचने से तक़रीबन एक घंटा क़ब्ल ज़रूर एहराम बांध लें, वरना मीक़ात से बिला एहराम आगे बढ़ने के जुर्म में दमे क़ुर्बानी वाजिब हो जाएगी। इसलिए कि हिन्दुस्तान वग़ैरा से जाने वाला हर हवाई जहाज़ क़रनुलमनाज़िल की मीक़ात या उसकी मुहाज़ात से गुज़र कर जद्दा पहुंचता है। उस मक़ाम से गुज़रने से पहले हुज्जाज को बहरहाल एहराम बांध लेना ज़रूरी है।

❑ अगर पहले मदीना मुनव्वरा जाने का निज़ाम हो तो यहां से एहराम बांधने की ज़रूरत नहीं, बल्कि जब मदीना मुनव्वरा से मक्का मुअज़्ज़मा जाना हो तो ज़ुलहुलैफ़ा से एहराम बांधा जाएगा।

एहराम बांधने का मसनून तरीक़ा

❑ एहराम बांधने से पहले मुस्तहब है कि हजामत

बनवा ली जाए, नाखुन कतर लें, बग़ल और ज़ेरे नाफ़ बाल साफ़ कर लिए जायें। उसके बाद एहराम की नीयत से गुस्ल कर लें। अगर गुस्ल का मौक़ा या इंतिज़ाम न हो तो वुज़ू कर लें।

❑ गुस्ल या वुज़ू के बाद मर्द हज़रात सिला हुआ कपड़ा उतार दें और एक तहबंद बांध लें, और उस पर एक चादर ओढ लें, और ख़ुशबू लगाऐं, मगर कपड़े पर दाग़ न लगने पाए, ये दोनों चादरें सफ़ेद और नई हों तो बेहतर है। अगर तहबंद को दरमियान से सी लिया जाए तो भी जाइज़ है, और जो हज़रात बिला सिली लुंगी पहनने के आदी नहीं हैं उन्हें सिली हुई लुंगी पहननी चाहिए ताकि कश्फ़े औरत का अंदेशा न हो। यानी नाफ़ से लेकर घुटना तक हिस्सा न खुले।

❑ ख़्वातीन एहराम के लिए सिले हुए कपड़े नहीं उतारेंगी, बल्कि उनका एहराम सिर्फ़ ये है कि वह अपना सर ढांक लें और चेहरा खुले रखें और परदा के लिए बेहतर ये है कि नक़ाब के ऊपर कोई हैट लगा लें ताकि नक़ाब चेहरे पर न लग सके। आज कल एक ख़ास क़िस्म के कपड़े को जिसे औरतें सर के बालों पर बांधती हैं ख़्वातीन ने उसे एहराम का नाम दे रखा है उसकी कोई अस्ल नहीं, उस पकड़े या रूमाल का नाम एहराम नहीं।

❑ एहराम की तैयारी के बाद अगर मकरूह वक़्त न हो तो दो रकअ़त नमाज़ नफ़्ल एहराम की नीयत से पढ़ें। बेहत है कि पहली रकअ़त में सूरए काफ़िरून और दूसरी रकअ़त में सूरए इख़लास पढी जाए। वाज़ेह रहे कि उस नमाज़ को पढते वक़्त चादर वग़ैरा से सर ढांक लेना

अफ़ज़ल है, क्योंकि अभी एहराम की पाबंदियाँ शुरू नहीं हुई।

❑ अगर उस वक़्त ख़्वातीन नापाकी के अैयाम में हों तो वह नमाज़ न पढ़ें, बल्कि वैसे ही एहराम की नीयत कर के तल्बिया पढ़ लें।

❑ मर्द हज़रात नमाज़ से फ़ारिग़ हो कर सर से चादर हटा लें और उसके बाद हज की तीनों क़िस्मों (इफ़राद, क़िरान और तमत्तोअ़) में से जिस क़िस्म का इरादा हो उसकी नीयत करें। मसलन अगर हज्जे इफ़राद का इरादा हो तो इस तरह कहें–

"اللّٰھم انّی ارید الحج فیسّرہ لی و تقبلہ منّی"

"ऐ अल्लाह! मैं हज का इरादा करता हूं, इसे मेरे लिए आसान कीजिये और क़बूल फ़रमाइये।"

और अगर हज्जे क़िरान का इरादा हो तो यूं कहें–

"اللّٰھم انّی اُرید الحج والعمرۃ فیسّرھما لی و تقبلھما منّی"

"ऐ अल्लाह! मैं हज और उम्रा दोनों इकट्ठा करना चाहता हूं, इनको मेरे लिए आसान फ़रमा दें, और क़बूल फ़रमा लीजिये।"

और अगर हज्जे तमत्तोअ़ का इरादा है तो यूं कहे–

"اللّٰھم انّی اُرید العمرۃ فیسّرھا لی و تقبلھا منّی"

"ऐ अल्लाह! मैं उम्रा करना चाहता हूं, उसको सहल कर दीजिए और क़बूल फ़रमा लीजिये। आज कल अक्सर लोग हज्जे तमत्तोअ़ करते हैं, इसमें सहूलत है।

❑ इसके बाद मर्द बुलंद आवाज़ से और औरतें आहिस्ता आवाज़ से तीन मरतबा तल्बिया पढ़ें। तल्बिया के अलफ़ाज़ ये हैं–

"لبیک اللّٰھم لبیک، لبیک لا شریک لک لبیک،

"ان الحمد و النعمة لک والملک، لا شریک لک."

"हाज़िर हूं ऐ अल्लाह! में हाज़िर हूं, हाज़िर हूं आप का कोई शरीक नहीं है। मैं हाज़िर हूं, सारी तारीफ़ें और सब नेअ़मतें सिर्फ़ आप ही के लिए हैं और सारी बादशाही भी आप ही के इख़्तियार में है, आप का कोई शरीक नहीं।"

❑ नीयत के साथ तल्बिया कहने के बाद अब बाक़ाएदा मोहरिम बन गए और एहराम की सारी पाबंदियाँ शुरू हो गईं। याद रहे कि एहराम बाँधने के लिए न सिर्फ़ नीयत काफ़ी है और न ही सिर्फ़ तल्बिया, बल्कि तल्बिया और नीयत एक साथ होना शर्त है।

❑ तल्बिया के बाद जो चाहे दुआ़ मांगें। ये दुआ़ मांगनी मुस्तहब है–

"اللّٰھم انّی اسئلک رضاک والجنة
واعوذبک من غضبک والنار."

"ऐ अल्लाह! मैं आपकी ख़ुशनूदी और जन्नत का तलबगार हूं और आपके गुस्से और दोज़ख़ से पनाह चाहता हूं।"

❑ एहराम शुरू होने के बाद बहुत सी चीज़ें जो पहले से हलाल थीं वह भी हराम हो जाती हैं। मसलन ख़ुशबू लगाना, बदन की हैअत पर सिला हुआ लिबास पहनना, बाल या नाख़ुन काटना, सर या मुंह का ढांकना, जूं मारना, शिकार करना, बीवी से जिमाअ़ करना या बेहयाई की बातें करना वग़ैरा। इनकी तफ़सील मसाइले हज की किताबों में देख कर याद करनी चाहिए, और उन सब पांबंदियों का ख़ास ख़्याल रखना चाहिए।

❑ हज्जे तमत्तोअ की सूरत में मक्का मुअज़्ज़मा पहुंच कर तवाफ़ शुरू करने से पहले तल्बिया पढ़ना बंद कर दिया जाएगा और हज्जे इफ़राद और हज्जे क़िरान में ये तल्बिया 10 ज़िलहिज्जा को जमरए अक़बा (जिसे बड़ा शैतान भी कहा जाता है) की रमी तक जारी रहेगा और जब तक भी तल्बिया का हुक्म बाक़ी रहे कसरत से और पूरे ज़ौक़ व शौक़ से तल्बिया पढ़ने को जारी रखा जाए, और पढ़ते वक़्त उसके माना का ज़रूर इस्तेहज़ार रखें, और ये तसव्वुर करें कि एक आशिक़े बेनवा अपने मेहरबान आक़ा के दरबार में खिंचा चला जा रहा है।

बैतुल्लाह में हाज़िरी

❑ मक्का मुअज़्ज़मा पहुंचने और रिहाइश वग़ैरा के मुतअल्लिक़ इंतिज़ाम मुकम्मल होने और फ़िलजुमला यक्सूई मुयस्सर आने पर अब हरम शरीफ़ में हाज़िरी के लिए तैयार हो जाए।

❑ बैतुल्लाह शरीफ़ पर नज़र पड़ते ही ख़ूब दिलजमई और गिरया व ज़ारी के साथ दुआ करें। ये क़बूलियत का मौक़ा है।

❑ अगर आप ने हज्जे इफ़राद का एहराम बांधा है, तो बैतुल्लाह में हाज़िरी के बाद फ़ौरन तवाफ़े क़ुदूम करें और हज्जे तमत्तोअ या हज्जे क़िरान का एहराम हो तो जाते ही अव्वलन तवाफ़े उम्रा करें, हज्जे तमत्तोअ करने वाले के लिए तवाफ़े क़ुदूम का हुक्म नहीं और हज्जे क़िरान करने वाला उम्रा के बाद तवाफ़े क़ुदूम करेगा।

❑ तमत्तोअ करने वाला शख़्स तवाफ़ के पहले तीन चक्करों में रमल (झपट कर चलना) और सातों चक्करों में

इज़्तिबाअ (एहराम की चादर को दाहिनी बग़ल से निकाल कर बाएँ कांधे पर डालना) करेगा, और उसके बाद उमरा की तकमील के लिए सफ़ा और मरवा के दरमियान सई करेगा। हज्जे किरान करने वाला भी इसी तरह अरकाने उमरा अदा करेगा।

❑ और हज्जे इफ़राद करने वाला अगर तवाफ़े कुदूम के बाद ही हज वाली सई करना चाहे तो उसे भी तवाफ़े कुदूम में रमल और इज़्तिबाअ करना पड़ेगा। वाज़ेह रहे कि रमल और इज़्तिबाअ मर्दों के लिए हर उस तवाफ़ में मसनून है जिसके बाद सई का इरादा हो।

❑ औरतों के लिए रमल और इज़्तिबाअ का हुक्म बिल्कुल नहीं। बाज़ औरतें तवाफ़ में मर्दों की तरह रमल करती (झपट कर चलती) हैं। ये सही नहीं है, इससे एहतेराज़ करें।

❑ तवाफ़ की इब्तिदा व इंतिहा हजरे अस्वद के इस्तिलाम (बोसा लेने) से होती है। हजरे अस्वद के सामने फ़र्श पर पूरे मताफ़ में एक काली पट्टी बनी हुई है, उस पट्टी के क़रीब जा कर इस तरह खड़े हों कि हजरे अस्वद दाईं जानिब हो। फिर तवाफ़ की नीयत इस तरह करें कि– "ऐ अल्लाह! मैं तेरे मुक़द्दस घर के सात चक्करों के तवाफ़ की नीयत करता हूं, ख़ालिस तेरी रज़ा और ख़ुशनूदी के लिए, लिहाज़ा इसे मेरे लिए आसान कर के क़बूल फ़रमा।"

❑ नीयत करने के बाद दाईं तरफ़ चलें और हजरे अस्वद के बिल्कुल सामने आ जायें यानी चेहरा और सीना हजरे अस्वद की तरफ़ कर के काली पट्टी पर खड़े

हो जायें और फिर नमाज़ की तरह हाथ उठाते हुए– "بسم الله الله اكبر ولله الحمد" पढ़ें और हाथ गिरा दें।

❑ उसके बाद हजरे अस्वद का इस्तिलाम करें उसकी सूरत ये है कि अगर हजरे अस्वद तक पहुंचने का मौक़ा मिल जाए तो अपना मुंह दोनों हाथों के बीच में इस तरह रखें जैसे नमाज़ में सज्दे में रखा जाता है और नर्मी के साथ बोसा दें। और अगर भीड़ की वजह से हजरे अस्वद तक न पहुंच सकें तो फिर काली पट्टी पर खड़े खड़े दूर से दोनों हथेलियाँ हजरे अस्वद की तरफ़ इस ख़्याल से करें कि वह हजरे अस्वद पर रखी हुई हैं, फिर उन हाथों को चूम लें। इस्तिलाम के वक़्त ये कलिमात पढ़ें– "الله اكبر لا اله الا الله والصلوة والسلام على رسول الله" दूर से इस्तिलाम करने में भी उतना ही सवाब मिलता है जितना क़रीब से बोसा लेने में। इसलिए ज़्यादा भीड़ में जाने की कोशिश न करें, ख़ास कर ख़्वातीन हत्तलइमकान ग़ैर मर्दों से इख़तिलात से बचने का एहतेमाम करें।

❑ इस्तिलाम करने के बाद फ़ौरन अपना चेहरा सीना और क़दम हजरे अस्वद के दाईं तरफ़ कर के चलना शुरू कर दें और चक्कर के दौरान रुख़ बैतुल्लाह शरीफ़ की तरफ़ न करें बल्कि नज़र नीचे किए हुए गोलाई में चलते रहें।

❑ और जब एक चक्कर पूरा हो जाए और दोबारा काली पट्टी पर पहुचें तो फिर चेहरा और सीना हजरे अस्वद की तरफ़ कर के इस्तिलाम करें और फ़ौरन अपनी हैअत पर आ जायें, इसी तरह सातों चक्कर पूरे करें।

सहूलत के लिए एक नक़शा आगे दर्ज है!
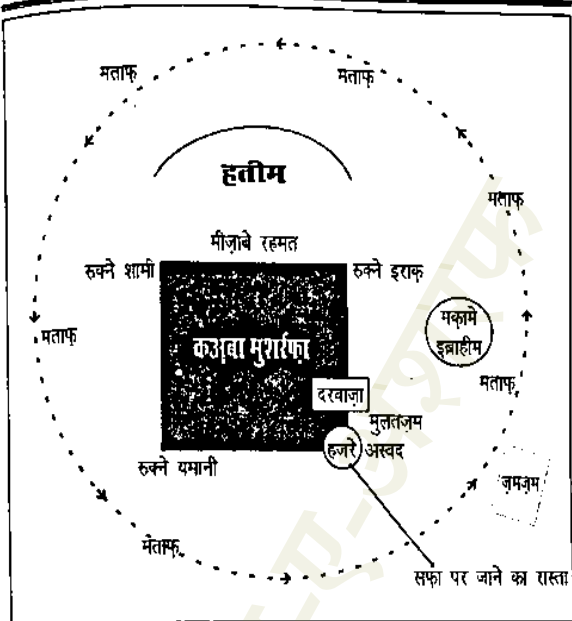
❑ हर चक्कर में जब भी रुक्ने यमानी पर पहुंचें तो अगर क़रीब हों तो सीना और क़दम बैतुल्लाह शरीफ़ की तरफ़ किए बग़ैर दोनो हाथों या सिर्फ़ दाएँ हाथ से रुक्ने यमानी को छूना सुन्नत है, लेकिन उस वक़्त हाथ को बोसा नहीं दिया जाएगा, और अगर भीड़ की वजह से क़रीब जाना मुश्किल हो तो दूर से इशारा वग़ैरा न किया जाए बल्कि वहां से वैसे ही गुज़र जायें। आज कल बहुत से लोग दूसरों की देखा देखी रुक्ने यमानी से गुज़रते हुए बुलंद आवाज़ से तकबीर पढ़ते हैं और हाथों को बोसा देते हैं। ये सब ख़िलाफ़े सुन्नत है, इससे एहतेराज़ लाज़िम है।

❑ तवाफ़ के सातों चक्करों में बावुजू रहना ज़रूरी है। अगर पहले चार चक्करों के दौरान वुजू टूट जाए तो वुजू कर के तवाफ़ अज़ सरे नौ करना होगा और अगर चार चक्करों के बाद टूटा है तो इख़्तियार है चाहे तो वुजू कर के बक़िया चक्करों को पूरा कर ले या अज़ सरे नौ तवाफ़ करे।

❑ तवाफ़ के दौरान ज़िक्र व अज़कार, तस्बीहात, दीनी गुफ़्तगू और जो भी दुआ याद हो वह की जा सकती है। मुतअैयन दुआऐं पढ़ना ही ज़रूरी नहीं। और जो दुआ भी पढ़ें इतनी आहिस्ता पढ़ें कि दूसरे की इबादत में ख़लल न पड़े। आज कल जो तवाफ़ में गुरूप बना कर और चीख़ चीख़ कर दुआऐं पढ़ी जाती हैं ये तरीक़ा क़तअन ग़लत है। तवाफ़ के दौरान जब रुक्ने यमानी से गुज़रें तो हजरे अस्वद तक पहुंचते पहुंचते दर्ज ज़ैल दुआ पढ़ना अहादीस से साबित है–

"اَللّٰهم انی اسئلک العفو والعافية فی الدنيا والآخرة. ربنا
آتنا فی الدنيا حسنة وفی الآخرة حسنة وقنا عذاب النار. و
ادخلنا الجنة مع الابرار يا عزيز يا غفّار يا ربّ العالمين."

"ऐ अल्लाह! मैं तुझ से दुनिया और आख़िरत में आफ़ियत और मआफ़ी का ख़्वास्तगार हूं। ऐ हमारे रब हम को दुनिया और आख़िरत में भलाई से सरफ़राज़ फ़रमाइये और हम को जन्नत में नेक लोगों के साथ दाख़िल फ़रमाइये।"

❑ अगर तवाफ़ में इज़तिबाअ किया गया है तो तवाफ़ के बाद सब से पहला काम ये करें कि अब इज़तिबाअ की कैफ़ियत ख़त्म कर लें और अपने दोनों मोंढे एहराम

की चादर से ढक लें, क्योंकि इज़तिबाअ सिर्फ़ तवाफ़ की हालत में ही मसनून है इससे पहले या बाद में मसनून नहीं।

❑ तवाफ़ के सात चक्कर पूरे होने पर दो रकअ़त नमाज़ वाजिबुत्तवाफ़ पढ़ना ज़रूरी है। हां अगर मकरूह वक़्त हो तो तवाफ़ करते रहें और मकरूह वक़्त गुज़रने के बाद सब तवाफ़ों की अलग अलग नमाज़ों को तरतीबवार पढ़ लें।

❑ तवाफ़ के दौरान नमाज़ियों के आगे से गुज़रना मना नहीं और तवाफ़ के अलावा हालत मे बेहतर है कि नमाज़ी के ऐन सामने से न गुज़रें बल्कि कम अज़ कम सज्दे के मकाम के आगे से गुज़रें।

❑ तवाफ़ की नमाज़ मक़ामे इब्राहीम (अलैहिस्सलाम) के सामने पढ़ना मसनून है। पहली रकअ़त में सूरए काफ़िरून और दूसरी रकअ़त में सूरए इख़लास पढ़ी जाए। अगर मक़ामे इब्राहीम में भीड़ की वजह से जगह न मिले तो कहीं भी तवाफ़ की नमाज़ पढ़ी जा सकती है।

❑ तवाफ़ के बाद मुलतज़म (जो हजरे अस्वद और बैतुल्लाह शरीफ़ के दरवाज़े के दरमियान तक़रीबन ढाई गज़ का कअ़बा की दीवार का हिस्सा है) से लिपट कर दुआ मांगना मुस्तहिब है। अगर मौक़ा मिले तो उस जगह से लिपट कर अपना चेहरा और पेट और सीना लगा कर जो चाहें दुआ मांगें। ये दुआ की क़बूलियत का ख़ास मक़ाम है। अलबत्ता अगर एहराम की हालत में हों तो उससे न लिपटें, क्योंकि जगह पर ख़ुशबू लगाई जाती है जिसका एहराम की हालत में बदन से लगाना मना है।

❑ तवाफ़ के बाद ज़मज़म पीना भी मसनून है और ज़मज़म पीते वक़्त जो दुआ मांगी जाए वह क़बूल होती है। इंशाअल्लाह!

सफ़ा व मरवा की सअ़ी

❑ तवाफ़ के बाद अगर सअ़ी करनी है तो हजरे अस्वद का इस्तिलाम कर के काली पट्टी की सीध में चलें। उसी जानिब कुछ फ़ासिला पर सफ़ा पहाड़ी का मक़ाम है।

❑ सफ़ा पर बस इतना चढ़ें जहां से बैतुल्लाह शरीफ़ नज़र आए। ज़्यादा ऊपर चढ़ना मकरूह है, यहां अव्वल क़िब्ला रुख़ हो कर सअ़ी की नीयत करें फिर इस तरह हाथ जिस तरह दुआ में उठाए जाते हैं, नमाज़ की तकबीर तहरीमा की तरह कानों तक न उठाऐं, जैसा कि बहुत से नावाक़िफ़ लोग करते हैं और हाथ उठाए हुए ज़िक्र व अज़कार और दुआ में मशगूल हों, ये भी दुआ की क़बूलियत का मक़ाम है।

❑ फिर सफ़ा से मरवा की तरफ़ चलें, मरवा पहुंच कर एक चक्कर मुकम्मल हो जाएगा, मरवा में भी इस तरह हाथ उठा कर ज़िक्र व अज़कार में मशगूल हों जैसे सफ़ा पर किया था।

❑ सफ़ा व मरवा के दरमियान जहां हरी लाईटें लगी हुई हैं उस हिस्से में मर्दों के लिए तेज़ चलना मसनून है, लेकिन औरतें अपनी हैअत पर चलती रहें, वह हरगिज़ न दौड़ें। सब्ज़ हरे सुतूनों के दरमियान ये दुआ पढ़ना भी मनकूल है– "رب اغفر وارحم انک انت الاعز والاکرم" "ऐ अल्लाह! बख़्शिश और रहमत से नवाज़, बेशक तू ही

सब पर गालिब और सब से ज़्यादा करम करने वाला है।"

❑ सअ़ी के दौरान अगर वुज़ू बाकी न रहे तो वुज़ू करना लाज़िम नहीं, अगर वुज़ू कर के आए तो अज़ सरे नौ सअ़ी की ज़रूरत न होगी, बस बकिया चक्कर पूरे कर ले ख़्वाह शुरू सअ़ी में वुज़ू टूटा हो या बाद में।

❑ सअ़ी से फ़ारिग़ हो कर मस्जिदे हराम में किसी भी जगह दो रकअ़त नफ़्ल पढ़ना भी मुस्तहब है, ये नमाज़ सर मुंडवाने से पहले पढ़ी जाएगी।

❑ वाज़ेह रहे कि सअ़ी सिर्फ़ उम्रा या हज के अरकान के साथ मशरूअ़ है। बिला उम्रा या बिला हज नफ़्ली सअ़ी साबित नहीं। बाज़ लोग ख़्वाह मख़्वाह सअ़ी करते नज़र आते हैं और ये समझते हैं कि नफ़्ली तवाफ़ की तरह सअ़ी भी होती है। ये महज़ जिहालत है।

सर के बाल मुंडवाना या कतरवाना

❑ सअ़ी की तकमील के बाद उम्रा करने वाला (तमत्तोअ़ वाले) हज़रात सर का हल्क़ (सर के बाल कटवाना) या क़स्र करा कर एहराम खोल देंगे।

❑ वाज़ेह रहे कि हल्क़ या क़स्र के बग़ैर एहराम की पाबंदियाँ ख़त्म नहीं हो सकतीं। और हनफ़ी मसलक में कम अज़ कम चौथाई सर का हल्क़ या क़स्र लाज़िम है और पूरे सर का हल्क़ या क़स्र सुन्नत है।

❑ जिस शख़्स के सर में एक उंगली के पोरवे से कम बाल हों उसके लिए क़स्र जाइज़ नहीं, बल्कि हल्क़ (मुंडवाना) ज़रूरी है।

❑ हल्क़ या क़स्र हुदूदे हरम में होना ज़रूरी है, वरना दम लाज़िम होगा।

☐ उम्रा करने वाला, या हज करने वाला जब सब अरकान अदा कर चुके और सिर्फ़ हल्क़ या क़स्र बाक़ी रह जाए तो अपने बाल खुद भी काट सकता है और अपने जैसे दूसरे मोहरिम के बाल भी काट सकता है, लेकिन बाल के काटने से पहले नाखुन वग़ैरा न काटे वरना दम लाज़िम हो जाएगा।

उम्रा के बाद मक्का मुअज़्ज़मा में क़याम

☐ उम्रा की तकमील के बाद तमत्तोअ़ वाला हाजी हलाल हो जाता है। अब मक्का मुअज़्ज़मा के क़याम को ग़नीमत ख़्याल करें और ज़्यादा से ज़्यादा तवाफ़, हरम में नमाज़ बाजमाअ़त और तिलावत व अज़कार का एहतेमाम रखें। यहां हर नेकी का सवाब एक लाख गुना मिलता है।

☐ अगर चाहें तो उस दरमियानी ज़माना में आप नफ़्ली उम्रे भी कर सकते हैं। ऐसी सूरत में हुदूदे हरम से बाहर तनअ़ीम (मस्जिदे आइशा 'रज़ि') या जअ़राना वग़ैरा जा कर एहराम बांधना होगा।

मिना के लिए रवानगी

☐ यौमुत्तरविया यानी आठवीं ज़िलहिज्जा की रात ही से मिना की रवानगी शुरू हो जाती है। इसलिए आप 7 ज़िलहिज्जा की शाम ही से एहराम वग़ैरा की तैयारियाँ मुकम्मल कर लें ताकि मुअ़ल्लिम की बसों के निज़ाम के मुताबिक़ आप मिना जा सकें। क्योंकि नावाक़िफ़ और नातजरबाकार लोगों के लिए मुअ़ल्लिम की बसों के बग़ैर मिना की क़यामगाह पर पहुंच पाना बहुत ही दुश्वार होता है। अलबत्ता जो हज़रात वाक़िफ़कार हैं वह इत्मीनान से आठवीं तारीख की सुब्ह को फ़ज्र की नमाज़ के बाद

मिना रवाना हों।

❑ हज का एहराम अगरचे मक्का मुअ़ज़्ज़मा में अपनी क़यामगाह पर भी बांधा जा सकता है, लेकिन मस्जिदे हराम में जा कर नीयत और तल्बिया पढ़ना ज़्यादा बेहतर है।

❑ जो हज़रात तवाफ़े ज़ियारत के बाद की भीड़ से बचना चाहें वह आज ही एक नफ़्ली तवाफ़ (मअ़ रमल व इज़्तिबाअ़) कर के हज की सअ़ी मुक़द्दम भी कर सकते हैं। अगर उस वक़्त सअ़ी कर ली तो बाद में सअ़ी की ज़रूरत न होगी।

❑ मिना जाते वक़्त एक जोड़ा कपड़ा, लोटा, चटाई, छतरी और पानी का थरमस और कुछ खाने की खुश्क चीज़ें (बिसकिट, नमकीन वग़ैरा) जैसे ज़रूरी सामान ले लें। ज़्यादा बोझ ने लें।

❑ मिना में आठवीं तारीख़ से नवीं तारीख़ की सुब्ह तक मुक़ीम रह कर पांच नमाज़ें अदा करना मसनून है।

❑ मिना में अब ख़ेमे आग पुरूफ़ उम्दा बन गए हैं जिनमें कूलर का भी इंतिज़ाम है, मगर ये सब यकसाँ मालूम होते हैं, इसलिए हुज्जाजे किराम अपने ख़ेमे की पहचान अच्छी तरह कर लें और अपने ख़ेमे से ज़्यादा दूर न जाऐं वरना गुम हो जोने का क़वी अंदेशा है और अपना तआ़रुफ़ी कार्ड हर वक़्त साथ रखें।

❑ ख़ेमों में मर्दों और औरतों का इख़्तिलात न होने दें। बल्कि दरमियान में चादर डाल कर दोनों के हिस्से अलग कर दें। ये बहुत ज़रूरी है।

❑ ज़िलहिज्जा की नवीं तारीख़ की नमाज़े फ़ज्र से

तेरह्वीं तारीख़ की अस्र तक हर फ़र्ज़ नमाज़ के बाद मर्दों के लिए बुलंद आवाज़ से और औरतों के लिए आहिस्ता आवाज़ से एक मरतबा तकबीरे तशरीक़ "الله اكبر، الله اكبر، لا اله الا الله والله اكبر، الله اكبر و لله الحمد" पढ़ना वाजिब है।

अरफ़ात के मैदान में

❑ मुअल्लिम की बसें रात ही से अरफ़ात ले जाना शुरू कर देती हैं, लेकिन सुन्नत यही है कि फ़ज्र पढ़ कर अरफ़ात के लिए रवाना हों।

❑ अरफ़ात जाते वक़्त निहायत ज़ौक़ व शौक़ के साथ तल्बिया का विर्द करें और आशिक़ाना अंदाज़ और कैफ़ व मस्ती के आलम में रहमते खुदावंदी के उमीदवार बन कर अरफ़ात का क़स्द करें, क्योंकि आज ही का दिन पूरे हज का मा हसल है।

❑ अरफ़ात में अगर अपनी जाए क़याम का पहले से पता लगा लिया जाए तो सहूलत रहती है। क्योंकि बसा औक़ात मुअल्लिम की बसें ट्रैफ़िक की मजबूरियों की वजह से इतनी देर कर देती हैं कि वक़ूफ़ का वक़्त बसों में बैठे बैठे ज़ाये होने लगता है। अगर क़यामगाह का पता पहले से मालूम हो तो अरफ़ात में कहीं भी उतर कर पैदल अपनी क़यामगाह पर पहुंच सकते हैं। नीज़ मिना से टैकसियों के ज़रीए भी आ सकते हैं।

❑ अरफ़ा का वक़ूफ़ जो फ़र्ज़ है वह ज़वाल के बाद से शुरू होता है। इसलिए ज़वाल से पहले ही पूरी तैयारी कर लें, ताकि बाद में कोई वक़्त ज़ाये न हो।

❑ आज के दिन जो लोग मस्जिदे नमरा में इमामे अरफ़ात के पीछे नमाज़ें पढ़ें वह तो ज़ुहर और अस्र दोनों

नमाज़ें जुहर के वक़्त में अदा करेंगे, मगर जो हज़रात अपने अपने ख़ेमों में इंफ़िरादी या इजतिमाई नमाज़ें पढ़ें उनके लिए दोनों नमाज़ें अपने अपने वक़्त में पढ़नी ज़रूरी हैं। अगर वह जुहर के वक़्त में अस्र पढ़ लें तो उनकी अस्र अदा न होगी। इस मस्अला का ख़ास ख़्याल रखें, क्योंकि बहुत से लोग मुनज़्ज़म तरीक़ा पर सब ही लोगों को एक ही वक़्त में जमा बैनस्सलातैन की तलक़ीन करते हैं। हनफ़ी हज़रात को उनकी तलक़ीन पर अमल की हरगिज़ इजाज़त नहीं है।

❑ मालूम हुआ है कि आज कल इमामे अरफ़ात नज्द से तशरीफ़ लाते हैं और वह मुसाफ़िर रहते हैं और अरफ़ात में जुहर और अस्र की नमाज़ें क़स्र पढ़ाते हैं, लिहाज़ा जो हुज्जाज आज के दिन मुसाफ़िर हैं वह तो इमाम साहब के साथ ही सलाम फेर दें, और जो हुज्जाज मुक़ीम हैं (यानी हज से पन्द्रह दिन क़ब्ल से मक्का मुअ़ज़्ज़मा में मुक़ीम हैं) वह दोनों नमाज़ों में इमाम साहब के सलाम फेरने के बाद अपनी दो रकअतें पूरी कर लें।

❑ गुरूबे आफ़ताब तक अरफ़ात में क़याम करना वाजिब है।

❑ वकूफ़े अरफ़ात का पूरा वक़्त दुआ, ज़िक्र, तल्बिया और दीगर इबादात में गुज़ार दें। अलबत्ता जो लोग इमामे अरफ़ात के साथ जमा बैनस्सलातैन कर चुके हैं वह अब कोई नमाज़ न पढ़ें, और ख़ेमों में रहने वाले हज़रात जुहर से अस्र के दरमियान जितनी चाहें नमाज़ें पढ़ सकते हैं। आज के क़ीमती लमहात सुस्ती में हरगिज़ ज़ाये न करें। गुरूब से काफ़ी पहले ही मुअ़ल्लिम के आदमी हाजियों

को बसों में बिठाना शुरू कर देते हैं। अगर बस में बैठ भी जायें तो ज़िक्र व अज़कार और दुआ से ग़ाफ़िल न हों। ये बसें गुरूब से पहले अरफ़ात से नहीं निकल सकतीं, इसलिए अपनी सीटों पर बैठे बैठे दुआ, तल्बिया और अज़कार में मशगूल रहें। अरफ़ात से गुरूब से पहले निकलने पर दम है।

❑ गुरूब होने और रात आ जाने के बावजूद अरफ़ात में मग़रिब की नमाज़ अदा नहीं की जाएगी।

मुज़दलिफ़ा को रवानगी

❑ सूरज गुरूब होने के बाद अरफ़ात से मुज़दलिफ़ा को रवानगी होगी। अब जब भी आप मुज़दलिफ़ा पहुंचें तो इशा के वक़्त में मग़रिब और इशा दोनों नमाज़ें एक साथ पढ़ें। इन दोनों नमाज़ों का जमा कर के पढ़ना सब पर ज़रूरी है। ख़्वाह अकेले नमाज़ पढ़ें या इमाम के साथ।

❑ मुज़दलिफ़ा की ये रात बहुत ही मुतबर्रक है। बाज़ उलमा ने इसे शबे क़द्र से भी अफ़ज़ल बताया है। इसलिए रात में तकान के बावजूद इबादत करना बहुत ज़्यादा सवाब का बाइस है। इसे महज़ सो कर ज़ाये न करें।

❑ मुज़दलिफ़ा में आम तौर पर खुले आसमान के नीचे अपनी अपनी चटाइयों पर रात गुज़ारी जाती है। नीज़ बहुत कुछ इंतिज़ामात के बावजूद पानी वग़ैरा की क़िल्लत का सामना होता है, इसलिए बेहतर है कि अरफ़ात ही से पानी वग़ैरा का इंतिज़ाम कर लें, और कुछ खाने पीने की अश्या भी हमराह ले लें।

❑ हनफ़ीया के नज़दीक वकूफ़े मुज़दलिफ़ा का अस्ल वाजिब वक़्त ज़िलहिज्जा की दसवीं तारीख़ की सुब्ह सादिक़

से तुलूअे आफ़ताब के दरमियान है। इसलिए अव्वल वक़्त फ़ज्र की नमाज़ पढ़ कर जितनी देर हो सके मुज़दलिफ़ा का वकूफ़ करें और इल्हाह वज़ारी के साथ दुआ में मशगूल रहें।

❑ मुज़दलिफ़ा में किब्ला के तअयीन की आसान शक्ल ये है कि बैतुल्लाह शरीफ़ के ऊपर एक पहाड़ी पर बहुत बड़ा टावर लगा हुआ है उस पर सफ़ेद लाइट जलती बुझती रहती है। ये मक्का मुअज़्ज़मा के इर्द गिर्द मीलों से नज़र आती है। रात के वक़्त किब्ला मालूम करने की ये आसान सूरत है। मुज़दलिफ़ा में आप जिस मक़ाम पर भी हैं उस लाइट को देख कर किब्ला की तअयीन कर लें।

❑ मुज़दलिफ़ा में शैतान की रमी के लिए चने के दाने के बक़द्र कंकरियाँ जमा कर लें और अगर नापाकी का यकीन हो तो उन्हें पानी से धो कर पाक कर लें।

मुज़दलिफ़ा से वापसी

❑ 10 ज़िलहिज्जा को वकूफ़े मुज़दलिफ़ा के बाद मिना के लिए रवानगी होगी।

❑ अगर हिम्मत और ताक़त हो और मिना में अपनी जाए क़याम का सही पता मालूम हो और ज़ईफ़ ख़्वातीन वग़ैरा साथ न हों तो मुज़दलिफ़ा से मिना के लिए बसों से सफ़र करने के बजाए पैदल आने में ज़्यादा सहूलत है। इससे आप का वक़्त काफ़ी बच जाएगा।

दोबारा मिना में

❑ मिना पहुंच कर सब से पहला अमल आख़िरी जमरा (बड़े शैतान) को कंकरी मारना है। आज कल सुब्ह के वक़्त इंतिहाई होशरुबा इज़्दिहाम होता है। इस भीड़ में

कमज़ोर और ख़्वातीन का काम नहीं। बसा औक़ात जान तक का ख़तरा हो जाता है। इसलिए ज़्यादा शौक़ में आ कर जान को ख़तरा में न डालें, बल्कि मिना पहुंच कर अव्वल अपनी क़यामगाह पर आराम करें और दोपहर या उसके बाद इत्मीनान से जा कर रमी करें। बिलख़ुसूस ज़ईफ़ लोग और ख़्वातीन को इसका ख़्याल रखना चाहिए।

❑ रमी शुरू करते ही तल्बिया पढ़ने का सिलसिला बंद कर दिया जाए।

❑ अगर सिर्फ़ हज का एहराम हो तो रमी के बाद हल्क़ या क़स्र करा कर एहराम खोल दें, और ख़्वातीन के लिए हल्क़ जाइज़ नहीं, वह सिर्फ़ इतना करें कि चोटी के सिरे से उंगली के पोरों के बराबर अपने बाल काट लें।

❑ अगर क़िरान या तमत्तोअ़ का एहराम है तो पहले वाजिब क़ुर्बानी करें उसके बाद ही सर मुंडवाएं।

❑ हनफ़ीया के नज़दीक मुफ़्ता बिही क़ौल के मुताबिक़ क़ारिन और मुतमत्तेअ़ के लिए रमी, क़ुर्बानी और हल्क़ में तरतीब वाजिब है। इसलिए पूरी कोशिश करनी चाहिए कि ये तरतीब क़ाइम रहे, लेकिन अगर कोई शख़्स अपने ज़ोअ़फ़ या नए सऊदी क़वानीन या किसी और उज़्र की बिना पर तरतीब क़ाइम न रख सके तो साहिबैन (रह.) और अइम्मए सलासा के क़ौल पर उस पर दम वाजिब न होगा।

तवाफ़े ज़ियारत

❑ क़ुर्बानी और हल्क़ के बाद तवाफ़े ज़ियारत के लिए मक्का मुअ़ज़्ज़मा जाएं। ये तवाफ़ फ़र्ज़ है और 10 से 12 ज़िलहिज्जा की गुरूबे आफ़ताब तक किया जा सकता है।

❑ जो औरत नापाक हो वह उस वक़्त तवाफ़े ज़ियारत न करे, बल्कि मिना ही में मुक़ीम रहे और बाद में पाक होने पर तवाफ़ करे। इस ताख़ीर से उस पर कोई जुरमाना न होगा।

❑ अगर पहले हज की सअी न की हो तो तवाफ़े ज़ियारत के बाद सअी करनी होगी और इस तवाफ़ के शुरू के तीन चक्करों में रमल (अकड़ कर चलना) किया जाएगा। और जब हल्क़ के बाद सिले हुए कपड़े पहन कर तवाफ़ करें तो इज़तिबाअ़ न होगा और सअी भी सिले हुए कपड़ों में होगी।

❑ अैयामे मिना (10, 11, 12 ज़िलहिज्जा) में रात का अक्सर हिस्सा मिना में गुज़ारना मसनून है।

रम्ये जिमार

❑ 11 और 12 तारीख़ को ज़वाल के बाद से तीनों जमरात की रमी की जाएगी। इसमें भी अव्वले वक़्त भीड़ में जाने की कोशिश न करें, बल्कि इत्मीनान और आराम के साथ कुछ देर के बाद में रमी करें।

❑ इन दो दिनों में ज़वाल से क़ब्ल रमी जाइज़ और मोतबर नहीं है। इसका ख़्याल रखें।

❑ कमज़ोर और ख़्वातीन अगर रात में रमी करें तो उन पर कराहत नहीं है। लिहाज़ा जो लोग रात के वक़्त में रमी करने पर क़ादिर हों उनकी तरफ़ से दूसरे की रमी दुरुस्त न होगी। इस मसअला का भी ख़ूब ख़्याल रखें, क्योंकि बहुत से लोग हक़ीक़ी उज़्र के बग़ैर रमी में नियाबत करा देते हैं। ऐसे लोगों की रमी मोतबर नहीं होती और उन पर तर्के रमी की वजह से दम वाजिब हो

जाता है।

❑ कंकरी इस तरह मारें के वह गोल दाएरा के अन्दर ही गिरें उससे बाहर न जायें।

❑ जमरए अक़बा और जमरए उस्ता के बाद क़िब्ला रू हो कर दुआ मांगना मसनून है। आख़िरी जमरा के बाद दुआ का हुक्म नहीं है।

❑ मिना के अैयाम ख़ास तौर पर ज़िक्रे ख़ुदावंदी के दिन हैं। इस दौरान इबादात का ख़ास एहतेमाम रखें और दीन की इशाअत की भी फ़िक्र करें।

❑ 12 ज़िलहिज्जा को गुरूबे आफ़ताब से पहले मिना से मक्का मुअ़ज़्ज़मा के लिए रवाना हो जाऐं।

❑ अगर 13 ज़िलहिज्जा की सुब्ह सादिक़ तक मिना में रुक गए तो 13 वीं तारीख़ की रमी भी वाजिब हो जाएगी।

मक्का मुअ़ज़्ज़मा में वापसी और तवाफ़े वदाअ़

❑ मक्का मुअ़ज़्ज़मा वापस हो कर जो हज़रात फ़ौरन वतन जाना चाहते हैं उन पर जाने से पहले तवाफ़े वदाअ़ करना वाजिब है। अगर बिला उज़्र उसे छोड़ दिया तो दम लाज़िम हो जाएगा।

❑ तवाफ़े ज़ियारत के बाद किया गया नफ़्ली तवाफ़ भी तवाफ़े वदाअ़ के क़ाइम मक़ाम हो जाता है।

❑ अगर कोई शख़्स तवाफ़े वदाअ़ किए बग़ैर मीक़ात से बाहर चला जाए तो उस पर दम वाजिब हो जाएगा। उस दम से बचने की सूरत ये है कि दोबारा उम्रे का एहराम बांध कर हरम में आए और अव्वलन उम्रा करे फिर तवाफ़े वदाअ़ करे, सिर्फ़ तवाफ़े वदाअ़ के लिए बाहर

से बिला एहरामे उम्रा आना मना है। इस मस्अला को अच्छी तरह याद रखें।

☐ जो औरत वापसी के वक़्त नापाक हो उसके लिए तवाफ़े वदाअ़ के लिए रुकना लाज़िम नहीं। वह बिला तवाफ़े वदाअ़ किए वतन लौट सकती है।

☐ मक्का मुअ़ज़्ज़मा में जितना भी क़याम नसीब हो उसे गनीमत समझें और ज़्यादा से ज़्यादा तवाफ़ और उम्रों का एहतेमाम रखें। ज़िन्दगी में ये मवाक़े बार बार नसीब नहीं होते। और वापसी के वक़्त निहायत हुज़्न व मलाल का इज़हार करें, और बैतुल्लाह की जुदाई पर गिरया वज़ारी के साथ वापस हों।

अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल व करम से बार बार अदब और मक़बूल हाज़िरी की दौलत से नवाज़े।

आमीन या रब्बलआलमीन

ज़रूरी इंतिबाह

मस्जिदे हराम (मक्का मुकर्रमा) में नमाज़ पढ़ते वक़्त इसका जरूर ध्यान रखा जाए कि नमाज़ी का रुख़ कअ़बा मुशर्रफ़ा की तरफ़ इस तरह रहे कि अगर नमाज़ी के चेहरे से सीधी लकीर खींची जाए तो वह बैतुल्लाह शरीफ़ के किसी हिस्सा से गुज़र कर आगे जाए। इसकी अलामत के तौर पर पूरी मस्जिदे हराम में पत्थर की पट्टियाँ तरतीब से लगाई गई हैं। उनका ख़्याल कर के नमाज़ में खड़े हों। बहुत से हज़रात इस सिलसिले में कोताही करते हैं और जिधर मौक़ा मिले खड़े हो कर नमाज़ पढ़ लेते हैं ये सही नहीं है। मस्जिदे हराम के अन्दर ऐन कअ़बा की तरफ़ रुख़ करना ज़रूरी है वरना नमाज़ सही न होगी।

अलबत्ता मस्जिदे हराम के बाहर ऐन कअ़बा की तरफ़ रुख़ करना ज़रूरी नहीं, बल्कि मस्जिद की तरफ़ रुख़ करना काफ़ी होता है। और दूर दराज़ इलाक़ों के लिए मस्जिदे हराम की भी शर्त नहीं बल्कि सिर्फ़ जिहत काफ़ी है।

(बशुक्रिया हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद सलमान साहब मन्सूरपुरी। निदाए शाही हज व ज़ियारत नम्बर जनवरी 2001)

उम्रा के फ़ज़ाइल

आंहज़रत (स.अ.व.) ने फ़रमाया– "हज और उम्रा एक साथ करो, क्योंकि वह दोनों तंगदस्ती और गुनाहों को ऐसे दूर कर देते हैं जैसे कि भट्टी लोहे और सोने और चांदी के मैल को दूर कर देती है।" इस हदीस शरीफ़ से मालूम हुआ कि हज व उम्रा से न सिर्फ़ गुनाह मआफ़ होते हैं बल्कि इंसान से इन दोनों की बरकत से फ़क्र व फ़ाका भी दूर हो जाता है और ज़ाहिर व बातिन और दुनिया व आख़िरत की दौलतों से, हज और उम्रा करने वाला माला माल हो जाता है, लेकिन इख़लास के साथ। हज़रत इब्न अब्बास (रज़ि.) से रिवायत है कि आंहज़रत (स.अ.व.) ने फ़रमाया रमज़ान में उम्रा (का सवाब) एक हज के बराबर है और एक रिवायत में है कि उस हज के बराबर जो मेरे साथ किया हो।

नीज़ हदीस शरीफ़ में ये भी फ़रमाया गया है कि हज व उम्रा करने वाले अल्लाह तआ़ला के मेहमान हैं, अगर वह अल्लाह तआ़ला से कोई दुआ़ मांगते हैं, तो वह क़बूल फ़रमाते हैं और अगर ख़ताऐं मआफ़ करवाते हैं तो अल्लाह तआ़ला उनकी ख़ताओं को मआफ़ करते हैं।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़हा–208 व हाकज़ा फ़ी मआरिफ़िलकुरआन व मआरिफ़िल हदीस व अत्तरग़ीब वत्तरहीब व मज़ाहिरे हक़ जदीद)

रमज़ानुलमुबारक में उम्रा करना?

मस्अला: अैयामे हज यानी नवीं ज़िलहिज्जा से तेरह्वीं तक पूरे साल में सिर्फ़ ये पांच दिन ऐसे हैं जिनमें उम्रा करना नाजाइज़ और ममनूअ है और उन पांच दिन के अलावा पूरे साल में जब भी गुंजाइश हो उम्रा कर सकते हैं मगर रमज़ानुलमुबारक में आमाल का सवाब सत्तर गुना ज़ाएद हो जाता है। और बुख़ारी शरीफ़ की हदीस में आता है कि आंहज़रत (स.अ.व.) ने फ़रमाया– रमज़ान का उम्रा पूरे हज के बराबर होता है।"

(बुख़ारी शरीफ़ जिल्द–1 सफ़हा–239 व मुस्लिम शरीफ़ जिल्द–1 सफ़हा–409)

मस्अला: जो शख़्स हज्जे तमत्तोअ़ करता है उसको हज से पहले शव्वाल, ज़ीक़अ़दा और ज़िलहिज्जा के पहले अशरा में बार बार उम्रा करना बिला कराहत जाइज़ और दुरुस्त है। यानी एक उम्रा करने के बाद दूसरा उम्रा हज से पहले कर सकता है। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़हा–221 व रहमतुल्लाहिलवासिआ जिल्द–4 सफ़हा–183)

मस्अला: बाज़ उलमा के नज़दीक मतमत्तेअ़ अरकाने उम्रा से फ़ारिग़ होने के बाद जब दूसरा उम्रा करेगा तो उसके ज़रीआ तमत्तोअ़ बातिल हो जाएगा। ये इसलिए सही नहीं कि जब दूसरा उम्रा करेगा उसके ज़रीआ से तमत्तोअ़ हो जाएगा। अलग़रज़ जितने उम्रे करेगा उनमें से आख़िर वाले के ज़रीआ से तमत्तोअ़ सही हो जाएगा।

(फतावा महमूदिया जिल्द–12 सफ्हा–183)

मस्अला: मक्की हज़रात (मक्का वालों) के लिए अैयामे हज के अलावा बाकी साल के तमाम दिनों में उमरा करना बिला कराहत जाइज़ और दुरुस्त है।

(गुनयतुलमनासिक सफ्हा–155)

उमरा क्या है?

उमरा के लुग्वी माना "ज़ियारत" के हैं, चुनांचे जब कोई शख़्स किसी की ज़ियारत करता है तो कहा जाता है "आमरुहू" यानी मैं उसकी ज़ियारत करता हूं। इस्तिलाहे शरअ में उससे मुराद ख़ास तरीका से ख़ानए कअबा की ज़ियारत करना यानी मीकात या हिल्ल से एहराम बांध कर बैतुल्लाह का तवाफ़ व सअी करने के हैं।

मस्अला: हनफीया के नज़दीक ज़िन्दगी में एक बार उमरा करना बशर्तेकि इस्तिताअत व कुदरत हो सुन्नते मुअक्कदा है, फ़र्ज़ नहीं है। क्योंकि आंहज़रत (स.अ.व.) का इरशाद मुबारक है– "الحج مكتوب والعمرة تطوع" यानी हज फ़र्ज़ है और उमरा ततौवोअ है यानी रज़ाकाराना या नफ़्ली इबादत है।

अल्लाह का इरशाद– "اتموا الحج والعمرة لله" में शुरू करने बाद उसे पूरा करने का हुक्म है। और कोई भी इबादत शुरू की जाए तो उसको पूरा करना वाजिब हो जाता है ख़्वाह वह नफ़्ल ही इबादत हो।

इस आयत से उमरा की फ़रज़ियत पर इस्तिदलाल नहीं किया जा सकता। रही हज की फ़रज़ीयत वह तो अल्लाह तआला के इरशाद से साबित है– "ولله على الناس حج البيت" इसके अलावा दूसरे दलाइल भी हैं जो हज के

ब्यान में बताए गए हैं।

अबूरज़ीन अल अक़ीली से रिवायत है कि वह आंहज़रत (स.अ.व.) के पास आए कि मेरा बाप उमर रसीदा है न तो हज कर सकता है न उम्रा कर सकता है और न सफ़र करने के क़ाबिल है? तो आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया- "बाप की तरफ़ से तुम हज व उम्रा कर लो।" इस हदीस शरीफ़ को बुख़ारी, मुस्लिम, अबूदाऊद, निसाई और इब्न माजा ने रिवायत किया है और तिर्मिज़ी ने इसको सही बताया है। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द-1 सफ़्हा-1123)

मस्अला: रमज़ानुलमुबारक में उम्रा की ज़ियादा ताकीद इस बिन पर है, हज़रत इब्न अब्बास (रज़ि.) से रिवायत है कि- "عمرة فى رمضان تعدل حجة" यानी रमज़ानुलमुबारक में उम्रा करना हज के बराबर है। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द-1 सफ़्हा-1127 व हाकज़ा मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा-206 व मज़ाहिरे हक़ जिल्द-3 सफ़्हा-262)

मस्अला: उम्रा से हलाल हो कर हुदूदे मीक़ात से बाहर हो जाए तो वापसी के वक़्त एहराम ज़रूरी है, मीक़ात की हद से अगर बाहर नहीं गया तो एहराम की ज़रूरत नहीं। (फ़तावा रहीमिया जिल्द-5 सफ़्हा-226)

मस्अला: एहरामे उम्रा में सअ़ी के बाद क़स्र या हल्क़ (बाल कटवाना व मुंडवाना) कराना चाहिए।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा-177)

मस्अला: कसरत से उम्रा करना मकरूह नहीं, बल्कि मुस्तहब और अफ़ज़ल है, नीज़ तवाफ़ कसरत से करना, बमुक़ाबिला ज़्यादा उम्रा करने के अफ़ज़ल है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा-177)

मस्अलाः तल्बिया उम्रा में उम्रा का तवाफ़ शुरू करने तक पढ़ा जाता है। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा-104)

उम्रा और हज में क्या फ़र्क़ है?

मस्अलाः उम्रा सुन्नत या वाजिब होने की शराइत हज के मिस्ल हैं और उसके एहराम के अहकाम भी मिस्ल हज के एहराम के हैं। जो चीज़ें वहां हराम व मकरूह व मसनून और मुबाह हैं वह यहां भी हैं। अलबत्ता इन उमूर में हज और उम्रा में फ़र्क़ है: हज के लिए एक ख़ास वक़्त मुऐयन है, उम्रा तमाम साल में हो सकता है। सिर्फ़ पांच रोज़ यानी नवीं ज़िलहिज्जा से तेरह तक मकरूहे तहरीमी है।

हज फ़र्ज़ है, उम्रा फ़र्ज़ नहीं। हज फ़ौत हो जाता है उम्रा फ़ौत नहीं होता। हज में वकूफ़े अरफ़ा और वकूफ़े मुज़दलिफ़ा और नमाज़ों का इकट्ठा पढ़ना और ख़ुत्बा है। उम्रा में ये चीज़ें नहीं हैं। हज में तवाफ़े कुदूम और तवाफ़े वदाअ़ होता है। उम्रा में दोनों नहीं होते। नीज़ उम्रा फ़ासिद करने से या जनाबत की हालत में तवाफ़ करने से, बकरी ज़िब्ह करनी काफ़ी है और हज में काफ़ी नहीं। उम्रा की मीक़ात तमाम लोगों के लिए हिल्ल है बख़िलाफ़े हज के, अह्ले मक्का मुकर्रमा को हज का एहराम हरम शरीफ़ में बांधना होता है, अलबत्ता आफ़ाक़ी शख़्स जब बाहर से आए और उम्रा का इरादा हो तो अपनी मीक़ात से एहराम बांध कर आए। उम्रा में तवाफ़ शुरू करने के वक़्त तल्बिया बंद किया जाता है और हज में जमरए उख़रा की रमी शुरू करने के वक़्त मौकूफ़ किया जाता है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा-204 व हाकज़ा फ़ी मज़ाहिरे

हक़ जिल्द–3 सफ़्हा–270)

मस्अला: आफ़ाक़ी शख़्स अगर उम्रा की नीयत से मक्का मुकर्रमा आये तो अपनी मीक़ात से उम्रा का एहराम बांध कर आए।

मस्अला: मक्का मुकर्रमा से उम्रा करने वालों के लिए उम्रा के एहराम की मीक़ात हिल्ल है। इसलिए हिल्ल में जा कर जिस जगह चाहे एहराम बांधे, लेकिन अफ़ज़ल तनअ़ीम (मस्जिद आइशा 'रज़ि.') है या उसके बाद जअ़राना से एहराम बांधे।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–207)

मनासिके उम्रा एक नज़र में
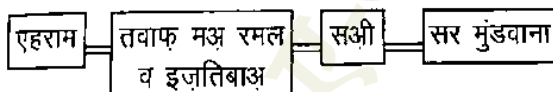
अशहुरे हज में उम्रे करना?

सवाल: एक शख़्स ने हज के महीनों में जा कर उम्रा अदा किया, और वह हज तक वहां ठहरता है तो क्या उस दौरान वह मज़ीद उम्रे कर सकता है या नहीं?

जवाब: हज्जे तमत्तोअ़ करने वाले के लिए हज व उम्रा के दरमियान और उम्रे करना जाइज़ है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–51)

मस्अला: आफ़ाक़ी के लिए एक उम्रा से ज़ायद करना अशहुरे हज में जाइज़ है। नीज़ हज्जे तमत्तोअ़ करने वाला एक उम्रा करने के बाद दूसरा उम्रा हज से पहले कर सकता है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–6 सफ़्हा–397 व हाकज़ा आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–50)

उम्रे के मकरूह अैयाम

मस्अला: यौमे अरफ़ा (नवीं ज़िलहिज्जा) से तेरह ज़िलहिज्जा तक पांच दिन हज के हैं। इन दिनों में उम्रा की इजाज़त नहीं। इसलिए उम्रा इन दिनों में मकरूहे तहरीमी है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–50)

एहराम बांधने के बाद जो उम्रा न कर सके?

सवाल: मैंने उम्रा करने के लिए एहराम बांधा लेकिन तबीअ़त ख़राब होने की वजह से उम्रा अदा न कर सका और वह एहराम उम्रा अदा किए बग़ैर खोल दिया, मेरे लिए क्या हुक्म है?

जवाब: आपके ज़िम्मा एहराम तोड़ देने की वजह से दम (हुदूदे हरम में एक बकरी ज़िब्ह करना) वाजिब है और उम्रा की क़ज़ा भी लाज़िम है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–50)

जद्दा में रहने वाला अशहुरे हज में उम्रा कर सकता है?

सवाल: हम लोग जद्दा में बग़रज़े मुलाज़िमत मुक़ीम हैं यहां वालों के क़ौल के मुताबिक़ हम लोग "हिल्ली" हैं यानी हरम से बाहर मीक़ात के अन्दर मुक़ीम हैं। और वह कहते हैं कि हिल्ली अशहुरे हज में उम्रा नहीं कर सकता सही क्या है?

जवाब: अगर उसी साल हज का इरादा है तो उम्रा करना मकरूह है, अगर हज का इरादा नहीं है तो मकरूह नहीं है।

मस्अला: मक्का वालों को और जो शख़्स मक्का वालों के हुक्म में है यानी दाख़िले मीक़ात पर रहने वाला या ऐन मीक़ात पर रहने वाला और जो शख़्स पहले अशहुरे

हज (शव्वाल, जीक़अदा और ज़िलहिज्जा का पहला अशरा) से मुकीमे मक्का है, जैसे कि आफ़ाक़ी अशहुरे हज से पहले हलाल हो, मक्का मुकर्रमा में रहा हो, फिर उस पर अशहुरे हज आ गया हो, तो उनको उम्रा करना अशहुरे हज में मकरूह है जो कि उसी साल हज करना चाहिए और अगर उस साल हज न करे तो उम्रा अशहुरे हज में करना उन सब पर मकरूह नहीं है। उस साल हज का इरादा होते हुए उम्रा किया तो दमे जब्र लाज़िम होगा।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–222 बहवाला शामी जिल्द–2 सफ़्हा–208 व ज़ुबदतुलमनासिक जिल्द–1 सफ़्हा–255 व दुर्रेमुख़्तार मअ शामी जिल्द–2 सफ़्हा–270)

ऐयाम हज में उम्रा करना?

मस्अला: उम्रा तमाम साल में करना जाइज़ है सिर्फ़ हज के पांच दिन 9, 10, 11, 12, 13 में उम्रा का एहराम बांधना मकरूहे तहरीमी है, अगर उन ऐयाम में एहराम नहीं बांधा बल्कि पहले से एहराम बंधा हुआ था, तो फिर मकरूह नहीं है। मसलन कोई शख़्स पहले से एहराम बांध कर आया और उसको हज नहीं मिला और उस ने उन ऐयाम में उम्रा कर लिया तो मरूह नहीं है, लेकिन उसके लिए मुस्तहब ये है कि उन पांच रोज़ के बाद उम्रा करे। (फ़तवा रहीमिया जिल्द–6 सफ़्हा–405 व हाकज़ा फ़ी मुअल्लिमिलहुज्जाज सफ़्हा–223)

मस्अला: अगर किसी शख़्स ने उन पांच रोज़ में उम्रा का एहराम बांध लिया तो एहराम बांधने की वजह से उस पर उम्रा करना लाज़िम हो गया, मगर चूंकि उन ऐयाम में उम्रा का एहराम बांधना मकरूहे तहरीमी है इसलिए

उस पर उम्रा का तर्क करना वाजिब है, ताकि गुनाह से बच जाए और उन अैयाम के गुज़रने के बाद उम्रा की कज़ा और एक दम वाजिब होगा। और अगर उम्रा तर्क नहीं किया, उन्हीं अैयाम (पांच दिनों) में कर लिया तो उम्रा हो गया लेकिन एक दम मकरूह के इरतिकाब की वजह से वाजिब होगा। और अगर उन अैयाम में एहराम तो उम्रा का बांधा मगर उम्रा के अफ़आल उन अैयाम में नहीं किए, बल्कि अैयामे तशरीक़ के बाद किए, तो उम्रा हो गया और दम भी वाजिब नहीं होगा, मगर ऐसा करना मकरूह है, क्योंकि एहराम खोलना उसी सूरत में वाजिब था। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–206)

हज के महीनों में उम्रा करने वाले पर हज?

सवालः शव्वाल, ज़ीक़अ़दा ज़िलहिज्जा, अशहुरे हज (हज के महीने) हैं। मस्अला ये है कि अगर इन महीनों में कोई शख़्स उम्रा अदा करता है तो उसके लिए ज़रूरी है कि वह हज भी अदा करे?

अगर हम शव्वाल या ज़ीक़अ़दा में उम्रा कर के रियाज़ आऐं (हुदूदे हरम से बाहर) और दोबारा हज के मौक़ा पर जाऐं तो उस वक़्त नीयत हज्जे तमत्तोअ़ की होगी या हज्जे मुफ़रिद की। हज्जे तमत्तोअ़ के लिए दोबारा उम्रा की ज़रूरत होगी या पहला उम्रा काफ़ी है?

जवाबः आफ़ाक़ी शख़्स (जो मीक़ात के हुदूद से बाहर रहता हो, जैसे हिन्दुस्तानी, पाकिस्तानी, मिस्री, शामी, इराक़ी, ईरानी वग़ैरा) अगर अशहुरे हज में उम्रा कर के अपने वतन लौट जाए तो दोबारा उसको हज या उम्रा के लिए आना ज़रूरी नहीं है और अगर वह उसी साल

हज भी करे तो उस पहले उम्रा की वजह से मतमत्तेअ़ नहीं होगा। न उसके ज़िम्मा तमत्तोअ़ का दम लाज़िम होगा। अगर ऐसा शख़्स तमत्तोअ़ करना चाहता है तो उसको दोबारा उम्रा का एहराम बांध कर आना होगा।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–67)

उम्रा के बाद कौन सा हज कहलाएगा?

सवालः मैं शव्वाल में ही एक उम्रा अपनी तरफ़ से करूंगा और उसके बाद हज करने का इरादा है। उसकी नीयत किस तरह होगी और ये हज कौन सी क़िस्म से होगा?

सवालः नीयत तो जिस तरह अलग उम्रे की और अलग हज की होती है उसी तरह होगी, मसाइल भी वही हैं। अलबत्ता ये हज तमत्तोअ़ बन जाएगा और दस ज़िलहिज्जा को सर मुंडवाने से पहले कुर्बानी लाज़िम होगी। जिसको "दमे तमत्तोअ़" कहते हैं।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–66)

मस्अलाः हज्जे तमत्तोअ़ करने वाले पर तवाफ़े कुदूम वाजिब नहीं, उम्रा करने के बाद जिस क़दर चाहे तवाफ़े नफ़्ल कर सकता है। (मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–221)

क्या उम्रा हज का बदल है?

मस्अलाः यूरोप व अमरीका जाते आते हुए अगर उम्रा की सआ़दत नसीब हो जाए तो उम्रा कर लेना चाहिए। लेकिन उम्रा हज का बदल नहीं है, जिस शख़्स पर हज फ़र्ज़ हो, उसको हज करना ज़रूरी है। महज़ उम्रा करने से फ़र्ज़ अदा नहीं होगा।

(आपके मसाअल जिल्द–4 सफ़्हा–49 व हाकज़ा

अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–159)

मुलाज़मत का सफ़र और उम्रा?

सवालः हम लोग मुलाज़मत के सिलसिले में सऊदी अरब जद्दा में आए और फिर एक हज़ार मील दूर काम के लिए चले गए। तो क्या पहले हमें उम्रा करना चाहिए था या बाद में?

जवाबः चूंकि आपका ये सफ़र उम्रा के लिए नहीं था, बल्कि मुलाज़मत के लिए था। इसलिए आप जब भी चाहें उम्रा कर सकते हैं। पहले उम्रा करना आपके लिए ज़रूरी नहीं था। ख़ुसूसन जब कि उस वक़्त आप को मक्का मुकर्रमा जाने की इजाज़त मिलना भी दुश्वार था।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–51)

उम्रा का सवाब मरहूमीन को किस तरह किया जाए?

सवालः मैं उम्रा अपनी मरहूमा वालिदा की तरफ़ से करना चाहता हूं। उम्रा अपनी तरफ़ से कर के सवाब उनको बख़्श दूं? या उम्रा उनकी तरफ़ से करूँ।

जवाबः दोनों सूरतें सही हैं। आपके लिए आसान ये है कि उम्रा अपनी तरफ़ से कर के सवाब बख़्श दें, और अगर उनकी तरफ़ से उम्रा करना हो तो एहराम बांधते वक़्त ये नीयत करें कि अपनी वालिदा मरहूमा की तरफ़ से उम्रा का एहराम बांधता हूं। या अल्लाह! ये उम्रा मेरे लिए आसान फ़रमा, और मेरी वालिदा मरहूमा की तरफ़ से उसको क़बूल फ़रमा।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–51)

मस्अलाः अगर कोई शख़्स उम्रा करते वक़्त दिल में ये नीयत करे कि इस उम्रा का सवाब मेरे फ़लाँ रिश्तेदार

या दोस्त (ज़िन्दा या मरहूम) को मिले, तो मिल जाता है जिस तरह दूसरे नेक कामों का ईसाले सवाब हो सकता है। उम्रा का भी हो सकता है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–51)

मस्अला: उम्रा ज़िन्दों की तरफ़ से भी किया जा सकता है। जिनकी तरफ़ से किया जाए उन पर हज फ़र्ज़ नहीं हो जाता जब तक वह साहबे इस्तिताअत न हो जाएँ। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–36)

मस्अला: नफ़्ल उम्रा नमाज़ की मानिन्द है एक उम्रा के सवाब में एक से ज़्यादा को शामिल किया जा सकता है, लेकिन अगर चंद लोगों ने आप से उम्रा करने की दरख़्वास्त की हो कि हमारी तरफ़ से उम्रा करना, तब तो हर एक के लिए अलाहिदा अलाहिदा करना होगा।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़हा–226)

शराइते उम्रा

मस्अला: उम्रा की शर्तें वही हैं जो हज की हैं और उम्रा का सिर्फ़ एक रुक्न है और वह "तवाफ़ के चक्करों की बेशतर तादाद है" यानी चार चक्कर। रहा एहराम तो वह रुक्न नहीं है, बल्कि शर्त है और सफ़ा व मरवा के दरमियान सअी करना वाजिब है। और बाल कटवाने या मुंडवाने की भी वही हैसियत है जो सअी की है। यानी सिर्फ़ वाजिब है रुक्न नहीं है।

(किताबुलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ़हा–1123)

मस्अला: उम्रा के सिर्फ़ तीन काम हैं।

(1) एक ये कि मीक़ात से या उससे पहले उम्रा का एहराम बांधे।

(2) दूसरे मक्का मुकर्रमा पहुंच कर बैतुल्लाह शरीफ़ का तवाफ़ करे।

(3) तीसरे सफ़ा व मरवा के दरमियान सअी करे, उसके बाद सर के बाल कटवा कर या मुंडवा कर एहराम ख़त्म कर दे। (अहकामे हज सफ़्हा–27 हज़रत मुफ़्ती शफ़ीअ़ (रह.) व हाकज़ा फी आलमगीरी उर्दू सफ़्हा–39 किताबुलहज)

फ़राइज़ और वाजिबाते उम्रा

मस्अला: उम्रा में दो फ़र्ज़ हैं। एक एहराम, दूसरा तवाफ़ और एहराम के लिए तल्बिया और नीयत दोनों फ़र्ज़ हैं और तवाफ़ के लिए नीयत फ़र्ज़ है। सफ़ा और मरवा के दरमियान सअी करना, सर के बाल मुंडवाना या कतरवाना वाजिब है। (मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–205)

उम्रा का एहराम कहां से बांधा जाए?

सवाल: (1) अगर कोई शख़्स "हज के इरादा से नहीं है" बल्कि सिर्फ़ उम्रा का इरादा रखता है और बावजूद आफ़ाकी होने के हुदूदे हरम से बाहर मसलन जद्दा में एहराम बांध सकता है या नहीं?

(2) नीज़ जद्दा में एक दो रोज़ क़याम करने के बाद उम्रा का इरादा हो तो उस पर "अह्ले हिल्ल" का इत्तलाक़ होगा या नहीं?

जवाब: (1) जो शख़्स बैरूने "हिल्ल" से मक्का मुकर्रमा जाने का इरादा रखता हो, उसको मीक़ात से बग़ैर एहराम के गुज़रना जाइज़ नहीं, बल्कि हज या उम्रा का एहराम बांधना उस पर लाज़िम है। अगर बग़ैर एहराम के गुज़र गया तो मीक़ात की तरफ़ वापस लौट कर मीक़ात से एहराम बांधना ज़रूरी है। अगर वापस न लौटा तो दम

लाज़िम होगा।

(2) जो शख़्स मक्का मुकर्रमा के क़स्द से घर से चला है उसका जद्दा में एक दो रोज़ ठहरना लाइक़े एतेबार नहीं और वह उसकी वजह से "अह्ले हिल्ल" में शुमार नहीं होगा। हाँ अगर किसी का इरादा जद्दा जाने का ही था, वहां पहुंच कर मक्का मुकर्रमा जाने का क़स्द हुआ तो उस पर "अह्ले हिल्ल" का इतलाक़ होगा। इस मस्अले को समझने के लिए चंद इस्तिलाहात ज़ेहन में रखें।

❑ **मीक़ातः** मक्का मुकर्रमा के अतराफ़ में चंद जगहें मुक़र्रर हैं। बाहर से मक्का मुकर्रमा जाने वाले शख़्स को उन जगहों से एहराम बांधना लाज़िम है। बग़ैर एहराम के उन से आगे बढ़ना ममनूअ है।

❑ **आफ़ाक़ीः** जो शख़्स मीक़ात से बाहर रहता हो।

❑ **हरमः** मक्का मुकर्रमा के हुदूद जहां शिकार करना, दरख़्त काटना वग़ैरा ममनूअ है।

❑ **हिल्लः** हरम से बाहर और मीक़ात के अन्दर का हिस्सा "हिल्ल" कहलाता है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–92 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़हा–218)

मस्अलाः जो लोग मीक़ात के अन्दर रहते हैं वह उम्रा या हज का एहराम हरम के बाहर जहां से चाहें बांध सकते हैं "हिल्ल" की कुल ज़मीन उनके हक़ में मीक़ात है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़हा–223)

ताइफ़ से बग़ैर एहराम के उम्रा करना?

सवालः जो हज़रात सऊदी अरब में जद्दा और ताइफ़ में मुलाज़िम हैं अगर वह उम्रा की नीयत से ख़ानए कअ्बा जाते हैं तो मीक़ात से एहराम बांधना पड़ता है। यहां पर

मुक़ीम हज़रात बग़ैर एहराम के तवाफ़ करने चले जाते हैं। क्या हुक्म है?

जवाबः आपका सवाल बहुत अहम है। इस लिससिले में चंद मस्अला अच्छी तरह ज़ेहन नशीन कर लें।

(1) मक्का शरीफ़ के चारों तरफ़ का कुछ इलाक़ा "हरम" कहलाता है। जहां शिकार करना और दरख़्त काटना ममूनअ़ है। "हरम" से आगे कम व बेश फ़ासिले पर कुछ जगहें मुक़र्रर हैं जिनको "मीक़ात" कहा जाता है और जहां हाजी लोग एहराम बांधते हैं।

(2) जो लोग "हरम" के इलाक़ा में रहते हैं या मीक़ात से अन्दर रहते हैं, वह तो जब चाहें मक्का मुकर्रमा में एहराम के बग़ैर जा सकते हैं। लेकिन जो शख़्स मीक़ात के बाहर से जाए, उसके लिए मीक़ात पर हज या उम्रा का एहराम बांधना लाज़िम है। गोया ऐसे शख़्स पर हज या उम्रा लाज़िम हो जाता है। ख़्वाह उस शख़्स का मक्का मुकर्रमा जाना हज व उम्रा की नीयत से न हो, बल्कि महज़ किसी ज़रूरी काम से मक्का मुकर्रमा जाना चाहता हो या सिर्फ़ हरम शरीफ़ में नमाज़े जुमा पढ़ने या सिर्फ़ तवाफ़ करने के लिए जाना चाहता हो।

अलग़रज़ ख़्वाह किसी मक़सद के लिए भी मक्का मुकर्रमा में जाए वह मीक़ात से एहराम के बग़ैर नहीं जा सकता।

(3) अगर कोई शख़्स मीक़ात से एहराम के बग़ैर गुज़र गया तो उस पर लाज़िम है कि मक्का शरीफ़ में दाख़िल होने से पहले पहले मीक़ात पर वापस लौटे और वहां से एहराम बांध कर जाए।

(4) अगर वह वापस नहीं लौटा तो उसके ज़िम्मा "दम" वाजिब होगा।

(5) जो शख़्स मीक़ात से बग़ैर एहराम मक्का मुकर्रमा चला जाए, उस पर हज या उम्रा लाज़िम है, अगर कई बार बग़ैर एहराम के मीक़ात से गुज़र गया तो हर बार एक हज या उम्रा वाजिब होगा।

इन मसाइल से मालूम हुआ कि जो लोग मीक़ात से बाहर रहते हैं वह सिर्फ़ तवाफ़ करने के लिए मक्का मुकर्रमा नहीं जा सकते बल्कि उनके लिए ज़रूरी है कि वह मीक़ात से उम्रा का एहराम बांध कर जाया करें। और ये भी मालूम हुआ कि वह जितनी बार बग़ैर एहराम के जा चुके हैं उन पर उतने दम और उतने ही उम्रे वाजिब होंगे।

(6) जद्दा मीक़ात से बाहर नहीं। लिहाज़ा जद्दा से बग़ैर एहराम के मक्का मुकर्रमा आना सही है। जबकि ताइफ़ मीक़ात से बाहर है लिहाज़ा वहां से बग़ैर एहराम के आना सही नहीं है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–95 व हाकज़ा फी अहसनिल फ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–517 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–110)

एक एहराम से कितने उम्रे किए जा सकते हैं?

सवालः मैं पाँच उम्रे अदा करना चाहता हूं। उन उम्रों के लिए हुदूदे हरम के बाहर तनओम या जअराना जा कर उम्रा का एहराम बांधा जाएगा। क्या पाँच मरतबा यानी हर उम्रा के लिए अलाहिदा अलाहिदा या एक मरतबा एहराम बांध कर एक दिन में एक मरतबा उम्रा

किया जाए या उसी एहराम में एक दिन में दो या तीन मरतबा उम्रा किया जा सकता है।

जवाबः हर उम्रा का अलग एहराम बांधा जाता है। एहराम बांध कर तवाफ़, सअ़ी कर के बाल कटवा कर एहराम खोल देते हैं और फिर तनअ़ीम या जाअ़राना जा कर दोबारा एहराम बांधते हैं। एक एहराम के साथ एक से ज़्यादा उम्रे नहीं हो सकते और उम्रा (यानी तवाफ़ व सअ़ी) करने के बाद जब तक (हल्क़ या क़स्र के ज़रीआ) बाल कटवा कर एहराम न खोला जाए दूसरे उम्रे का एहराम बांधना भी जाइज़ नहीं है।

मस्अलाः जो शख़्स उम्रा अदा करने के बाद मदीना तैयबा चला जाए और अस्र व मग़रिब की नमाज़ें पढ़ने के बाद मीक़ात से गुज़र कर जद्दा वापस आ जाए और रात गुज़ार कर सुब्ह फिर मक्का मुकर्रमा उम्रा करने के लिए रवाना हो और मक्का के क़रीब मीक़ात से एहराम बांध कर उम्रा करे, तो अगर उस शख़्स का मीक़ात से गुज़रते वक़्त मक्का मुकर्रमा जाने का क़स्द था तो मीक़ात पर उसके लिए एहराम बांधना ज़रूरी था और उसके कफ़्फ़ारा के तौर पर दम वाजिब है। और अगर उस वक़्त जद्दा आने ही का इरादा था, यहां आ के उम्रा का इरादा हुआ तो दम लाज़िम नहीं है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–95 व हाकज़ा फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–290)

उम्रा करने का तरीक़ा

उम्रा हज्जे असग़र है यानी छोटा हज, जो हर ज़माना में हो सकता है, अलावा अैयामे हज के, उसके लिए महीना

तारीख़ और दिन मुक़र्रर नहीं है और जिस वक़्त जी चाहे मीक़ात या हिल्ल से एहराम बांधे और एहराम के मुहर्रमात व मकरूहात से बचे और मक्का मुकर्रमा में उन्ही आदाब को मलहूज़ रख कर मस्जिदे हराम में बाबुस्सलाम या बाबुलउम्रा से (या जिस गेट से भी मौक़ा हो) दाख़िल हो और "इज़तिबाअ़" यानी एहराम की चादर को दाहिनी बग़ल के नीचे से निकाल कर दाएँ कंधे पर डाल कर तवाफ़ करे। और जब पहली बार काली पट्टी पर खड़े हो कर हजरे अस्वद का इस्तिलाम यानी उसकी तरफ़ हाथ से इशारा करे तो जो तल्बिया एहराम बांधने के वक़्त शुरू किया था वह बंद कर दे, नीज़ तवाफ़ में "रमल" यानी तवाफ़ के पहले तीन चक्करों में अकड़ कर शाना हिलाते हुए क़रीब क़रीब क़दम रख कर ज़रा तेज़ी से चलना (सिर्फ़ मर्दों के लिए है) अगर भीड़ न हो और चलने में कोई दुश्वारी भी न हो तो, वरना जैसे मौक़ा हो तवाफ़ करे और तवाफ़ के बाद दोगाना तवाफ़े नफ़्ल पढ़ कर हजरे अस्वद की तरफ़ हाथ से पहले की तरह इशारा कर के बाबुस्सफ़ा से निकल कर हज की तरह सई करे और सई ख़त्म कर के मरवा (या दुकान या क़यामगाह) पर बाल मुंडवा कर या कटवा कर हलाल हो जाए, यानी आम कपड़े पहने ले, एहराम की पाबंदियाँ ख़त्म हो गईं और सई के बाद दो रकअ़त नफ़्ल पढ़ना मुस्तहब है। बस उम्रा हो गया।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–204)

नोट: तवाफ़ के बाद दो रकअ़त नफ़्ल पढ़ना वाजिब और सई के बाद मुस्तहब है।

उम्रा से फ़ारिग़ हो कर हल्क़ से पहले कपड़े पहनना?

सवालः मैंने आख़िरी दिन जब उम्रा किया तो फ़लाइट की जल्दी में था, उसी जल्दी में उम्रा से फ़ारिग़ हो कर पहले हल्क़ कराने के बजाए पहले एहराम खोल कर कपड़े पहन कर बाल कटवाए। क्या हुक्म है?

जवाबः इस ग़लती की वजह से आप के ज़िम्मा दम लाज़िम नहीं आया, बल्कि सदक़ए फ़ित्र की मिक़्दार सदक़ा आप पर लाज़िम है और ये सदक़ा आप किसी भी जगह दे सकते हैं। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–103)

मस्अलाः हज व उम्रा दोनों ही में बाल मुंडवाना अफ़ज़ल है, लेकिन अगर उम्रा, आमाले हज शुरू होने के कुछ ही क़ब्ल करे तो अफ़ज़ल बाल कटवाना है। ताकि हज में बाल मुंडवा सके, इसलिए कि हज उम्रा से बेहतर है तो बेहतर काम बेहतर वक़्त में करना चाहिए। और अगर उम्रा अैयामे हज से बहुत पहले करे तो ऐसी सूरत में सर मुंडवा ले, ताकि फ़ज़ीलत को पा सके, क्योंकि आंहज़रत (स.अ.व.) ने बाल मुंडवाने वाले के लिए तीन मरतबा मग़फ़िरत व रहमत की दुआ फ़रमाई, जबकि बाल कटवाने वालों के लिए सिर्फ़ एक बार, इसलिए बाल मुंडवाना ही अफ़ज़ल है।

(हज्जे बैतुल्लाह के अहम फ़तावा सफ़्हा–59)

उम्रा में तवाफ़े वदाअ़ का क्या हुक्म है?

सवालः उम्रा में तवाफ़े वदाअ क्या वाजिब है?

जवाबः उम्रा में तवाफ़े वदाआ वाजिब नहीं है, अलबत्ता अफ़ज़ल है। इसलिए अगर कोई शख़्स बग़ैर तवाफ़े वदाअ़ किए रुख़सत हो जाए तो कोई हरज नहीं है। लेकिन

हज में तवाफ़े वदाअ़ वाजिब है, जैसा कि आंहज़रत (स.अ.व.) ने फ़रमाया– "तुम में से कोई शख़्स उस वक़्त तक रवाना न हो जब तक ख़ानए कअ़बा का तवाफ़ न कर ले।" इसके मुख़ातब हुज्जाज थे।

(हज्जे बैतुल्लाह के अहम फ़तावा सफ़्हा–56 व हाकज़ा फ़ी आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–109)

मस्अला: उम्रा का तवाफ़ पूरा या अक्सर या कम अगरचे एक ही चक्कर हो, अगर जनाबत (नापाकी) या हैज़ या निफ़ास की हालत में या बेवुज़ू किया तो दम वाजिब होगा। और अगर तवाफ़ का इआदा कर लिया तो दम साकित हो जाएगा।

मस्अला: उम्रा के किसी वाजिब के तर्क करने से बुदना यानी पूरा ऊँट, पूरी गाय या सदक़ा वाजिब नहीं होता, बल्कि सिर्फ़ दम यानी एक बकरी या सातवाँ हिस्सा गाय का या ऊँट का वाजिब होता है, लेकिन उम्रा के एहराम में ममनूआते एहराम के इरतिकाब से मिस्ल एहरामे हज के दम या सदक़ा वाजिब होता है।

(अहकामे हज सफ़्हा–106)

उम्रा में वक़ूफ़े अरफ़ा न होने की वजह?

सवाल: हज के बुनियादी अरकान दो हैं: वक़ूफ़े अरफ़ा, तवाफ़े ज़ियारत और उसके बाद सअ़ी करना और उम्रा हज्जे असग़र है, फिर उसमें सिर्फ़ एक रुक्न तवाफ़ मअ़ सअ़ी क्यों है? इसमें वक़ूफ़े अरफ़ा क्यों नहीं?

जवाब: उम्रा में वक़ूफ़े अरफ़ा इस वजह से मशरूअ़ नहीं किया गया कि उम्रा करने का कोई वक़्त मुतअ़य्यन नहीं। अैयामे हज के अलावा पूरे साल उम्रा किया जा

सकता है। इसलिए मैदाने अरफ़ात में इजतिमाई तौर पर जमा होने की कोई सूरत नहीं और इन्फ़िरादी वकूफ़ में कुछ फ़ाएदा नहीं।

और अगर ये कहा जाए कि हज की तरह उम्रा के लिए भी वक़्त मुक़र्रर किया जाए, तो इसमें क्या हरज है? तो उसका जवाब ये है कि फिर वह उम्रा कहां रहेगा। वह तो हज हो जाएगा। और साल में दो मरतबा लोगों को हज की दावत देने में जो ज़हमत है वह किसी से मख़्फ़ी नहीं है और अस्ल बात ये है कि उम्रा में मक़सूद बिज़्ज़ात, बैतुल्लाह की ताज़ीम और अल्लाह तआ़ला की नेमतों का शुक्र बजा लाना है और ये मक़सद सिर्फ़ तवाफ़ से पूरा हो जाता है इसके लिए मैदाने अरफ़ात में जमा होने की ज़रूरत नहीं है।

(रहमतुल्लाहिलवासिआ़ जिल्द–4 सफ़्हा–212)

हज्जे बदल का जवाज़

मस्अला: इबादात की तीन क़िस्में हैं: महज़ बदनी इबादत, जैसे नमाज़ और रोज़ा इन दोनों की गरज़ अल्लाह तआ़ला की ख़ुशनूदी के लिए नफ़्स का आजिज़ी व फ़रोतनी में डालना है। इस इबादत में माल का दख़ल नहीं है।

महज़ माली इबादत, जैसे ज़कात व सदक़ा से ग़रज़ ख़ैरात लेने वालों की माली इमदाद है। दोनों (माली व बदनी) की मुरक्कब इबादत हज है कि उसमें तवाफ़ और सअ़ी वग़ैरा (मनासिके हज) की बजा आवरी में जहां ख़ुशूअ़ व ख़ुज़ूअ़ है वहां अल्लाह की राह में माल भी ख़र्च किया जाता है।

पहली क़िस्म की इबादत में (अपने बजाए किसी दूसरे

की इबादत के लिए) नाइब बनाने की गुंजाइश नहीं है। चुनांचे किसी शख़्स के लिए जाइज़ नहीं है कि अपने बजाए किसी और को नजाम रोज़ा अदा करने के लिए नाइब बना दे। ऐसा करने से कुछ फ़ाएदा हासिल न होगा।

दूसरी क़िस्म की इबादत में नाइब बनाने की गुंजाइश है, लिहाज़ा माल के मालिक को जाइज़ है कि वह माल की ज़कात अपनी तरफ़ से निकालने या सदक़ा देने के लिए किसी को अपना नाइब बन दे।

तीसरी क़िस्म की इबादत हज ऐसी इबादत है जिसमें नियाबत की गुंजाइश है, लिहाज़ा अगर कोई हज करने से शरअ़न आ़जिज़ हो तो वाजिब है कि हज के लिए अपना नाइब बनाए, जो उसके बदला में हज करे।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1164 व हाकज़ा मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज जिल्द–1 सफ़्हा–281)

मस्अला: हज्जे बदल सही है और जो साहब ये कहते हैं कि कुरआन करीम में चूंकि हज्जे बदल का हुक्म नहीं है, इसलिए हज्जे बदल कोई चीज़ नहीं है। उनकी बात लग्व और बेकार है। हज्जे बदल पर सही अहादीस मौजूद हैं और उलमाए उम्मत का उसके सही होने पर इजमाअ़ है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–48)

हज्जे बदल के सही होने की शर्तें?

मस्अला: हज्जे बदल के सही होने की चंद शर्तें हैं।

(1) उजरत की शर्त न हो।

(2) भेजने वाले के माल ही से हज किया जाए लेकिन अगर ज़्यादा तर ख़र्च मैयत के (या आजिज़ और हर उस

शख़्स के) माल से (जिसकी तरफ़ से हज्जे बदल किया जा रहा है) हो और कुछ थोड़ा बहुत जाने वाले का ख़र्च हो तो भी जाइज़ है।

(3) अगर हज्जे बदल वाला मैयत की रक़म को अपनी रक़म से अलाहिदा रखे तब तो अमानत है, अगर बावजूद एहतियात के ज़ाए हो जाए तो ज़ामिन न होगा। और अगर अपनी रक़म के साथ मिला देगा तो ज़ामिन होगा।

(4) अगर मैयत के सुलुसे माल में उस्अ़त हो तो हज सवार हो कर करना चाहिए। अगर पूरा सफ़रे हज पैदल करेगा और किराया की रक़म अपने लिए बचाएगा तो ज़मान देना वाजिब होगा अगरचे भेजने वाले ने पैदल हज करने की इजाज़त भी दे दी हो और सवार होना मक्का मुकर्रमा से अरफ़ात तक और वहां से मक्का की वापसी तक वाजिब है, बाक़ी सफ़र में अगर भेजने वाले की इजाज़त से पैदल चले तो जाइज़ है।

(5) हज मैयत के वतन से कराना चाहिए।

(6) एहराम के वक़्त हज की नीयत मैयत की तरफ़ से करना चाहिए, यानी ज़बान से यूं कहे कि मैं फ़लां शख़्स की तरफ़ से हज की नीयत करता हूं। और अगर नाम भूल जाए तो ये कहे कि जिस शख़्स की तरफ़ से मुझ को हज के लिए भेजा गया है मैं उसकी तरफ़ से हज की नीयत करता हूं।

(7) एहराम मीक़ात से बांधना चाहिए। बग़ैर इजाज़त भेजने वाले के उम्रा का एहराम मीक़ात से न बांधे न तमत्तोअ़ करे, हां अगर वह इजाज़त दे दे और यूं कह दे कि जिस तरह चाहो हज अदा कर देना तो तमत्तोअ़ भी

जाइज़ है।

(8) हज्जे बदल वाले को जो रुपया दिया जाए उसमें बहुत ज़्यादा एहतियात लाज़िम है, वरना हुकूलइबाद का मुवाख़ज़ा सर पर होगा। सफ़र के बाद जो कुछ रक़म और सामान रक़म से ख़रीदा हुआ बाक़ी बचे वह सब वापस कर दे और बेहतर ये है कि भेजने वाला पहले ही कह दे कि अगर ख़र्च में कोई बेउनवानी इत्तिफ़ाक़न हो जाए तो मेरी तरफ़ से मआ़फ़ है।

(इमदादुल अहकाम जिल्द–2 सफ़्हा–187 व हाकज़ा फ़ी मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज जिल्द–1 सफ़्हा–281)

हज्जे बदल कहां से कराया जाए?

सवालः हज्जे बदल कहां से कराना चाहिए, अगर किसी मक्की से हज्जे बदल करा लिया तो जाइज़ है या नहीं?

जवाबः अगर ज़िन्दा माज़ूर की इजाज़त या मुर्दा की वसीयत से हज्जे बदल किया जा रहा हो तो वसीयत करने वाले या आमिर (ज़िन्दा माज़ूर) के वतन से हज करना ज़रूरी है, अगर सुलुसे माल नाकाफ़ी हो और वुरसा ज़्यादा की इजाज़त न दें तो जहां से भी सुलुसे माल से हज हो सके हज्जे बदल करा दे, अगर वसीयत करने वाले या आमिर ने ख़ुद कोई जगह या कुछ माल मुतअय्यन कर दिया हो तो वहीं से किया जाए। अगरचे मक्का मुकर्रमा से ही हो, मगर साहबे इस्तिताअ़त के लिए ऐसा करना मकरूह है, अगर हज का अम्र या वसीयत नहीं की बल्कि किसी की तरफ़ से तबर्रुअ़न कोई शख़्स हज कराना चाहता है, तो मक्का मुकर्रमा से भी जाइज़ है, अलबत्ता

साहबे इस्तिताअत के लिए मीक़ात से हज कराना अफ़ज़ल है और मक्का मुकर्रमा से हज कराने की सूरत में इस का ख़ास एहतिमाम किया जाए कि हज करने वाला मुत्तक़ी, दीनदार और क़ाबिले एतेमाद हो, क्योंकि बाज़ लोग मुतअद्दद हज़रात की तरफ़ से हज्जे बदल कर लेते हैं। जिससे किसी का भी हज न होगा। नीज़ हज्जे बदल में इजारा की सूरत न होने पाए।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–520 व हाकज़ा फ़ी निज़ामुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–151 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–228 व अहकामे हज सफ़्हा–120)

हज्जे बदल किस की तरफ़ से कराया जाए?

मस्अला: जिस शख़्स पर हज फ़र्ज़ हो गया और उसने ज़माना हज का पाया मगर किसी वजह से हज नहीं कर सका फिर कोई उज़्र ऐसा पेश आ गया जिसकी वजह से ख़ुद हज करने पर क़ुदरत नहीं रही मसलन ऐसा बीमार हो गया जिससे शिफ़ा की उम्मीद नहीं, या नाबीना हो गया या अपाहिज हो गया या बूढ़ापे की वजह से ऐसा कमज़ोर हो गया कि ख़ुद सफ़र करने पर क़ुदरत नहीं रही तो उसके ज़िम्मा फ़र्ज़ है कि अपनी तरफ़ से किसी दूसरे को भेज कर हज्जे बदल करा दे या वसीयत कर दे कि मेरे मरने के बाद मेरी तरफ़ से मेरे माल से हज्जे बदल करा दिया जाए।

अपना फ़र्ज़े हज बतौर बदल कराने में ये तफ़सील है कि जिस उज़्र की वजह से हज ख़ुद नहीं कर सका अगर हज्जे बदल कर देने के बाद ये उज़्र जाता रहा तो अब ख़ुद हज अदा करना उस पर फ़र्ज़ है, पहला हज

जो बतौर बदल कराया था वह नफ़्ली हो गया।

(अहकामे हज सफ़्हा–118)

मस्अला: अगर हज्जे बदल कराने वाले ने हज्जे बदल करने वाले को इस क़िस्म की इजाज़त दे दी हो कि चाहे तुम हज्जे बदल पर चले जाओ, चाहे तुम किसी को अपनी जगह भेज दो तो वह शख़्स दूसरे को भेज सकता है। और अगर ये इजाज़त नहीं थी, तो वह रक़म लेने वाले को खुद जाना ज़रूरी है, खुद जाए या रक़म वापस कर दे। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–322)

मस्अला: जिस शख़्स पर हज फ़र्ज़ हुआ था और उसने हज की अदाएगी के लिए वसीयत भी की थी तो उसका हज्जे बदल उसके वतन से होना चाहिए। सऊदी अरब से जाइज़ नहीं है, अलबत्ता बग़ैर वसीयत के या बग़ैर फ़रज़ीयत के कोई भी शख़्स अपने अज़ीज़ की तरफ़ से हज्जे बदल करता है तो वह हज नफ़्ल बराये ईसाले सवाब है वह हर जगह से हो सकता है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–68)

नबी करीम (स.अ.व.) की तरफ़ से हज करना

सवाल: क्या नफ़्ल हज का सवाब नबीये अकरम (स.अ.व.) को पहुंचाया जा सकता है?

जवाब: नफ़्ल हज का सवाब जनाब नबी करीम (स.अ.व.) की ख़िदमते आलिया में पेश करना बिला शुब्हा जाइज़ बल्कि इंतिहाई क़ाबिल सआदत है इसमें पैग़म्बर अलैहिस्सलाम के अज़ीम एहसानात की शुक्रगुज़ारी और अक़ीदत के माना पाये जाते हैं। अल्लामा शामी ने रद्दुलमुह्तार में अल्लामा इब्ने हजर मक्की (रह.) के हवाले से लिखा है

कि सैयदना हज़रत अब्दुल्लाह इब्न उमर (रज़ि.) आंहज़रत (स.अ.व.) की वफ़ात के बाद आपकी तरफ़ से उम्रा फ़रमाया करते थे। और अल्लामा इब्नुलमुवफ़्फ़क़ ने नबी करीम (स.अ.व.) की तरफ़ से सत्तर हज अदा फ़रमाए।

(शामी तबअ़ बैरूत जिल्द–3 सफ़हा–143)

जो हज़रात बार बार नफ़्ल हज करते रहते हैं उनको चाहिए कि मुहसिने आज़म (स.अ.व.) की तरफ़ से भी नफ़्ल हज किया करें।

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

माज़ूर बाप की तरफ़ से जद्दा में मुक़ीम बेटे का हज करना?

सवाल: मेरी उम्र सत्तासी साल की है मैं चलने फिरने के क़ाबिल नहीं हूं, मेरा बेटा कई साल से जद्दा में मुलाज़िम है क्या वह मेरी तरफ़ से हज्जे बदल कर सकता है या अपना हज किया हुआ मुझ को बख़्श सकता है?

जवाब: अगर आपके ज़िम्मा हज फ़र्ज़ है तो हज्जे बदल के लिए किसी को अपने वतन से भेजना ज़रूरी है। ख़्वाह आपका बेटा जाए या कोई और। अगर आप पर हज फ़र्ज़ नहीं तो आपका बेटा जद्दा से भी आपकी तरफ़ से हज्जे बदल कर सकता है और वह अपना एक हज आप को बख़्श दे तब भी आपको उसका सवाब मिल जाएगा।

लेकिन अगर आप पर हज फ़र्ज़ है फिर अदा शुदा हज के सवाब बख़्शने से वह फ़र्ज़ पूरा नहीं होगा। इसी तरह वह बेटा जो आपके वतन से जद्दा जा रहा है, अगर वह आपके ख़र्चा से यहां से (आपके वतन से) एहराम बांध कर आपकी तरफ़ से हज की नीयत कर के हज के

महीनों में जाए और हज अदा कर ले तो आपका हज्जे बदल उज़्र की वजह से अदा हो जाएगा।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–74)

मजबूरी की वजह से हज्जे बदल?

सवालः मैं दिल का मरीज़ हूं तकलीफ़ नाक़ाबिले बरदाश्त हो गई है, तो क्या मैं अपने अज़ीज़ को हज्जे बदल के लिए भेज सकता हूं? और हज पर जाने से पहले के जो वाजिबात हैं वह मैं अदा करूँ यानी मआफ़ी वग़ैरा?

जवाबः अगर आप खुद जाने के क़ाबिल नहीं माज़ूर हैं तो किसी को हज्जे बदल के लिए भेज सकते हैं। आपका हज हो जाएगा। कहा सुना मआफ़ करना ही चाहिए। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–72)

(और हुक़ूक़ुलइबाद वग़ैरा अदा कर के ही जाना चाहिए।)

मस्अलाः माज़ूर ख़ुसर के हुक्म से दामाद अपने ससुर की जगह हज्जे बदल कर सकता है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–75)

सफ़र की तकलीफ़ के डर से हज्जे बदल कराना?

सवालः एक मालदार शख़्स हज को जाने के क़ाबिल है, महज़ सफ़र की तकलीफ़ के ख़ौफ़ से दूसरे शख़्स को रुपया दे कर हज्जे बदल के लिए भेजना चाहता है। उसका हज अदा होगा या नहीं? और उसका माल सूदी कारोबार का है?

जवाबः उस शख़्स को हज के लिए खुद जाना चाहिए बहालते मौजूदा दूसरे शख़्स को हज्जे बदल के लिए भेजने से उसका हज्जे फ़र्ज़ अदा न हो होगा, और हराम रुपया

से हज न करना चाहिए वह हज मक़बूल न होगा, अगरचे फ़रज़ीयत साक़ित हो जाएगी और ये तरीक़ा इख़्तियार किया जाए कि वह शख़्स क़र्ज़ ले कर हज करे फिर वह क़र्ज़ अदा कर दे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–561)

हज्जे बदल कौन कर सकता है?

मस्अला: हनफ़ी मसलक के मुताबिक़ जिसने अपना हज न किया हो, उसका किसी की तरफ़ से हज्जे बदल करना जाइज़ है मगर मरूह है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–69)

मस्अला: जिसने अपना हज न किया हो, उसको हज्जे बदल पर भेजना मरूहे तंज़ीही है। यानी ख़िलाफ़े औला है ताहम अगर चला जाए तो हज्जे बदल अदा हो जाएगा, लिहाज़ा ऐसे शख़्स को भेजा जाए जो पहले हज कर चुका हो, ख़्वाह वह ग़रीब हो या अमीर। इस मस्अला में ग़रीब व अमीर की बहस नहीं है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–76 व हाकज़ा फ़ी फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–573 व अहकामे हज सफ़्हा–188 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1322)

मस्अला: किसी ख़ातून की तरफ़ से हज्जे बदल कराना हो तो ज़रूरी नहीं है कि कोई ख़ातून ही हज्जे बदल करे, औरत की तरफ़ से मर्द भी हज्जे बदल कर सकता है और मर्द की तरफ़ से औरत भी कर सकती है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–75)

मस्अला: नाबालिग़ हज्जे बदल नहीं कर सकता।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–77)

मस्अला: औरत की तरफ से हज्जे बदल मर्द भी कर सकता है और मुक़ल्लिद की तरफ़ से ग़ैर मुक़ल्लिद भी कर सकता है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़हा–574)

मस्अला: हज्जे बदल करने वाला साहबे शुऊर हो, लिहाज़ा किसी लड़के (बच्चे) का जो सिन्ने शुऊर को न पहुंचा हो हज्जे बदल करना दुरुस्त नहीं है। हां कम अक़्ल इंसान (जो पागल न हो) हज्जे बदल कर सकता है। नीज़ औरत और गुलाम भी हज्जे बदल कर सकते हैं। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़हा–1166)

हज्जे बदल पर जाने वाला क्या नुक़्साने मआश ले सकता है?

सवाल: हज्जे बदल करने वाला हज्जे बदल कराने वाले से अपना नुक़्साने मआश का मुआवज़ा ले तो जाइज़ है या नहीं?

जवाब: मुआवज़ा लेना जाइज़ नहीं है, क्योंकि अगर ये मुआवज़ा नुक़्साने मआश और कारोबार का है तो नुक़्साने कारोबार कोई ऐन मतक़ौवम नहीं (ऐसा नहीं जिसकी क़ीमत लगाई जाए और) जिसका मुआवज़ा लेना जाइज हो और अगर ये मुआवज़ा अपनी मुशक़्क़त व मेहनत का है जो सफ़र में लाहिक होगी तो इस सूरत में इजारा हो गया और हज्जे बदल इजारा के साथ नाजाइज़ है।

बाज़ अक़वाल पर वह हज ही न होगा और राजेह ये है कि इजारा फ़ासिद है, यानी उजरत ले कर हज करने का ये ग़लत तरीक़ा है और हज तो हो जाएगा, अलबत्ता मुआवज़ा के तौर पर न हो, बल्कि भेजने वाला ख़ुशी से इजाज़त दे दे कि मैं तुम को ये रक़म हज के लिए देता हूं और हज के बाद जो रक़म बचे उसके मुतअल्लिक़ तुम

को वकील करता हूं कि फ़ाज़िल रक़म अपने को मेरी तरफ़ से हिबा कर लेना तो इस सूरत में वह फ़ाज़िल रक़म और सामान व कपड़े वगैरा जो हज के बाद बाक़ी रहे वह हज्जे बदल करने वाला अपनी मिलकियत में ला सकता है। इसी तरह अगर किसी शख़्स के ज़िम्मा अह्ल व अयाल का नफ़क़ा (ज़रूर ख़र्चा) वाजिब है और दूसरा शख़्स उसको हज्जे बदल में भेजना चाहता है और ये साहबे अह्ल व अयाल, यूं कहे कि मुद्दते हज के लिए मैं नफ़क़ए अयाल इस वक़्त नहीं दे सकता तुम अगर मुझ को भेजना चाहते हो तो मेरे अह्ल व अयाल का ख़र्चा भी इस क़दर अदा कर दो।

और ये गुफ़्तगू बतौर मुआवज़ा और मआमला के न हो बल्कि दोस्ताना तौर पर हो और उसके बाद भेजने वाला ख़ुशी से उसके अह्ल व अयाल का ख़र्चा भी अदा कर दे तो जाइज़ है। बतर्शेकि हज्जे बदल कराने वाला खुद ज़िन्दा हो। और अगर वह वसीयत कर के मर गया है तो उसके हज्जे बदल में ख़र्चा सफ़रे हज मुतआरफ़ा से ज़्यादा देने का इख़्तियार वुरसा बलिग़ीन को है, नाबालिगों के हिस्सा में से जाइज़ नहीं। अगर वुरसा नाबालिग़ हों तो ज़रूरत के मुताबिक़ हज के लिए मैयत के तिहाई माल में से दिया जाए और तबर्रुअन, फ़ाज़िल (ज़्यादा ख़र्च) या ख़र्चा अह्ल व अयाल के लिए बलिग़ीन अपने हिस्सा में से रक़म दें और ख़र्चा अह्ल व अयाल मामूर में ये तफ़सील है कि ज़रूरी ख़र्चा पर भी जाने वाले दस्तयाब हों यानी ऐसे मुजर्रद (तन्हा) लोग भी हज्जे बदल को तैयार हों जिनके साथ अह्ल व अयाल के अलावा कोई

शख़्स मोतबर बा क़ाएदा हज को सही अदा करने वाला न मिलता हो तो इस सूरत में तिहाई माल से भी भेजने वाले के अह्ल व अयाल का ख़र्चा देना जाइज़ है, बल्कि वुरसा पर लाज़िम है जब मरने वाले ने हज की वसीयत की हो और तिहाई माल में उसअत भी हो।

(इमदादुल अहकाम जिल्द–2 सफ़्हा–192)

हज्जे बदल पर जाने वाले को सफ़र ख़र्च कितना दिया जाए?

मस्अला: हज्जे फ़र्ज़ में किसी दूसरे को अपने एवज़ हज के लिए भेजने में ये शर्त है कि ख़ुद किसी तरह हज को न जा सके, बल्कुल माज़ूर हो, उज़्र की सूरत में अगर किसी को अपनी तरफ़ से नियाबतन हज को भेजे तो उसका ख़र्च दे दे, सफ़रे ख़र्च में ये शर्त नहीं कि अमीराना देवे या मुतवस्सित, या बक़द्रे किफ़ायत जिस तरह हज करने वाला राज़ी हो जाए, जिस तरह ख़र्च करे वह माल आमिर से (हज्जे बदल कराने वाले की तरफ़ से) होना चाहिए, अगर आमिर अमीराना ख़र्च दे दे ये भी दुरुस्त है और मुतवस्सित ख़र्च दे या बक़द्रे किफ़ायत और हज्जे बदल पर जाने वाला राज़ी हो तो ये भी जाइज़ है। ग़रज़ ये कि मामूर (जिसको भेजा जा रहा है) जैसे ख़र्च का आदी हो और जिस तरह उसको असाइश हो वह काम करे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–569)

मस्अला: हज्जे बदल के लिए ज़रूरी है कि पूरा ख़र्च सफ़रे हज करने वाले को दिया जाए, हज कराने वाले के मकान से तमाम ख़र्चा मक्का मुकर्रमा वग़ैरा तक जाने का, और वापसी का, हज कराने वाले के माल में से हो

वरना हज्जे बदल फ़र्ज़ अदा न होगा। अलबत्ता नफ़्ल का सवाब हो जाएगा। और अगर हज्जे बदल करने वाले को रुपया दिया गया और उसने हज आमिर की तरफ़ से न किया तो आमिर का हज नहीं हुआ और गुनाह उस पर हुआ जिसने हज न किया और वही मुवाख़ज़ावार होगा।

(फ़तावा दारुउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–567 व हाकज़ा फ़ी अहकामे हज सफ़्हा–119)

हज्जे बदल पर जाने वाले के पास रक़म कम या ज़ाएद हो तो?

मस्अलाः हज्जे बदल करने वाले को उस रुपये में से जो उसको सफ़रे हज के लिए मिला, सफ़र के ख़र्च से ज़ाएद रखना उस सूरत में दुरुस्त है कि रुपये देने वाले ने उसको वकील बिलहिबा बना दिया, यानी ये इजाज़त और इख़्तियार दे दिया कि ज़ाएद रकम तुम ख़ुद रख लेना। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–573)

मस्अलाः हज्जे बदल के मस्अला में जब हज्जे बदल करने वाले के पास ख़र्च न रहे वह अपने पास से या किसी से कर्ज़ लेकर चला आए तो ये देखना चाहिए कि सफ़रे हज में ज़्यादा ख़र्च भेजने वाले के माल से हुआ है या हज्जे बदल करने वाले की रक़म से, सूरते अव्वल में तो हज्जे बदल सही हो गया। और दूसरी सूरत में हज्जे बदल सही नहीं हुआ, बल्कि वह हज ख़ुद करने वाले की तरफ़ से हो गया। ये उस सूरत में है जब कि भेजने वाले ने उसको अपने पास से या कर्ज़ कर के ख़र्च करने की इजाज़त न दी हो। और अगर इजाज़त दे दी हो कि ख़र्च कम हो जाए तो तुम अपने पास से या कर्ज़ ले कर

खर्च कर लेना, तो हम तुम को दे देंगे फिर हर हाल में हज दुरुस्त है। ख़्वाह भेजने वाले की दी हुई रक़म कम हो या ज़्यादा। (इमदादुल अहकाम जिल्द–2 सफ़्हा–188 व हाकज़ा फ़ी फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–577 व अहकामे हज सफ़्हा–120 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–1 सफ़्हा–334)

मस्अला: हज करने की कोई उजरत मुक़र्रर न की जाए। हज कराने वाले पर आम इख़राजात अदा करने की ज़िम्मादारी आएद होती है। हज के इख़राजात के लिए जो रक़म दी गई है, अगर उसमें कुछ बच जाए तो हज्जे बदल करने वाले को चाहिए कि बाक़ी बची हुई रक़म हज कराने वाले को वापस कर दे, हां सवाब के ख़्याल से हज कराने वाला या वारिस वह रक़म छोड़ दें तो और बात है, यानी जाइज़ है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1167)

हज्जे बदल करने वाले से अपनी फ़रज़ियत ख़त्म होती है या नहीं?

सवाल: अगर किसी मालदार मरने वाले की तरफ़ से किसी मुफ़्लिस ग़रीब ने हज्जे बदल अदा किया जिसने अभी हज अदा नहीं किया है तो मरहूम का हज तो अदा हो जाता है, लेकिन मुफ़्लिस हज्जे बदल करने वाले के ज़िम्मे से भी फ़रज़ीयते हज साक़ित हो जाती है या नहीं, अगर ऐसे मुफ़्लिस से उमर भर को फ़रज़ीयत साक़ित नहीं होती तो अपने तमाम काम व आराम व अयाल को छोड़ कर हज्जे बदल पर जाने से क्या फ़ायदा?

जवाब: जिस मुफ़्लिस ने अपना हज नहीं किया है

वह दूसरे की तरफ़ से हज्जे बदल कर सकता है, लेकिन अफ़ज़ल ये है कि ऐसे शख़्स को हज्जे बदल के लिए भेजा जाए जिसने अपना हज्जे फ़र्ज़ अदा कर लिया हो। बाक़ी उस मुफ़्लिस के ज़िम्मा से जिसने अपना हज किए बग़ैर दूसरे का हज्जे फ़र्ज़ बदलन किया है। उम्र भर के लिए फ़र्ज़ उसके ज़िम्मा से साक़ित नहीं हुआ, बल्कि अगर किसी वक़्त उसके पास माल ज़्यादा हो गया जिसमें हज बशराइत हो सके तो उसको अपनी तरफ़ से दोबारा हज करना फ़र्ज़ होगा। क्योंकि हज्जे बदल तो दूसरे का था उसकी तरफ़ से तो था ही नहीं। रहा ये सवाल कि जब उसके ज़िम्मा से हज फ़र्ज़ (अपना) साक़ित नहीं होता तो अपने कारोबार व आराम छोड़ कर सफ़रे हज की सऊबत उठाने में क्या फ़ाएदा है। उसका जवाब ये है कि जो उसको बेफ़ाएदा समझे उसको वाक़ई कुछ फ़ाएदा न होगा वह हरगिज़ न जाए बल्कि ऐसे शख़्स को भेजना चाहिए जो एक बार अपना हज कर के बैतुल्लाह शरीफ़ और बैते रसूलुल्लाह (स.अ.व.) की ज़ियारत से आँखें ठंडी कर चुका हो, वह बतलाएगा कि सफ़र की सऊबत बरदाश्त करने में क्या फ़ाएदा है, ये तो नफ़ा "आजिल" यानी जल्दी मिलने वाला है जिसका इल्म एक बार हज करने वाले का दुनिया ही में हो जाता है और जो सवाब करने के बाद सामने आएग उसका इल्म क़ब्र में [illegible] कर हो जाएगा।

दूसरों की तरफ़ से हज करने का सवाब बाज़ वुजूह से अपने हज के सवाब से भी ज़्यादा हो जाता है।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–2 सफ़्हा--190, 191)

हज्जे बदल करने पर क्या हज फ़र्ज़ हो जाएगा?

मस्अला: हज्जे बदल पर जाने वाले का ये ख़्याल ग़लत है कि अगर मैं हज्जे बदल के लिए जाऊँगा तो आइंदा साल बावजूद अदमे इस्तिताअत के हज के लिए जाना ज़रूरी होगा। (बैतुल्लाह को देखने की वजह से) ये ख़्याल ग़लत है, क्योंकि उसके ऊपर हज जब फ़र्ज़ होगा जब उसके पास मसारिफ़ हों। नीज़ हज्जे बदल पर जाने वाले के घर वालों के वापसी तक के मसारिफ़ भी उस शख़्स के ज़िम्मा ये जो हज्जे बदल के लिए भेज रहा हो और जाने से आने तक मसारिफ़े सफ़र भेजने वाले के ज़िम्मा होंगे।

हज्जे बदल में नीयत किस की करे?

मस्अला: हज्जे बदल में हज कराने वाले की तरफ़ से हज की नीयत करना लाज़िम है, लिहाज़ा हज्जे बदल करने वाले को यूं कहना चाहिए कि फ़लाँ शख़्स की तरफ़ से एहराम बांधता और तल्बिया कहता हूं। और ये नीयत दिल में कर लेना काफ़ी है। अगर नाइब ने यानी हज्जे बदल करने वाले ने हज की नीयत अपनी तरफ़ से की तो नाइब बनाने वाले की तरफ़ से हज अदा न होगा।

(किताबुलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ़्हा–165 व हाकज़ा फ़ी अहकामे हज सफ़्हा–120)

मस्अला: हज्जे बदल में जिसकी तरफ़ से हज्जे बदल किया जाता है उसका नाम लेना कोई ज़रूरी नहीं है, बल्कि दिल में ये नीयत काफ़ी है कि फ़लाँ शख़्स की तरफ़ से एहराम बाँधता हूं। अगर एहराम के वक़्त उसकी तरफ़ से एहराम की नीयत नहीं की और आमाले हज

शुरू कर दिए तो हज्जे बदल सही नहीं होगा। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–17 सफ़्हा–200 मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–102)

एक हज्जे बदल दो की तरफ़ से करना?

मस्अलाः अगर दो अश्ख़ास ने अपने अपने हज (बदल) का नाइब बनाया और हज्जे बदल करने वाले ने दोनों की तरफ़ से एहराम बांधा और हज्जे बदल किया वह हज दुरुस्त न होगा और वह दोनों के इख़राजात की वापसी का ज़िम्मादार होगा।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1166)

मस्अलाः हज्जे बदल करने वाला दीनदार और क़ाबिले एतेमाद हो, क्योंकि बाज़ लोग मुतअ़द्दद हज़रात की तरफ़ से रक़म ले कर हज्जे बदल कर लेते हैं। जिससे किसी का भी हज न होगा।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–520 व हाकज़ा अहकामे हज सफ़्हा–120)

मस्अलाः हज्जे बदल के लिए एहराम एक ही बांधा जाए। अगर एक एहराम हज्जे बदल का और दूसरा हज्जे बदल करने वाले ने अपने हज का बांधा यानी एक साथ दोनों की एक एहराम में नीयत कर ली तो इस तरह दोनों में से किसी का हज न होगा, बजुज़ इसके कि दूसरे एहराम को तोड़ दे यानी दूसरे एहराम की नीयत ख़त्म कर दे। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1166)

मस्अलाः हज्जे बदल में ये ज़रूरी है कि जिसके रुपये से सफ़रे हज किया और जिसका रुपया सर्फ़ किया उसकी तरफ़ से हज करे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–564 बहवाला आलमगीरी मिस्री जिल्द–1 सफ़्हा–240)

मैयत की तरफ़ से हज्जे बदल करवाना?

मस्अलाः जिस शख़्स पर हज फ़र्ज़ हो और उसने इतना माल छोड़ा हो कि उसके तिहाई हिस्सा से हज कराया जा सकता हो और उसने हज्जे बदल कराने की वसीयत की हो तो उसकी तरफ़ से हज्जे बदल कराना उसके वारिसों पर फ़र्ज़ है।

मस्अलाः जिस शख़्स के ज़िम्मा हज फ़र्ज़ था, मगर उसने इतना माल नहीं छोड़ा या उसने हज्जे बदल कराने की वसीयत नहीं की, उसकी तरफ़ से हज्जे बदल कराना वारिसों पर लाज़िम नहीं, लेकिन अगर वारिस उसकी तरफ़ से खुद हज्जे बदल करे या किसी दूसरे को हज्जे बदल के लिए भेज दे तो अल्लाह की रहमत से उम्मीद की जाती है कि मरहूम का हज्जे फ़र्ज़ अदा हो जाएगा। और जिस शख़्स के ज़िम्मा हज फ़र्ज़ नहीं अगर वारिस उसकी तरफ़ से हज्जे बदल करें या करायें तो ये नफ़्ली हज होगा और मरहूम को इंशाअल्लाह उसका सवाब ज़रूर पहुंचेगा। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–69)

मस्अलाः अगर वालिदैन पर हज फ़र्ज़ नहीं था यानी साहबे इस्तिताअत नहीं थे। बेटा साहबे इस्तिताअत है तो वालिदैन के लिए हज व उम्रा कर सकता है, लेकिन ये नफ़्ल हज होगा। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–73 व हाकज़ा फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–215)

मस्अलाः मैयत की तरफ़ से हज्जे बदल कर सकते हैं, अगर उसने वसीयत की थी तो उसके तरका से

उसका हज्जे बदल अदा किया जाएगा। अगर तिहाई माल से मुमकिन न हो तो फिर अगर सब वारिस बालिग़ और हाज़िर हों और कुल माल से हज्जे बदल की इजाज़त दे दें तो कुल माल से भी इस सूरत में भी अदा किया जा सकता है। और अगर उसने वसीयत नहीं की थी तो वुरसा की सवाबेदीद और रज़ा पर है। बईद नहीं कि अल्लाह तआला इस सूरत में भी उसका हज क़बूल फ़रमा कर उसके गुनाहों को मआफ़ फ़रायें। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–70 व हाकज़ा फी फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–295 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–563 व किताबुलफ़िक्हा जिल्द–1 सफ़्हा–1166)

मस्अला: जिस ज़िन्दा या मुर्दा पर हज फ़र्ज़ नहीं, उसकी तरफ़ से हज्जे बदल हो सकता है मगर ये नफ़्ली हज होगा।

मस्अला: अगर माँ बाप नादार हैं और उन पर हज फ़र्ज़ न हो तो औलाद का उनकी तरफ़ से हज्जे बदल करना ज़रूरी नहीं है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–72 व हाकज़ा फी फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–187 व मज़ाहिरे हक़ जदीद जिल्द–3 सफ़्हा–264)

बग़ैर वसीयत के हज्जे बदल कराना?

मस्अला: अगर वालिदैन के ज़िम्मा हज फ़र्ज़ था और उन्होंने हज्जे बदल कराने की वसीयत नहीं की, तो अगर औलाद उनकी तरफ़ से हज करा दे या खुद (अपने वालिद और वालिदा की तरफ़ से) कर ले तो उम्मीद है कि उनका फ़र्ज़ अदा हो जाएगा। और हज के तीनों अक़्साम में से जौन सा भी हज कर ले सही है। (आपके मसाइल

जिल्द–4 सफ़्हा–73 व हाकज़ा फ़ी इमदादिलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–188 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–165 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–235)

मस्अला: अगर मरहूम के ज़िम्मा हज फ़र्ज़ था और कोई शख़्स उसकी तरफ़ से हज्जे बदल कराना चाहता है तो उस मरहूम की तरफ़ से एहराम बांधना लाज़िम होगा, वरना हज्जे फ़र्ज़ अदा नहीं होगा। और अगर मरहूम के ज़िम्मा हज फ़र्ज़ नहीं था तो हज का सवाब बख़्शने से महरूम को हज का सवाब मिल जाएगा।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–156 व हाकज़ा फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–572 व निज़ामुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–142)

माज़ूर की तरफ़ से बग़ैर इजाज़त के हज्जे बदल कराना?

सवाल: आफ़ाक़ी (मीक़ात से बाहर रहने वाला) किसी मरने वाले या माज़ूर शख़्स की तरफ़ से उसकी वसीयत या हुक्म के बग़ैर अज़ ख़ुद अपने ख़र्च से हज्जे बदल करे तो क्या उसके लिए भी उस शख़्स के वतन से जाना ज़रूरी है जिसकी तरफ़ से वह हज्जे बदल कर रहा है?

जवाब: मरने वाले या माज़ूर की तरफ़ से फ़र्ज़ हज अदा करने के लिए उसका हुक्म या इजाज़त ज़रूरी है, बग़ैर हुक्म के किसी अजनबी ने हज किया तो ये हज करने वाले का होगा। वह उसका सवाब जिसको चाहे बख़्श दे, लिहाज़ा उसमें मीक़ात वग़ैरा की क़ैद नहीं। अगर वारिस ने मरने वाले की वसीयत के बग़ैर उसकी तरफ़ से हज किया तो उससे मरने वाले का फ़र्ज़ अदा होने की उम्मीद है, मगर उसमें भी मरने वाले के मीक़ात

से एहराम बांधना ज़रूरी नहीं। जिस मीक़ात से चाहे बांध सकता है। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ्हा–532)

बिला तक़्सीमे तरका हज्जे बदल कराना?

मस्अला: ये जाइज़ नहीं है कि बिला तक़्सीमे तरका हज्जे बदल कराए या सदक़ा व ख़ैरात मरने वाले के लिए बराए ईसाले सवाब करे। अलबत्ता अपने हिस्सा में से या जो बालिग़ वारिस राज़ी हों उनके हिस्सा में से हज्जे बदल करा सकते हैं और सदक़ा व ख़ैरात भी कर सकते हैं, नाबालिग़ों के हिस्सा में नहीं कर सकते, उनका हिस्सा अलाहिदा कर देना चाहिए।

मस्अला: वसीयत सिर्फ़ तिहाई माल में होती है। इसलिए तिहाई माल से हज्जे बदल कराया जाएगा। चाहे वसीयत करने वाले ने तिहाई की क़ैद लगाई हो या न लागई हो। अलबत्ता (सब) वारिस अगर तिहाई से ज़्यादा दें तो उनको इख़्तियार है।

मस्अला: तिहाई तरका हज के मसारिफ़ से ज़्यादा है या हज के बाद कुछ बचता है तो वुरसा को वापस करना वाजिब है उनकी बिला इजाज़त हज करने वाले को रखना जाइज़ नहीं है। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ्हा–290)

हज्जे बदल में ख़र्च के कम होने की वजह से मीक़ात के क़रीब तरीन मक़ाम से हज कराना?

सवाल: हज्जे बदल करने वाला पैसे की कमी की वजह से भेजने वाले के मीक़ात से हज न कर सके तो अपने मीक़ात या दूसरे मीक़ात से एहराम बांध सकता है या नहीं?

जवाब: हज्जे बदल में ये ज़रूरी है कि भेजने वाले

के वतन से सफ़रे हज शुरू किया जाए, लेकिन अगर पैसे की कमी की मजबूरी की वजह से दूसरी जगह से जहां से ख़र्च किफ़ालत करता हो सफ़र शुरू करे ये दुरुस्त है और जिस रास्ता से पहुंच सकता हो, सफ़र करे, जिस मीक़ात से गुज़रे एहराम बांधे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–570 व हाकज़ा किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1167)

मस्अलाः जिस मरहूम ने हज्जे बदल की वसीयत की है उसके तिहाई माल में से हज्जे बदल कराना ज़रूरी है वरना वुरसा गुनहगार होंगे। तिहाई माल हज्जे बदल के लिए नाकाफ़ी हो तो जहां से तिहाई माल में से हज होता हो हज करा दें, मसलन जद्दा से हज करा सकें, इतना ही माल है तो वहां से करा दें, मक्का शरीफ़ से हज करा दें, इतना ही माल है तो वहां से करा दें। अगर बालिग़ वुरसा अपने माल में से बाक़ी रक़म मिला कर मरहूम के वतन से हज करा दें तो बेहतर है लेकिन नाबालिग़ वुरसा की रज़ा मंदी मोतबर नहीं।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–314 बहवाला दुर्रेमुख़्तार मअ़ शामी जिल्द–2 सफ़्हा–339 व मुनतख़ब निज़ामुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–152)

हज ख़रीद कर सवाब पहुंचाना?

मस्अलाः ये तो जाइज़ है कि मक्का मुकर्रमा पहुंच कर किसी शख़्स को ख़र्च दे कर उससे नफ़्ली हज करा कर उसका सवाब मैयत को पहुंचाया जाए, मगर उसके लिए शर्त ये है कि वह शख़्स यानी नफ़्ली हज करने वाला एहराम के बांधने के वक़्त उसी मैयत की तरफ़ से

हज की नीयत करे और उसकी तरफ़ से एहराम बांधे, और ये दुरुस्त नहीं है कि किसी का पहला किया हुआ हज ख़रीद कर उसका सवाब मैयत को पहुंचाया जाए, क्योंकि हज की ख़रीदो फ़रोख़्त नहीं हो सकती।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़हा–563)

मस्अला: अगर किसी ने हज की उजरत मुक़र्रर की कि मैं तुम को हज्जे बदल करने के एवज़ में इतनी रक़म दूंगा तो वह हज ही सिरे से जाइज़ न होगा, न उसका हज होगा और न उजरत पर हज करने वाले का हज होगा और इस क़िस्म का मआमला फ़ुज़ूल होगा यानी बेकार। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़हा–1166)

(हज्जे बदल करने वाला सिर्फ़ मसारिफ़े हज ले और हज की उजरत वापस कर दे तो हज्जे बदल अदा हो जाएगा।)

हज्जे बदल में क़ुर्बानी का हुक्म?

मस्अला: हज्जे बदल करने वाले को हज्जे मुफ़रिद यानी सिर्फ़ हज का एहराम बांधना चाहिए और हज्जे मुफ़रिद में हज की वजह से क़ुर्बानी नहीं होती। इसलिए जिसने हज्जे बदल कराया यानी आमिर की तरफ़ से क़ुर्बानी की ज़रूरत नहीं। जो हज्जे बदल कर रहा है अगर मुक़ीम और साहबे इस्तितअत हो तो अपनी तरफ़ से (वाजिब) क़ुर्बानी करे और मुसाफ़िर ग़ैर मुस्ततीअ़ पर आम क़ुर्बानी वाजिब हीं है। जैसा कि ऊपर लिखा गया है कि हज्जे बदल करने वालों का हज्जे मुफ़रिद यानी सिर्फ़ हज का एहराम बांधना चाहिए। अगर वह तमत्तोअ़ करें (यानी मीक़ात से सिर्फ़ उम्रा का एहराम बांधें और उम्रा

से फ़ारिग़ होने के बाद फिर आठ ज़िलहिज्जा को हज का एहराम बांधें) तो तमत्तोअ़ की कुर्बानी उनके माल से लाज़िम है। हज्जे बदल कराने वाले आमिर के माल से नहीं। इल्ला ये कि आमिर ने उसकी इजाज़त दे दी हो तो उसके माल से कुर्बानी कर सकते हैं।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–78)

मस्अला: हज्जे बदल करने वालों को इफ़राद करना चाहिए (यानी सिर्फ़ हज का एहराम बांधना) और भेजने वाले की इजाजत से तमत्तोअ़ व क़िरान भी कर सकता है, मगर कुर्बानी अपने पास से करनी होगी, अगर भेजने वाला कुर्बानी की क़ीमत अदा कर दे तो जाइज़ है। इस ज़माने में उरफ़न आमिर की तरफ़ से तमत्तोअ़ व क़िरान और कुर्बानी की इजाज़त साबित है। इसलिए सराहतन इजाज़त ज़रूरी नहीं, वैसे सराहतन इजाज़त हासिल कर लेना बेहतर है। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–513)

मस्अला: हज्जे बदल में इफ़राद यानी सिर्फ़ हज का एहराम बांधना होता है, अलबत्ता भेजने वाले की तरफ़ से इजाज़त हो तो क़िरान यानी हज व उम्रा का एहराम एक साथ बांध ले, और तमत्तोअ़ की इजाज़त हो तो उसका एहराम बांध ले।

मेरा मशवरा ये है कि हज्जे बदल में जाने वाला शख़्स भेजने वाले से हर क़िस्म के एहराम की इजाज़त ले ले। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–313 बहवाला शामी जिल्द–2 सफ़्हा–339 व ज़ुब्दा जिल्द–2 सफ़्हा–258)

हज्जे बदल के ज़रूरी मसाइल

मस्अला: हज्जे बदल के सही होने की शर्त ये है कि

हज्जे बदल कराने और हज्जे बदल करने वाला दोनों मुसलमान और आकिल हों।

मस्अला: दीवाने (पागल) का हज सही नहीं है, हां अगर हज वाजिब होने के बाद जुनून लाहिक़ हुआ तो उसे किसी को हज के लिए रवाना करना दुरुस्त है।

मस्अला: किसी की तरफ़ से नफ़्ली हज अदा करने के लिए शर्त ये भी है कि हज्जे बदल करने और कराने वाले मुसलमान, आक़िल और साहबे शुऊर हों और हज की उजरत न ली गई हो।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1167)

मस्अला: अगर कोई शख़्स किसी की तरफ़ से हज्जे बदल करने के लिए गया और वहीं पर क़याम करने के बाद अगला हज कर के वापस आया तो वापसी का ख़र्च तो भेजने वाले के ज़िम्मा होगा, लेकिन क़यामे मक्का मुकर्रमा का ख़र्च ख़ुद दूसारा हज करने वाला अपने पास से करे। (इमदादुल अहकाम जिल्द–2 सफ़्हा–195)

मस्अला: माज़ूर का हज्जे बदल करा देना जाइज़ है अगर ये उज़्र जो उस वक़्त है उम्र भर रहा तो ये हज्जे बदल उम्र भर मोतबर रहेगा। और अगर किसी वक़्त उज़्रे मौजूद ज़ाएल हो गया तो माज़ूर को हज्जे फ़र्ज़ दोबारा ख़ुद अदा करना होगा और पहला हज जो बतौर बदल कराया था वह नफ़्ली हो गया। (अहकामे हज सफ़्हा–1118 व हाकज़ा फ़ी इमदादुलअहकाम जिल्द–2, सफ़्हा–195 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–569)

मस्अला: जो शख़्स तमाम ज़िन्दगी क़ैद में रहे उसकी तरफ़ से हज्जे बदल जाइज़ है, लेकिन क़ैद से रिहाई

मिल जाए तो फरीज़ए हज उसके ज़िम्मा से साक़ित न होगा यानी दोबारा हज्जे फर्ज़ अदा करना होगा।

(किताबुलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ़्हा–569)

मस्अला: जो पैरों से माज़ूर हो गया हो, लेकिन इतनी इस्तिताअ़त है कि अपने साथ अपने ख़र्चा से एक आदमी को हज के लिए ले जा सकता है तो ऐसी माज़ूरी में उस पर ख़ुद हज करना तो फ़र्ज़ नहीं लेकिन हज्जे बदल करा देना ज़रूरी है, लेकिन बाद में अगर तंदुरुस्त हो गया तो दोबारा ख़ुद हज करना पड़ेगा।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–2 सफ़्हा–152 व हाकज़ा फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–299)

मस्अला: जब ऐसी तकलीफ़ हो कि हज के सफ़र से बिल्कुल आजिज़ हो जाए तो हज्जे बदल के लिए किसी को अपनी ज़िन्दगी में भेज देना जाइज़ है, फिर अगर इज्ज़ की ही हालत में इंतिक़ाल हो जाए तो ये हज काफ़ी हो जाएगा। और अगर वह इज्ज़ ज़ाएल हो जाए तो हज उसके ज़िम्मा रहेगा। और अगर हज्जे बदल की वसीयत करने में औलाद पर इत्मीनान नहीं कि वह पूरा कर देंगे तो उसकी ये सूरत हो सकती है कि किसी दूसरे मोतमद को हज्जे बदल के लिए वसीयत कर दे और ख़ुद उसको हज्जे बदल के लिए रुपया (रक़म) सिपुर्द कर दे। (इमदादुल अहकाम जिल्द–2 सफ़्हा–198 व हाकज़ा फ़ी फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–566)

मस्अला: जब मैय्यत के ज़िम्मा हज फ़र्ज़ नहीं था और उनको सवाब पहुंचाना मक़सूद हो तो मदरसा व मकतब में रक़म देने में सवाब ज़्यादा है, हज्जे बदल

कराने से। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–14 सफ़्हा–131)

मस्अला: उसको लाज़िम है कि जब उस पर हज फ़र्ज़ है और वह ख़ुद नहीं कर सकता और उज़्र शरई है तो अपनी तरफ़ से दूसरे शख़्स से हज करा दे, और उस रुपये को दूसरे किसी मसरफ़ में मसलन मस्जिद व मदरसा के मसरफ़ में ख़र्च करना जाइज़ नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–567)

हज्जे बदल करने वाला अगर ख़िलाफ़ वर्ज़ी करे तो?

मस्अला: मामूर यानी हज्जे बदल करने वाले पर लाज़िम है कि आमिर यानी हज्जे बदल कराने वाले की हिदायात के ख़िलाफ़ कोई काम न करे। अगर ख़िलाफ़ किया तो उसका हज्जे बदल अदा नहीं होगा, बल्कि ये हज ख़ुद मामूर की तरफ़ से हो जाएगा और उस पर लाज़िम होगा कि आमिर की जो रक़म उस हज में ख़र्च की है वह उसको वापस करे। नीज़ ख़िलाफ़ करने पर अगरचे ये हज मामूर की तरफ़ से हो जाएगा मगर उससे मामूर का भी हज्जे फ़र्ज़ अदा नहीं होगा, बल्कि ये नफ़्ली हज होगा। अगर बाद में उसके पास इतना माल जमा हो गया जो हज के लिए काफ़ी हो और बाक़ी शराइते हज सही हो गई तो उसको अपना हज्जे फ़र्ज़ फिर अदा करना पड़ेगा। (अहकामे हज सफ़्हा–121)

हज्जे बदल करने वाले से अगर ग़लती हो जाए?

मस्अला: अगर हज्जे बदल करने वाले से कोई काम ऐसा सरज़द हो जाए जो हज को फ़ासिद कर दे और ये काम अरफ़ा में वक़ूफ़ से पहले सरज़द हुआ हो तो इख़राजाते हज की वापसी की ज़िम्मादारी हज्जे बदल

करने वाले पर आइद होगी, लेकिन अगर वकूफ़े अरफ़ा के बाद ऐसा अम्र सरज़द हुआ तो आइद न होगी, क्योंकि हज का रुक्ने आज़म यानी वकूफ़े अरफ़ा अदा हो गया है ताहम तमाम ग़लतियों का कफ़्फ़ारा हज्जे बदल करने वाले के ज़िम्मा है, क्योंकि उसका सबब वह खुद है, अलबत्ता इहसार यानी हज से रोके जाने की कुर्बानी हज कराने वाले पर है। क्योंकि इहसार में यानी एहराम बांधने के बाद हज से रोके जाने पर हज्जे बदल करने वाले को कुछ इख़्तियार न था, बल्कि वह मजबूर था।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1167)

हज्जे बदल करने वाले का रास्ता में इंतिक़ाल हो गया तो?

सवालः एक शख़्स ने हज्जे बदल के वास्ते अपनी तरफ़ से दूसरे शख़्स को भेजा, वह रास्ता में फ़ौत हो गया, मक्का मुकर्रमा न पहुंच सका, ऐसी सूरत में भेजने वाले का हज पूरा हुआ या नहीं?

जवाबः उसका हज नहीं हुआ, अगर उसके ज़िम्मा यानी भेजने वाले के ज़िम्मा हज फ़र्ज़ है तो किसी दूसरे शख़्स को भेज कर हज्जे बदल कराना चाहिए, यानी जब कि खुद न जा सकता हो और खुद हज करने से आजिज़ हो। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–576 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–202)

मस्अलाः मैयत की तरफ़ से हज करने वाला अगर वकूफ़े अरफ़ा के बाद मर जाए तो मैयत का हज हो जाएगा। (मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–291)

मस्अलाः अगर हज्जे बदल करने वाला हज अदा करने से क़ब्ल ऐसा बीमार या माज़ूर हो जाए कि अज़ खुद

हज अदा करने की ताक़त व कुदरत नहीं रही तो ऐसी सूरत में अगर हज्जे बदल कराने वाले ने इस तरह इजाज़त दे रखी थी कि मेरी तरफ़ से जिस तरह चाहो हज कर देना। तो उस इजाज़त की सूरत में हज्जे बदल करने वाला चाहे खुद करे या दूसरे से करवाले दोनों दुरुस्त है, इसी तरह वह मरीज़ किसी दूसरे को उसी मक़ाम से हज्जे बदल का अपना वकील बना सकता है। और अगर इस तरह आ़म इजाज़त नहीं दी गई थी तो हज्जे बदल कराने वाले से फ़ोन वग़ैरा के ज़रीए से अपनी माज़ूरी की इत्तिला कर के इजाज़त हासिल कर के दूसरे को उसी जगह से अपना नाइब बना सकता है जहां पर बीमार हो गया और मनासिक ख़ुद अदा करने की उम्मीद न रही। वैसे हज्जे बदल कराने वाले को हज्जे बदल करने के सिलसिले में हर तरह का इख़्तियार पहले देना ही मुनासिब है, ताकि हिसाब व ख़र्च, कुर्बानी, तमत्तोअ़ या कोई हादसा वग़ैरा के सिलसिले में मज़ीद इजाज़त की ज़रूरत पेश न आए और हज्जे बदल करने वाले को भी ज़रूरी है कि बहुत ही ईमानदारी व दियानतदारी का सुबूत दे और ये ख़्याल रखे कि अल्लाह तआ़ला सब कुछ देख रहा है।

(मुस्तफ़ाद दुर्रेमुख़्तार कराची जिल्द–2 सफ़्हा–404 व हाकज़ा मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–289)

हज्जे बदल के बाद आमिर के घर आना?

सवालः क्या ये भी ज़रूरी है कि हज्जे बदल कराने वाले के मकान पर हज्जे बदल करने वाला वापस आए?

जवाबः वापस आना हज्जे बदल कराने वाले की जाए सुकूनत पर ज़रूरी नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–578)

मस्अला: जो हज्जे बदल कर के वापस आए वह "हाजी" कहलाएगा। अपने हज के बग़ैर ही "हाजी" कहलाएगा। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–76)

मीक़ात क्या है?

सवाल: एहराम कहां और किस वक़्त बांधा जाए?

जवाब: उसके लिए ये जानना ज़रूरी है कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने मक्का मुकर्रमा के गिर्द चारों तरफ़ कुछ मक़मात (अल्लाह तआला के हुक्म से जिबरईल अलैहिस्सलाम की निशानदिही पर) मुतअय्यन फ़रमाऐं हैं, जहां पहुंच कर मक्का मुकर्रमा जाने वालों पर एहराम बांधना वाजिब है, ख़्वाह हज का एहराम बांधे या उम्रा का। उन मक़मात को मीक़ात कहते हैं और जमा उसकी मवाक़ीत आती है। मवाक़ीत का तअय्युन अहादीसे सहीहा में मनकूल है और ये पांबदी मीक़ात से बाहर रहने वालों पर आम है जब भी वह मक्का मुकर्रमा के क़स्द से हुदूदे मीक़ात में दाख़िल हों ख़्वाह वह किसी तिजारती ग़रज़ से जा रहे हों या अज़ीज़ों व दोस्तों से मुलाक़ात के लिए, बहरहाल बैतुल्लाह का ये हक़ उनके ज़िम्मा है कि मीक़ात से एहराम बांध कर मक्का मुकर्रमा में दाख़िल हों, अगर हज का वक़्त है तो हज का, वरना उम्रा का एहराम बांधें और पहले बैतुल्लाह का ये हक़ अदा करें फिर अपने अपने काम में मशग़ूल हों। (बदाएउस्सनाए)

हां अगर जद्दा का सफ़र हो, नीयत मक्का मुकर्रमा की न हो बल्कि जद्दा या मदीना की नीयत से हो, तो मीक़ात से एहराम बांधना ज़रूरी नहीं है।

मदीना तैयबा के रास्ता की मशहूर मंज़िल राबिग़ के क़रीब है, जो कि मक्का मुकर्रमा से तक़रीबन सौ मील के फ़ासिला पर बजानिब मग़रिबी साहिल के क़रीब है।

क़रनुलमनाज़िमः ये नज्द की तरफ़ से आने वालों का मीक़ात है, मक्का मुकर्रमा से तक़रीबन तीस पैंतीस मील मश्रिक़ में नज्द जाने वाले रास्ता में एक पहाड़ी है।

यलमलमः यमन की तरफ़ से आने वालों के लिए एक पहाड़ी साहिले समंद्र से पन्द्रह बीस मील के फ़ासिले पर है। ये अस्ल में अह्ले यमन व अ़दन का मीक़ात है। पहले ज़माने में जब जद्दा की बंदरगाह न थी तो हिन्दुस्तान व पाकिस्तान और दूसरे मश्रिक़ी मुमालिक से बह्री रास्ते पर आने वाले हुज्जाज का भी यही रास्ता था।

> "इसलिए अह्ले पाकिस्तान व हिन्दुस्तान के लिए भी यही मीक़ात मशहूर है। जब हिन्द व पाक से समंद्री रास्ता से सफ़र होता था तो जद्दा जाते हुए जहाज़ यलमलम की मुहाज़ात से गुज़रा करते थे। इसलिए हिन्द व पाक के लिए यही मीक़ात मशहूर हो गई थी। लेकिन हवाई सफ़र में ये मीक़ात नहीं पड़ती बल्कि क़रनुलमनाज़िल वाली मीक़ात पड़ती है।" (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

ज़ातो इरक़ः इराक़ की तरफ़ से आने वालों के लिए मीक़ात है, मक्का मुकर्रमा से तक़रीबन पचास मील के क़रीब है। जिन लोगों का रास्ता ख़ास उन मुक़ामात पर से न हो तो मक्का मुकर्रमा में दाख़िल होने के लिए जिस जगह पर भी उनमें से किसी मीक़ात की मुहाज़ात आएगी

उस मुहाज़ात के अन्दर दाख़िल होने से पहले एहराम बांधना वाजिब है, ये मवाक़ीत उन लोगों के लिए हैं जो हुदूदे मीक़ात से बाहर सारी दुनिया में कहीं रहते हैं।

इस्तिलाह में मवाक़ीत से बाहर सारी दुनिया को आफ़ाक़ के नाम से ताबीर करते हैं और उन लोगों को इस्तिलाह में आफ़ाक़ी कहा जाता है।

(अहकामे हज सफ़्हा–26 हज़रत मुफ़्ति शफ़ीअ (रह.) व हाकज़ा फी मआरिफ़िल हदीस जिल्द–4 सफ़्हा–200)

मीक़ात के बोर्ड और तनअ़ीम में फ़र्क़

सवाल: मक्का मुकर्रमा की हुदूद से पहले जहां मीक़ात का बोर्ड लगा होता है और लिखा होता है कि ग़ैर मुस्लिम आगे दाख़िल नहीं हो सकते, वहां से एहराम बांधे या तनअ़ीम जा कर मस्जिदे आइशा से एहराम बांधे? नीज़ मीक़ात के बोर्ड और तनअ़ीम में क्या फ़र्क़ है।?

जवाब: ये मीक़ात का बोर्ड नहीं, बल्कि हुदूदे हरम का बोर्ड है।

तनअ़ीम भी हुदूदे हरम से बाहर है। इसलिए उन दोनों के दरमियान कोई फ़र्क़ नहीं। अह्ले मक्का मस्जिदे तनअ़ीम से जो एहराम बांधते हैं उसकी वजह ये है कि वह क़रीब तरीन जगह है, जो हुदूदे हरम से बाहर है। नीज़ उम्मुलमोमिनीन हज़रत आइशा (रज़ि.) वहां से उम्रा का एहराम बांध कर आई थीं और बाज़ हज़रात उम्रा का एहराम बांधने के लिए मक्का मुकर्रमा से जअ़राना जाते हैं, क्योंकि आंहज़रत (स.अ.व.) गज़वए हुनैन के बाद वहां से एहराम बांध कर उम्रा के लिए तशरीफ़ लाए थे।

अह्ले मक्का के एहरामे उम्रा के लिए इन जगहों की

उस मुहाज़ात के अन्दर दाख़िल होने से पहले एहराम बांधना वाजिब है, ये मवाक़ीत उन लोगों के लिए हैं जो हुदूदे मीक़ात से बाहर सारी दुनिया में कहीं रहते हैं।

इस्तिलाह में मवाक़ीत से बाहर सारी दुनिया को आफ़ाक़ के नाम से ताबीर करते हैं और उन लोगों को इस्तिलाह में आफ़ाक़ी कहा जाता है।

(अहकामे हज सफ़हा–26 हज़रत मुफ़्ति शफ़ीअ (रह.) व हाकज़ा फ़ी मआरिफ़िल हदीस जिल्द–4 सफ़्हा–200)

मीक़ात के बोर्ड और तनअ़ीम में फ़र्क़

सवाल: मक्का मुकर्रमा की हुदूद से पहले जहां मीक़ात का बोर्ड लगा होता है और लिखा होता है कि ग़ैर मुस्लिम आगे दाख़िल नहीं हो सकते, वहां से एहराम बांधे या तनअ़ीम जा कर मस्जिदे आइशा से एहराम बांधे? नीज़ मीक़ात के बोर्ड और तनअ़ीम में क्या फ़र्क़ है।?

जवाब: ये मीक़ात का बोर्ड नहीं, बल्कि हुदूदे हरम का बोर्ड है।

तनअ़ीम भी हुदूदे हरम से बाहर है। इसलिए उन दोनों के दरमियान कोई फ़र्क़ नहीं। अह्ले मक्का मस्जिदे तनअ़ीम से जो एहराम बांधते हैं उसकी वजह ये है कि वह क़रीब तरीन जगह है, जो हुदूदे हरम से बाहर है। नीज़ उम्मुलमोमिनीन हज़रत आइशा (रज़ि.) वहां से उम्रा का एहराम बांध कर आई थीं और बाज़ हज़रा: उम्रा का एहराम बांधने के लिए मक्का मुकर्रमा से जअ़राना जाते हैं, क्योंकि आंहज़रत (स.अ.व.) ग़ज़वए हुनैन के बाद वहां से एहराम बांध कर उम्रा के लिए तशरीफ़ लाए थे।

अह्ले मक्का के एहरामे उम्रा के लिए इन जगहों की

कोई तख़्सीस नहीं, वह हुदूदे हरम से बाहर कहीं से एहराम बांध कर आ जाऐं सही है।

(आपके मसाइल जिल्द-4 सफ़्हा-87)

एहतिरामे कअ़बा के लिए तीन दाएरे मुक़र्रर हैं

पहले ये जान लेना मुनासिब है कि कअ़बा मुकर्रमा निहायत ही अशरफ़ व आला मक़ाम है। हक़ तआला ने उसके एहतिराम के लिए उसके गिर्द तीन दाएरे बनाए हैं और हर दाएरा के कुछ मख़्सूस अहकाम हैं।

❑ पहला दाएरा मस्जिदे हराम का है। जिसके दरमियान बैतुल्लाह शरीफ़ वाक़ेअ़ है, बैतुल्लाह के बाद सब से ज़्यादा अशरफ़ व आला मक़ाम है, जो उस दाएरा से महदूद है, जिसको मस्जिदे हराम कहा जाता है। उसके साथ बहुत से अहकाम मख़्सूस हैं, मगर उनका ख़ुसूसी तअ़ल्लुक़ एहराम से नहीं है। इसलिए उनकी तफ़्सील की ज़रूरत नहीं है।

❑ दूसरा दाएरा हुदूदे हरम का है जो कि मक्का मुकर्रमा के चारों तरफ़ हरमे मक्की की तरफ़ कुछ हुदूद मुक़र्रर हैं जहां अलामाते हरम लगी हुई हैं, उन हुदूदे हरम का फ़ासिला मक्का मुकर्रमा से किसी तरफ़ तीन मील किसी तरफ़ नौ मील है और किसी तरफ़ कम व बेश है, जो लोग उस दाएरा से अन्दर रहने वाले हैं वह अह्ले हरम कहलाते हैं।

❑ तीसरा दाएरा मवाक़ीत का है जिनका ज़िक्र पहले हो चुका है।

दूसरे दाएरा यानी हुदूदे हरम के रहने वालों को "अह्ले हरम" कहा जाता है और हुदूदे हरम से बाहर मगर

दाएरए मीक़ात के रहने वाले को "अह्ले हिल्ल" कहा जाता है और उन सब दाएरों से बाहर रहने वालों को "अह्ले आफ़ाक़" कहा जाता है।

एहराम के बारे में अह्ले आफ़ाक़ का हुक्म तो पहले ब्यान हो चुका है कि जब भी वह मक्का मुकर्रमा के क़स्द से हुदूदे मीक़ात यानी उनकी मुहाज़ात से मक्का की तरफ़ बढ़ें उससे पहले उन पर एहराम बांधना वाजिब है, ख़्वाह उनका इरादा हज व उम्रा का हो या कोई तिजरती ग़रज़ या दोस्तों से मुलाक़ात वग़ैरा मक़्सूद हो।

दूसरे दाएरा यानी हुदूदे मीक़ात के अन्दर मगर हुदूदे हरम से बाहर रहने वाले जिनको अह्ले हिल्ल कहते हैं उनका हुक्म ये है कि जब वह हज या उम्रा के मक़्सद से मक्का मुकर्रमा जाना चाहें तो अपने घर से या हुदूदे हरम से या हुदूदे हरम से पहले पहले एहराम बांध लें और अगर किसी तिजारती मक़्सद या किसी और ज़रूरत से मक्का मुकर्रमा जाना चाहें तो उन पर एहराम की कोई पाबंदी नहीं जब चाहें मक्का मुकर्रमा जा सकते हैं।

और पहले दाएरे यानी हुदूदे हरम के अन्दर रहने वालों पर भी एहराम की कोई पाबंदी नहीं जब वह उम्रा करना चाहें तो हुदूदे हरम से बाहर जा कर एहराम बांध लें और जब हज करना चाहें तो हरम शरीफ़ ही से एहराम बांध लें। (अहकामे हज सफ़्हा—35)

मीक़ात की हिकमत?

हज के लिए लोग मुख़्तलिफ़ अतराफ़ व जवानिब से लम्बी मसाफ़त तय कर के आते हैं (पहले ज़माना में पैदल व समंद्री सफ़र की वजह से काफ़ी मुद्दत में पहुंचते थे)

अगर घर से ही एहराम बांध कर आना वाजिब होता तो बड़ी मुश्किल व दिक़्क़त होती, इसलिए शारेअ अलैहिस्सलाम ने हमारी मसलिहत व फ़ाएदा के लिए मक्का मुकर्रमा के चारों तरफ़ ख़ास ख़ास मशहूर मक़ामात मुक़र्रर कर दिए कि उस जगह से दरबारे ख़ुदावंदी की ताज़ीम व एहतेराम के लिए ख़ास सूरत बना कर (एहराम बांध कर) दाख़िल होना ज़रूरी है और मदीना मुनव्वरा की मीक़ात सब मीक़ातों से फ़ास्ला पर मुक़र्रर की, क्योंकि मदीना मुनव्वरा को महबते वह्य व मरकज़े ईमान और दारे हिजरत होने का शर्फ़ हासिल है, इसलिए उसके बाशिंदों को सब से ज़्यादा एहतेराम व ताज़ीम करना चाहिए। दीन में जिसका मरतबा जितना बड़ा होता है उसको मशक़्क़त भी उतनी ही ज़्यादा उठानी पड़ती है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–97 व हाकज़ा फ़ी मआरिफ़िल हदीस जिल्द–4 सफ़्हा–198)

हज के ऐयाम में दूसरे को तल्बिया कहलवाना?

सवाल: हज के ऐयाम में देखा गया है कि बस में सवार एक आदमी तल्बिया पढ़ता है और बाक़ी सब हाजी उसी की तकरार करते हैं। क्या ये जाइज़ है?

जवाब: अवाम की आसानी के लिए अगर ऐसा किया जाता हो तो उसमें कोई मुज़ाएक़ा नहीं, वरना आवाज़ मिला कर तल्बिया न कहा जाए।

(आपके मासइल जिल्द–4 सफ़्हा–117)

अनपढ़ तल्बिया कैसे पढ़े?

मस्अला: हज में तल्बिया पढ़ना फ़र्ज़ है उसके बग़ैर एहराम नहीं बंधेगा। जिसको तल्बिया याद न हो उनको

तल्बिया सिखा दिया जाए, हज उनका हो जाएगा और अगर उनको तल्बिया के अलफ़ाज़ याद नहीं होते तो कम अज़ कम इतना तो हो सकता है कि एहराम बांधते वक़्त उनको तल्बिया के अलफ़ाज़ कहला दिए जाऐं। और वह आप के साथ कहते जाऐं इससे तल्बिया का फ़र्ज़ अदा हो जाएगा। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–117)

तल्बिया कहां पढ़ा जाए और कहां बंद किया जाए?

मस्अला: बाज़ लोग तवाफ़ के दौरान तल्बिया पढ़ते हैं ये दुरुस्त नहीं है, बल्कि उम्रा के एहराम में तवाफ़ शुरू करने से पहले तल्बिया ख़त्म कर देना ज़रूरी है और हज के एहराम में दसवीं ज़िलहिज्जा को जमरए अक़बा की (बड़े शैतान की) रमी के वक़्त पहली कंकरी मारने के वक़्त तल्बिया ख़त्म कर देना ज़रूरी है हॉं अगर किसी ने हज्जे इफ़राद या हज्जे क़िरान का एहराम बांधा है उसके लिए तवाफ़ के दौरान तो तल्बिया नहीं बल्कि तवाफ़ के बाद सफ़ा व मरवा के दरमियान सओ़ी के दौरान तल्बिया पढ़ना जाइज़ है। इसी तरह अगर किसी ने आठवीं ज़िलहिज्जा को हज का एहराम बांध लिया है और मिना को जाने से पहले सओ़ी (मुक़द्दम) करना चाहता है तो उसके लिए सओ़ी से पहले एक नफ़्ली तवाफ़ करना ज़रूरी है, फिर उस तवाफ़ के बाद सओ़ी के दौरान तल्बिया पढ़ना जाइज़ है।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–104 बहवाला फ़तहुलक़दीर जिल्द–2 सफ़्हा–495 व गुनयतुल मनासिक सफ़्हा–55)

तल्बिया के ज़रूरी मसाइल

मस्अला: तल्बिया यानी पूरी लब्बैक का ज़बान से

कहना शर्त है, अगर दिल से कह लिया तो काफ़ी न होगा।

मस्अला: गूंगे को ज़बान हिलानी चाहिए गो अलफ़ाज़ न कह सके।

मस्अला: हर ऐसा ज़िक्र जिससे हक़ तआला की ताज़ीम मक़सूद हो तल्बिया के क़ाइम मक़ाम हो सकता है जैसे "لا الہ الا اللہ الحمد للہ. اللہ اکبر" वग़ैरा।

मस्अला: तल्बिया उर्दू, फ़ारसी, तुर्की सब ज़बानों में जाइज़ है, मगर अरबी में पढ़ना अफ़ज़ल है।

मस्अला: अगर कोई और दूसरा ज़िक्र एहराम के वक़्त कर लेगा तो एहराम सही हो जाएगा, लेकिन तल्बिया छोड़ना मकरूह है।

मस्अला: एहराम बांधने के वक़्त तल्बिया या कोई ज़िक्र एक मरतबा पढ़ना फ़र्ज़ है और उसकी तकरार (बार बार पढ़ना) सुन्नत है। जब तल्बिया कहे तो तीन मरतबा कहे।

मस्अला: तग़ैयुरे हालात के वक़्त मसलन सुब्ह व शाम उठते बैठते बाहर जाते वक्त अन्दर आने के वक़्त, लोगों से मुलाक़ात के वक़्त, रुख़सत के वक़्त, सो कर उठते वक़्त, सवार होने के वक़्त, सवारी से उतरते हुए, बुलंदी पर चढ़ने के वक़्त, नशेब में उतरते हुए, वग़ैरा औक़ात में तल्बिया मुस्तहब और मुअक्कदा है। यानी और मुस्तहब्बात के मुक़ाबला में उसकी ताकीद ज़्यादा है।

मस्अला: तल्बिया के दरमियान कलाम न किया जाए और जो शख़्स तल्बिया पढ़ रहा हो उसको सलाम करना मकरूह है।

मस्अला: फ़र्ज़ और नफ़्ल नमाज़ के बाद भी तल्बिया पढ़ना चाहिए और अैयामे तशरीक़ में पहले तकबीर कहनी चाहिए, उसके बाद तल्बिया। अगर अव्वल तल्बिया पढ़ लिया तो तकबीर साक़ित हो गई, मगर तल्बिया दसवीं तारीख़ की रमी के साथ ख़त्म हो जाता है। बाक़ी अैयाम में सिर्फ़ तकबीर कही जाए।

मस्अला: अगर चंद आदमी साथ हों तो एक साथ मिल कर तल्बिया न कहें, अलाहिदा अलाहिदा कहें।

मस्अला: तल्बिया में आवाज़ बुलंद करना मसनून है लेकिन इतनी ज़्यादा नहीं कि जिससे अपने आप को या नमाज़ियों को या सोने वालों को तकलीफ़ हो।

मस्अला: मस्जिदे हराम, मिना, अरफ़ात और मुज़दलिफ़ा में भी तल्बिया पढ़ो, लेकिन मस्जिद में ज़ोर से न पढ़ो।

मस्अला: तवाफ़ और सअी में तल्बिया न पढ़ो, नीज़ औरत को तल्बिया ज़ोर से पढ़ना मना है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़हा–104)

एहराम की हिकमत?

एहराम हज व उम्रा के लिए मिस्ल तकबीरे तहरीमा के है, जिस तरह नीयत ख़ालिस कर के अल्लाहुअकबर कह कर नमाज़ी नमाज़ शुरू करता है और बहुत सी चीज़ें उसके लिए नमाज़ की हालत में नाजाइज़ हो जाती हैं, इसी तरह हज व उम्रा के लिए एहराम व तल्बिया है।

एहराम से बंदा हज व उम्रा के इरादा की पुख़्तगी और इख़लास व अज़मत का इज़हार और अपनी उबूदियत और आजिज़ी की सूरत इख़्तियार करता है, दिल व ज़बान से इक़रार करता है, तमाम लज़्ज़ात व आराइश व

ज़ेबाइश को छोड़ कर सिर्फ़ दो कपड़े पहन लेता है और अपने आप को मैयत यानी मुर्दों जैसा बना लेता है। नीज़ ख़ास लिबास (एहराम) में ये भी हिकमत है कि अमीर व ग़रीब, शाह व गदा ख़ुदा के दरबार में एक लिबास में हाज़िर होते हैं, किसी को फ़ख़्र का मौक़ा नहीं मिलता।

शरीअत ने उस लिबास यानी एहराम को पंसद किया, सादगी व सफ़ाई और सहूलत में ये बेनज़ीर है। और तिब्बी हैसियत से भी मुफ़ीद है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–111 व रहमतुल्लाहिलवासिआ जिल्द–4 सफ़्हा–189)

एहराम की चादरें कैसी हों?

मस्अला: एहराम का कपड़ा साथ लेना ज़रूर ख्याल रखें एहराम की एक चादर ओढ़ने के लिए (तक़रीबन ढाई मीटर) और एक चादर तहबंद बांधने के लिए (तक़रीबन सवा दो मीटर) सफ़ेद लट्ठे का होना बेहतर है, तेज़ गर्मी व तेज़ सर्दी के अैयाम में दो बडे तौलिये का एहराम बेहतर है, जो चादर और तहबंद का काम दे सकें और अगर अल्लाह तआला ने उसअत दी है तो दो तीन एहराम रख लें, कि एक मैला हो जाए तो दूसरा इस्तेमाल कर सके। (अहकामे हज सफ़्हा–24)

मस्अला: एहराम की चादर इतनी लम्बी हो कि दाहिने कंधे से निकाल का बायें कंधे पर सहूलत से आ जाए और तहबंद इतना लम्बा हो कि सत्र (नाफ़ से ले कर घुटने तक) अच्छी तरह छिप जाए।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–105)

मस्अला: एहराम के लिए ये ज़रूरी नहीं कि एक ही

चादर और एक ही लुंगी अव्वल से आख़िरत तक बदन पर रहे, बल्कि चादर और लुंगी को बदलते रहना जाइज़ है। (इमदादुल अहकाम जिल्द–2 सफ़्हा–177)

मस्अला: मर्दों के लिए एहराम दो चादरों की शक्ल में होता है, मर्दों को एहराम की हालत में सिले हुए कपड़े पहनना ममनूअ़ है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–254)

मस्अला: सफ़ेद कपड़ा एहराम का होना मुस्तहब है। वरना सियाह वग़ैरा भी जिसमें ख़ुशबू न हो जाइज़ है।

(इमदादुल अहकाम जिल्द–2 सफ़्हा–164 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–254)

मस्अला: एहराम अगर सियाह या दूसरा कोई रंग का हो तो भी जाइज़ है (गो अफ़ज़ल सफ़ेद है) सर्दी के वक़्त गर्म चादर और कम्बल से भी ये काम (एहराम का) लिया जा सकता है और तौलिया से भी।

(अहकामे हज सफ़्हा–31)

एहराम में एक कपड़ा भी (जबकि नाफ़ से घुटने तक छिप जाए) काफ़ी है और दो से ज़ाइद भी जाइज़ हैं।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–105)

एहराम की चादर लुंग की तरह सीना?

सवाल: एहराम की चादर लुंग की तरह सिली हुई हो तो उसके इस्तेमाल की गुंजाइश है या नहीं? क्योंकि बाज़ लोगों को खुली चादर बतौर लुंगी इस्तेमाल करने की आदत नहीं होती, सत्र खुलने का अंदेशा होता है ख़ास कर सोने की हालत में। तो क्या एहराम की लुंग को सी सकते हैं?

जवाब: सत्र (नाफ़ से लेकर घुटने तक का हिस्सा)

खुलने का अंदेशा हो तो एहराम की चादर सी लेने की गुंजाइश है, बिला ज़रूरत सीना मकरूह है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–286 बहवाला गुनयतुल मनासिक सफ़्हा–47)

मस्अला: तहबंद के दोनों पल्लों को आगे से सीना मकरूह है, अगर सिकी ने सत्रे औरत (नाफ़ से लेकर घुटे तक) की ख़ातिर हिफ़ाज़त की वजह से सी लिया तो दम वाजिब न होगा। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–114)

मस्अला: एक चादर एहराम के लिए नाकाफ़ी हो। इसलिए दो चादरों को (आपस में मिला कर) सी लिया हो तो ऐसी सिली हुई चादर से एहराम बांध सकता है, नीज़ सिले हुए कपड़े (फ़र्श की चादर वग़ैरा) पर मोहरिम सो सकता है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–219)

मस्अला: गो अफ़ज़ल यही है कि एहराम में बिल्कुल सिलाई न हो, लेकिन अगर दो पाटों के जोड़ने को सिलाई की जाए तब भी जाइज़ है। (इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़्हा–164 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–254 व काहज़ा फ़ी मुअल्लिमिहुज्जाज सफ़्हा–105)

मस्अला: एहराम की चादर (लुंगी) में नेफ़ा मोड़ कर कमर बंद डाल कर बांधना मकरूह है। नीज़ एहराम की चादर में गिरह दे कर गर्दन पर बांधना। चादर और तहबंद में गिरह लगाना या सूई और पिन वग़ैरा लगाना, तागे या रस्सी से बांधना कमरूह है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–114)

मस्अला: एहराम की चादर तहबंद में रुपये या घड़ी रखने के लिए जेब लगाना जाइज़ है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–115)

एहराम की नीयत के ज़रूरी मासइल

मस्अला: सिर्फ़ हज की नीयत दिल में कर लेने से एहराम दुरुस्त नहीं होता, बल्कि तल्बिया और कोई ज़िक्र जो उसके क़ाइम मक़ाम हो, करना ज़रूरी है। इसी तरह बिला नीयत के महज़ तल्बिया पढ़ ले तब भी मोहरिम न होगा। ख़ुलासा ये कि एहराम के लिए नीयत और तल्बिया दोनों का होना ज़रूरी है।

मस्अला: एहराम की नीयत दिल से होना ज़रूरी है ज़बान से कहना सिर्फ़ मुस्तहसन है। जिस चीज़ का एहराम बांधना है उसकी दिल में नीयत करनी चाहिए कि हज्जे इफ़राद का एहराम बांधता हूं या क़िरान का या तमत्तोअ़ का, अगर दिल से नीयत कर ली और ज़बान से कुछ नहीं कहा तो नीयत हो जाएगी।

मस्अला: दिल में नीयत क़िरान की और ज़बान से इफ़राद या तमत्तोअ़ निकल गया तो जो दिल में था उसका एतेबार होगा, ज़बान के अलफ़ाज़ का एतेबार न होगा।

मस्अला: अगर किसी शख़्स ने सिर्फ़ एहराम बांध लिया और हज या उम्रा किसी चीज़ की नीयत नहीं की तो एहराम सही हो गया और उसको हज या उम्रा के अफ़आल शुरू करने से पहले पहले इख़्तियार है कि उस एहराम को हज के लिए कर दे या उम्रा के लिए।

मस्अला: हज का एहराम बांधा लेकिन फ़र्ज़ या नफ़्ल का तअैयुन न किया तो ये एहरामे हज्जे फ़र्ज़ का होगा अगर उसपर हज फ़र्ज़ है और अगर नज़्र या नफ़्ल या किसी दूसरे की तरफ़ से हज की नीयत कर ली तो

जैसी नीयत करेगा वैसा ही होगा।

मस्अला: अगर हज्जे बदल है तो जिसकी तरफ़ से हज करना है उसकी तरफ़ नीयत करो और ज़बान से भी कहो कि फ़लां की तरफ़ से हज की नीयत की और उसकी तरफ़ से एहराम बांधा।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–102)

मस्अला: एहराम दो बातों से बंधता है एक नीयत करना दूसरे उसके साथ तल्बिया कहना और अगर किसी ने सिर्फ़ नीयत की तल्बिया न पढ़ाय या तल्बिया पढ़ा लेकिन नीयत नहीं की तो एहराम न होगा।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1045)

मस्अला: सिर्फ़ नीयत करने से एहराम शुरू नहीं होता, बल्कि अलफ़ाज़े तल्बिया पढ़ने से शुरू होता है। तल्बिया के अलफ़ाज़ पढ़ते ही एहराम शुरू हो जाता है इसलिए तल्बिया पढ़ने से पहले सर को चादर वग़ैरा से खोल दिया जाए। (अहकामे हज सफ़्हा–32)

बाज़ मरतबा जहाज़ लेट भी हो जाते हैं एहराम में रहना और एहराम की पाबंदी करना बहुत मुश्किल हो जाता है। इसलिए घर या एयरपोर्ट पर दो रकअत नफ़्ल पढ़ कर एहराम बांध लें, लेकिन नीयत व तल्बिया जहाज़ में सवार होने के बाद ही पढ़ें, ताकि मज़कूरा व दीगर परेशानी न हो।

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

आम पहने हुए कपड़ों में एहराम की नीयत करना?

मस्अला: अगर किसी शख़्स ने सिले हुए (आम पहने

हुए) कपड़ों में ही एहराम बांध लिया, यानी एहराम की नीयत कर के तल्बिया पढ़ लिया तो अगर तल्बिया पढ़ने के बाद पूरे दिन सिले हुए कपड़े पहने रहा तो दम वाजिब होगा। और एक दिन से कम पहने रहा तो सदका बकद्र सदकतुलफित्र वाजिब है यानी तकरीबन पौने दो किलो गेहूं या उसकी कीमत।

मस्अला: जो कपड़ा बदन की हैअत पर सिला हुआ या बुना हुआ हो अगर उसको पहना और पूरे दिन या पूरी रात पहने रहा तो जिनायत कामिल यानी दम लाज़िम होगा और उससे कम वक़्त इस्तेमाल किया तो सदका वाजिब होगा। (अहकामे हज सफ़्हा–95 व हाकज़ा मज़ाहिरे हक जिल्द–3 सफ़्हा–367)

मस्अला: और आधी रात से आधे दिन तक एक दिन शुमार होगा। (अहकामे हज सफ़्हा–91 हज़रत मुफ़्ती शफ़ीअ 'रह.' बहवाला ज़बदा)

एहराम बांधने का तरीक़ा

मस्अला: एहराम के लिए गुस्ल मसनून है। ये गुस्ल महज़ सफ़ाई के लिए है। इसलिए हाएज़ा व नुफ़सा और बच्चे के लिए मुस्तहब है।

मस्अला: अगर एहराम के लिए गुस्ल किया और फिर एहराम बांधने से पहले वुज़ू टूट गया तो गुस्ल की फ़ज़ीलत हासिल न होगी।

मस्अला: अगर गुस्ल न कर सके तो वुज़ू कर ले बग़ैर गुस्ल और वुज़ू के एहराम बांधना जाइज़ तो है लेकिन मकरूह है।

मस्अला: अगर पानी न हो तो एहराम के लिए गुस्ल

हुए) कपड़ों में ही एहराम बांध लिया, यानी एहराम की नीयत कर के तल्बिया पढ़ लिया तो अगर तल्बिया पढ़ने के बाद पूरे दिन सिले हुए कपड़े पहने रहा तो दम वाजिब होगा। और एक दिन से कम पहने रहा तो सदका बक़द्र सदक़तुलफ़ित्र वाजिब है यानी तक़रीबन पौने दो किलो गेहूं या उसकी क़ीमत।

मस्अला: जो कपड़ा बदन की हैअत पर सिला हुआ या बुना हुआ हो अगर उसको पहना और पूरे दिन या पूरी रात पहने रहा तो जिनायत कामिल यानी दम लाज़िम होगा और उससे कम वक़्त इस्तेमाल किया तो सदका वाजिब होगा। (अहकामे हज सफ़्हा–95 व हाकज़ा मज़ाहिरे हक़ जिल्द–3 सफ़्हा–367)

मस्अला: और आधी रात से आधे दिन तक एक दिन शुमार होगा। (अहकामे हज सफ़्हा–91 हज़रत मुफ़्ती शफ़ीअ 'रह.' बहवाला ज़बदा)

एहराम बांधने का तरीक़ा

मस्अला: एहराम के लिए गुस्ल मसनून है। ये गुस्ल महज़ सफ़ाई के लिए है। इसलिए हाएज़ा व नुफ़सा और बच्चे के लिए मुस्तहब है।

मस्अला: अगर एहराम के लिए गुस्ल किया और फिर एहराम बांधने से पहले वुज़ू टूट गया तो गुस्ल की फ़ज़ीलत हासिल न होगी।

मस्अला: अगर गुस्ल न कर सके तो वुज़ू कर ले बग़ैर गुस्ल और वुज़ू के एहराम बांधना जाइज़ तो है लेकिन मरूह है।

मस्अला: अगर पानी न हो तो एहराम के लिए गुस्ल

का तयम्मुम करना मशरूअ नहीं, हां अगर नमाज़ पढ़नी है और पानी नहीं है तो तयम्मुम कर के नमाज़ पढ़ ले।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–104)

मस्अला: जब एहराम बांधने का इरादा करे तो पहले गुस्ल करे और वुज़ू कर लेना भी काफ़ी है। और सुन्नत ये है कि वुज़ू या गुस्ल से पहले नाख़ुन काटे, मोंछों के बाल कटवा कर पस्त करे, बग़ल और ज़ेरे नाफ़ के बालों को साफ़ करें, अगर सर पर बाल हों तो कंघे से उनको दुरुस्त करें।

एहराम के लिए दो नई या धुली हुई चादरें होना सुन्नत है, एक को तहबंद बनाया जाए, दूसरे को चादर की तरह ओढ़ा जाए।

एहराम पहनने के बाद सुन्नत ये है कि दो रकअ़त नफ़्ल पढ़े बशर्तेकि वक़्ते मकरूह यानी तुलूअ़ या गुरूब या ज़वाल का वक़्त न हो, क्योंकि इन औक़ात में नमाज़ मकरूह है और पहली रकअ़त में अलहम्दु शरीफ़ के बाद "قل يا ايها الكفرون" और दूसरी रकअ़त में "قل هو الله احد" पढ़ना औला (बेहतर) है। अगर कोई दूसरी सूरत पढ़ ले तो ये भी जाइज़ है।

इस नमाज़ के वक़्त जो चादर (एहराम) ओढ़ी हुई है उसी से सर भी छुपा ले, क्योंकि अभी एहराम शुरू नहीं हुआ, जिसमें सर खुला रखना ज़रूरी होता है। और दो रकअ़त नफ़्ल के बाद हज की तीनों क़िस्मों में जिस क़िस्म के हज का इरादा है उसके मुताबिक़ दिल में भी नीयत कर ले और ज़बान से भी वह अलफ़ाज़ अपनी मादरी ज़बान में कह ले जिस क़िस्म का हज कर रहा

है। उसके बाद तल्बिया के कलिमात कहे और तल्बिया के मसनून अलफ़ाज़ ये हैं उनको अच्छी तरह याद कर लिया जाए उनमें से कोई लफ़्ज़ कम करना मकरूह है–

"لَبَّیکَ اللّٰھُمَّ لَبَّیک ، لَبَّیکَ لا شَرِیکَ لَکَ لَبَّیک،
اِنَّ الْحَمْدَ وَ النِّعْمَۃَ لَکَ وَالْمُلْکَ ، لاشَرِیکَ لَکَ ،"

मस्अला: जब भी तल्बिया कहे तो तीन बार कहना चाहिए और मस्जिद में इतनी बुलंद आवाज़ से न कहे कि नमाज़ियों को तशवीश हो, और औरतें आहिस्ता आवाज़ से कहें। (अहकामे हज सफ़हा–31 व हाकज़ा फ़ी किताबिलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ़हा–1048)

मस्अला: फ़र्ज़ नमाज़ के बाद अगर एहराम की नीयत कर ली तो ये भी काफ़ी है, लेकिन मुस्तक़िल दो रकअत नफ़्ल पढ़ना अफ़ज़ल है।

मस्अला: एहराम बग़ैर नमाज़े नफ़्ल के बांधना जाइज़ है, लेकिन मकरूह है। अगर वक़्ते मकरूह है तो फिर बग़ैर नमाज़ के मकरूह नहीं है।

मस्अला: एहराम की नफ़्ल के बाद और नमाज़ें सर खोल कर पढ़ी जाएँगी जब तक एहराम रहेगा। एहराम की हालत में नमाज़ में भी सर ढांपना मना है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़हा–106)

झूट बोल कर बग़ैर एहराम के मीक़ात से गुज़रना?

सवाल: बाज़ लोग झूट बोल कर बग़ैर एहराम के हुदूदे हरम में चले जाते हैं और फिर मस्जिदे आइशा जा कर एहराम बांधते हैं क्या इस सूरत में दम लाज़िम है?

जवाब: बग़ैर एहराम के हुदूदे हरम में दाख़िल होना गुनाह है और ऐसे शख़्स के ज़िम्मा लाज़िम है कि वापस

मक्का मुकर्रमा जा कर उम्रा अदा किया फिर रियाज़ वापस आ गया। उसके बाद हज से एक हफ़्ता पहले बग़ैर एहराम के फिर मक्का मुकर्रमा आया। किसी ने उसको बताया कि तुम ने ग़लती की है यहां मक्का में बग़ैर एहराम के नहीं आना चाहिए था। लिहाज़ा उसने मस्जिदे आइशा जा कर एहराम बांध कर उम्रा किया, क्या ये सही है?

जवाबः सूरते मस्ऊला में चूंकि उस शख़्स ने अपने मीक़ात से गुज़रने के वक़्त फ़िलहाल मक्का मुकर्रमा जाने की नीयम नहीं की थी, बल्कि रियाज़ और फिर मदीना मुनव्वरा जा कर वहां से एहराम बांधने का इरादा था। इसलिए उस पर बग़ैर एहराम के मीक़ात से गुज़रने का दम वाजिब नहीं।

दूसरी दफ़ा जो ये शख़्स रियाज़ से मक्का मुकर्रमा बग़ैर एहराम के आया, उसकी वजह से उस पर दम (कुर्बानी) वाजिब हो चुका है। मस्जिदे आइशा पर आ कर एहराम बांधने से उस ग़लती का इज़ाला नहीं हुआ। और दम साक़ित नहीं हुआ। हां! अगर ये शख़्स मीक़ात पर वापस लौट जाता और वहां से हज का या उम्रा का एहराम बांध कर आता तो दम साक़ित हो जाता।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–97)

<u>हज का एहराम तवाफ़ के बाद बग़ैर हज के खोल दिया?</u>

सवालः मैंने वतन से हज का एहराम बांध लिया था। (एहरामे हज्जे इफ़राद या हज्जे क़िरान था) मक्का मुकर्रमा में तवाफ़ करने के बाद एहराम खोल दिया क्या हुक्म है?

जवाबः आप पर हज का एहराम तोड़ने की वजह से दम लाज़िम हुआ और हज की कज़ा लाज़िम होगी।

हज तो आप ने कर लिया होगा, दम आप के ज़िम्मा रहा, इस फ़ेल पर नदामत के साथ तौबा व इस्तिग़फ़ार भी कीजिए। अल्लाह तआला से मआफ़ी भी मांगिए।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–105)

और दम हरम शरीफ़ में ही अदा करवाएँ, जो कि गुरबा व मसाकीन ही उसके मुस्तहिक़ हैं दूसरे नहीं। (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

मीक़ात से बग़ैर एहराम के गुज़र जाने के ज़रूरी मसाइल

मस्अलाः अगर कोई शख़्स मुसलमान (मर्द औरत) आक़िल जो मीक़ात से बाहर रहने वाला है और मक्का मुकर्रमा में दाख़िल होने का इरादा रखता है ख़्वाह हज व उम्रा की नीयत से हो या किसी और ग़रज़ से, मीक़ात पर से बिला एहराम बांधे आगे गुज़र जाएगा तो गुनहगार होगा और मीक़ात की तरफ़ लौटना वाजिब होगा, और अगर लौट कर मीक़ात पर नहीं आया और मीक़ात से आगे से ही एहराम बांध लिया तो एक दम देना वाजिब होगा, और अगर मीक़ात पर वापस आ कर एहराम बांध लिया तो दम साक़ित हो जाएगा।

मस्अलाः अगर मीक़ात से कोई शख़्स बिला एहराम के गुज़र गया और आगे जा कर एहराम बांध लिया और मक्का मुकर्रमा पहुंचने से पहले मीक़ात पर वापस आ गया और मीक़ात पर आ कर तल्बिया पढ़ लिया तो दम साक़ित हो जाएगा, और अगर एहराम बांध कर वापस आया और तल्बिया मीक़ात पर नहीं पढ़ा तो दम साक़ित न होगा।

मस्अलाः अगर मीक़ात से बिला एहराम गुज़र गया

और आगे जा कर एहराम बांध लिया और मक्का मुकर्रमा में भी दाख़िल हो गया मगर अफ़आले हज शुरू नहीं किए (मसलन तवाफ़ का एक चक्कर भी नहीं किया) और मीक़ात पर वापस आ कर तल्बिया पढ़ा तो दम साकित हो जाएगा।

मस्अलाः अगर बिला एहराम मीक़ात से गुज़र गया और फिर आगे एहराम बांध लिया तो मीक़ात पर आना वाजिब है। अगर वापस नहीं आया तो गुनहगार होगा और दम भी वाजिब होगा। यानी वापसी का वक़्त हो और हज के फ़ौत होने का अंदेशा न हो तो मीक़ात पर वापस आ कर तल्बिया पढ़ना वाजिब है।

मस्अलाः मीक़ात पर लौटना उस वक़्त वाजिब है जब वापसी में जान व माल का ख़ौफ़ न हो और कोई मरज़ वग़ैरा न हो, वरना वाजिब नहीं, लेकिन गुनाह से तौबा व इस्तिग़फ़ार करना चाहिए और एक दम भी देना वाजिब है।

मस्अलाः अगर मीक़ात से गुज़र कर एहराम बांधा और फिर मीक़ात पर वापस नहीं आया या कुछ अफ़आल शुरू करने के बाद वापस आया तो दम साकित न होगा।

मस्अलाः जो शख़्स किसी मीक़ात से बिला एहराम के गुज़रा है उस पर ये वाजिब नहीं कि उसी मीक़ात पर वापस आए बल्कि किसी भी मीक़ात पर मवाक़ीते मज़कूरा (पांच मवाक़ीत यानी ज़ुलहुलैफ़ा, हजफ़ा, क़रनुलमनाज़िल, यलमलम, ज़ाते इर्क़) में से आना काफ़ी है हां अफ़ज़ल यही है कि उसी मीक़ात पर वापस आए जिससे गुज़रा था।

मस्अलाः आफ़ाक़ी (यानी मीक़ात से बाहर रहने वाला) मीक़ात से आगे किसी ऐसी जगह जो हरम से ख़ारिज है

और हिल्ल में है (हरम शरीफ़ से बाहर और मीक़ात के अन्दर का हिस्सा हिल्ल कहलाता है) किसी ज़रूरत से जाना चाहता है, मक्का मुकर्रमा जाने और हज या उम्रा करने की नीयत नहीं तो उस पर मीक़ात से एहराम बांधना वाजिब नहीं और उसके बाद वह उस जगह से मक्का मुकर्रमा भी बिला एहराम जा सकता है और उस पर कोई दम वग़ैरा नहीं है। उस मक़ाम पर पहुंच कर यह शख़्स भी उस जगह के लोगों के हुक्म में हो गया वहां से अगर हज और उम्रा का इरादा करे तो उनको मीक़ात यानी हिल्ल से एहराम बांधना होगा।

मस्अला: आफ़ाक़ी शख़्स अगर हरम शरीफ़ में या मक्का मुकर्रमा में बिला एहराम के दाख़िल हो जाए तो उस पर एक हज या उम्रा करना वाजिब हो जाता है और अगर कई मरतबा बिला एहराम के दाख़िल हुआ हो तो हर दफ़ा के लिए बिला एहराम जाने की वजह से एक उम्रा या हज वाजिब होगा। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–96 व हाकज़ा फ़ी बैतुल्लाह के अहम फ़तावा सफ़्हा–43)

मस्अला: जो लोग मीक़ात के रहने वाले हैं या मीक़ात और हरम शरीफ़ के दरमियान रहते हैं अगर वह हज या उम्रा की नीयत से मक्का मुकर्रमा जायें तो एहराम बांधना उन पर वाजिब है और अगर हज व उम्रा के इरादा से न जायें तो उनके लिए एहराम बांध कर जाना ज़रूरी नहीं। बिला एहराम के मक्का मुकर्रमा में दाख़िल हो सकते हैं। ऐसे ही वह आफ़ाक़ी जो वहां हज व उम्रा के बाद मुक़ीम हो गया हो, वह भी उनके हुक्म में है या कोई आफ़ाक़ी शख़्स किसी ज़रूरत से किसी जगह हिल्ल में

(हुदूदे हरम से बाहर और मीक़ात के अन्दर का हिस्सा) अपने वतन गया और वहां से मक्का मुकर्रमा का इरादा हो गया तो वहां से वह मक्का मुकर्रमा बिला एहराम जा सकता है वह अहले हिल्ल के हुक्म में है, उनको बिला एहराम मक्का मुकर्रमा में दाख़िल होना जाइज़ है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–94 ता 96 व हाकज़ा फ़ी हज्जे बैतुल्लाह के अहम फ़तावा सफ़्हा–43)

"हज के ज़माना में सऊदिया में रहने वाले हज़रात क़ानून की गिरफ़्त से बचने के लिए बग़ैर एहराम के हज करने के लिए मक्का मुकर्रमा में दाख़िल हो जाते हैं और फिर बाद में परेशान होते हैं कि क्या करें? ऐसे हज़रात की सहूलत के पेशेनज़र मीक़ात के मसाइल कुछ तफ़सील से ब्यान कर दिए हैं। (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

जद्दा से मक्का आने वालों के लिए एहराम?

सवाल: क्या जद्दा में मुस्तक़िल मुक़ीम या जिसकी नीयत पन्द्रह दिन क़याम की हो या इससे कम मुद्दत ठहरे, तो क्या वह जद्दा से बग़ैर एहराम के मक्का मुकर्रमा आ सकता है या नहीं?

जवाब: जद्दा में रहने वालों को बग़ैर एहराम के मक्का मुकर्रमा आना जाइज़ है, जब कि वह हज व उम्रा के इरादा से मक्का मुकर्रमा न जाएं। यही हुक्म उन तमाम लोगों का है जो किसी काम से जद्दा आए थे फिर वहां आने के बाद उनका इरादा मक्का मुकर्रमा जाने का हो गया। उनको भी एहराम के बग़ैर आना जाइज़ है।

मस्अला: जो शख़्स जद्दा गया, वहां चंद दिन क़याम किया, फिर मक्का मुकर्रमा उम्रा करने की नीयत से गया, लेकिन एहराम नहीं बांधा, बल्कि पहले हरम शरीफ़ के पास होटल में कमरा लिया और फिर मस्जिदे आइशा जा कर एहराम बांध लिया, उसने ग़लत किया क्योंकि जब ये शख़्स उम्रा की नीयत से मक्का मुकर्रमा को चला तो हुदूदे हरम में दाख़िल होने से पहले उसको उम्रा का एहराम बांधना लाज़िम था और हुदूदे हरम में बग़ैर एहराम के दाख़िल होना उसके लिए जाइज़ नहीं था। इसलिए बग़ैर एहराम के हुदूदे हरम में दाख़िल होने की वजह से गुनहगार हुआ। ताहम जब उसने हरम से बाहर आ कर तनअ़ीम से उम्रा का एहराम बांध लिया तो दम साक़ित हो गया, मगर गुनाह बाक़ी रहा तौबा व इस्तिग़फ़ार क़रे।

मस्अला: अगर ये शख़्स उम्रा की नीयत से मक्का मुकर्रमा को न जाए, बल्कि यूं ही जाए या तवाफ़ की नीयत से जाए और हरम शरीफ़ के बाहर होटल में कमरा ले ले और तवाफ़ कर के वापस हो जाए, या होटल में क़याम के बाद उम्रा करने का इरादा पैदा हुआ और मस्जिदे आइशा जा कर एहराम बांधा तो इस सूरत में गुनहगार नहीं। क्योंकि ये शख़्स उम्रा की नीयत से मक्का मुकर्रमा नहीं आया था, बल्कि मक्का शरीफ़ पहुंचने के बाद उसका इरादा हुआ कि उम्रा भी कर लूं। इसलिए बग़ैर एहराम के हरम शरीफ़ में आने का गुनाह उसके ज़िम्मा नहीं। अब अगर ये उम्रा करना चाहता है तो अह्ले मक्का की तरह हरम से बाहर जा कर एहराम बांध कर आए। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–102 व हाकज़ा

फ़ी फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–226 व जवाहिरुलफ़िक़्ह सफ़्हा–487)

बग़ैर एहराम के मक्का में दाख़िल होना?

सवालः मैं ताइफ़ में सरविस करता हूं। मैं हर जुमा को मक्का मुकर्रमा जा कर नमाज़े जुमा पढ़ता हूं और भाई वहां पर मुक़ीम हैं उनसे मुलाक़ात करता हूं। मेरे साथी का कहना है कि बग़ैर एहराम के मक्का मुकर्रमा में दाख़िल होने से दम देना पड़ेगा क्या ये सही है?

जवाबः जो लोग मीक़ात से बाहर रहते हैं, अगर वह मक्का मुकर्रमा आएं ख़्वाह उनका आना किसी ज़ाती काम ही के लिए हो, उनके ज़िम्मा मीक़ात से हज या उम्रा का एहराम बांधना लाज़िम है। अगर वह एहराम के बग़ैर मक्का मुकर्रमा चले गए और वापस आ कर मीक़ात पर एहराम नहीं बांधा तो वह गुनहगार होंगे और उनके ज़िम्मा हज या उम्रा भी वाजिब होगा।

हनफ़ी मज़हब के मुताबिक़ आप जितनी मरतबा बग़ैर एहराम के मक्का मुकर्रमा गए आपके ज़िम्मा उतने उम्रे लाज़िम हैं और जो कोताही हो चुकी उस पर इस्तिग़फ़ार भी किया जाए। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–98 व हाकज़ा फ़ी फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–301 व हिदाया सफ़्हा–214)

मस्अलाः क्योंकि ताइफ़ मीक़ात से बाहर है, लिहाज़ा वहां से बग़ैर एहराम के आना सही नहीं है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–95)

जिसकी फ़लाइट यक़ीनी न हो वह एहराम कहां से बांधे?

सवालः मैं पी. आई. ए. का मुलाज़िम हूं, उम्रा करने

का इरादा है मुलाज़िमीन को फ़िरी टिकट मिलता है मगर उनकी सीट का तऔयुन नहीं होता, जिस दिन जिस जहाज़ में ख़ाली सीट होती है उस वक़्त मुलाज़िम जा सकता है। सीट के लिए अक्सर दो तीन दिन तक चक्कर लगाने पड़ते हैं, ऐसे में घर से एहराम बांध कर चलना मुहाल है। क्या जद्दा पहुंच कर एक दो दिन क़याम के बाद उम्रा का एहराम बांध लिया जाए?

जवाबः जब मंज़िले मक़सूद जद्दा है, बल्कि मक्का मुकर्रमा है, तो एहराम मीक़ात से पहले बांधना ज़रूरी हैं। एयरलाईन के मुलाज़िमीन को चाहिए कि जब उनको सीट का तऔयुन हो जाए और बोर्डिंग कार्ड मिल जाए तब एहराम बांधें। अगर इंतिज़ारगाह में एहराम बांधने का वक़्त हो तो वहां बांध लें, वरना जहाज़ पर सवार हो कर बांध लें। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–94)

मस्अलाः एहराम बांधने के लिए ग़ुस्ल करना, नवाफ़िल पढ़ना शर्त नहीं मुस्तहब है, लिहाज़ा उज़्र की सूरत में (टिकट कनफ़र्म न होने में) सिर्फ़ सिले हुए कपड़े उतार कर चादरें पहन लें और उम्रा की नीयत कर के तल्बिया पढ़ लें, बस एहराम बंध गया और ये काम जहाज़ में सवार होने से पहले भी हो सकता है और जहाज़ पर सवार हो कर भी हो सकता है, जद्दा जा कर एहराम बांधना दुरुस्त नहीं, क्योंकि परवाज़ के दौरान जहाज़ मीक़ात से (बल्कि बाज़ औक़ात हुदूदे हरम से) गुज़र कर जद्दा पहुंचता है। इसलिए जहाज़ पर सवार होने से पहले या सवार हो कर एहराम बांध लेना ज़रूरी है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–95)

नीयत और तल्बिया के बग़ैर एहराम के अहकामात जारी नहीं होते, इस दुश्वारी से बचने के लिए घर या एयरपोर्ट से अगर वक़्त हो नफ़्ल पढ़ कर एहराम बांध लें लेकिन तल्बिया व नीयत जहाज़ में सवार हो कर करें। (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

ग़ैर ममालिक से जद्दा पहुंचने वाले कहां से एहराम बांधें?

मस्अला: अगर पाकिस्तान या इंडिया से उम्रा करने के इरादा से गए हैं तो फिर जद्दा में एहराम नहीं बांधना चाहिए। अपने वतन से एहराम बांध कर जाना चाहिए या जहाज़ में एहराम बांध लिया जाए। अगर किसी ने जद्दा से एहराम बांधा तो उसके ज़िम्मा दम लाज़िम है या नहीं? इसमें अकाबिर का इख़्तिलाफ़ रहा है। एहतियात की बात ये है कि कोई ऐसा कर चुका हो तो दम दे दिया जिए और आइंदा के लिए इससे परहेज़ किया जाए।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–101)

जद्दा से एहराम कब बांध सकता है?

मस्अला: अगर कोई शख़्स कराची से जद्दा का सफ़र अज़ीज़ों से मिलने के लिए कर रहा है और कराची से उसकी नीयत उम्रा के सफ़र की नहीं तो उसको मीक़ात से एहराम बांधने की ज़रूरत नहीं। जद्दा पहुंच कर अगर उसका इरादा उम्रा करने का हो जाए तो जद्दा से एहराम बांध ले, अगर उम्रा ही के लिए सफ़र कर रहा हो तो उसको मीक़ात से पहले एहराम बांधना ज़रूरी है। लिहाज़ा मज़कूरा सूरत में जब पहले जद्दा का इरादा है तो एहराम बांधना ज़रूरी नहीं। उसके बाद फिर जब जद्दा से उम्रा

साथ परवाज़ करता है और साथ साथ उस वक़्त एहराम बांधने में एहराम के सुनन व मुस्तहब्बात की रिआयत भी मुश्किल है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–6 सफ़्हा–410 व हाकज़ा फ़ी जवाहिरुलफ़िक्ह सफ़्हा–474 व उम्दतुलफ़िक्ह जिल्द–2 सफ़्हा–92 व अहकामे हज सफ़्हा–100)

मस्अला: अगर आपका जहाज़ इतनी बुलंदी से परवाज़ करता हुआ ख़त्ते मीक़ाती पर से गुज़रा है कि वह ज़मीन पर से नज़र नहीं आ सकता है तो आप पर कोई दम देना वाजिब नहीं है। और अगर आप का हवाई जहाज़ इतना नीचे नीचे परवाज़ कर के गया है तो ज़मीन पर से नज़र आ सकता है तो एक दम वाजिब होगा।

हवाई जहाज़ के मुहकमा से इसकी तस्दीक़ हो सकती है कि हवाई जहाज़ कितनी बुलंदी से परवाज़ करता है।

(मुन्तख़बाते निज़ामुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–140)

मस्अला: बग़ैर एहराम बांधे मीक़ात से गुज़रना हराम है। इसकी तलाफ़ी के लिए दम देना लाज़िम है, बशर्तेकि उसके आगे जहां से उसको गुज़रना है कोई और मीक़ात न हो। और अफ़ज़ल ये है कि पहले ही से एहराम बांध ले, बशर्तेकि अपने नफ़्स की तरफ़ से इत्मीनान हो कि मुनाफ़िये एहराम कोई हरकत सरज़द न होगी और अगर ये इत्मीनान न हो तो अफ़ज़ल यही है कि आख़िरी मीक़ात पर जहां से गुज़रना है एहराम बांध ले।

(किताबुलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1046 व हाकज़ा फ़ी मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–92)

रियाज़ से सफ़र करने वाला एहराम कहां से बांधे?

सवाल: रियाज से जब उम्रा या हज करने के लिए

हवाई जहाज़ से जद्दा जाते हैं, तो दौराने सफ़र हवाई जहाज़ का अमला ऐलान करता है कि मीक़ात आ गई एहराम बांध लें। सवाल ये होता है कि जहाज़ में जो ऐलान होता है मीक़ात आने का वहां अगर एहराम न बांधा जाए तो क्या हरज है?

जवाब: ऐसे लोग जो मीक़ात से गुज़र कर जद्दा आते हैं, उनको मीक़ात से पहले एहराम बांधना चाहिए। एहराम बांधने के लिए नफ़्ल पढ़ना सुन्नत है। अगर मौक़ा न हो तो नफ़्लों के बग़ैर भी एहराम बांधना सही है। जद्दा से मक्का जाते हुए रास्ता में कोई मीक़ात नहीं अलबत्ता इसमें इख़्तिलाफ़ है कि जद्दा मीक़ात के अन्दर है या ख़ुद मीक़ात है।

जो लोग हवाई जहाज़ से सफ़र कर रहे हों उनको चाहिए कि हवाई जहाज़ पर सवार होने से पहले एहराम बांध लें या कम अज़ कम चादर ही पहन लें और जब मीक़ात का ऐलान हो तो जहाज़ में एहराम बांध लें, यानी नीयत कर के तल्बिया पढ़ लें जद्दा पहुंचने का इंतिज़ार न करें।

मस्अला: एहराम बांधना मीक़ात से पहले फ़र्ज़ है। हवाई हजाज़ से सफ़र हो तो हवाई जहाज़ पर सवार होने से पहले एहराम बांध लिया जाए। जद्दा तक एहराम के मुअख़्ख़र करने के जवाज़ में उलमा का इख़्तिलाफ़ है। एहतियात की बात यही है कि एहराम को जद्दा तक न मुअख़्ख़र किया जाए। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–92)

बह्‌री जहाज़ के मुलाज़िम एहराम कहां से बांधें?

सवाल: अगर ये बह्‌री जहाज़ के मुलाज़िमीन सिर्फ़

जद्दा तक जायेंगे और फिर वापस आ जाऐंगे उनको मक्का मुकर्रमा नहीं जाना है तो वह एहराम नहीं बांधेंगे। अगर उनका इरादा मक्का मुकर्रमा जाने से पहले मदीना तय्यबा जाने का है तब भी उनको एहराम बांधने की ज़रूरत नहीं है। अगर वह हज का क़स्द रखते हैं और जद्दा पहुंचते ही उनको मक्का मुकर्रमा जाना है तो उनको "यलमलम" से एहराम बांधना लाज़िम है। इसलिए जो मुलाज़िमीन डियुटी पर हों वह सफ़र के दौरान सिर्फ़ जद्दा जाने का इरादा करें। वहां पहुंच कर जब उनको मक्का मुकर्रमा जाने की इजाज़त मिल जाए तब वह जद्दा से एहराम बांध लें। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ्हा–93)

मक्का में आया हुआ शख़्स एहराम कहां से बांधे?

मस्अला: अगर कोई शख़्स किसी काम से या डियूटी पर या किसी रिश्तादार से मिलने, या मरीज़ की अयादत के लिए या तिजारत वग़ैरा की ग़रज़ से मक्का मुकर्रमा में आया हुआ है और हज का वक़्त आ गया, उसके दिल में ख़्याल आया कि मैं हज कर लूं तो अपनी जाए इक़ामत से ही हज की नीयत कर के एहराम पहन ले।

मस्अला: अगर ये शख़्स (जो मक्का में आया हुआ है) उम्रा की नीयत करे तो हरम शरीफ़ से निकल कर मस्जिदे आइशा या जअ़राना या किसी जगह हुदूदे हरम से बाहर एहराम बांधने के लिए जाना होगा।

(हज्जे बैतुल्लाह के अहम फ़तावा सफ़्हा–28)

मस्अला: जो शख़्स मक्का मुकर्रमा में पहुंच गया और उम्रा कर के हलाल हो गया तो उसकी मीक़ात अब मिस्ल मक्का मुकर्रमा वालों की मीक़ात के है, यानी हज

जद्दा तक जायेंगे और फिर वापस आ जाएंगे उनको मक्का मुकर्रमा नहीं जाना है तो वह एहराम नहीं बांधेंगे। अगर उनका इरादा मक्का मुकर्रमा जाने से पहले मदीना तय्यबा जाने का है तब भी उनको एहराम बांधने की ज़रूरत नहीं है। अगर वह हज का क़स्द रखते हैं और जद्दा पहुंचते ही उनको मक्का मुकर्रमा जाना है तो उनको "यलमलम" से एहराम बांधना लाज़िम है। इसलिए जो मुलाज़िमीन डियुटी पर हों वह सफ़र के दौरान सिर्फ़ जद्दा जाने का इरादा करें। वहां पहुंच कर जब उनको मक्का मुकर्रमा जाने की इजाज़त मिल जाए तब वह जद्दा से एहराम बांध लें। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–93)

मक्का में आया हुआ शख़्स एहराम कहां से बांधे?

मस्अला: अगर कोई शख़्स किसी काम से या डियूटी पर या किसी रिश्तादार से मिलने, या मरीज़ की अयादत के लिए या तिजारत वग़ैरा की ग़रज़ से मक्का मुकर्रमा में आया हुआ है और हज का वक़्त आ गया, उसके दिल में ख़्याल आया कि मैं हज कर लूं तो अपनी जाए इक़ामत से ही हज की नीयत कर के एहराम पहन ले।

मस्अला: अगर ये शख़्स (जो मक्का में आया हुआ है) उम्रा की नीयत करे तो हरम शरीफ़ से निकल कर मस्जिदे आइशा या जअ़राना या किसी जगह हुदूदे हरम से बाहर एहराम बांधने के लिए जाना होगा।

(हज्जे बैतुल्लाह के अहम फ़तावा सफ़्हा–28)

मस्अला: जो शख़्स मक्का मुकर्रमा में पहुंच गया और उम्रा कर के हलाल हो गया तो उसकी मीक़ात अब मिस्ल मक्का मुकर्रमा वालों की मीक़ात के है, यानी हज

के लिए हरम शरीफ़ और उम्रा करने के लिए मस्जिदे आइशा से एहराम बांधना अफ़ज़ल है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–93)

मक्की, हज का एहराम कहां से बांधे?

सवाल: हम मक्का मुकर्रमा की हुदूदे मीक़ात के अन्दर मुक़ीम हैं। हम फ़रीज़ए हज या उम्रा के लिए अपनी रिहाईशगाह से एहराम बांध सकते हैं या मीक़ात जाना होगा?

जवाब: जो लोग मीक़ात और हुदूदे हरम के दरमियान रहते हैं उनके लिए "हिल्ल" मीक़ात है। हज व उम्रा दोनों का एहराम हुदूदे हरम में दाख़िल होने से पहले बांध लें। और जो लोग मक्का मुकर्रमा में या हुदूदे हरम के अन्दर रहते हैं वह हज का एहराम हुदूदे हरम के अन्दर से बांधें और उम्रा का एहराम हुदूदे हरम से बाहर निकल कर "हिल्ल" से बाधें, चुनांचे अह्ले मक्का हज का एहराम मक्का से बांधते हैं और उम्रा का एहराम बांधने के लिए "मस्जिदे आइशा" जाते हैं या जअ़राना जाते हैं।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–92)

मस्अला: अगर मक्की शख़्स मीक़ात से बाहर निकल जाएगा तो वापसी में उसको भी मिस्ल आफ़ाक़ी के मीक़ात से एहराम बांधना वाजिब है

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–92)

मस्अला: मुतमत्तेअ उम्रा का एहराम बांध कर मक्का मुकर्रमा पहुंचा और उम्रा कर के हलाल हो कर मक्का मुकर्रमा में ठहरा हुआ है तो वह शख़्स हज का एहराम हुदूदे हरम के अन्दर जहां से चाहे बांध सकता है, अपने

कमरा में से भी बांध सकता है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–304 बहवाला हिदाया अव्वलैन सफ़्हा–241 बाब तमत्तोअ़)

मस्अला: तमत्तोअ़ करने वाले को चाहिए कि जब उम्रा के आमाल से फ़ारिग़ हो जाए तो सर मुंडवा कर या बाल कतरवा कर हलाल हो जाए और आठ तारीख़ को हज का एहराम बांधे। इस एहराम में नवीं तारीख़ यानी यौमे अरफ़ा तक एहराम बांधने में ताख़ीर जाइज़ है जबकि अ़रफ़ात में वकूफ़ करना उसके वक़्त में मुमकिन हो। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1143)

मस्अला: मक्की और जो मक्का वालों के हुक्म में है यानी दाख़िले मीक़ात रहने वाले या ऐन मीक़ात पर रहने वाले हैं उनके लिए सिर्फ़ हज्जे इफ़राद करना है। तमत्तोअ़ और क़िरान ममनूअ़ है। अगर हज्जे तमत्तोअ़ कर लिया तो हज में ख़राबी न आएगी, यानी फ़ासिद नहीं होगा, अलबत्ता दम देना पड़ेगा।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–221 बहवाला हिदाया अव्वलैन–243 व दुर्रेमुख़्तार मअ़लशामी जिल्द–2 सफ़्हा–270)

बेहोश व मरीज़ का एहराम

मस्अला: अगर कोई शख़्स एहराम बांधने के वक़्त बेहोश हो जाए तो साथी को चाहिए कि अपने एहराम बांधने से पहले या बाद में बेहोश की तरफ़ से भी एहराम की नीयत कर के तल्बिया पढ़ ले। जब साथी ने उसकी तरफ़ से एहराम की नीयत कर के तल्बिया पढ़ लिया तो बेहोश का एहराम बंध गया।

मस्अला: बेहोश की तरफ़ से एहराम बांधने के लिए

उसके हुक्म या इजाज़त की ज़रूरत नहीं, उसने हुक्म किया हो या न किया हो, साथी अगर उसकी तरफ़ से उसके एहराम बांध देगा तो बहरसूरत उसका एहराम सही हो जाएगा।

मस्अला: जिस वक़्त बेहोश को होश आ जाए तो तअ़यीन एहराम की कर के बाक़ी अफ़आले हज खुद अदा करे और ममनूआ़ते एहराम से बचे और होश न आए तो जिस शख़्स ने उसकी तरफ़ से एहराम की नीयत की है वह या कोई दूसरा शख़्स वक़ूफ़े अरफ़ा और तवाफ़ वग़ैरा उसकी तरफ़ से नीयत कर के अगर अदा करेगा तो हज हो जाएगा। बेहोश को साथ ले जाना ज़रूरी नहीं है मगर बेहतर ये है कि साथ ले जाए।

मस्अला: और जो शख़्स ऐसे बेहोश की तरफ़ से तवाफ़ और सअ़ी करे उसको अपना तवाफ़ और सअ़ी अलाहिदा करनी होगी। एक तवाफ़ और सअ़ी दोनों की तरफ़ से काफ़ी न होगा। (जबकि बेहोश साथ न हो)

मस्अला: बेहोश को साथ ले जाने की हालत में एक तवाफ़ और सअ़ी दोनों की तरफ़ से हो जाएगा क्योंकि बेहोश खुद तवाफ़ और सअ़ी में मौजूद है, अलबत्ता बेहोश की तरफ़ से नीयत अलग करनी होगी।

व्हील चेयर (Wheel Chair) वग़ैरा पर जब मरीज़ या बेहाश को साथ लेकर तवाफ़ व सअ़ी कर रहे हैं या करा रहे हैं तो उसकी नीयत भी खुद कराने वाला कर ले तो दोनों की तरफ़ से अदा हो जाएगा।

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

मस्अला: बेहोश से कोई फ़ेल ममनूआते एहराम में से हो गया गो बिला इरादा हो, उसकी जज़ा बेहोश ही पर होगी, जिसने उसकी तरफ से एहराम की नीयत की है उस पर वाजिब न होगी।

मस्अला: जो शख़्स ख़ुद भी एहराम बांधे और बेहोश की तरफ़ से भी एहराम बांधा है अगर वह कोई फेल ममनूआते एहराम में से करेगा तो सिर्फ़ एक ही जज़ा वाजिब होगी।

मस्अला: अगर एहराम के बाद कोई शख़्स बेहोश हो जाए तो उसको अरफ़ात और तवाफ़ वग़ैरा में साथ ले जाना वाजिब है, दूसरे शख़्स की नियाबत काफ़ी न होगी। और जब एसे बेहोश को कोई दूसरा शख़्स तवाफ़ कराये तो कराने वाले के लिए तवाफ़ की नीयत करनी शर्त है।

मस्अला: अगर ऐसे बेहोश को ख़ुद उठा कर तवाफ़ कराया और अपनी तरफ़ से तवाफ़ की नीयत भी कर ली तो दोनों को एक तवाफ़ काफ़ी हो जाएगा बशर्तेकि बेहोश की तरफ़ से भी नीयत तवाफ़ की हो।

मस्अला: अगर उठाने वाला (तवाफ़ करने वाला) हज का तवाफ़ करता है और बेहोश को उम्रा वग़ैरा का तवाफ़ कराता है तब भी जाइज़ है। नीयत मुख़्तलिफ होने से कुछ मुज़ाएका नहीं, लेकिन बेहोश की तरफ़ से तवाफ़ की नीयत करना ज़रूरी है।

मस्अला: कोई शख़्स मरीज़ है बेहोश नहीं है और वह एहराम के वक़्त सो गया और किसी दूसरे शख़्स को एहराम बांधने के लिए उसने कह दिया था और दूसरे शख़्स ने उसकी तरफ से उसके एहराम बांध दिया तो

एहराम सही हो गया। जागने के बाद बाक़ी अफ़आले हज खुद अदा करे और ममनूआते एहराम से बचे। और अगर उसके हुक्म के बग़ैर किसी ने उसकी तरफ़ से एहराम बांध दिया तो उसका एहराम सही न होगा। इसी तरह ऐसे मरीज़ को दूसरा कोई तवाफ़ सोने की हालत में कराये तो उसके लिए भी उसका हुक्म और फ़ौरन तवाफ़ कराना शर्त है, अगर बग़ैर उसके हुक्म के या कुछ देर के बाद तवाफ़ कराया तो तवाफ़ न होगा।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़हा–108)

एहराम बांधने के बाद बग़ैर हज के वापसी?

सवालः इत्तिफ़ाक़ से कोई हाजी जो घर से एहराम बांध कर चला हो किसी मजबूरी के सबब एयरपोर्ट से वापस आ जाए और हज के लिए न जा सके तो क्या हुक्म है?

जवाबः घर से एहराम की चादरें पहन लेनी चाहिए। मगर एहराम न बांधा जाए, एहराम उस वक़्त बांधा जाए जब सीट पक्की हो जाए। एहराम बांधने का मतलब है हज या उम्रा की नीयत से तल्बिया पढ़ लेना।

और अगर एहराम बांध चुका था यानी एहराम का कपड़ा पहन कर तल्बिया पढ़ कर हज या उम्रा की नीयत कर चुका था। उसके बाद नहीं जा सका तो वह एहराम नहीं उतार सकता जब तक कि क़ुर्बानी की रक़म किसी के हाथ मक्का मुकर्रमा न भेज दे और आपस में यानी जिसके हाथ रक़म भेज रहा है यह तय हो जाए कि फ़लाँ दिन क़ुर्बानी का जानवर ज़िब्ह होगा। जब क़ुर्बानी का जानवर ज़िब्ह हो जाए तब ये एहराम खोले और आइंदा

उस हज की कजा करे।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफहा–106)

एहराम बांधने वाला एहराम में शर्त लगा ले

मस्अलाः अगर कोई शख्स एहराम बांधने वाला ये कहे कि अगर मुझे कोई मानेअ पेश आ गया तो मेरा एहराम वहीं पर खुल जाएगा या इसी तरह एहराम बांधते वक्त कोई और अलफाज कहे और उसके बाद किसी हादसा की वजह से उम्रा व हज के आमाल पूरे न कर सका तो उसके लिए एहराम खोल देना जाइज होगा। उस पर कोई जुर्माना वाजिब न होगा। तो ये उज्र शरअी होगा और एहराम खोल देना जाइज होगा।

(हज्जे बैतुल्लाह के अहम फतावा सफ्हा–7)

मस्अलाः सुन्नत यही है कि अगर मानेअ पेश आने का डर हो तो एहराम बांधते वक्त शर्त लगा दे, क्योंकि आंहज़रत (स.अ.व.) से साबित है कि जब ज़बाआ बिन्त अलजुबैर इब्न अब्दुल मुत्तलिब ने आप (स.अ.व.) से किसी मरज़ का शिकवा किया तो आप (स.अ.व.) ने उनको ऐसा करने का हुक्म दिया था।

(हज्जे बैतुल्लाह के अहम फतावा सफ्हा–41)

हालते एहराम में उज़्र के मसाइल

अगर कोई वाजिब तर्क किया जाता है तो अगर बेउज़्र तर्क किया गया तो कुर्बानी करनी होगी और बउज़्र तर्क करने में कुछ नहीं न कुर्बानी न सदका। अगर ममनूआते एहराम में से किसी चीज़ का इरतिकाब बिला उज़्र किया जाए तो कहीं कुर्बानी वाजिब होती है कहीं सदका जैसा कि गुज़श्ता ब्यान से वाज़ेह हो चुका और अगर किसी

उज़्र से इरतिकाब किया जाए तो अगर उसके बेउज़्र इरतिकाब से कुर्बानी वाजिब होती थी तो अब इख़्तियार दिया जाएगा चाहे कुर्बानी करे चाहे कुर्बानी के बदले छः मिस्कीनों को एक एक मिक्दार सदकए फ़ित्र की दे दे, चाहे तीन रोज़े रख ले जहां चाहे रखे और जिस वक़्त चाहे रखे और अगर उसके बेउज़्र इरतिकाब से सदक़ा वाजिब होता था तो अब इख़्तियार दिया जाएगा चाहे सदक़ा दे दे और चाहे हर सदक़ा के बदले एक रोज़ा रख ले।

अफ़ज़ल ये है कि ये मिस्कीन मक्का मुकर्रमा के रहने वाले हों, उन मिस्कीनों की तादाद "छः" का होन ज़रूरी है, अगर कोई शख़्स छः मिस्कीनों की मिक्दार सदकए फ़ित्र तीन या चार मिस्कीनों को दे दे तो काफ़ी नहीं।

उज़्र की मिसालें

- बुख़ारः मसलन किसी को बुख़ार चढ़ा और उसने सर ढांक लिया या कोई सिला हुआ कपड़ा पहन लिया।
- सरदीः मसलन किसी को सरदी बहुत मालूम हुई उसने कोई सिला हुआ कपड़ा पहन लिया, बग़ैर सिला हुआ गर्म कपड़ा कोई उसके पास न था।
- ज़ख़्मः मसलन ज़ख़्म पर फाहा वग़ैरा रखने के लिए बाल उस मक़ाम के मुंडवाए या कोई ख़ुशबूदार मरहम उस मक़ाम पर रखा।
- दर्दे सरः मसलन दर्दे सर के दूर करने के लिए कोई ख़ुशबूदार लेप इस्तेमाल किया।
- जूएँः मसलन जूएँ सर में पड़ गईं और इस ज़रूरत से उसने बाल मुंडवा डाले।

उज्र के लिए ये जरूरी नहीं कि हर वक़्त रहे, न ये जरूरी है कि उससे खौफ मर जाने का हो, बल्कि सिर्फ़ तकलीफ़ और मशक़्क़त का होना काफ़ी है। ख़ता और निस्यान और बेहोशी और मजबूर होना (मसलन किसी महरम से किसी ने कहा कि मैं तुझ को क़त्ल किए डालता हूं नहीं तो तू अपना सर मुंडवा ले, या ये खुशबूदार लिबास पहन ले) और सोना (मसलन किसी महरम ने सोने की हालत में अपना सर चादर में ढांक लिया या और कोई फ़ेल किया) और मुफ़्लिसी का शुमार उज़्र में नहीं है, बल्कि उन हालतों में जो जिनायत सादिर होगी उसका कफ़्फ़ारा ज़रूर देना होगा, हां आख़िरत का गुनाह उसके ज़िम्मा न होगा।

मुफ़्लिसी से मुराद ये है कि किसी से कोई जिनायत सादिर हुई और उसकी जवह से उस पर कुर्बानी या सदक़ा वाजिब हो और उसके पास इस क़दर रुपया नहीं है जो वह कुर्बानी कर सके या सदक़ा दे सके तो वह शख़्स माजूर न समझा जाएगा, उस पर जो कुर्बानी या सदक़ा वाजिब हुआ था वाजिब रहेगा, हाँ ये उसका इख़्तियार है कि जब उसको मक़दूर हो तब कफ़्फ़रा अदा करे और अगर मरते दम तक इतनी कुदरत हासिल न हुई तो उम्मीद है कि हक़ तआला उससे दरगुज़र फ़रमाए।

(इल्मुलफ़िक़्ह मअ़ हाशिया जिल्द–5–50)

एहराम में कैसा जूता पहना जाए?

मस्अला: मोज़े और ऐसा जूता जो क़दम के बीच में उभरी हुई हड्डी को छुपा ले ये एहराम में ममनूअ़ है, अगर ऐसा जूता या मोजा एक दिन या एक रात पहने रहा तो

दम वाजिब है और उससे कम में सदका बकद्रे सदकतुलफित्र।

(अहकामे हज सफ्हा-95)

मस्अला: बाज़ लोग एहराम में ऐसा सिलीपर या जूता इस्तेमाल करते हैं जिससे क़दम के बीच की हड्डी (जो नीचे से ऊपर की जानिब है और उठी हुई है) छुप जाती है। ऐसा सिलीपर और जूता एहराम में मर्दों को इस्तेमाल करना जाइज़ नहीं, जिससे ये हड्डी छुप जाए, इसलिए या तो उतना हिस्सा काट दिया जाए या उसके अगली जानिब कपड़ा दे दे ताकि हड्डी खुली रहे।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ्हा-358 व हाकज़ा फी फ़तावा दारुलउलूम जिल्द-6 सफ्हा-555)

मस्अला: मोहरिम ने एहराम की हालत में अगर बूट पहना और कअबैन छुपे रहे (उठी हुई हड्डी) तो उसके ज़िम्मा दमे जिनायत लाज़िम है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द-6 सफ्हा-555, बहवाला बिदाए जिल्द-1 सफ्हा-186)

एहराम की हालत में पैर की हड्डी कहां तक खुली रहे?

मस्अला: एहराम में "कअ़ब" से मुराद वह जोड़ (पिंडली और क़दम का) है जो क़दम के दरमियानी हिस्सा में उस जगह होता है जिस जगह जूता के तस्मे बांधे जाते हैं। उसके बरख़िलाफ़ वुज़ू में कअ़ब से मुदार वह दो हड्डीयाँ (टख़ने) हैं जो पाँव में उभरी हुई होती हैं। और हदीस (जिसमें खुफ्फ़ैन को कअ़ब के नीचे तक काटने का हुक्म है) में कअ़ब के मज़कूरा दो मिस्दाक़ में से कोई मिस्दाक़ मुऐयन नहीं है, लेकिन कअ़ब का दोनों मानों में इस्तेमाल मौजूद है। इसलिए एहतियातन पहले माना पर महमूल

किया गया है। फ़तहुलक़दीर में यही मज़कूर है यानी मस्अला एहराम में बतकाज़ए एहतियात कअब से मुराद वस्त क़दम का मज़कूरा जोड़ मुराद लिया गया है। क्योंकि एहतियात का तक़ाज़ा ये है कि ऐसे माना मुराद लिए जाऐं जिसमें पाँव का ज़्यादा से ज़्यादा हिस्सा खुला रखे।

(बह्रुर्राइक जिल्द–2 सफ़्हा–324 व शामी जिल्द–2 सफ़्हा–490 में तफ़सील देखिए)

"हासिल ये कि एहराम की हालत में दोनों टख़ने और पैरों के ऊपर जहाँ बाल उगते हैं जो उभरा हुआ हिस्सा है उसका खुला रहना ज़रूरी है। पस एहराम की हालत में मर्दों को बेहतर तो हवाई चप्पल पहनना है और अगर जूता या चप्पल ऐसा हो जो टख़नों और मज़कूरा पैरों के बालाई हिस्सा को न छुपाता हो तो उसका पहनना भी दुरुस्त है, अलबत्ता अगर ऐड़ी, पंजा उंगलियाँ छुपी रहें तो कोई हरज नहीं।" (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

एहराम की हालत में फूल वग़ैरा का इस्तेमाल?

मस्अला: एहराम पहनने के बाद गले में फूलों का हार डालना मकरूह है। आम तौर पर लोग इस तरफ़ ख़्याल नहीं करते हैं और ख़ुशबूदार फूल क़स्दन सूंघना भी मकरूह है मगर इससे कुछ लाज़िम नहीं आता।

(अहकामे हज सफ़्हा–94)

मस्अला: एहराम की हालत में ख़ुशबू, छूना या सूंघना, ख़ुशबू वाले की दूकान पर ख़ुशबू सूंघने के लिए बैठना, ख़ुशबूदार मेवा और ख़ुशबूदार घास को सूंघना और छूना मकरूह है, अगर बिला इरादा ख़ुशबू आ जाए तो कुछ

हरज नहीं है। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा-114)

मस्अला: एहराम बांधने के बाद धूनी दिया हुआ कपड़ा पहनना मकरूह है। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा-114)

मस्अला: एहराम की हालत में फूल और खुशबूदार फल सूंघने से कोई जज़ा वाजिब नहीं होती, लेकिन सूंघना मकरूह है। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा-227 व हाकजा किताबुलफ़िक्ह जिल्द-1 सफ़्हा-1056)

मस्अला: एहराम की हालत में इत्र वाले की दूकान पर बैठने से कोई मुज़ाएका नहीं अलबत्ता सूंघने की नीयत से बैठना मकरूह है। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा-229)

मस्अला: एहराम की हालत में ऐसे मकान में दाख़िल हुआ जिसमें किसी चीज़ की धूनी दी गई थी और एहराम वाले के कपड़ों में खुशबू आने लगी और खुशबू कपड़ों को बिलकुल नहीं लगी तो कुछ भी वाजिब नहीं है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा-230)

मस्अला: एहराम की हालत में खुशबू यानी इत्रीयात वग़ैरा का सूंघना या उसका पास रखना मकरूह है।

(किताबुलफ़िक्ह जिल्द-1 सफ़्हा-1056)

मस्अला: हालते एहराम में हजरे अस्वद का बोसा न लें, और न हाथ लगाऐं क्योंकि उसमें खुशबू लगी होती है। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा-232)

एहराम से पहले खुशबू लगाना?

सवाल: गुस्ल करने के बाद एहराम बांधने से पहले बदन पर और एहराम के कपड़ों पर खुशबू लगा सकते हैं या नहीं?

जवाब: एहराम बांधने से पहले तेल और सुरमा लगाना

जाइज़ है और खुशबू लगाने में ये तफ़सील है कि बदन को खुशबू लगाना मुतलकन जाइज़ है और कपड़ों को ऐसी खुशबू लगाना जाइज़ है जिसका जिस्म पर असर बाकी न रहे और जिस खुशबू का असर बाकी रहे वह कपड़ों पर लगाना ममनूअ़ है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ्हा–87)

मस्अला: एहराम बांधने से पहले (जिस्म पर) इत्र लगाया और एहराम बांधने के बाद (बदन पर) उसकी खुशबू बाकी है तो कुछ हरज नहीं, चाहे कितनी ही मुद्दत तक बाकी रहे। (मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ्हा–229)

मस्अला: बिना खुशबू का सुरमा एहराम की हालत में लगाना जाइज़ है और अगर खुशबूदार हो तो सदका है, लेकिन अगर दो मरतबा से ज़्यादा लगाया तो दम वाजिब होगा। (मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ्हा–232 व हाकजा फी किताबिलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ्हा–1057 व अहकामे हज सफ्हा–94)

एहराम से पहले खुशबू लगाने की वजह ये है कि एहराम बांधने के बाद मोहरिम ख़ाक आलूद हो जाएगा। उसके जिस्म व कपड़ों से पसीना और मैल की बू आने लगेगी। इसलिए ज़रूरी है कि एहराम बांधने से पहले उसकी कुछ तलाफ़ी कर ली जाए, ताकि सूरतेहाल कुछ देर से बिगड़े।

(रहमतुल्लाहिलवासिआ जिल्द–4 सफ्हा–318)

एहराम में गर्दन व कान ढांकना?

सवाल: एहराम की हालत में ज़रूरत के वक़्त कानों पर, गर्दन व पेशानी पर रूमाल बांध सकते हैं या नहीं?

जवाबः गर्दन और कानों पर कपड़ा डालने में कोई हरज नहीं, पेशानी ढांकना जाइज़ नहीं, अलबत्ता ज़रूरत के वक़्त जाइज़ है, मगर जज़ा बहरहाल लाज़िम होगी। जिसकी तफ़सील ये है कि बिला उज़्र चेहरा या सर का चौथाई हिस्सा या चौथाई से ज़्यादा एक दिन या एक रात ढांका तो दम वाजिब है, और चौथाई से कम या एक दिन या एक रात से कम ढांका तो निस्फ़ साअ़ सदक़ा वाजिब है, यानी मिक़्दारे सदक़ए फ़ित्र और उज़्र से ढांका तो पहली सूरत में इख़्तियार है दम दे या तीन साअ़ छः मसाकीन पर सदक़ा करे या तीन रोज़े रखे। और दूसरी सूरत में निस्फ़ साअ़ एक मिस्कीन को सदक़ा दे या एक दिन का रोज़ा रखे। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–533 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–227 व हाकज़ा अहकामे हज सफ़्हा–95)

मस्अलाः एहराम की हालत में अलावा सर मुंह के पूरे बदन को ढांपना जाइज़ है नीज़ कान व गर्दन और पैरों को रूमाल व चादर वग़ैरा से ढांपना जाइज़ है।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–115)

मस्अलाः एहराम की हालत में नाक, थोडी और रुख़्सार को कपड़े से छुपाना मकरूह है, हाथ से छुपाना जाइज़ है।

मस्अलाः एहराम की हालत में तकिया पर मुंह के बल लेटना मकरूह है और सर या रुख़सार का तकिया पर रखना जाइज़ है। (मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–114)

एहराम में लिहाफ़ ओढ़ना?

मस्अलाः मोहरिम को हालते एहराम में सर्दी से हिफ़ाज़त के लिए लिहाफ़ ओढ़ना दुरुस्त है मगर सर खुला रखे,

बाक़ी तमाम बदन पर लिहाफ़ रहे तो कोई मुज़ाएक़ा नहीं।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–17 सफ़्हा–212)

मस्अला: पस जो कोई सिले हुए कपड़ों में एहराम बांधे तो अगर बाद एहराम की नीयत करने के पूरे दिन पहने रहे तो दम दे और कम में सदक़ा और जो सोने में सर ढका तो हसबे क़िल्लत व कसरते वक़्त के कफ़्फ़ारा दे, क्योंकि सोना जागना इस बाब में बराबर है, मगर सोते को गुनाह नहीं होता। (ज़ुब्दह) और गुनाह का न होना उस वक़्त है कि जब सोने के वक़्त इरादा से न ढांके और जब जागे उस वक़्त मालूम हो तो उतार दे।

(ज़ुब्दतुलमनासिक मअ़ उम्दतुलमनासिक सफ़्हा–364)

मस्अला: एहराम की हालत में सर्दी या किसी और वजह से कान में रूई रखना जाइज़ है। मगर ख़ुशबू के इस्तेमाल की इजाज़त नहीं है यानी ख़ुशबू से तर की हुई रूई का रखना जाइज़ नहीं है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–17 सफ़्हा–201)

एहराम की हालत में ग़ुस्ल करना?

मस्अला: ज़रूरत के लिए यानी पाकी हासिल करने के लिए या ठंडक हासिल करने के लिए या गुबार दूर करने के लिए ख़ालिस पानी से ठंडा हो या गर्म गुस्ल करना इजाज़ है, लेकिन मैल दूर न करे।

मस्अला: साबुन (बिला ख़ुशबू वाले से) या दूसरी मैल काटने वाली चीज़ से गुस्ल करना एहराम वाले के लिए जाइज़ है, लेकिन उससे जूएँ न मरने पाऐं।

(किताबुलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1063)

मस्अला: बग़ैर ख़ुशबू के ख़ालिस साबुन से धोने में

कोई चीज़ वाजिब नहीं, लेकिन एहराम वाले को मैल दूर करना मकरूह है। (मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–231)

एहराम की हालत में मेंहदी लगाना?

मस्अला: एहराम वाले को मेंहदी का ख़िज़ाब लगाना ज़ाइज़ नहीं है, क्योंकि वह भी खुशबू है और हालते एहराम में खुशबू ममनूअ़ है, ख़्वाह मर्द हो या औरत और ख़्वाह मेंहदी का ख़िज़ाब हाथों में लगाया जाए या सर में या बदन के किसी और हिस्से में।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1056)

मस्अला: सारी दाढ़ी या पूरी हथेली पर मेंहदी लगाने से दम वाजिब होता है, नीज़ अगर दर्दे सर की वजह से ख़िज़ाब किया तो जज़ा वाजिब होगी।

मस्अला: अगर सारे सर या चौथाई सर का मेंहदी से ख़िज़ाब किया और मेंहदी पतली पतली लगाई ख़ूब गाढ़ी नहीं लगाई तो दम वाजिब है, और अगर गाढ़ी लगाई तो दो दम वाजिब होंगे। अगर सारे दिन या सारी रात लगाए रखा तो, और अगर एक दिन या रात से कम लगाया तो एक दम एक सदक़ा वाजिब होगा। एक दम खुशबू की वजह से और एक सर ढांकने की वजह से। ये मर्द का हुक्म है औरत पर एक ही दम वाजिब होगा क्योंकि उसके लिए सर ढांकना ममनूअ़ नहीं है।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–223 व हाकज़ा फी अहकामे ... सफ़्हा–93)

हालते एहराम में बालों या बदन पर तेल लगाना?

मस्अला: जिन अश्या को इंसान के जिस्म पर लागया जाता है उनकी तीन क़िस्में हैं। एक तो वह ख़ालिस

ख़ुशबू की चीज़ है और ख़ुशबू ही के लिए लगाई जाती है, मसलन मुश्क, काफूर, अंबर वग़ैरा ऐसी चीजों को तेल वग़ैरा में इस्तेमाल करना एहराम की हालत में किसी तरह भी जाइज़ नहीं है।

दूसरी चीज़ वह है जो ख़ालिस ख़ुशबू की चीज़ नहीं है और न उसके माना ख़ुशबू के हैं और न किसी तरह उस पर ख़ुशबू का इतलाक़ होता है, जैसे चरबी, ऐसी चीज़ का इस्तेमाल चिकनाई वग़ैरा के तौर पर हालते एहराम में जाइज़ है और उस पर कोई तावान आइद नहीं होता।

तीसरी वह चीज़ जो गो बज़ाते ख़ुद ख़ुशबू न हो लेकिन ख़ुशबू की तरह हो सकती है, लिहाज़ा कभी तो ख़ुशबू और चिकनाई के लिए और कभी दवा के तौर पर काम में लाई जाती है। जैसे रोग़ने ज़ैतून, अगर उसको ख़ुशबूदार चिकनाई के तौर पर इस्तेमाल किया जाए तो वह ख़ुशबू के हुक्म में है और एहराम की हालत में उसका इस्तेमाल जाइज़ नहीं है, लेकिन अगर दवा के तौर पर इस्तेमला हो तो उसका लगाना और खाना जाइज़ है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1059)

मस्अला: एहराम की हालत में ज़ख़्म या हाथ पाँव की फटन में तेल लगाना जाइज़ है, बशर्तेकि ख़ुशबू वाली न हो तो, नीज़ एहराम की हालत में घी, तेल, चरबी का खाना जाइज़ है। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–116)

मस्अला: ज़ैतून या तिल का तेल ज़ख़्म पर या हाथ पाँव की बवाइयों यानी फटन में लगाया या नाक कान में टपकाया तो दम व सदका नहीं है।

मस्अला: जैतून या तिल का ख़ालिस तेल अगर एक बड़े उज़्व या उससे ज़्यादा पर खुशबू के तौर पर लगाया तो दम वाजिब है और अगर उससे कम पर लगाया तो सदक़ा वाजिब है और अगर उसको खा लिया या दवा के तौर पर लगाया तो कुछ भी वाजिब नहीं है।

मस्अला: तिल को या ज़ेतून के तेल में अगर खुशबू मिली हुई है, जैसे गुलाब या चम्बेली वग़ैरा के फूल डाल दिए जाते हैं और उसको रौग़ने गुलाब कहते हैं या कोई और खुशबूदार तेल अगर एक उज़्व कामिल पर लगाया जाएगा तो दम होगा और उससे कम पर सदक़ा।

मस्अला: चरबी, घी, रौग़ने बादाम, सरसों का तेल, या रिफाइंड तेल वग़ैरा खाना या लगाना जाइज़ है।

मस्अला: जो चीज़ें खुद खुशबू हैं मसलन अम्बर, मुश्क, काफूर वग़ैरा उनके इस्तेमाल से जज़ा वाजिब होती है। अगरचे दवा के तौर पर हो।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–222)

एहराम की हालत में खुशबूदार गिज़ा खाना?

मस्अला: पुलाव, बिरयानी, ज़र्दा वग़ैरा पकी हुई चीज़ में ज़ाफ़रान, इलाइची, दारचीनी वग़ैरा ख़ुशबूदार चीज़ डाली हो तो ऐसी पकी हुई चीज़ खाना जाइज़ है, चाहे जितनी मिक्दार में ख़ुशबूदार चीज़ डाली गई हो। उसके खाने से कुछ वाजिब न होगा।

(फतावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–303 बहवाला शामी जिल्द–2 सफ़्हा–277 व हाकज़ा मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–114)

मस्अला: और जो खुशबूएँ हक़ीक़ी कहलाती हैं जैसे

मुश्क, अम्बर, ज़ाफ़रान, अगर पके हुए खाने में मिला हुआ खाया तो कुछ वाजिब नहीं, अगरचे ग़ालिब हो और जो पका हुआ न हो यानी जो खाना पकाया ही नहीं जाता तो अगर ख़ुशबू की चीज़ ग़ालिब है अगरचे ख़ुशबू न दे तो दम वाजिब है और जो मग़लूब (कम) हो अगरचे ख़ुशबू ख़ूब दे तो कुछ नहीं न दम न सदक़ा मगर मकरूह है। (ज़ुब्दतुलमनासिक जिल्द–2 सफ़्हा–355)

मस्अला: अगर किसी ने बहुत सी ख़ालिस ख़ुशबू खाई यानी इतनी कि मुंह के अक्सर हिस्सा में लग गई तो दम वाजिब है। और अगर थोड़ी खाई यानी मुंह के अक्सर हिस्सा में नहीं लगी तो सदक़ए फ़ित्र वाजिब है, ये उस वक़्त है जबकि ख़ालिस ख़ुशबू खाये और अगर उसको किसी खाने में डाल कर पकाया तो कुछ वाजिब नहीं, अगरचे ख़ुशबू की चीज़ ग़ालिब हो।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–247 व हाकज़ा किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1057 व अहकामे हज सफ़्हा–95)

मस्अला: पान में ख़ुशबूदार तम्बाकू को या इलाइची डाल कर खाना एहराम वाले के लिए बिलइत्तिफ़ाक़ मकरूह है और कुतुबे फ़िक़्ह की बाज़ इबारात से दम लाज़िम होने की तरफ़ इशारा निकलता है लिहाज़ा एहतियात ज़रूरी है।

(अहकामे हज सफ़्हा–94 व हाकज़ा मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–116 व इमदादुल अहकाम सफ़्हा–163)

हालते एहराम में ख़ुशबूदार शरबत पीना?

मस्अला: ऐसी बोतल, शरबत और फूलों का रस जिनमें ख़ुशबू डाली गई हो एहराम की हालत में न पी जाएं,

अगर कोई थोडी मिक़दार में एक मरतबा पीएगा तो सदका (पौने दो किलो गेहूं या उसकी क़ीमत) वाजिब होगा और अगर ज़्यादा मिक़्दार में पिया थोड़ा थोड़ा दो तीन बार तो दम वाजिब होगा, और जिस बोतल में बिल्कुल ख़ुशबू न डाली गई हो वह पीना जाइज़ है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–302 बहवाला शामी जिल्द –2 सफ़्हा–277)

मस्अलाः अगर ख़ुशबू पीने की चीज़ में मिलाई, अगर ख़ुशबू ग़ालिब है तो दम दे और अगर मग़लूब है तो सदक़ा दे, मगर जो मग़लूब को बार बार इस्तेमाल करे तो दम वाजिब है। पस अगर बहुत पिया तो दम और थोड़ा पिया तो सदक़ा है। और अगर थोड़ा थोड़ा दो बार पिया तो दम लाज़िम है। (ज़ुब्दतुलमनासिक जिल्द–2 सफ़्हा–41 व हाकज़ा किताबुलफ़िक्ह जिल्द–1 सफहा–1058 व अहकामे हज सफ़्हा–92)

मस्अलाः पीने की चीज़ में मसलन चाय, क़हवा वग़ैरा में ख़ुशबू मिलाई तो अगर ख़ुशबू ग़ालिब है तो दम वाजिब है और अगर ख़ुशबू मग़लूब है तो सदक़ा है, लेकिन अगर कई मरतबा पिया तो दम वाजिब होगा। और पीने की चीज़ में ख़ुशबू मिला कर पकाने की वजह से कुछ फ़र्क़ नहीं आता, पीने की चीज़ें ख़ुशबू डाल कर पकाई जाएँ या न पकाई जाएँ बहरसूरत जज़ा है।

मस्अलाः लेमन, सोडा या कोई और बोतल या शरबत जिसमें ख़ुशबू मिलाई गई हो एहराम की हालत में पीना जाइज है और जिस बोतल में ख़ुशबू मिली हो अगरचे बराए नाम हो, वह अगर पी जाएगी तो सदक़ा वाजिब

होगा, लेकिन अगर एक ही मजलिस में कई बार पीये तो दम वाजिब होगा। और अगर खुशबू ग़ालिब हो तो एक ही बार पीने में दम वाजिब हो जाएगा। (अहकामे हज सफ़हा–92 व हाकज़ा मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़हा–321)

एहराम की हालत में विक्स व बाम इस्तेमाल करना?

सवालः विक्स, बाम जो दर्दे सर या सर्दी की वजह से लगाया जाता है, इसी तरह बाम या दवाएँ जिनमें एक ख़ास क़िस्म की ख़ुशबू होती है, मरज़ या दर्द की वजह से एहराम की हालत में लगाना कैसा है?

जवाबः विक्स, बाम खुशबूदार चीज़ है और उसकी खुशबू तेज़ है, अगर पूरी पेशानी पर लगाया तो दम लाज़िम होगा। फ़ुक़्हाए किराम ने हथेली को बड़ा उज़्व शुमार किया है हाथ के ताबेअ़ नहीं किया। इसलिए पेशानी भी बड़ा उज़्व होना चाहिए। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़हा–284)

मस्अलाः अगर खुशबू को दवा के तौर पर लगाया या ऐसी दवा लगाई जिसमें खुशबू ग़ालिब है और पकी हुई नहीं है तो अगर ज़ख़्म एक बड़े उज़्व के बराबर या उससे ज़्यादा नहीं तो सदका वाजिब है, और अगर एक बड़े उज़्व के बराबर है तो दम वाजिब है। उज़्र की वजह से बाम लगाया हो तब भी यही हुक्म रहेगा।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़हा–248)

एहराम की हालत में चटनी या अचार खाना?

मस्अलाः हालते एहराम में ऐसी चीज़ खाये जिसमें खुशबू मिलाई गई हो, मगर वह पकाई नहीं गई, जैसे चटनी, अचार वग़ैरा तो अगर खुशबू ग़ालिब है तो दम वाजिब होगा। जब कि मिक़्दार खाने की ज़्यादा हो और

अगर थोड़ा सा खाए तो सदक़ा दे अगरचे ख़ुशबू न आती हो, क्योंकि इस सूरत में जज़ा का मदार जज़ा पर है न कि ख़ुशबू आने पर, अगर इस तरह खाना थोड़ा थोड़ा कई बार खाया तो दम लाज़िम होगा।

(अहकामे हज सफ़्हा–92)

हालते एहराम में मंजन या टूथ पेस्ट इस्तेमाल करना?

मस्अला: अगर मंजन या टूथ पेस्ट में लौंग, काफ़ूर, इलाइची या ख़ुशबूदार चीज़ें डाली गई हों और वह पकी हुई न हो और मिक़्दार के एतेबार से ख़ुशबूदार चीज़ मग़लूब हो यानी कम मिक़्दार में हो तो ऐसा मंजन एहराम की हालत में करना मकरूह होगा। मगर सदक़ा वाजिब न होगा। और अगर मंजन या टूथ पेस्ट में ख़ुशबूदार चीज़ ग़ालिब हो तो चूंकि मंजन या टूथ पेस्ट पूरे मुंह या अक्सर हिस्सा में लग जाएगा लिहाज़ा दम वाजिब होगा। बेहतर ये है कि एहराम की हालत में मिस्वाक ही इस्तेमाल करे मंजन या टूथ पेस्ट इस्तेमाल न करे, इससे सुन्नत भी अदा न होगी। इसलिए मिस्वाक को इख़्तियार करना चाहिए।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–285 बहवाला गुनयतुलमनासिक सफ़्हा–132)

बदन पर ख़ुशबू इस्तेमाल करने की जिनायत

मोहरिम ने अगर किसी बड़े उज़्व मसलन सर या दाढ़ी या हथेली या रान या पिंडली पर पूरे उज़्व पर ख़ुशबू लगाई तो जिनायत कामिल हो गई, अगरचे ज़रा देर ही इस्तेमाल की हो। इस सूरत में बग़ैर उज़्र के दम लाज़िम है, अगर फ़ौरन ही उसको धो डाला हो तब भी दम साक़ित नहीं होगा। और उज़्र की सूरत में मज़कूरा

साबिक़ तीन इख़्तियार हैं कि दम दे या तीन रोज़े रखे या छः मिस्कीनों को बक़द्र सदक़तुलफ़ित्र अदा करे। अगर किसी छोटे उज़्व जैसे नाक, कान, आँख, मूंछ, उंगली को खुशबू लगाई या बड़े उज़्व के किसी हिस्सा को खुशबू लगाई पूरे उज़्व को नहीं तो जिनायत नाक़िस है इसमें सदक़ा बक़द्रे सदक़तुलफ़ित्र वाजिब है और उज़्र की हालत में तीन रोज़े भी क़ाइम मक़ाम हो सकते हैं।

नोटः ये उस वक़्त है जबकि खुशबू थोड़ी मिक़्दार में हो। और अगर खुशबू ज़्यादा हो तो फिर छोटे बड़े उज़्व का और उज़्व कामिल और नाक़िस का कोई फ़र्क़ नहीं हर हाल में दम लाज़िम हुआ। और थोड़ा ज़्यादा होना हर खुशबू को अलग अलग होता है। जिसको उरफ़ी तौर ज़्यादा समझा जाए वह ज़्यादा कहलाई जाएगी। मसलन मुश्क की क़लील मिक़्दार भी जो आम इस्तेमाल के लिहाज़ से कसीर समझी जाए वह कसीर ही में दाख़िल होगी।

(अहकामे हज सफ़्हा–91)

कपड़े में खुशबू इस्तेमाल करने की जिनायत

मस्अलाः मोहरिम अगर खुशबूदार कपड़ा पहने तो अगर खुशबू बहुत है मगर बालिश्त दो बालिश्त से कम मिक़्दार में लगी हुई हो या खुशबू थोड़ी है मगर बालिश्त दो बालिश्त से ज़्यादा में लगी है तो ऐसे कपड़े को सारे दिन या सारी रात पहने रहे तो दम है। अगर थोड़ी खुशबू जो बालिश्त दो बालिश्त से कम लगी हो तो सदक़ा दे अगरचे सारा दिन पहने रहे। और ऐसे कपड़े को एक दिन से कम पहनने की सूरत में भी सदक़ा वाजिब है। और एक दिन से कम में अगरचे बहुत खुशबू हो और बालिश्त दो

बालिश्त में भरी हुई हो तो सदक़ा है और आधी रात से आधे दिन तक एक दिन शुमार होगा।

(अहकामे हज सफ़हा–91 व इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–5 सफ़हा–48)

मस्अला: जिस बिस्तर में ख़ुशबू लगाई हुई हो एहराम वाले के लिए उस पर लेटना, आराम करना जाइज़ नहीं, इसकी जज़ा को ख़ुशबू में भरे हुए कपड़े पर क़यास कर लें। (अहकामे हज सफ़हा–93)

मस्अला: हजरे अस्वद पर अगर ख़ुशबू लगी हो (हज के मौसम में बाज़ लोग उस पर ख़ुशबू लगा देते हैं) और तवाफ़ करने वाला एहराम पहने हुए हो तो उसका "इस्तीलाम" जाइज़ नहीं, बल्कि हाथों से इशारा कर के हाथों को बोसा दे ले। अगर एहराम वाले ने हजरे अस्वद का इस्तीलाम किया पस अगर उसके मुंह या हाथ को ख़ुशबू बहुत लगी तो दम और थोड़ी लगी तो सदक़ा लाज़िम होगा। (अहकामे हज सफ़हा–93)

बाल मुंडवाने की जिनायत

मस्अला: एहराम की हालत में चौथाई सर या चौथाई दाढ़ी या इससे ज़्यादा के बाल मुंडवाए या कतरवाए या किसी और चीज़ के ज़रीआ दूर करे या उखाड़े ख़्वाह इख़्तियार से हो या बिला इख़्तियार हर हाल में जिनायत कामिला है जिसकी जज़ा में दम लाज़िम है।

मस्अला: इसी तरह एक पूरी बग़ल मुंडवाई या ज़ेरे नाफ़ के पूरे बाल साफ़ किए या पूरी गर्दन के बाल साफ़ करवाए तो दम लाज़िम है।

मस्अला: नाख़ुन चारों हाथ पाँव के एक मजलिस में

काटे या सिर्फ एक हाथ एक पाँव के पूरे नाखुन काटे तो जिनायत कामिला है दम लाज़िम होगा।

मस्अला: अगर दो तीन बाल मूंडे या काटे तो हर बाल के बदले में एक मुट्ठी गंदुम सदका दे दे और तीन बाल से ज़ायद में पूरा सदकतुलफित्र वाजिब है।

मस्अला: अगर बाल अज़ खुद बग़ैर मोहरिम के किसी फ़ेल के गिर जायें तो कुछ लाज़िम नहीं। और अगर मोहरिम के ऐसे फ़ेल से गिरे जिसका वह मामूर (उसको हुक्म दिया गया है) है जैसे वुजू तो तीन बाल में भी एक मुट्ठी गंदुम का सदका काफी है। (अहकामे हज सफ़्हा–97)

मस्अला: वुजू करते हुए या किसी और तरह दाढ़ी के तीन बाल गिर गए तो एक मुट्ठी गेहूं सदका कर दे और अगर खुद उखाड़े तो हर एक बाल के बदले में एक मुट्ठी गेहूं सदका कर दे। अगर तीन बाल से ज़ायद उखाड़े तो आधा साअ़ सदका करे। (सदकए फित्र की मिक्दार।)

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–323 व हाकज़ा अहकामे हज सफ़्हा–96 व मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–255 व गुनयतुलमनासिक सफ़्हा–137)

मस्अला: एहराम की हालत में सर और दाढ़ी के बाल जितने गिरें उतनी कुर्बानियाँ देने का मस्अला ग़लत है। अलबत्ता एहतियात से वुजू करना चाहिए ताकि बाल न गिरें, और अगर गिर जायें तो सदका कर देना काफ़ी है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–108)

मस्अला: दाढ़ी में ख़िलाल करना भी मकरूह है, अगर करे तो इस तरह करे कि बाल न गिरें।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–114)

सर या चेहरा ढांपने की जिनायत

मस्अला: अगर मर्द ने सर या चेहरा और औरत ने चेहरा कपड़े वग़ैरा से ढांप लिया तो अगर एक दिन कामिल या एक रात कामिल उसी तरह रखा तो जिनायत कामिल होगी, यानी दम लाज़िम होगा, इससे कम में सदक़ा वाजिब होगा। और औरत को एहराम की हालत में भी सर छुपाना उसी तरह ज़रूरी है जिस तरह आम हालात में, अगर उसने सर खोल दिया तो उस पर तो कुछ वाजिब नहीं, क्योंकि सर का छुपाना औरत के लिए एहराम का जुज़्व नहीं है, बल्कि ये औरत के लिए एक आम हुक्म है।

(अहकामे हज सफ़्हा–95)

मस्अला: अगर सिला हुआ कपड़ा सारे दिन पहने रहे या सर व चेहरा दिन भर ढांके रखा और उसका कफ़्फ़ारा एक दम दे दिया मगर कपड़ा बदस्तूर इस्तेमाल करता रहा तो दूसरा कफ़्फ़ारा देना होगा। और अगर बीच में कफ़्फ़ारा (दम) नहीं दिया तो एक ही दम काफ़ी हो जाएगा।

नोट: चौथाई सर या चौथाई चेहरा का ढांकना सारे सर और सारे चेहरा के हुक्म में है।

(अहकामे हज सफ़्हा–95)

जूएँ मारने की जिनायत

मस्अला: मोहरिम ने अगर एक जूं मारी या कपड़ा धूप में डाला ताकि जूएँ मर जायें या कपड़ा जूएँ मारने के लिए धोया तो एक जूं के बदला में रोटी का टुकड़ा और दो तीन के बदले में एक मुट्ठी गेहूं दे दे और तीन से ज़्यादा के बदले में अगरचे कितनी ही हो पूरा सदक़ा दे।

मस्अला: अगर कपड़ा धूप में डाला या धोया और

जूएँ मर गई लेकिन जूएँ मारने की नीयत न थी तो कुछ वाजिब नहीं।

मस्अलाः अपने बदन की जूं को किसी दूसरे से मरवाना या पकड़ कर ज़मीन में जिन्दा डाल देना या खुद पकड़ कर किसी दूसरे को मारने के लिए दे देना सब बराबर है सब सूरतों में जज़ा वाजिब होगी।

(अहकामे हज सफ़्हा–97)

एहराम के ज़रूरी मसाइल

मस्अलाः एहराम की हालत में सर्दी की वजह से गर्म चादरें मसलन कम्बल, लिहाफ़, रज़ाई वगै़रा इस्तेमाल कर सकता है, मगर सर नहीं ढांक सकता, नीज़ हालते एहराम में जुराबें (मोज़ा व खुफ़्फ़ैन वगै़रा) का इस्तेमाल जाइज़ नहीं है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–88 व हाकज़ा मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–105 व अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–531 व रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–177)

मस्अलाः एहराम में कुरता, पाजामा, शेरवानी, सदरी, बनियान वगै़रा पहनना मना है और जो कपड़ा बदन की हैअत पर सिला हुआ हो उसका पहनना एहराम में जाइज़ नहीं है। (मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–105)

मस्अलाः एहराम की हालत में अगर किसी मूज़ी जानवर मसलन साँप, बिच्छू, पिस्सू, छिपकली, गिरगिट, भिड़, मक्खी मारा जाए तो ऐसे मूज़ी जानवरों को हरम में और हालते एहराम में मारना जाइज़ है।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–158)

मस्अलाः हालते एहराम में आगे मज़कूरा जानवर अगर मोहरिम पर हमला न भी करे तो भी उसको बगै़र हमला

के मार सकता है। मसलन साँप, बिच्छू, कव्वा, चील, काटने वाला कुत्ता, चूहा, मच्छर, चेचड़ी वग़ैरा। इनके मारने से कोई कफ़्फ़ारा या जज़ा लाज़िम नहीं आता।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़हा–331 व हाकज़ा मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़हा–116)

मस्अला: आँत उतरने की वजह से हालते एहराम में पेटी बांधना जाइज़ है और ये उस सिले हुए में दाख़िल नहीं है जिसकी एहराम में मुमानअत है एहराम में ऐसा सिला हुआ कपड़ा ममनूअ है जो जिस्म के मुवाफ़िक़ सिला हुआ हो। (इमदादुलअहकाम जिल्द–2 सफ़हा–177)

मस्अला: एहराम की हालत में आँत उतरने के उज़्र की वजह से लंगोट बांधना जाइज़ है और बग़ैर उज़्र मकरूह है, मगर उस पर क़ोई जज़ा वाजिब नहीं। नीज़ एहराम के नीचे नेकर पहनना हर हाल में नाजाइज़ है और पहनने वाले पर सिले हुए कपड़े पहनने की जज़ा वाजिब है। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़हा–531 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़हा–171)

जिनको पेशाब या मज़ी के क़तरे आने का उज़्र हो वह एहराम के नीचे लंगोट पहन सकता है यानी वह बग़ैर सिला हुआ कपड़ा जिसको पहलवान बांधते हैं।

मस्अला: नोट, रुपये, पैसे की हिफ़ाज़त के लिए एहराम की हालत में थैली (बेल्ट) वग़ैरा बांध सकते हैं।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–2 सफ़हा–177 व हाकज़ा मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़हा–115)

मस्अला: एहराम की हालत में मोहरिम यानी एहराम पहने हुए चश्मा (छतरी) लगा सकता है।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–2 सफ़्हा–180)

मस्अलाः रबड़ या तार की पेटी (बेल्ट) वगै़रा से एहराम का तहबंद बांध सकते हैं।

मस्अलाः मोहरिम एहराम की चादर (ऊपर वाली चादर) गर्मी की वजह से उतार सकता है। हर वक़्त ओढ़ने की ज़रूरत नहीं है, पसीना वगै़रा की वजह से अलाहिदा की जा सकती है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–553)

मस्अलाः एहराम की हालत में देग, तबाक़, चारपाई, सब्ज़ी वगै़रा सर पर उठाना जाइज़ है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–115)

मस्अलाः एहराम का लिबास पहन कर सर ढांक कर नफ़्ल पढ़ें, फिर सर खोल कर तल्बिया पढ़े।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–566)

मस्अलाः एहराम की नफ़्लों से फ़रागत के बाद टोपी उतारना याद न रहा तो अगर टोपी एक घंटा से कम पहनी तो एक मुट्ठी गेहूं, और इससे ज़ाइद पर निस्फ़ साअ़ सदक़ा, बारह घंटे या ज़्यादा पर दम वाजिब है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–513)

मस्अलाः किसी हाजी के लिए उम्रा के एहराम से फ़ारिग़ होने के बाद से हज का एहराम बांधने तक जो वक़्फ़ा है उसमें जिस तरह किसी और चीज़ की पाबंदी नहीं, उसी तरह मियाँ बीवी के तअ़ल्लुक़ की भी पाबंदी नहीं है। इसलिए उम्रा से फ़ारिग़ हो कर हज का एहराम बाँधने से पहले बीवी से मिलना (जिमाअ़, सोहबत करना) जाइज़ है इससे हज का सवाब ज़ाए नहीं होता, न आइंदा साल हज करना लाज़िम आता है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–105)

मस्अला: हालते एहराम में औरत या मर्द (बग़ैर सोहबत के) किसी उज़्र की बिना पर नापाक हो जायें तो उन पर दम नहीं है, नीज़ नापाकी की वजह से एहराम की निचली चादर (तहबंद) का बदलना जाइज़ है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द 8 सफ़हा–323 व हाकजा अहकामे हज सफ़हा–96 व मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़हा–255)

मस्अला: एहराम की हालत में छतरी लगाना या किसी और चीज़ के साया में बैठना, घर और ख़ेमे के अन्दर दाख़िल होना जाइज़ है।

मस्अला: एहराम की हालत में हैजा का इंजेक्शन और चेचक वग़ैरा का टीका लगवाना जाइज़ है।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़हा–115)

मस्अला: हर मरतबा उम्रा करने के लिए एहराम की चादरों का हर बार धोना कोई ज़रूरी नहीं, जबकि वह चादरें पाक हों। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–108)

मस्अला: एहराम की चादर ज़मज़म में तर की हुई बोसीदा होने से पहले पहले उसको इस्तेमाल कर लेना चाहिए कि बोसीदा होने के बाद कफ़न के भी क़ाबिल नहीं रहेगी, आप मालिक हैं उसको बेच भी सकते हैं, माली हालत अच्छी हो तो किसी को बख़्शिश के तौर पर देना भी बेहतर है। रिश्तादारों और नेक लोगों के कफ़न के लिए देना भी बेहतर है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–10 सफ़हा–499)

मस्अला: हज व उम्रा करने के बाद चादर ख़ुद भी इस्तेमाल कर सकते हैं, किसी को देना चाहें तो दे भी

सकते हैं।

मस्अला: एहराम जो कि तौलिया के कपड़े का है उसको आम इस्तेमाल में तौलिया की जगह इस्तेमाल कर सकते हैं।

मस्अला: हज और उम्रा के दौरान जो कपड़ा एहराम में इस्तेमाल करते हैं उस को घर में इस्तेमाल कर सकते हैं यानी तौलिया को तौलिया की जगह और लट्ठे को शलवार और क़मीज़ बना कर पहन सकते हैं, नीज़ एहराम के कपड़ों का आम इस्तेमाल जाइज़ है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–108)

हज में बाल कटवाने की हिकमत

हल्क़ यानी हज में बाल कटवाने की हिकमत ये है कि एहराम की हालत से बाहर आने का ये ख़ास मुतअैयन तरीक़ा है अगर ये तरीक़ा मुक़र्रर न किया जाए तो हर शख़्स अपनी अपनी ख़्वाहिश के मुताबिक़ अपना एहराम ख़त्म करता और एहराम से बाहर आने के लिए अलग अलग तरीक़े तजवीज़ करता। (हुज्जतुल्लाहिलबालिग़ा)

आमाले हज के ख़त्म पर सर मुंडवाना या बाल कतरवाना भी एक इबादत है और ये गोया फ़रीज़ए हज से फ़रागत का निशान है। जैसे नमाज़ के लिए सलाम या रोज़ा के लिए इफ़्तार।

एहराम की हालत में बाल टूटने पर पाबंदी थी अब उन तमाम या बेशतर बालों को काट कर उस हदबंदी के ख़त्मा की तालीम ख़ुद हद लगाने वाली शरीअत ही दे रही है उस वक़्त वह इबादत थी अब ये इबादत है।

सर पर बाल रखने या न रखने के सिलसिले में लोगों

में तीन तरह के मिज़ाज व ज़ौक़ होते हैं।

(1) किसी को बाल रखना बवज्ह अपनी सेहत या ज़ौक़ के नापसंद होता है उसे मुंडवा देने में कोई तकल्लुफ़ ही न होगा।

(2) किसी को बालों का रखना पसंद तो होता है मगर कभी कभी मंडवा देना भी उसके लिए कुछ मुश्किल नहीं है।

(3) और कुछ लोग बाल रखने के ऐसे शौक़ीन होते हैं कि बालों का मुंडवाना उनके लिए बहुत बड़ी दौलत का लुट जाना होता है। शरीअत की नज़र में अस्ल पसंदीदा तरीक़ा तो यही है कि हज से फ़ारिग होते ही सर उस्तुरा से बिल्कुल साफ़ कर दिया जाए, चुनांचे बार बार आंहज़रत (स.अ.व.) की दुआएँ भी मुंडवाने वालों ही के लिए हैं, लेकिन तीसरे मिज़ाज वालों की रिआयत में इसकी भी इजाज़त है कि कैंची से बालों के सिरे इस तरह लिए जायें कि तमाम बाल या अक्सर बाल एक डेढ़ अंगुल के बक़द्र कट जायें।

याद रहे कि बाल मुंडवाने का हुक्म सिर्फ़ मर्दों के लिए है, औरतें अपनी चोटी के आख़िर से सिर्फ़ एक अंगुल बाल काट लें। (अत्तरगीब जिल्द–3 सफ़्हा–95)

बाल कतरवाने से मुंडवाना अफ़ज़ल क्यों है?

कुर्बानी के बाद एहराम खोला जाता है। एहराम खोलने का अफ़ज़ल तरीक़ा हल्क़ यानी सर मुंडवाना, क़स्र कराना यानी सर के बालों को छोटा कराना दूसरा तरीक़ा है, यहां अफ़ज़ल तरीक़ा की हिकमत ब्यान की गई है। जिस तरह नमाज़ के तहरीमा से निकलने का तरीक़ा सलाम

फेरना है, उसी तरह एहराम से निकलने का तरीक़ा सर मुंडवाना है और ये तरीक़ा दो वजहों से तजवीज़ किया गया:

पहली वजह एहराम से निकलने का ये मुनासिब तरीक़ा है जो वक़ार के ख़िलाफ़ नहीं है, इसलिए ये तरीक़ा मुतऔयन किया गया है। क्योंकि अगर लोगों को आज़ाद छोड़ दिया जाता कि वह जिस तरह चाहें मुनाफ़िये एहराम अमल के ज़रीआ एहराम से निकल सकते हैं तो मालूम नहीं लोग क्या क्या हरकतें करते। कोई जिमाअ़ करता, कोई शिकार करता, और कोई कुछ और अमल करता। जैसे नमाज़ से निकलने में आज़ादी दे दी जाए कि लोग कोई भी मुनाफ़िये नमज़ा अमल कर के नमाज़ से निकल सकते हैं, तो लोग मालूम नहीं क्या क्या मुनासिब और नामुनासिब हरकतें कर के नमाज़ से निकलेंगे। इसलिए सलाम फेरने के ज़रीआ नमाज़ से निकलना वाजिब किया गया, क्योंकि ये एक बावक़ार तरीक़ा है और फ़ी नफ़्सिही भी एक ज़िक्र है, इसी तरह एहराम से निकलने के लिए भी ऐसी राह तजवीज़ की गई जो मतानत के मुनाफ़ी नहीं है।

दूसरी वजह एहराम में सर मिट्टी से भर जाता है, बालों की जड़ों में मैल जम जाता है इसलिए सर से मैल कुचैल उसी वक़्त दूर हो सकता है जब कि सर मुंडवा दिया जाए, इसलिए ये अफ़ज़ल है।

(रहमतुल्लाहिलवासिआ जिल्द–4 सफ़्हा–207)

नीज़ जब बादशाहों के दरबार में जाते हैं तो सफ़ाई का ख़ूब एहतेमाम करते हैं, हुज्जाज एहराम खोल कर तवाफ़े ज़ियारत के लिए दरबारे ख़ुदावंदी में हाज़िरी देंगे। पस उनको भी ख़ूब साफ़ हो कर हाज़िर होना चाहिए

और सर मुंडवाने से सर का मैल कुचैल अच्छी तरह साफ़ हो जाता है, इसलिए ये अफ़ज़ल है।

एक वजह ये भी है कि सर मुंडवा कर एहराम खोलने का असर कई दिन तक बाकी रहता है, जब तक बाल बढ़ नहीं जाऐंगे हर देखने वाला महसूस करेगा कि इसने हज किया है, पस इस इबादत (हज) की शान बुलंद होगी इसलिए कस्र से हल्क़ अफ़ज़ल है।

(रहमतुल्लाहिलवासिआ जिल्द–4 सफ़्हा–248)

जिसके सर पर बाल न हो तो क्या करे?

सवालः एक शख़्स हज के लिए गया उसने कई उम्रा किए, चूंकि हर रोज़ या दूसरे रोज़ उम्रा करता था इसलिए बहुत मामूली बाल कटते थे, करीब एक सूत के या उससे कम नज़र आते थे। क्या ये हल्क़ (सर के बाल कटवाना) सही हुआ या नहीं?

जवाबः सूरते मस्ऊला में जब पहले हल्क़ कराने की वजह से सर पर बाल नहीं तो सिर्फ़ उस्तुरा या उसके क़ाइम मक़ाम मशीन फेर देना काफी है और ये फेरना वाजिब है। और जो मिक़्दार बाल काटने की पोरवे के बराबर लिखी है वह उस सूरत में है कि सर पर बाल हों।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–407 व हाकजा फ़तावा आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–149)

एहराम खोलने के लिए कितने बाल का काटना ज़रूरी है?

सवालः उम्रा पर लोगों को देखा गया है कि उम्रा करने के बाद बाल काटे बग़ैर एहराम खोल देते हैं या बाज़ लोग चारों तरफ़ से मामूली बाल काट लेते हैं और ये कहते हैं कि सर के बाल चौथाई काटने का हुक्म है

जो कि इस तरह पूरा हो जाता है। और बाज़ लोग मशीन से काटते हैं। ऐसे लोगों के बारे में क्या हुक्म है? उनका एहराम उतारना क्या दम वग़ैरा को लाज़िम करता है या नहीं और मसनून तरीक़ा क्या है?

जवाब: हज व उम्रा का एहराम खोलने के लिए चार सूरतें इख़्तियार की जाती हैं, हर एक का हुक्म अलग अलग लिखता हूं। अव्वल ये है कि हल्क़ कराया जाए, यानी उस्तुरे से सर के सब बाल उतार दिए जायें, ये सूरत सब से अफ़ज़ल है और हल्क़ कराने वालों के लिए आंहज़रत (स.अ.व.) ने तीन मरतबा रहमत की दुआ फ़रमाई है, जो शख़्स हज उम्रा पर जा कर भी आंहज़रत (स.अ.व.) की दुआए रहमत से महरूम रहे, उसकी महरूमी का क्या ठिकाना?

इसलिए हज व उम्रा पर जाने वाले तमाम हज़रात को मश्वरा दूंगा कि वह आंहज़रत (स.अ.व.) की दुआ से महरूम न रहें, बल्कि हल्क़ करा कर एहराम खोलें।

दूसरी सूरत ये है कि क़ैंची या मशीन से पूरे सर के बाल उतार दिए जाएं, यह सुरत बग़ैर कराहत के जाइज़ है।

तीसरी सूरत ये है कि कम से कम चौथाई सर के बाल काट दिए जाऐं, ये सूरत मकरूहे तहरीमी और नाजाइज़ है, क्योंकि एक हदीस शरीफ़ में इसकी मुमनअत आई है, मगर इससे एहराम खुल जाएगा।

अब ख़ुद सोचिए कि जो शख़्स हज व उम्रा जैसी मुक़द्दस इबादत का ख़ातमा एक नाजाइज़ फ़ेल से करता है उनका हज व उम्रा क्या क़बूल होगा?

चौथी सूरत में जबकि चंद बाल इधर से चंद उधर से

काट दिए जाऐं जो चौथाई सर से कम हो, इस सूरत में एहराम नहीं खुलेगा, बल्कि आदमी बदस्तूर एहराम में रहेगा और उसको ममनूआते एहराम की पाबंदी लाज़िम होगी, और सिला हुआ कपड़ा पहनने और दीगर ममनूआत का इरतिकाब करने की सूरत में उस पर दम लाज़िम होगा।

आज कल बहुत से नावाक़िफ़ लोग दूसरों की देखा देखी इसी चौथी सूरत पर अमल करते हैं। मस्अला की रू से ये लोग हमेशा एहराम में रहते हैं। इसी एहराम की हालत में तमाम ममनूआत का इरतिकाब करते हैं वह अपनी नावाक़िफ़ी की वजह से समझते हैं कि हम ने चंद बाल काट कर एहराम खोल दिया, हालांकि उनका एहराम नहीं खुला और एहराम की हालत में ख़िलाफ़े एहराम चीज़ों का इरतिकाब कर के अल्लाह तआला के क़हर और ग़ज़ब को मोल लेते हैं।

यही वजह है कि हज़ारों लोगों में कोई एक आध होगा जिसका हज व उम्रा शरीअत के मुताबिक़ होता है, बाक़ी लोग सैर सपाटा कर के आ जाते हैं और हाजी कहलाते हैं।

अवाम को चाहिए कि हज व उम्रा के मसाइल अह्ले इल्म से सीखें और उन पर अमल करें, महज़ देखा देखी से काम न चलाऐं। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–124)

क्या तमाम सर के बाल बराबर करना वाजिब है?

मस्अला: अगर उंगली के पोरवे की लम्बाई के बराबर बाल काटे जा सकते हों तो चौथाई सर के बाल पोरवे की लम्बाई के बराबर काटने से हलाल हो जाएगा, मगर पूरे यानी तमाम सर के बाल बराबर करना वजिब है (चंद

बाल इधर उधर से न काटे जाऐं) और अगर पोरवे की लम्बाई के बराबर बाल न काटे जा सकते हों यानी बाल छोटे हों तो मुंडवाना ज़रूरी है। बग़ैर मुंडवाए एहराम न खुलेगा। तफ़सीले बाला के मुताबिक़ सर के बाल काट कर या मुंडवा कर हलाल हों और जितनी बार शरअ़ी तरीक़ा से हलाल हुए बग़ैर एहराम खुला है हर बार के लिए दम दें और एहराम खोलने के बाद महज़ूराते (ममनूआ़त) एहराम में से जितने अफ़आ़ल भी किए हों उन पर कोई दम वग़ैरा नहीं है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–536)

एहराम खोलने का क्या तरीक़ा है?

मस्अला: एहराम खोलने के लिए हल्क़ यानी उस्तुरे से सर के बाल साफ़ कर देना अफ़ज़ल है और क़स्र (बाल कतरवाना, छोटे करवाना) जाइज़ है। इमाम अबूहीफ़ा (रह.) के नज़दीक एहराम खोलने के लिए ये शर्त है कि कम से कम चौथाई सर के बाल एक पोरवे के बराबर काट दिए जाऐं, अगर सर के बाल छोटे हों और एक पोरवे से कम हों तो उस्तुरे से साफ़ करना ज़रूरी है इसके बग़ैर एहराम नहीं खुलता।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–102)

मस्अला: अगर किसी दवा या साबुन वग़ैरा से सर के बाल को ख़त्म कर दे तब भी काफ़ी है। नीज़ अगर सर के बाल ही नहीं या गंजा है तो सिर्फ़ उस्तुरा फेर लेना काफ़ी होगा, अगर सर पर ज़ख़्म हो और उस्तुरा भी न फेर सके तो उससे ये वाजिब ही साक़ित है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–180 व हाकज़ा

मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–176)

मस्अला: क़स्र (बाल छोटे करवाना) उसी वक़्त हो सकता है जब सर के बाल उंगली के पोरवे के बराबर हों लेकिन अगर बाल उससे छोटे हों तो हल्क़ मुतऐयन है क़स्र सही नहीं, इसलिए जो हज़रात बार बार उम्रा करने का शौक रखते हैं उनको लाज़िम है कि हर उम्रा के बाद हल्क़ कराया करें। क़स्र से उनका एहराम नहीं खुलेगा।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–142)

मस्अला: अगर मशीन ऐसी है कि छोटे से छोटा बाल भी काट देती है तो ठीक है, सब उम्रे दुरुस्त होंगे, अलबत्ता ऐसी हालत में एहतियात ये है कि उस्तुरा फेर दिया करें। (जबकि बाल बहुत ही छोटे हों और मशीन में न आते हों।)

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–183)

मस्अला: अगर कोई जंगल या किसी ऐसी जगह में चला गया हो कि वहां पर उस्तुरा या कैंची नहीं है, तो ये उज़्र मोतबर नहीं है, जब तक सर मुंडाए या कतरवाएगा नहीं, हलाल नहीं होगा। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–176)

एहराम की हालत में एक दूसरे के बाल काटना?

सवाल: क़ुर्बानी से फ़ारिग़ हो कर बाल कटवाने के लिए हम ने हज्जाम को तलाश किया, लेकिन कोई हज्जाम (नाई) नहीं मिल सका। इस पर मेरे दोस्त ने ख़ुद ही मेरे बाल काट दिए जब कि वह एहराम में था, तो क्या हुक्म है?

जवाब: एहराम खोलने की नीयत से मोहरिम यानी एहराम वाला ख़ुद भी अपने बाल उतार सकता है और किसी दूसरे मोहरिम के बाल भी उतार सकता है। आपके दोस्त ने आपका एहराम खोलने के लिए जो आपके बाल

उतार दिए तो ठीक किया, उसके जिम्मा दम वाजिब नहीं हुआ। (आपके मसाइल जिल्द-4 सफहा-143)

मस्अला: हल्क से पहले के तमाम अरकान से दोनों फारिग हो चुके हो और अब सिर्फ हल्क (बाल काटना) ही बाकी हो तो उस वक्त एक दूसरे का हल्क जाइज है।

(अहसनुलफतावा जिल्द-4 सफहा-512 बहवाला गुनयतुलमनासिक सफहा-93 व हाकजा फतावा रहीमिया जिल्द-3 सफहा-115)

मस्अला: एहराम खोलने के लिए शौहर अपनी बीवी के और बाप अपनी बेटी के बाल काट सकता है। औरतें ये काम आपस में खुद भी कर लिया करती हैं।

(आपके मसाइल जिल्द-4 सफहा-144)

मस्अला: हाजी मुतमत्तेअ हो या कारिन या मुफरिद, जब वह हल्क से पहले के तमाम अरकान अदा कर चुका हो और सर मुंडवा कर हलाल होने का वक्त आ गया हो इसी तरह दूसरा मोहरिम भी तमाम अरकान अदा कर चुका हो, तो अब खुद अपने बाल काटना या दूसरे के बाल काटना उसके हक में महजूराते एहराम में से नहीं है, लिहाजा ये मोहरिम अपना खुद भी हल्क कर सकता है और अपना हल्क कराने से पहले दूसरे मोहरिम के बाल भी काट सकता है।

बुखारी शरीफ जिल्द-1 सफहा-380 में सुलह हुदैबिया के तअल्लुक से है कि- "सुलह मुकम्मल हो गई और आप (स.अ.व.) ने कुर्बानी की और हल्क किया तो आप (स.अ.व.) को देख कर सहाबए किराम (रजि.) ने भी कुर्बानी की और एक दूसरे का हल्क किया बावजूद ये कि वह

मोहरिम थे।" इस हदीस शरीफ़ से साबित होता है कि कुर्बानी के बाद मोहरिम एक दूसरे का हल्क़ कर सकता है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़हा–296 बहवाला गुनयतुलमनासिक सफ़्हा–93 व हाकज़ा मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–192 व जुब्दतुलमनासिक सफ़्हा–177 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–17 सफ़हा–192)

हरम से बाहर हल्क़ किया तो क्या हुक्म है?

सवालः एक शख़्स ने उम्रा किया उसके बाद जद्दा आ गया और जद्दा में आ कर सर मुंडवाया जो कि हुदूदे हरम से बाहर है। उसके लिए क्या हुक्म है?

जवाबः उम्रा या हज के एहराम से हलाल होने के लिए हुदूदे हरम में हल्क़ या क़स्र ज़रूरी है, अगर हुदूदे हरम से बाहर सर मुंडवाया तो दम लाज़िम होगा।

मस्अलाः अगर हज या उम्रा में हरम से बाहर हल्क़ किया तो दम दे और ऐसे ही जो हज में अैयामे नहर के बाद हल्क़ करे तो दम दे।

मस्अलाः अगर उम्रा के एहराम से हलाल होने के लिए हरम से बाहर सर मुंडवाया या हज के एहराम से हलाल होने के लिए हरम से बाहर अैयामे नह्र के बाद सर मुंडवाया तो दम वाजिब होगा, और दो दम वाजिब होंगे एक हरम से बाहर सर मुंडवाने का, दूसरा ताख़ीर का। सूरते मस्ऊला में जब कि जद्दा में पहुंच कर सर मुंडवाया तो एक दम लाज़िम होगा और ये दम हरम में ही ज़िब्ह करना ज़रूरी है। (मिना तमाम ज़िब्हगाह है और इसी तरह मक्का के गली कूचे।) (फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़हा–234 व मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़हा–247 व हिदाया

अव्वलैन सफ्हा–256)

मस्अला: हजामत दसवीं से बारहवीं तक करायें ख़्वाह दिन में या रात में, रमी और कुर्बानी के बाद बाल कटवाना हरम में होना भी ज़रूरी है, अगर मज़कूरा वक़्त के और हरम के अलावा किसी दूसरे वक़्त और जगह में हजामत कराएगा तो हलाल तो हो जाएगा लेकिन दम वाजिब होगा। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ्हा–176)

मस्अला: उम्रा करने वाला या हज करने वाला अगर हुदूदे हरम से बाहर निकल जाए और फिर हरम वापस आ कर सर मुंडवाए तो कुछ वाजिब न होगा, लेकिन अगर हाजी अैयामे नह्र के बाद आ कर सर मुंडवाए तो एक दम तारीख़ का वाजिब होगा।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ्हा–247)

मस्अला: अगर मुफरिद या क़ारिन या मुतमत्तेअ ने रमी से पहले सर मुंडवाया या क़ारिन और मुतमत्तेअ ने ज़िब्ह से पहले सर मुंडवाया या क़ारिन और मुतमत्तेअ ने रमी से पहले ज़िब्ह किया तो दम वाजिब होगा, क्योंकि इन चीज़ों में तरतीब वाजिब है। मुफरिद के लिए सिर्फ़ रमी और सर मुंडवाने में तरतीब वाजिब है। क्योंकि ज़िब्ह उस पर वाजिब नहीं है। और क़ारिन और मुतमत्तेअ को तीनों यानी रमी, ज़िब्ह और सर मुंडवाने में तरतीब वाजिब है। अव्वल रमी करें, उसके बाद ज़िब्ह करें उसके बाद सर मुंडवाएं। अगर तक़दीम या ताख़ीर की तो दम वाजिब होगा। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ्हा–247)

फज़ाइले तवाफ़

तवाफ़ की बहुत ही फ़ज़ीलत है और अहादीस में बहुत

तरग़ीब दिलाई गई है। हज़रत अब्दुल्लाह इब्न अब्बास (रज़ि.) रिवायत करते हैं कि आंहज़रत (स.अ.व.) ने फ़रमाया– "अल्लाह तआला बैतुल्लाह पर हर रोज़ एक सौ बीस रहमतें नाज़िल फ़रमाते हैं जिसमें से साठ रहमतें तवाफ़ करने वालों के लिए और चालीस नमाज़ पढ़ने वालों के लिए और बीस बैतुल्लाह को देखने वालों के लिए।"

(तिबरानी)

दूसरी रिवायत में है कि जो शख़्स बैतुल्लाह का तवाफ़ करता है वह एक क़दम उठा कर दूसरा क़दम नहीं रखता कि अल्लाह तआला उसकी एक ख़ता मआफ़ कर देते हैं और एक नेकी लिख देते हैं और एक दरजा बुलंद कर देते हैं। (जमउलफ़वाइद कंज़ुलआमाल)

मक्का मुकर्रमा में रहते हुए जिस क़दर हो सके तवाफ़ करते रहो ये नेमत हमेशा मुयस्सर न होगी। अक्सर औक़ात हरम शरीफ़ में गुज़ारो और बैतुल्लाह को देखते रहो, क्योंकि बैतुल्लाह शरीफ़ को देखना भी इबादत है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्ह–124)

जो मुहब्बत व शौक़ से बैठा हुआ कअबा शरीफ़ को सिर्फ़ देख रहा है रहमतों में हिस्सा उसे भी मिलता है, क्योंकि कअबा को मुहब्बत की नज़र से देखना दरहक़ीक़त खुदा ही से मुहब्बत का नतीजा है। दूसरे किसी चीज़ को देखना खुद मुहब्बत पैदा करने का एक मुअस्सिर व कामियाब तरीक़ा है, किसी चीज़ को मुहब्बत की नज़र से जितना बार बार देखा जाता है उसी क़दर उसकी मुहब्बत दिल में घर कर लेती है और दिल उसकी तरफ़ खिंचता है, और कअबतुल्लाह को चूंकि खुदा का घर होने की हैसियत

से देखा जाता है इसलिए उसको देखना गोया कि खुदा ही की तजल्लीयात का मुशाहदा करना है। (अत्तरग़ीबुत्तरहीब जिल्द–3 सफ़्हा–64 व मआरिफ़ुलहदीस)

हदीस शरीफ़ में है कि जिसने तवाफ़ के सात चक्कर पूरे किए और उस दौरान कोई फ़ुज़ूल हरकत नहीं की तो गोया उसने जान आज़ाद कर दी। यानी एक गुलाम को आज़ाद करा कर अपने पैरों पर खड़ा कर देने से जो अज्र व सवाब है तवाफ़ के अमल पर वही सवाब होगा।

(अतरग़ीब जिल्द–3 सफ़्हा–64)

तवाफ़ अफ़ज़ल है या उम्रा करना?

मस्अला: ज़्यादा तवाफ़ करना अफ़ज़ल है, मगर शर्त ये है कि उम्रा करने पर जितना वक़्त ख़र्च होता है उतना वक़्त या उससे ज़्यादा तवाफ़ पर ख़र्च करे। वरना उम्रा की जगह एक दो तवाफ़ कर लेने को अफ़ज़ल नहीं कहा जा सकता है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–28)

मस्अला: बाहर के रहने वालों के लिए नफ़्ली तवाफ़ नफ़्ली नमाज़ से अफ़ज़ल है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–150)

तवाफ़ के अलावा कंधे नंगे रखना?

सवाल: हज या उम्रा में जो एहराम बांधते हैं उसमें अक्सर लोग कंधा खुला रखते हैं, इसके लिए क्या हुक्म है?

जवाब: शरओ़ी मस्अला ये है कि हज व उम्रा के जिस तवाफ़ के बाद सफ़ा व मरवा की सओ़ी हो, उस तवाफ़ में "रमल" और "इज़्तिबाअ़" किया जाए। और रमल से मुराद है पहलवानों की तरह कंधे हिला कर क़द्रे तेज़ तेज़ चलना (सिर्फ़ शुरू के तीन चक्करों में अगर जगह व

मौका हो तो) और इज़्तिबाअ से मु[illegible] कंधा खोलना है। ऐसे तवाफ़ के अलावा खुसूसन नमाज़ में कंधे नंगे रखना मकरूह है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–90)

मस्अला: आम हालात में इज़्तिबाअ यानी दाईं बग़ल से एहराम की चादर निकाल कर बाएँ कंधे पर डालना, न किया जाए, ख़ास कर नमाज़ में इज़्तिबाअ न करे, जिस तवाफ़ के बाद सअ़ी करना हो, उस तवाफ़ में इज़्तिबाअ मसनून है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–301 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–229)

हवाई जहाज़ में बैठ कर तवाफ़ और वक़ूफ़े अरफ़ा करना?

दो मस्अले हैं। एक हवाई जहाज़ में तवाफ़ करने का। दूसरे हवाई जहाज़ में वक़ूफ़े अरफ़ा करने का। मज़कूरा मस्अलों के मुतअ़ल्लिक़ जो कुछ मुझ को फ़िक़्ह की किताबों के मुतालआ करने से ज़ाहिर हुआ है वह ये है कि हवाई जहाज़ में सवार हो कर तवाफ़ करने से तवाफ़ तो सही हो जाएगा बशर्तेकि हवाई जहाज़ मस्जिद की हुदूद में दाख़िल रहे। लेकिन बिला उज़्र ऐसा करने से दम वाजिब होगा। जैसा कि हवाई जहाज़ के अलावा में भी बिला उज़्र सवार हो कर तवाफ़ करने का हुक्म है। और हवाई जहाज़ में सवार हो कर अरफ़ात में से गुज़रने से वक़ूफ़े अरफ़ा न होगा, चूंकि तवाफ़ की हक़ीक़त दौरान हौललबैत (ख़ानए कअ़बा के चारों तरफ़ घूमना) है और मकाने तवाफ़ हौललबैत (तवाफ़ करने की जगह ख़ानए कअ़बा) है और घर (ख़ानए कअ़बा) से मुतअ़ल्लिक़ ये तसरीह मौजूद है कि ज़मीन से लेकर आसमान तक बैतुल्लाह है। इसलिए तवाफ़ ख़ानए कअ़बा से मुरतफ़अ़ (बुलंद) हो कर भी जाइज़

है। इसलिए हवाई जहाज़ में बशराइते मज़कूरा तवाफ़ सही हो जाएगा। लेकिन वकूफ़े अरफ़ा से मुतअ़ल्लिक़ कहीं ये तसरीह नहीं मिली कि ज़मीन से ले कर आसमान तक वकूफ़े अरफ़ा है, बल्कि अक्सर कुतुब में वकूफ़ को ज़मीन के साथ मुक़ैय्यद किया है। (इमदादुलअहकाम जिल्द–2 सफ़्हा–200 बहवाला बह्रुर्राइक़ जिल्द–2 सफ़्हा–339 व आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–148)

क्या हज के एहराम के बाद तवाफ़ ज़रूरी है?

मस्अला: हज का एहराम बांधने के बाद जब मिना का इरादा कर के जाते हैं तो जाने से पहले ख़ानए कअ़बा का तवाफ़ करते जाना मुस्तहब है, ये तवाफ़ फ़र्ज़ या वाजिब नहीं बल्कि मुस्तहब है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–17 सफ़्हा–207)

तवाफ़ का एक चक्कर हतीम में कर लिया तो?

सवाल: हम उम्रा का तवाफ़ कर रहे थे, चूंकि जम्मे ग़फ़ीर था इसलिए हम तीसरे या चौथे चक्कर में हतीम के अन्दर गुज़र गए। पहले हम को इल्म नहीं हो सका जब हतीम के दूसरी तरफ़ से निकले तो मालूम हुआ ये हतीम है। क्या दम आएगा?

जवाब: आप पर और आप के दोस्त पर उम्रा के तवाफ़ का एक चक्कर अधूरा छोड़ने की वजह से दोनों पर एक एक दम वाजिब है। और ये जो क़ाएदा है कि क़िरान वाले के ज़िम्मा दो दम होते हैं वह यहां जारी नहीं होता। दम अदा करने की सूरत ये है कि आप किसी मक्का जाने वाले के हाथ इतनी रक़म भेज दें जिससे बकरा ख़रीदा जा सके और वह साहब बकरा ख़रीद कर

हुदूदे हरम में ज़िब्ह करा दें और गोश्त फुक़रा व मसाकीन में तक़्सीम कर दें। ग़नी और मालदार लोग उस गोश्त को न खायें।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–108 व हाकज़ा किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1074)

मस्अला: तवाफ़ मस्जिद के अन्दर हो, अगर कअ़बा का तवाफ़ ज़मज़म या सुतून के ऊपर की तरफ़ से किया जाए तब भी जाइज़ है, लेकिन अगर मस्जिद के बाहर से तवाफ़ किया तो ये तवाफ़ दुरुस्त न होगा।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1070)

तवाफ़ के चौदह चक्कर लगाने का हुक्म

सवाल: हम ने तवाफ़ के सात चक्कर की जगह चौदह चक्कर लगा दिए और उसके बाद सओ़ी वग़ैरा की। क्या ये अमल दुरुस्त है?

जवाब: तवाफ़ तो सात ही शौत (चक्कर) का होता है गोया आप ने मुसलसल दो तवाफ़ कर लिए, ऐसा करना नामुनासिब था मगर इस पर कोई कफ़्फ़ार या जुरमाना नहीं। अलबत्ता आपके ज़िम्मा दोनों तवाफ़ों के दो दोगाना लाज़िम हो गए थे यानी चार रकअतें। अगर आप ने न पढ़ी हो तो अब पढ़ लें।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–112)

मस्अला: अगर क़स्दन किसी ने आठवाँ चक्कर कर लिया तवाफ़ का तो फिर और छ: चक्कर मिला कर पूरा तवाफ़ करना वाजिब है। गोया अब दो तवाफ़ हो जाऐंगे।

मस्अला: सातवें चक्कर के बाद वहम या वरवसा से आठवाँ चक्कर भी तवाफ़ का कर लिया तब भी उसको

दूसरा तवाफ़ पूरा करना लाज़िम है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा-135)

गोया इस सूरत में दो तवाफ़ हो गए हैं, इसलिए दो रकअत दो तवाफ़ों की अलग अलग पढ़ना वाजिब है।

बग़ैर वुज़ू के तवाफ़ कर लिए तो क्या हुक्म है?

सवालः मुझे मज़ी निकल आती है जिसकी वजह से वुज़ू टूट जाता है। मैंने तवाफ़े ज़ियारत किया और फ़ारिग़ हुआ तो कपड़े पर मज़ी का असर मालूम हुआ तो क्या हुक्म है?

जवाबः अगर पूरा या अक्सर तवाफ़े ज़ियारत बेवुज़ू किया, तो दम वाजिब है और अगर निस्फ़ से कम (तीन या उससे कम चक्कर) तवाफ़े ज़ियारत बिला वुज़ू किया हो तो हर चक्कर के लिए आधा साअ़ गंदुम सदका करे और तमाम शौत का सदका दम के बराबर हो जाए तो कुछ थोड़ा सा कम कर दे। और अगर इन सूरतों में वुज़ू कर के तवाफ़े ज़ियारत का इआदा कर लिया ख़्वाह अैयामे नहर में या अैयामे नहर गुज़रने के बाद तो दमे कफ़्फ़ारा साक़ित हो जाएगा।

मस्अलाः तवाफ़े कुदूम या तवाफ़े वदाअ़ या नफ़्ली तवाफ़ बग़ैर वुज़ू किया तो हर शौत के लिए आधा साअ़ गेहूं सदका करे, इस सूरत में भी अगर तमाम शौत का सदका दम के बराबर हो जाए तो कुछ थोड़ा सा कम करे और अगर वुज़ू कर के इआदा कर लिया तो जज़ा साक़ित हो जाएगी। (फ़तावा रहीमिया जिल्द-8 सफ़्हा-321 बहवाला गुन्यतुलमनासिक सफ़्हा-145 व शामी जिल्द-2 सफ़्हा-281 व हाकज़ा अहकामे हज सफ़्हा-100 व

मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–224 व उम्दतुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–521 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1077)

दौराने तवाफ़ वुज़ू टूट जाए?

मस्अला: तवाफ़ के लिए वुज़ू शर्त है अगर तवाफ़ के दौरान वुज़ू टूट जाए तो वुज़ू कर के दोबारा तवाफ़ किया जाए। और गर चार पाँच चक्कर पूरे कर चुका हो तो वुज़ू कर के बाक़ी फेरे पूरे कर ले, वरना नए सिरे से तवाफ़ शुरू करे, अलबत्ता सअ़ी के दौरान वुज़ू शर्त नहीं है। अगर बग़ैर वुज़ू के सअ़ी कर ली तो अदा हो जाएगी। यही हुक्म वक़ूफ़े अ़रफ़ात का है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–109 व हाकज़ा फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–319 व उम्दतुलफ़िक़्ह सफ़्हा–196 व हज्जे बैतुल्लाह के अहम फ़तावा सफ़्हा–55)

तवाफ़ में नियाबत कराना?

मस्अला: तवाफ़ में इस तरह नियाबत जाइज़ नहीं कि जिसके ऊपर तवाफ़ लाज़िम हो उसकी तरफ़ से कोई दूसरा शख़्स तवाफ़ कर दे, ऐसी सूरत में जिसकी तरफ़ से तवाफ़ किया जाएगा उसकी तरफ़ से ज़िम्मादारी साक़ित नहीं होगी। इसलिए उज़्र या बीमारी की वजह से सवारी पर तवाफ़ करना जाइज़ है। (गुन्यतुलमनासिक सफ़्हा–70)

और जो तवाफ़ कराए अगर वह अपने तवाफ़ की नीयत भी कर लेगा तो उसका भी तवाफ़ अदा हो जाएगा।

रियाही मरीज़ तवाफ़ कैसे करे?

सवाल: एक शख़्स के जबड़ों से हर वक़्त ख़ून निकलता रहता है और ये हालत मुसलसल जारी है, इलाज के बावजूद इफ़ाक़ा नहीं, इस तरह रियाही मरीज़ है कि पेट

में रियाह बहुत हो जाती है और ये मरज़ भी मुसलसल रहता है। मालूम ये करना है कि तवाफ़ के दौरान ये अवारिज़ पेश आएँगे तो तवाफ़ करना कैसा है? गुनाह तो नहीं?

जवाबः अगर माजूर होने के तमाम शराइत मौजूद हों तो जिस उज़्र की वजह से वह माजूर हुआ है उस उज़्र के पेश आने से वुजू नहीं टूटता, इसी तरह उज़्र की हालत में वह नमाज़ पढ़ सकता है, लिहाज़ा जिस तरह वह नमाज़ पढ़ सकता है, उसी तरह वह माजूर तवाफ़ भी कर सकता है और जिस तरह ऐन नमाज़ में इस उज़्र के पेश आने से गुनहगार नहीं होता, उसी तरह तवाफ़ के दरमियान उस उज़्र के पेश आने से वह माजूर शख़्स गुनहगार न होगा, अलबत्ता माजूर का वुजू नमाज़ का वक़्त निकल जाने से टूट जाता है। अगर तवाफ़ के दरमियान किसी नमाज़ का वक़्त निकल जाए तो वह माजूर शख़्स क्या करे, इस मस्अला की वज़ाहत मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–151 में है कि माजूर शख़्स को जिसका वुजू नहीं ठहरता या कोई ज़ख़्म जारी है उसका वुजू चूंकि सिर्फ़ नमाज़ के वक़्त तक रहता है नमाज़ का वक़्त निकल जाने के बाद दोबारा वुजू करना होता है। इसलिए अगर चार चक्करों के बाद वक़्त निकल जाए तो दोबारा वुजू कर के तवाफ़ पूरा करे और अगर चार चक्करों से कम किए हैं तब भी दोबारा वुजू कर के पूरा कर सकता है, लेकिन चार चक्कर से कम की सूरत में शुरू से करना अफ़ज़ल है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–320 बहवाला उम्दतुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–196 व अहसनुलफ़तावा

जिल्द–4 सफ़्हा–547)

मस्अला: जमा तक़्दीम की शराइत अगर मौजूद हों तो माज़ूरे शरअ़ी मैदाने अ़रफ़ात में ज़ुहर की नमाज़ के साथ अस्र की नमाज़ पढ़ सकता है। इसलिए कि माज़ूरे शरअ़ी का वुज़ू नमाज़ का वक़्त ख़ारिज होने से टूटता है और जमा तक़्दीम में अस्र की नमाज़ ज़ुहर के वक़्त में पढ़ी जाती है, ज़ुहर का वक़्त ख़ारिज नहीं होता, लिहाज़ा माज़ूरे शरअ़ी का वुज़ू नहीं टूटेगा। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–320 व हिदायाअव्वलैन सफ़्हा–510)

अज़ान शुरू होने के बाद तवाफ़ करना?

सवाल: क्या अज़ान शुरू होने के बाद तवाफ़ शुरू करना जाइज़ है या नहीं?

जवाब: अगर अज़ान और नमाज़ के दरमियान इतना वक़्फ़ा हो कि तवाफ़ कर सकता है तो अज़ान के वक़्त तवाफ़ शुरू करने में कोई मुज़ाएक़ा नहीं।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–300 व रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–229)

मस्अला: जमाअ़त के लिए इक़ामत हो रही हो और जब इमाम ख़ुतबा के लिए खड़ा हो उस वक़्त तवाफ़ करना मकरूह है। उसके अलावा किसी वक़्त में तवाफ़ मकरूह नहीं है, अगरचे वह औक़ात हों जिनमें नमाज़ पढ़ना मकरूह होती है। (अहकामे हज सफ़्हा–47)

तवाफ़ के दौरान ईज़ा रसानी?

मस्अला: हज में देखा गया है कि कुछ लोग तवाफ़ के दौरान तेज़ दौड़ते हैं और सामने आने वालों को धक्का दे कर आगे निकलने की कोशिश करते हैं, तवाफ़ के

दौरान लोगों को धक्के देना बहुत बुरा है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द--8 सफ़्हा--300)

मस्अलाः हजरे अस्वद को बोसा देने में या हाथ लगाने में इसका ख़्याल रखें कि किसी को तकलीफ़ न पहुंचे अगर पहुंचने का ख़तरा हो तो उसको छोड़ दे, क्योंकि हजरे अस्वद का बोसा देना मुस्तहब है और ईज़ाए मुस्लिम हराम है। (अहकामे हज सफ़्हा–46)

तवाफ़ करने का तरीक़ा

मस्अलाः तवाफ़ के माना किसी चीज़ के गिर्द घूमने के हैं। तवाफ की नीयत कर के बैतुल्लाह के गिर्द चारों तरफ सात मरतबा घूमने को तवाफ़ कहते हैं और एक चक्कर को "शौत" कहते हैं, बैतुल्लाह के सिवा किसी चीज़ या किसी मकाम का तवाफ़ करना जाइज़ नहीं है।

तवाफ के लिए नीयते तवाफ फ़र्ज़ है, बग़ैर नीयत के कितने ही चक्कर लगाए तवाफ नहीं होगा, तवाफ़ की नीयत (अरबी के अलावा भी किसी ज़बान में) इस तरह करे– "या! अल्लाह मैं तेरी रजा के लिए तवाफ़ का इरादा करता हूं, इसको मेरे लिए आसान कर दे और क़बूल फ़रमा।" दिल से ये नीयत करना फ़र्ज़ है और ज़बान से कह लेना भी अफ़ज़ल है।

खानए कअबा के जिस कोना में हजरे अस्वद लगा हुआ है उसके बिल्कुल सामने ज़मीन पर एक काले रंग की पट्टी सेहन के फ़र्श पर तक़रीबन एक बालिश्त चौड़ी चली गई है कोहे सफ़ा की तरफ़, गोया ये निशान बना हुआ है कि हजरे अस्वद का सामना है। आप मस्जिदे हराम में चाहे जिस दरवाज़ा से भी आऐं हों उस पट्टी पर

आ कर ठहरना है और तल्बिया मौकूफ़ करना है। तवाफ़ की नीयत करने के बाद एहराम की चादर के दाहिने पल्ले को अपनी दाहिनी बग़ल के नीचे से निकाल कर बायें कंधे के ऊपर डाल लें इसको "इज़्तिबाअ़" कहते हैं और ये तवाफ़ के पूरे होने तक रहेगा, और उस पट्टी पर आ कर इस तरह खड़े होना है कि हजरे अस्वद आप के सामने हो और आप उस पट्टी से ज़रा से बाईं जानिब खड़े हों, दाहिना क़दम तो पट्टी से मिला हुआ हो और बायाँ क़दम उससे अलग। इस तौर पर कि दाहिना मोंढा हजरे अस्वद के किनारे के सामने पड़ता हो और बदन हजरे अस्वद के बग़ल में बाईं जानिब पड़े, यानी आप हजरे अस्वद के बिलमुक़ाबिल बनी हुई पट्टी पर इस तरह खड़े हो जाऐं कि हजरे अस्वद आपके चेहरे के सामने हो जाए फिर– "بسم اللّٰہ اللّٰہ اکبر وللّٰہ الحمد" पढ़ते हुए इस तरह दोनों हाथ उठाऐं जैसे नमाज़ में उठाते हैं यानी दोनों कानों तक हाथ उठाऐं और दोनों हाथ की हथेलियों ख़ानए कअ़बा और हजरे अस्वद की तरफ़ रहें फिर दोनों हाथों को छोड़ दें। इस अमल को इस्तिक़बाल कहते हैं और ये सिर्फ़ शुरू में करना है, बाक़ी चक्करों में इस्तिक़बाल नहीं किया जाएगा, यानी तकबीरे तहरीमा की तरह कानों तक हाथ उठा कर नहीं छोड़े जाऐंगे, बल्कि "इस्तीलाम" करेंगें यानी दोनों हाथ हजरे अस्वद के सामने इस तरह फैलाऐं कि दोनों हाथों की हथेलियों का रुख़ हजरे अस्वद की तरफ़ रहे और हाथों की पुश्त अपने चेहरा की तरफ़ रखें।

हाथ उठाते हुए ये पढ़ें– "بسم الله الله اكبر ولله الحمد" ये पढ़ कर अपनी हथेलियों को बोसा दें और चूमते वक़्त

चटख़ारे की आवाज़ पैद न हो इस अमल को "इस्तीलाम" कहते हैं।

"इस्तीलाम" से फ़ारिग़ हो कर तवाफ़ शुरू कर दें अगर आप का तवाफ़ उम्रा का तवाफ़ है और इस तवाफ़ के बाद आपको सऔ भी करनी है, इसलिए इस तवाफ़ के शुरू के तीन चक्करों में "रमल" करेंगे। "रमल" का मतलब ये है कि अगर मुमकिन हो भीड़ न हो मौक़ा भी हो तो दोनों शाने हिलाते हुए पहलवानों की तरह सीना तान कर क़रीब क़रीब क़दम रखते हुए क़द्रे तेज़ी से चलें। पहले तीन चक्करों में रमल के बाद आख़िर के चार चक्करों में एतेदाल के साथ चलें, इन चक्करों में "रमल" नहीं किया जाएगा। और औरतें किसी भी चक्कर में रमल नहीं करेंगी।

हर चक्कर के पूरा होने पर हजरे अस्वद का "इस्तीलाम" करेंगे यानी जब लौट कर हजरे अस्वद पर पहुंचे तो फिर– "بسم الله الله اكبر ولله الحمد" कह कर हजरे अस्वद को बोसा देने हाथ लगाने और हाथ को बोसा देने, का वही अमल करें जो पहले किया था, इस तरह एक शौत (चक्कर) पूरा हो गया, अब उसी तरह सात चक्कर हजरे अस्वद से शुरू कर के हजरे अस्वद तक करेंगे तो एक तवाफ़ मुकम्मल होगा। सात चक्कर पूरा करने के बाद आठवीं मरतबा भी हजरे अस्वद का इस्तीलाम यानी दोनों हाथों की हथेली हजरे अस्वद की तरफ़ कर के हाथ चूम लेंगे। और ये इस्तीलाम हर चक्कर के शुरू में होगा और आख़िरी चक्कर पूरा कर के हजरे अस्वद का इस्तीलाम कर के वापस जाना है, गोया एक तवाफ़ में आठ इस्तीलाम

होंगे।

(अहकामे हज सफ़हा–45 व हाकज़ा किताबुलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ़हा–1095 व रहमतुल्लाहिलवासिआ जिल्द–4 सफ़हा–208)

तवाफ़ के हर चक्कर में नई दुआ पढ़ना?

मस्अला: तवाफ़ के सात चक्कर होते हैं और हर चक्कर में नई दुआ पढ़ना कोई ज़रूरी नहीं। बल्कि जिस दुआ या ज़िक्र में खुशूअ ज़्यादा हो, उसको पढ़े। आंहज़रत (स.अ.व.) से "रुक्ने यमानी और हजरे अस्वद के दरमियान "رَبَّنَا اٰتِنَا فِى الدُّنْيَا حَسَنَةً وَّفِى الاٰخِرَةِ حَسَنَةً وَّقِنَا عَذَابَ النَّارِ" मनकूल है।

तवाफ़ के सात चक्करों की दुआऐं किताबों में जो लिखी हैं ये आंहज़रत (स.अ.व.) से मनकूल नहीं, बाज़ बुजुर्गों से मनकूल हैं। आम लोग न तो उनका सही तलफ़्फ़ुज़ कर सकते हैं न उनके माना व मफ़हूम से वाक़िफ़ हैं। और फिर तवाफ़ के दौरान चिल्ला चिल्ला कर पढ़ते हैं जिससे दूसरों को भी तशवीश होती है और बाज़ हजरात कुरआन मजीद की तिलावत बुलंद आवाज़ से करते हैं ऐसा करना नामुनासिब है।

तीसरा कलिमा, दरूद शरीफ़ या कोई दुआ जिसमें दिल लगे ज़ेरे लब (हल्की आवाज़ में जिससे दूसरों को तकलीफ़ या तशवीश न हो) पढ़ते रहना चाहिए।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–112 व अहकामे हज सफ़हा–47)

मस्अला: मक़ामाते हज में कोई दुआ मुअैयन करना अच्छा नहीं है, जिसमें दिल लगे और जिसकी ज़रूरत

समझे वह दुआ करे, क्योंकि अलफाज़े मुऐयना की पाबंदी से रिक्क़ते कल्ब और खुशूअ अक्सर नहीं रहता इसलिए बेहतर ये है कि अपनी ज़बान और अपने मुहावरा में दुआ करे। (अहकामे हज सफ्हा--48)

तवाफ़ की मसनून दुआऐं कौन सी हैं?

सवाल: हज की किताबों में इस तरह नज़र आता है कि तवाफ़ इस तरह शुरू करे और ये पढ़े, फलाँ रुक्न पर ये दुआ वगैरा पढ़े, क्या ये दुआऐं मसनून हैं?

जवाब: उन दुआओं में से अक्सर की सनद ज़ईफ़ है, लिहाज़ा उसको सुन्नत समझना जाइज़ नहीं, तवाफ़ की मरौवजा दुआओं का कोई सुबूत नहीं उन दुआओं में बहुत गुलू होने लगा है, इसमें मनदरजा ज़ैल मफ़ासिद हैं।

❑ उन दुआओं का आम एहतेमाम और दीनी इदारों की तरफ़ से उनकी रोज़ अफ़ज़ूं इशाअत के बाइस अवाम उनको ज़रूरी समझने लगे हैं। ऐसी हालत में अम्रे मन्दूब भी मकरूह हो जाता है। चेजाए कि जिसका सुबूत ही न हो।

❑ अक्सर लोगों को दुआऐं याद नहीं होतीं, तवाफ़ में किताब देख कर पढ़ते हैं और इज़्दिहाम में किताब पढ़ते हुए चलने से खुशूअ नहीं रह सकता।

❑ इज़्दिहाम में किताब पर नज़र रखना अपने लिए और दूसरों के लिए भी बाइसे ईज़ा (तकलीफ़ देह) है बिल्खुसूस दुआओं की ख़ातिर जत्थों की सूरत में चलना सख़्त तकलीफ़ देह है जो हराम है। ग़ैर साबित अम्र की ख़ातिर इरतिकाबे हराम किया जाता।

❑ जत्थों की सूरतों में चिल्ला चिल्ला कर दुआऐं पढ़ने से दूसरों के खुशूअ में ख़लल पड़ता है।

खुदा करे उलमाए दीन को मफ़ासिदे मज़कूरा की तरफ़ इल्तिफ़ात हो और वह गै़र साबित दुआओं की इशाअत के बजाए उनसे इज्तिनाब की तबलीग़ में मसरूफ़ हो कर अपना फ़र्ज़ अदा करें।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–547)

❑ अवाम दुआओं के अलफ़ाज़ सही अदा नहीं कर पाते तो मुअ़ल्लिम या क़ाफ़िला का बड़ा जत्थे को रोक कर अलफ़ाज़ कहलवाने की कोशिश करते हैं, जब कि तवाफ़ में ठहरना (बिला ज़रूरत) मकरूहे तहरीमी है, अलावा अज़ीं इस सूरत में बाज़ लोगों की पुश्त यानी पीठ या सीना बैतुल्लाह की तरफ़ हो जाते है, ये भी मकरूहे तहरीमी है और उसी हालत में कुछ लोग अगर आगे को सरक गए तो उतने हिस्से के तवाफ़ का इआ़दा वाजिब है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–569)

मक़ामाते हज या तवाफ़ वग़ैरा के हर चक्कर के लिए जो दुआऐं बाज़ हज़रात ने शाए की हैं वह रसूलुल्लाह (स.अ.व.) से मनक़ूल व मासूर तो हैं मगर ख़ास तवाफ़ वग़ैरा के लिए नहीं, अगर किसी को याद हों और उनको समझ कर दुआ करे तो सुब्हानल्लाह बहुत अच्छा है मगर बहुत से अ़वाम जो किताबें हाथ में ले कर तवाफ़ की हालत में उन अलफ़ाज़ को बेसमझे मुश्किल से अदा करते हैं इससे बेहतर ये है कि जो कुछ अपनी समझ में आए अपने मुहावरे में और अपनी ही मादरी ज़बान में दुआ करें और सब से फ़ाएदा मंद और आसान क़ुरआनी दुआ जो है उसका विर्द अक्सर ज़बान पर रखें।

"رَبَّنَا اٰتِنَا فِى الدُّنْيَا حَسَنَةً وَّفِى الْاٰخِرَةِ حَسَنَةً وَّقِنَا عَذَابَ النَّارِ"

यानी उनमें कुछ लोग ऐसे भी हैं जो अपनी दुआओं में अल्लाह तआ़ला से दुनिया की भलाई और बेहतरी भी मांगते हैं और आख़िरत की बेहतरी भी और अज़ाबे हजन्नम से पनाह मांगते हैं।

इसमें लफ़्ज़ "हसना" तमाम ज़ाहिरी और बातिनी ख़ूबियों और भलाइयों को शामिल है, मसलन दुनिया की हसना में बदन की सेहत, अह्ल व अ़याल की सेहत, रिज़्क़े हलाल में उस्अ़त व बरकत, दुनियावी सब ज़रूरीयात का पूरा होना, आमाले सालिहा, अख़्लाक़े महमूदा, इल्म नाफ़ेअ़, इज़्ज़त, वजाहत, अक़ाइद की दुरुस्ती, सिराते मुस्तक़ीम की हिदायत, इबादात में इख़लासे कामिल सब दाख़िल हैं, और आख़िरत की हसना में जन्नत और उसकी बेशुमार और लाज़वाल नेअ़मतें और हक़ तआ़ला की रज़ा और उसका दीदार ये सब चीज़ें शामिल हैं।

अलग़रज़ ये दुआ एक ऐसी जामेअ़ है कि इसमें इंसान के तमाम दुनियावी और दीनी मक़ासिद आ जाते हैं, दुनिया व आख़िरत दोनों जहां में राहत व सुकून मुयस्सर आता है, आख़िर में ख़ास तौर पर इसमें जहन्नम की आग से पनाह का भी ज़िक्र है, यही वजह है कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) बकसरत ये दुआ मांगा करते थे। अगर याद आ जाए तो अहक़र "मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी" को भी उस मौक़ा पर दुआओं में याद रखें।

तवाफ़ के बाद की दो रकअ़त का हुक्म?

मस्अला: तवाफ़ के हर सात चक्कर के बाद दो रकअ़त नमाज़ पढ़ना वाजिब है। ख़्वाह वह तवाफ़े फ़र्ज़ हो या वाजिब या सुन्नत या नफ़्ल और अफ़ज़ल ये है कि तवाफ़

और दो रकअत नफ़्ल बिला इन्कित़ाअ अदा किए जाएं जब कि मकरूह वक़्त न हो और अगर मकरूह वक़्त हो तो बाद में किसी वक़्त भी दो रकअत नमाज़ पढ़ना लाज़िम है, ख़्वाह वतन वापस आ कर ही पढ़े, गो इसमें ताख़ीर मकरूह है। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द-1 सफ़्हा-1075 व हाकज़ा अहकामे हज सफ़्हा-49)

मस्अला: अगर किसी ने मक्का मुकर्रमा में नमाज़े तवाफ़ नहीं पढ़ी तो उसको अदा करना वाजिब है, उसके ज़िम्मा से साक़ित न होगी, तमाम ज़िन्दगी में अदा कर सकता है। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा-133 व हज्जे बैतुल्लाह के अहम फ़तावा सफ़्हा-53)

हर तवाफ़ के बाद दो रकअत पढ़ना वाजिब है और हरम शरीफ़ में पढ़ना सुन्नत है, यानी जहां पर शिकार करना जाइज़ नहीं, इसलिए मस्जिदे हराम के अलावा अपने होटल व क़यामगाह में भी पढ़ सकते हैं और अगर दो रकअत नफ़्ले तवाफ़ पढ़ना ही याद नहीं रहा भूल गए और अपने वतन पहुंच गए तो अपने वतन में ही पढ़ ले। उस पर ताख़ीर की वजह से कोई दम वग़ैरा नहीं होगा वाजिब अदा हो जाएगा। (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

क्या मक़ामे इब्राहीम पर नफ़्ल अदा करना ज़रूरी है?

सवाल: बाज़ ये जानते हुए कि मजमा ज़्यादा है मगर मक़ामे इब्राहीम पर तवाफ़ की वाजिब नफ़्ल पढ़ने लगते हैं जिससे उनको भी चोट वग़ैरा लगने का अंदेशा है। नीज़ ज़ईफ़ व मस्तूरात के ज़ख़्मी होने का एहतेमाल है।

क्या ये नमाज़ हुजूम से हट कर नहीं पढ़ी जा सकती?

जवाबः हुजूम से हट कर ज़रूर पढ़ी जा सकती है। और अगर मकामे इब्राहीम पर नमाज़ पढ़ने से अपने आप को या किसी दूसरे को ईज़ा पहुंचने का अंदेशा हो तो मकामे इब्राहीम पर नमाज़ न पढ़ी जाए, क्योंकि किसी को ईज़ा पहुंचाना हराम है।

मस्अलाः अगर जगह हो (और किसी को तकलीफ़ भी न पहुंचे) तो मकामे इब्राहीम पर तवाफ़ की दो रकअत नफ़्ल पढ़ना अफ़ज़ल है या हतीम में गुंजाईश हो तो वहां पढ़ ले, वरना किसी जगह भी पढ़ सकता है, बल्कि सारे हरम शरीफ़ में कहीं भी पढ़े या मस्जिदे हरम शरीफ़ से बाहर अपनी क़यामगाह पर पढ़े तब भी जाइज़ है कोई कराहत नहीं है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–114)

मस्अलाः तवाफ़ के बाद दो रकअत मकामे इब्राहीम के पीछे होने का ये मतलब है कि मकामे इब्राहीम नमाज़ी और बैतुल्लाह के दरमियान आ जाए, मकामे इब्राहीम से जितना क़रीब हो सके बेहतर है और अगर कुछ फ़ासिला भी हो तो कुछ मुज़ाएका नहीं। लोगों को तकलीफ़ दे कर आगे पहुंचना जिहालत है।

मस्अलाः इज़्दिहाम के वक़्त बिल्कुल क़रीब जाने में अपने को तशवीश और दूसरे को ईज़ा होती हो तो इससे बेहतर है कि कुछ फ़ासिला से पढ़ ले।

मस्अलाः दोगाना तवाफ़ के लिए जिसको मकामे इब्राहीम के क़रीब जगह मिल जाए तो उसको चाहिए कि मुख़्तसर किराअत के साथ दो रकअत पढ़े और मुख़्तसर दुआ कर के जगह छोड़ दे, ताकि दूसरों को तकलीफ़ न हो, तवील

दुआ या नवाफ़िल न पढ़े।

(अहकामे हज सफ़्हा-50 हजरत मुफ़्ती शफ़ीअ़)

मुतअ़द्दद तवाफ़ की एक साथ नफ़्ल पढ़ना?

मस्अला: अगर कोई शख़्स चंद तवाफ़ मुसलसल करे और फिर हर तवाफ़ के लिए दो दो रकअ़त मुसलसल पढ़े तो ऐसा करना मकरूह है, अलबत्ता जिन औक़ात में तवाफ़ की दो रकअ़त पढ़ना मकरूह है उन औक़ात में इस तरह मुसलसल तवाफ़ करना और फिर (मकरूह वक़्त निकलने के) बाद में हर तवाफ़ के लिए दो दो रकअ़त पढ़ना मकरूह नहीं है। (फ़तावा महमूदिया जिल्द-3 सफ़्हा-183 व अहकामे हज सफ़्हा-50)

माज़ूर शख़्स तवाफ़ के नफ़्ल कैसे पढ़े?

मस्अला: माज़ूर जैसे फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ता है वैसे ही दोगाना तवाफ़ पढ़े, यानी खड़े हो कर, अगर इसकी ताकत व इस्तिताअ़त न हो तो फिर बैठ कर पढ ले। और तवाफ़ ख़ुद या किसी के सहारे से करे या व्हील चेयर पर जैसे आ़म माज़ूर लोग वहां करते हैं करे।

(आपके मसाइल जिल्द-4 सफ़्हा-113)

तवाफ़ के नफ़्ल ममनूअ़ औक़ात में पढ़ना?

मस्अला: इमाम अबूहनीफ़ा (रह.) के नज़दीक ममनूअ़ औक़ात यानी अस्र के बाद से मग़रिब तक, फ़ज्र के बाद से इशराक़ तक और ज़वाल के वक़्त, दोगाना तवाफ़ अदा करना जाइज़ नहीं है, इस दौरान जितने तवाफ़ किए हों, मकरूह वक़्त ख़त्म होने के बाद उनके दोगाना तवाफ़ अलग अलग अदा करे। (आप के मसाइल जिल्द-4 सफ़्हा-114 व फ़तावा महमूदिया जिल्द-3 सफ़्हा-182)

मस्अला: अगर ये दोगाना मकरूह वक़्त में पढ़ा तो बिल इत्तिफ़ाक़ अदा नहीं होगा। दरमियान में मकरूह वक़्त का ख़्याल आ जाए तो मुन्क़तअ कर दे यानी तोड़ दे। और अगर तमाम कर लिया तो मकरूह वक़्त गुज़रने के बाद दोबारा पढ़े।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़हा–527 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–1 सफ़हा–246 व मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़हा–133)

नफ़्ल भूल कर दूसरा तवाफ़ शुरू कर दिया?

मस्अला: तवाफ़ के बाद दो रकअत पढ़ना भूल जाए और दूसरा तवाफ़ शुरू कर दे, अगर दूसरे तवाफ़ का एक चक्कर पूरा होने से पहले पहले याद आ जाए तो उसको छोड़ कर दो रकअ़त पढ़ ले, अगर एक चक्कर पूरा होने के बाद याद आए तो ये तवाफ़ पूरा कर ले उसके बाद दो रकअ़त पहले तवाफ़ के लिए पढ़े और दो रकअ़त दूसरे तवाफ़ के लिए पढ़े।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़हा–183 व हाकज़ा मुअ़ल्लिुलहुज्जाज सफ़हा–133)

तवाफ़ के ज़रूरी मसाइल

मस्अला: तवाफ़ शुरू करने से पहले दोनों हाथ कानों तक उठाना जैसा कि नमाज़ में उठाते हैं सिर्फ़ पहली बार है सात मरतबा नहीं है। "इस्तीलाम" यानी दोनों हाथों की हथेलियों का रुख़ हजरे अस्वद की तरफ़ रहे गोया हजरे अस्वद पर रखे हुए हैं और हाथों की पुश्त अपने चेहरा की तरफ़ रखे इसके बाद हाथों को बोसा देना आठ मरतबा है।

(आपके मसाइल जिल्द--4 सफ़हा--100 व अहकामे हज सफ़हा–46)

मस्अलाः हजरे अस्वद का "इस्तीलाम" यानी बोसा देना पहली मरतबा और आठवीं मरतबा बइत्तिफ़ाक़ सुन्नते मुअक्कदा है। बीच वाले चक्करों में ज़्यादा ताकीद नहीं है। (अहकामे हज सफ़हा–47)

मस्अलाः जिस तवाफ़ के बाद सअी होती है उसमें अव्वल के तीन चक्करों में "रमल" भी होता है और जिस तवाफ़ के बाद सअी नहीं होती उसमें रमल नहीं होता।

मस्अलाः अगर तवाफ़ रमल के साथ शुरू किया और एक दो चक्कर के बाद इतना हुजूम हो गया कि रमल नहीं कर सकता तो रमल छोड़ दे और तवाफ़ पूरा कर ले।

मस्अलाः किसी मरज़ या बुढ़ापे की वजह से अगर रमल नहीं कर सकता तो कुछ हरज नहीं है।

मस्अलाः सारे तवाफ़ यानी सातों चक्करों में रमल करना मकरूह है। लेकिन करने से कोई जज़ा वाजिब नहीं होगी। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़हा–134)

> रमल तवाफ़ के शुरू के सिर्फ़ तीन चक्करों में मर्दों के लिए है, अगर पहले चक्कर में भूल जाए तो सिर्फ़ दो चक्कर में करे और अगर दूसरे में भी भूल गया तो सिर्फ़ तीसरे चक्कर में करे और अगर तीसरे में भी भूल गया तो अब रमल नहीं है, जिस तरह शुरू के तीन चक्करों में रमल करना मसनून है। उसी तरह से आख़िर के चार चक्करों में रमल न करना मसनून है, यानी एक सुन्नत

अगर छूट गई तो दूसरी सुन्नत को नहीं छोड़ना चाहिए, हां "इज़्तिबाअ" आख़िर तवाफ़ तक रहेगा और दो रकअत नमाज़े तवाफ़ पढ़ते वक़्त इज़्तिबाअ ख़त्म कर दे यानी मोंढे ढांक ले तब नमाज़ पढ़े, लेकिन सर खुला रहेगा क्योंकि हालते एहराम में सर नहीं ढांकना चाहिए। ग़रज़ ये कि अगर रमल या इज़्तिबाअ या इस्तीलमा छूट जाए तो कोई जज़ा वग़ैरा लाज़िम नहीं है।

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

मस्अला: तवाफ़ की जगह बैतुल्लाह के चारों तरफ़ मस्जिद के अन्दर अन्दर है, चाहे बैतुल्लाह से क़रीब हो या दूर और चाहे सुतून वग़ैरा को दरमियान में लेकर तवाफ़ करे, तवाफ़ हो जाएगा। नीज़ अगर कोई मस्जिदे हराम की छत पर चढ़ कर तवाफ़ करे, अगरचे बैतुल्लाह शरीफ़ से ऊँचा हो जाए तब भी तवाफ़ हो जाएगा, लेकिन मस्जिदे हराम से बाहर निकल कर अगर तवाफ़ करेगा तो तवाफ़ न होगा। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–137)

मस्अला: तवाफ़ करते वक़्त सीना या पीठ बैतुल्लाह शरीफ़ की तरफ़ करना मकरूहे तहरीमी है और अगर उसी हालत में कुछ फ़ासिल (तवाफ़ का) तैय किया तो उतने हिस्सा के तवाफ़ का इआदा वाजिब है।

मस्अला: तवाफ़ में सज्दा की जगह पर नज़र रखना मुस्तहब है, बैतुल्लाह की तरफ़ या किसी दूसरी तरफ़ नज़र करना ख़िलाफ़े इस्तेहबाब है। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–548 बहवाला गुन्या सफ़्हा–65)

मस्अला: तवाफ़ में बिल्कुल ख़ामोश रहना और कुछ न पढ़ना भी जाइज़ है, नीज़ तवाफ़ करते वक़्त दुआ पढ़ना या दुआ करना हो तो दुआ में हाथ न उठाएँ।

(मुअल्लिमुलहुज्जा सफ़्हा–137)

मस्अला: तवाफ़ करते हुए कुरआन मजीद की तिलावत कर सकते हैं मगर ज़िक्र अफ़ज़ल है, तिलावत करना हो तो बुलंद आवाज़ से न करे। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–287 व अहकामे हज सफ़्हा–49)

मस्अला: ज़िक्र या दुआ या कुरआन शरीफ़ की तिलावत बुलंद अवाज़ से करना या किसी और वजह से आवाज़ को बुलंद करना जिससे तवाफ़ करने वालों को और नमाज़ी को तशवीश हो, मकरूह है।

(उम्दतुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–189)

मस्अला: तवाफ़ की इब्तिदा हजरे अस्वद से की जाए। अगर किसी ने नहीं की तो क़यामे मक्का के दौरान दोबारा तवाफ़ करना वाजिब है। और अगर तवाफ़ दोबारा न किया और हज से वापस आ गया तो कुर्बानी देना वाजिब है।

मस्अला: तवाफ़ शुरू करने के वक़्त अफ़ज़ल ये हैं कि पूरा जिस्म हजरे अस्वद के सामने हो, यहां तक कि कोई हिस्सा बदन का उसके मुक़ाबिल होने से न रह जाए।

मस्अला: वाजिबात में से है कि बाबे कअ़बा के क़रीब दाईं जानिब से तवाफ़ करे और कअ़बा को अपनी बाईं जानिब रखे। क्योंकि कअ़बा इमाम के मानिन्द है और मुक़्तदी अकेला हो तो इमाम के दाईं जानिब खड़ा होता है। अगर तवाफ़ इसके उलट किया यानी बाईं तरफ़ से

शुरू किया और कअ़बा को दाईं जानिब रखा तो दोबारा तवाफ़ करना या दम देना वाजिब है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1074)

मस्अला: मरीज़ व माज़ूर को तवाफ़ कराने के लिए उजरत पर तवाफ़ कराना जाइज़ है।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–136)

मस्अला: तवाफ़ के लिए लिबास, बदन और जगह का नजासत से पाक होना सुन्नते मुअक्कदा है। अगर किसी ने तवाफ़ किया और उसका लिबास तमाम नजिस था तो सुन्नत तर्क हुई, लेकिन उस पर कोई तावान नहीं है। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1074)

मस्अला: अगर तवाफ़ कराने वाले ने तवाफ़ की नीयत नहीं की और तवाफ़ करने वाला माज़ूर व बेहोश नहीं था उसने ख़ुद नीयत तवाफ़ की कर ली, तो तवाफ़ हो गया। और अगर बेहोश था तो तवाफ़ नहीं हुआ, तवाफ़ कराने वाला नीयत कर लेता तो तवाफ़ हो जाता।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–136)

मस्अला: सत्रे औरत जिस तरह नमाज़ में वाजिब है, तवाफ़ में भी वाजिब है, लिहाज़ा बदन के जिन हिस्सों का ढकना वाजिब है, अगर उनमें से किसी उज़्व का चौथाई हिस्सा खुला रह गया तो वाजिब तर्क हो गया, लिहाज़ा फिर से तवाफ़ करना या क़ुर्बानी देना वाजिब है।

किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1074)

मस्अला: तवाफ़ में अगर औरत मर्द के साथ हो जाए तो तवाफ़ फ़ासिद नहीं होता न मर्द का न औरत का।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा--136)

मस्अला: तवाफ़ के दरमियान हजरे अस्वद का बोसा लेने के लिए इंतिज़ार न करें, बल्कि मौका मिल जाए तो बेहतर है वरना दूर से हाथों से इशारा कर के हाथों को चूम लें, ठहरें नहीं, क्योंकि तवाफ़ के दरमियान ठहरना ख़िलाफ़े सुन्नत है, अलबत्ता तवाफ़ के शुरू में या बिल्कुल आख़िर में बोसा के इंतिज़ार में ठहरने में मुजाएका नहीं है। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–566 किताबुलहज)

तवाफ़े ज़ियारत से पहले एहराम क्यों खुलता है?

सवाल: यहां पर एक सवाल ज़ेहन में आता है कि हज का अहम रुक्न तवाफ़े ज़ियारत अभी बाकी है फिर उससे पहले एहराम क्यों खोल दिया जाता है?

जवाब: जब लोग बादशाहों के दरबार में हाज़िरी देते हैं तो ख़ूब सफ़ाई कर के, बन संवर कर हाज़िर होते हैं, इसी तरह लोगों को तवाफ़े ज़ियारत के लिए अपना हाल दुरुस्त कर के हाज़िर होना चाहिए। सर गर्द से साफ़ कर लें, बदन से मैल दूर कर लें और सिले हुए मौज़ूं कपड़े पहन कर दाबारे खुदावंदी में तवाफ़े ज़ियारत के लिए हाज़िरी दें। इसी मक़सद से तवाफ़े ज़ियारत से पहले एहराम खोलना शुरू किया गया, चुनांचे ये एहराम जुज़्वी तौर पर खुलता है यानी सिर्फ़ तज़ैयुन की हद तक खुलता है। बीवी के साथ सोहबत करने में अभी एहराम बाकी है। क्योंकि अभी हज का एक अहम रुक्न तवाफ़े ज़ियारत बाकी है। (रहमतुल्लाहिल वासिआ जिल्द–4 सफ़्हा–208)

तवाफ़े ज़ियारत का वक़्त?

सवाल: कोई मर्द या औरत कमज़ोरी की हालत में हो। दस ज़िलहिज्जा या ग्यारह को हरम शरीफ़ में बहुत

हुजूम होता है, तो क्या ये सात या आठ ज़िलहिज्जा को तवाफ़े ज़ियारत (मुकद्दम) कर सकते हैं? नीज़ अगर कोई तेरहवीं या चौंदहवीं तारीख़ को तवाफ़े ज़ियारत करे तो क्या फ़र्ज़ अदा हो जाएगा?

जवाब: तवाफ़े ज़ियारत का वक़्त ज़िलहिज्जा की दसवीं तारीख़ (यौमे नहर) की सुब्ह सादिक़ से शुरू होता है। इससे पहले तवाफ़े ज़ियारत जाइज़ नहीं है। और इसको बारहवीं तारीख़ का सूरज गुरूब होने से पहले पहले अदा कर लेना वाजिब है। पस अगर बारहवीं तारीख़ का सूरज गुरूब हो गया और उसने तवाफ़े ज़ियारत नहीं किया तो उसके ज़िम्मा दम लाज़िम आएगा।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–164 व हाकज़ा अहकामे हज सफ़्हा–79 व मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–177)

मस्अला: तवाफ़े ज़ियारत हज का रुक्ने आज़म है। बारहवीं ज़िलहिज्जा का सूरज गुरूब होने तक उसकी अदाएगी का वक़्त है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–284 व हाकज़ा किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1065)

तवाफ़े ज़ियारत रमी के बाद करना?

सवाल: रमी के बाद एहराम की हालत में मस्जिदे हराम में जा कर तवाफ़े ज़ियारत कर लिया जाए और फिर मिना आ कर कुर्बानी और बाल कटवाए जायें तो क्या हुक्म है?

जवाब: जिस शख़्स ने तमत्तोअ़ या क़िरान किया हो, उसके लिए तीन चीज़ों में तरतीब वाजिब है।

(1) जमरए अक़बा की रमी करे। (2) फिर कुर्बानी करे। (3) फिर बाल कटाए। अगर इस तरतीब के ख़िलाफ़

किया तो दम लाज़िम होगा लेकिन इन तीनों चीज़ों के दरमियान और तवाफ़े ज़ियारत के दरमियान तरतीब वाजिब नहीं, बल्कि सुन्नत है। पस इन तीनों चीज़ों से अलत्तरतीब फ़ारिग़ हो कर तवाफ़े ज़ियारत के लिए जाना सुन्नत है। लेकिन अगर किसी ने इन तीन चीज़ों से पहले तवाफ़े ज़ियारत कर लिया तो ख़िलाफ़े सुन्नत होने की वजह से मकरूह है, मगर उस पर दम लाज़िम नहीं होगा।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–145)

मस्अला: तवाफ़े ज़ियारत को रमी, ज़िब्ह और हल्क़ के बाद करना सुन्नत है, वाजिब नहीं, लिहाज़ा अगर कोई शख़्स रमी, ज़िब्ह और हल्क़ से पहले तवाफ़े ज़ियारत कर ले तो उस पर दम लाज़िम न होगा, मगर ख़िलाफ़े सुन्नत और मकरूह होगा। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–283 व मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–195)

मस्अला: कुर्बानी से पहले तवाफ़े ज़ियारत जाइज़ है, मगर अफ़ज़ल ये है कि कुर्बानी के बाद तवाफ़े ज़ियारत करे। (मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–105)

तवाफ़े ज़ियारत का तरीक़ा?

सवाल: क्या तवाफ़े ज़ियारत में रमल, इज़्तिबाअ़ और सअ़ी होगी या नहीं?

जवाब: अगर पहले सअ़ी न की हो बल्कि तवाफ़े ज़ियारत के बाद करनी हो तो उसमें "रमल" होगा। मगर तवाफ़े ज़ियारत उमूमन सादा कपड़े पहन कर होता है। (क्यों हल्क़ व कुर्बानी के बाद आम कपड़े पहन लिए जाते हैं) इसलिए उसमें इज़्तिबाअ़ नहीं होगा। अलबत्ता अगर एहराम की चादरें न उतारी हों तो इज़्तिबाअ़ भी कर लें।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–106)

मस्अला: तवाफ़े ज़ियारत के लिए मुस्तक़िल एहराम की ज़रूरत नहीं है, जिस एहराम से हलाल हुआ है वही उसके लिए काफ़ी है।

(इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़्हा–164)

मस्अला: तवाफ़े ज़ियारत के बाद सअी करना वाजिब है, और जो शख़्स इस सअी को मुक़द्दम कर चुका है उसके लिए तवाफ़े ज़ियारत के बाद सअी करना वाजिब नहीं है। (अहकामे हज सफ़्हा–85 व हाकज़ा मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–187)

तर्के तवाफ़े ज़ियारत का हुक्म

सवाल: आप से दरयाफ़्त किया था कि जिस शख़्स ने तवाफ़े ज़ियारत उज़्र की वजह से छोड़ दिया, तो फिर क्या तदारुक है? तो आप ने जवाब में फ़रमया था कि तवाफ़े ज़ियारत कर ले। अब सवाल ये है कि तवाफ़े ज़ियारत हज के मौसम में करे या जब चाहे जा कर तवाफ़े ज़ियारत कर सकता है?

जवाब: जब चाहे तवाफ़े ज़ियारत कर सकता है, नया एहराम बांधे बग़ैर वैसे ही जा कर तवाफ़ करे और ताख़ीर की वजह से दम दे।

तवाफ़े ज़ियारत से क़ब्ल दूसरे हज या उम्रा का एहराम बांधना जाइज़ नहीं, बीवी से सोहबत करना भी हराम है। अगर बीवी से सोहबत कर ली ता दमे ताख़री के अलावा बुदना यानी पूरी गाय या पूरा ऊँट भी वाजिब है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–529 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–198)

मस्अला: तवाफ़े ज़ियारत किसी हाल में न फ़ौत होता है और न उसका बदला दे कर अदा हो सकता है, बल्कि आख़िर उम्र तक उसकी अदाएगी फ़र्ज़ रहेगी और जब तक उस को अदा नहीं करेगा बीवी से मुबाशरत और बोस व किनार हराम रहेगा। (अहकामे हज सफ़्हा–79)

मस्अला: ये सही है कि तवाफ़े जियारत न करने वाले पर उसकी बीवी हराम हो जाती है, जब तक तवाफ़े ज़ियारत न करे, बीवी हलाल नहीं होती, गोया बीवी के हक़ में एहराम बाक़ी है। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–105)

<u>मवाद निकलने की हालत में तवाफ़े ज़ियारत करना?</u>

सवाल: एक शख़्स के पैर में चोट लग गई, ऐसी हालत में तवाफ़े ज़ियारत किया, पैर से पानी या मवाद कभी कभी निकलता जाता था, उसके बावजूद तवाफ़े ज़ियारत कर लिया, तो क्या तवाफ़े ज़ियारत हो गाय या नहीं?

जवाब: अैयामे नह्र के अन्दर ज़ख़्म से ख़ून बंद होने का इंतिज़ार करना वाजिब था, लेकिन अगर तवाफ़ कर लिया तो हो गया, लेकिन वाजिबे तहारत (पाकी) छूटने की वजह से दम लाज़िम होगा। अलबत्ता बाद में उस तवाफ़ का इआदा कर लिया तो दम साक़ित हो गया अगरचे अैयामे नह्र के बाद इआदा किया हो।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–525 व हाकज़ा अहकामे हज सफ़्हा–102)

मस्अला: अगर बदन या कपड़े पर तवाफ़े फ़र्ज़ या वाजिब या नफ़्ल करते वक़्त नजासत लगी हुई थी तो कुछ वाजिब न होगा लेकिन मकरूह है।

मस्अला: अगर पूरा तवाफ़ या अक्सर तवाफ़े ज़ियारत

जनाबत (नापाकी) या हैज़ व निफ़ास की हालत में कर लिया तो पूरा एक ऊँट या पूरी गाय, बैल, कटरा, वाजिब होगा। और अगर तवाफ़े कुदूम या तवाफ़े वदाअ़ या तवाफ़े नफ़्ल और हालतों में किया तो एक बकरी या सातवाँ हिस्सा) वाजिब होगी। और इन सब सूरतों में तहारत के साथ तवाफ़ का इआदा कर लेने से कफ़्फ़ारा साकित हो जाएगा। (मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–244)

तवाफ़े ज़ियारत से पहले सोहबत कर ली?

सवालः हज में ग़लती हो गई, वह ये कि बारह ज़िलहिज्जा को आख़िरी कंकरियाँ मारने के बाद, रात को हम मियाँ बीवी ने सोहबत कर ली और हम ने तवाफ़े ज़ियारत तेरह ज़िलहिज्जा को किया। क्या ये हज सही हो गया?

जवाबः आप दोनों का हज तो बहरहाल हो गया, लेकिन दोनों ने दो जुर्म किए, एक तवाफ़े ज़ियारत का बारहवीं तारीख़ से मुअख़्ख़र करना और दूसरा तवाफ़े ज़ियारत से पहले सोहबत कर लेना। पहले जुर्म पर दोनों के ज़िम्मा दम लाज़िम आया, यानी हुदूदे हरम में दोनों की तरफ़ से एक एक बकरा ज़िब्ह किया जाए, और दूसरे जुर्म पर दोनों के ज़िम्मा "बड़ा दम" लाज़िम आया। यानी दोनों की जानिब से एक एक ऊँट या गाय पूरी हुदूदे हरम में ज़िब्ह की जाये और उसका गोश्त सिर्फ़ फ़ुक़रा व मसाकीन ही खा सकते हैं। और इसके अलावा दोनों को इस्तिग़फ़ार भी करना चाहिए।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–147)

मस्अलाः हज में हल्क़ कराने (बाल कटवाने) के बाद

और तवाफ़े ज़ियारत से पहले तमाम ममनूआते एहराम जाइज़ हो जाते हैं, लेकिन मियाँ बीवी का तअल्लुक (सोहबत) जाइज़ नहीं जब तक कि तवाफ़े ज़ियारत न कर ले। (आपके मसाइल जिल्द-4 सफ़्हा-146 व हाकज़ा अहकामे हज सफ़्हा-79)

मस्अलाः अगर वकूफ़े अरफ़ात के बाद सर मुंडवाने से पहले जिमाअ (सोहबत) कर लिया तो हज फ़ासिद नहीं हुआ मगर एक ऊँट पूरा या पूरी सालिम गाय ज़िब्ह करना होगा।

मस्अलाः और अगर सर मुंडवाने के बाद तवाफ़े ज़ियारत से पहले जिमाअ कर लिया तो इस सूरत में भी हज फ़ासिद न होगा, लेकिन जज़ा में एक बकरी वाजिब होगी, बाज़ हज़रात ने इस सूरत में भी पूरा ऊँट व गाय ही वाजिब कहा है। (अहकामे हज सफ़्हा-98)

मस्अलाः तवाफ़े ज़ियारत फ़र्ज़ और रुक्ने हज है इस तवाफ़ के बग़ैर एहराम से नहीं निकलता और बीवी से सोहबत हलाल नहीं होती, ये तवाफ़ करना ज़रूरी है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द-6 सफ़्हा-551)

नफ़्ली तवाफ़ मरहूमीन और ज़िन्दा हज़रात के लिए भी कर सकते हैं, अपने मुतअल्लिक़ीन के लिए तवाफ़ करें तो कम से कम एक अहक़र "मुहम्मद रफ़अत क़ासमी" के लिए भी कर दें। अल्लाह तआला आपको जज़ाए ख़ैर अता फ़रमाए, आपका हज व उम्रा और तवाफ़ वग़ैरा भी क़बूल फ़रमाए। अमीन!

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

हजरे अस्वद कीफज़ीलत

ह: हजरे अस्वद जन्नत से आया हुआ है, और हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम को पेश किया गया, ताकि वह कअ़बा शरीफ़ के कोना में उसको लगा दें, आंहज़रत (स.अ.व.) के ज़मानए मुबारक में मज़ीद कुरैश ने ख़ानए कअ़बा की तामीर की तो रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने अपने दस्ते मुबारक से उठा कर उस जगह पर नसब फ़रमाया।

तवाफ़ की इब्तिदा व इन्तिहा उसी मुबारक पत्थर के मुक़ाबिल होती है। तारीख़ के तवील तरीन दौर में बेशुमार हज़राते अंबिया अलैहिमुस्सलाम और ख़ातिमुल अंबिया व रसूल अलैहिस्सलाम और लाखों सहाबए किराम व औलियाए इज़ाम और लातदाद हुज्जाज व मोअ़तमिरीन के मुबारक होंट उस मुबारक पत्थर से मिले हैं और उसके क़रीब दुआ भी क़बूल होती है और क़यामत के दिन ये पत्थर (हजरे अस्वद) अपने बोसा लेने वालों के हक़ में गवाही देगा। (तारीख़ मक्का सफ़्हा–45)

हजरे अस्वद का बोसा लेने के आदाब

मस्अला: बोसा लेने के लिए किसी को धक्का या कोई तकलीफ़ नहीं देनी चाहिए। इसलिए कि बोसा लेना सुन्नत है, जबकि लोगों को ईज़ा देना मना है, लिहाज़ा सुन्नत पर अमल करने के लिए ममनूअ़ का इरतिकाब नहीं करना चाहिए। और इज़्दिहाम की हालत में हाथ या छड़ी वग़ैरा से हजरे अस्वद की जानिब इशारा करते हुए तकबीर कह कर अपने हाथ या छड़ी के बोसा पर इक्तिफ़ा कर लेना चाहिए।

वाज़ेह रहे कि आंहज़रत (स.अ.व.) ने हजरे अस्वद का

बोसा भी लिया है और इज़्दिहाम के वक़्त इशारा भी किया जबकि आंहज़रत (स.अ.व.) को भीड़ में जगह मिल सकती थी और सहाबए किराम बख़ुशी रास्ता देते, लेकिन आप (स.अ.व.) ने इशारा पर ही इक्तिफ़ा किया ताकि उम्मत भीड़ के वक़्त में इस सुन्नत पर अमल कर ले। लिहाज़ा ये दोनों अमल आप (स.अ.व.) की मुबारक सुन्नत हैं।

हज़रत अब्दुल्लाह इब्न अब्बास (रज़ि.) फ़रमाते हैं हजरे अस्वद पर इज़्दिहाम न करो, न किसी को तकलीफ़ पहुंचाव और न खुद किसी की तकलीफ़ का निशाना बनो।

हज़रत अता (रह.) कहते हैं "सिर्फ़ तकबीर व इशारा पर इक्तिफ़ा कर लेना और हजरे अस्वद का बोसा न लेना मेरे नज़दीक इससे बेहतर है कि किसी को ईज़ा दे कर बोसा लूं, नीज़ ये भी फ़रमाते हैं जब हजरे अस्वद की तरफ़ इशारा कर के अपने हाथों को चूमे तो उसमें आवाज़ बुलंद न करें।"

मस्अला: औरतों को मर्दों की भीड़ में घुस कर बोसा लेने की कोशिश नहीं करनी चाहिए अलबत्ता जब भीड़ न हो तो औरतें हजरे अस्वद का बोसा ले सकती हैं।

मस्अला: हजरे अस्वद की सीध में जो अलामती पट्टी या लकीर का निशान मताफ़ में है उस पर दुआ के लिए या नमाज़ के लिए खड़े न होना चाहिए, बिलख़ुसूस इज़्दिहाम के वक़्त इसलिए कि ऐसा करने से तवाफ़क करने वालों को परेशानी होती है। (तारीख़े मक्का सफ़्हा—45 बहवाला अख़बारे मक्का लिलफ़ाकिही)

हजरे अस्वद को बोसा क्यों देते हैं?

सवाल: ग़ैर मुस्लिम एतेराज़ करते हैं कि मुसलमान

हजरे अस्वद को बोसा दे कर उसकी पूजा (इबादत) करते हैं। उनको क्या जवाब दिया जाए?

जवाबः मजकूरा एतेराज़ का जवाब आज से चौदह सौ साल पहले दिया जा चुका है। नबी करीम (स.अ.व.) ने हजरे अस्वद के क़रीब हो कर फ़रमाया था– "मुझे मालूम है तू एक पत्थर है, नफ़ा व नुक़सान पहुंचाने पर क़ादिर नहीं, मेरा रब तुझे बोसा देने का हुक्म न करता तो मैं बोसा न देता।"

इस तरह इस मस्अले की तनक़ीह करने वाले हज़रत उमर फ़ारूक़ (रज़ि.) एक मरतबा तवाफ़ फ़रमा रहे थे उस वक़्त कुछ नौ मुस्लिम देहाती भी मौजूद थे। हज़रत उमर (रज़ि.) हजरे अस्वद के क़रीब पहुंचे तो बोसा देने से पहले ज़रा ठहर गए और फ़रमाया– "मैं जानता हूं और मैं यक़ीन रखता हूं तू एक पत्थर है (माबूद नहीं है) ना तू नुक़सान पहुंचा सकता है और न नफ़ा, अगर मैंने आंहज़रत (स.अ.व.) को बोसा लेते हुए न देखा होता तो मैं भी तुझे न चूमता।"

ज़रा सोचिए कि मुसलमान हजरे अस्वद को क़ाबिले परस्तिश और हाजत रवा और नफ़ा व नुक़सान का मालिक जानते होते तो इस तरह के ख़िताब का क्या मतलब? इससे मुतरश्शेह होता है कि बोसा सिर्फ़ जज़्बए मुहब्बत में देते हैं, अपनी औलाद को और बीवी को भी बोसा देते हैं क्या उन्हें माबूद और हाजत रवा समझ कर बोसा दिया जाता है? हरगिज़ नहीं।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़हा–32)

मस्अलाः किसी चीज़ की ताज़ीम व तकरीम इस नज़रिए

से की जाए कि अल्लाह व रसूल का हुक्म है तो वह ताज़ीम बरहक़ है, लेकिन अगर किसी मख़लूक़ को नाफ़े व ज़रर रसाँ और बनाव बिगाड़ का मुख़्तार यक़ीन कर के उसकी ताज़ीम की जाए वह शिर्क का एक शोबा है और इस्लाम में इसकी गुंजाइश नहीं है।

(मआरिफ़ुल हदीस जिल्द–4 सफ़हा–252 व हाकज़ा मज़ाहिरे हक़ जिल्द–3 सफ़हा–318)

मस्अला: हजरे अस्वद दुनियावी संग (पत्थर) नहीं है कि उसको इस पर क़यास किया जाए, बल्कि ये जन्नत की महबूब व मुअज्जम शैय है इसलिए रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने उसको ऐसी अहमियत दी है।

(मुन्तख़ब निज़ामुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़हा–153)

मस्अला: आंहज़रत (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि– "हजरे अस्वद जन्नत से नाज़िल हुआ और आख़िरत में वह भी उठाया जाएगा और बोसा देने वालों के हक़ में शहादत देगा। (किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–332)

हदीस शरीफ़ में है कि हजरे अस्वद हर उस शख़्स को पहचानता है जो अल्लाह तआला की निस्बत से अदब व मुहब्बत के साथ उसको बिला वास्ता या बिलवास्ता चूमता है और उसका इस्तीलाम करता है। क़यामत में अल्लाह तआला उसको एक देखने वाली और बोलने वाली हस्ती बना कर खड़ा कर देगा और वह उन बंदों के हक़ में गवाही देगा जो अल्लाह के हुक्म के मुताबिक़ आशिक़ाना और नियाज़ मंदाना शान के साथ उसका इस्तीलाम करते थे। (मआरिफ़ुलहदीस जिल्द–4 सफ़्हा–251 व हाकज़ा मज़ाहिरे हक़ जिल्द–3 सफ़्हा–314)

क्या हजरे अस्वद जन्नत से सफ़ेद आया था?

सवालः मैंने हदीस शरीफ में पढ़ा है कि हजरे अस्वद लोगों के कसरते गुनाहों की वजह से काला हो गया। तो क्या ये जब जन्नत से आया था उस वक्त उसको हजरे अस्वद न कहते थे, क्योंकि अस्वद के माना हैं– "काला"?

जवाबः जिस हदीस का आप ने हवाला दिया है वह तिर्मिजी, निसाई वगैरा में है, उसको सही हसन कहा है। उस हदीस में मजकूर है कि ये उस वक्त सफेद रंग का था। जाहिर है कि जब ये नाजिल हुआ होगा उस वक्त उसको "हजरे अस्वद" न कहते होंगे।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ्हा–156)

हजरे अस्वद और रुक्ने यमानी का बोसा लेना?

मस्अलाः हजरे अस्वद का इस्तीलाम सुन्नत है बशर्तेकि बोसा लेने से अपने आपको या किसी दूसरे को ईज़ा न हो, अगर इसमें धक्कम पेल की नौबत आए और किसी मुसलमान को ईजा पहुंचे तो ये फेल हराम है और तवाफ में फेले हराम का इरतिकाब करना और अपनी और दूसरों की जान को खतरे में डालना बहुत ही बेअक्ली की बात है। अगर आदमी आसानी से हजरे अस्वद तक पहुंच सके तो उसको चूम ले वरना दूर से अपने हाथों को हजरे अस्वद की तरफ बढ़ा कर ये तसव्वुर करे गोया मैंने हाथ हजरे अस्वद पर रख दिए हैं और फिर अपने हाथों को चूम ले, उसके सवाब में कोई कमी नहीं होगी। इंशाअल्लाह तआला!

और रुक्ने यमानी को बोसा नहीं दिया जाता, न उसकी तरफ इशारा किया जाता है, बल्कि अगर चलते चलते

उसको दाहिना हाथ लगाने की गुंजाइश हो तो हाथ लगा दे और हाथ को भी न चूमे और अगर हाथ न लगा सके तो बग़ैर इशारा किए गुज़र जाए।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–110 व हाकज़ा अहकामे हज सफ़्हा–46)

मस्अला: जब हजरे अस्वद की तरफ़ मुंह करें तो उस हालत में दाईं जानिब को हरगिज़ न सरकें बल्कि वहीं दाईं तरफ़ को घूम जाएं और फिर आगे चलें।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–567)

मस्अला: हजरे अस्वद को बोसा देते वक़्त चांदी के हलक़ा पर हाथ न टेकें।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–567)

मस्अला: सिर्फ़ हजरे अस्वद का बोसा लिया जा सकता है, बैतुल्लाह की दीवार वग़ैरा या किसी और जगह का चूमना अदब के ख़िलाफ़ है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–112 व हाकज़ा मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–351)

मस्अला: हजरे अस्वद या मुलतज़म पर अगर ख़ुशबू लगी हो तो मोहरिम (एहराम वाले) को उसको छूना जाइज़ नहीं है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–88)

मस्अला: हजरे अस्वद का बोसा इस हालत में जाइज़ नहीं जबकि भीड़ की वजह से अपने नफ़्स को या किसी दूसरे को तकलीफ़ पहुंचने का ख़तरा हो, और औरतों के लिए इस हाल में हजरे अस्वद को चूमना बिल्कुल हराम है जबकि अजनबी मर्दों के साथ जिस्म लगने का एहतेमला हो। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–566)

"हजरे अस्वद वाले कोने और काली पट्टी से

तवाफ़ शुरू होता है और यहीं पर आ कर एक चक्कर होता है और तवाफ़ ख़त्म भी यहीं पर होता है। कअ़बतुल्लाह के तीन कोनों के चक्कर लगाने के बाद जब चौथे कोने पर पहुंचेंगे इसका नाम "रुक्ने यमानी" है। रुक्ने यमानी को दोनों हाथों से या सिर्फ़ दाऐं हाथ से छूना सुन्नत है, जबकि दूसरों को तकलीफ़ पहुंचाए बग़ैर वहां तक पहुंचना मुमकिन हो, वरना बग़ैर हाथ लगाए ही वहां से गुज़र जाए और उसकी तरफ़ हाथ का इशारा भी न करे, जैसा कि बाज़ हज़रात उसका इस्तीलाम करते हैं और हाथों को चूमते हैं ये ग़लत तरीक़ा और ख़िलाफ़े सुन्नत है। अगर हाथ लगाना मुमकिन नहीं है तो सिर्फ़ वहां से गुज़रते हुए आंहज़रत (स.अ.व.) की सुन्नत और सहाबए किराम (रज़ि.) के तरीक़ा पर अमल करते हुए सिर्फ़ "رَبَّنَا آتِنَا فِي الدُّنْيَا حَسَنَةً وَّفِي الْآخِرَةِ حَسَنَةً وَّقِنَا عَذَابَ النَّارِ" पढ़ते हुए गुज़र जाए। इसमें सब कुछ मांग लिया गया है और इसके अलफ़ाज़ निहायत मुख़्तसर हैं। पस इस मुख़्तसर वक़्फ़ा के लिए यही दुआ मुनासिब है, यानी रुक्ने यमानी से चल कर हजरे अस्वद तक पहुंचने में कुछ ज़्यादा देर नहीं लगती। इसलिए उस मौक़ा पर यही मुख़्तसर दुआ मुनासिब है।"

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

हजरे अस्वद की तौहीन का हुक्म?

सवालः एक ख़ातून ने हज से आ कर बताया कि दौराने हज संगे अस्वद का बोसा देने के लिए जब मैं गई तो वहां पर लोगों को बोसा देते हुए देख कर मुझ को घिन आई, मैंने बोसा नहीं दिया। ऐसी औरत के लिए क्या हुक्म है?

जवाबः अगर उस औरत ने हजरे अस्वद की तौहीन व बेइज़्ज़ती के इरतिकाब की नीयत से ये गुफ़्तगू की हो और उसका मक़्सद हजरे अस्वद की तौहीन हो और बोसा देने के अमल से नफ़रत हो तो ये कलिमए कुफ़्र है। उस पर तज्दीदे ईमान वाजिब है और उसका निकाह शौहर से टूट गया। और अगर उसका इरादा ये हो कि चूंकि उस पर लोगों का लुआब व थूक पड़ता है जो क़ाबिले नफ़रत है या उसका मक़्सद तकब्बुर की बिना पर लोगों की इहानत है तो कुफ़्र का हुक्म नहीं होगा, लेकिन बदतरीन क़िस्म का फ़िस्क़ होने में कलाम नहीं है। उस औरत पर तौबा वाजिब है।

और अगर उस ख़ातून को इस बात से घिन आई कि सब मर्द, औरतें, इकट्ठे बोसे दे रहे हैं और उसको हया माने आई कि वह मर्दों के मजमा में घुस कर बोसा दे तो उसका ये फ़ेल बिला शुब्हा सही है और किसी मुसलमान के क़ौल व अमल को हत्तलवुस्अ अच्छे माना पर ही महमूल करना चाहिए।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–111)

मस्अलाः हजरे अस्वद का बोसा न लेने से कफ़्फ़ारए जिनायत भी लाज़िम न आएगा और फ़रीज़ए हज अदा हो

जाएगा। (मुन्तख़ब निज़ामुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–152)

हजरे अस्वद और मकामे इब्राहीम जन्नत के पत्थर हैं जब उनको ज़मीन पर उतारा गया तो हिकमते इलाही ने चाहा कि उन पर दुनियावी ज़िन्दगी के अहकाम मुरत्तब हों, क्योंकि जगह की तबदीली से अहकाम में तबदीली आ जाती है। एक अक़्लीम का आदमी दूसरी अक़्लीम में जा बसता तो रंग, मिज़ाज और क़द वग़ैरा में तब्दीली आ जाती है। चुनांचे ज़मीन में उतारने के बाद उनकी रौशनी मिटा दी गई और वह ज़मीन के पत्थरों जैसे नज़र आने लगे। इस सूरत में उनकी फज़ीलत की वजह उनका जन्नती पत्थर होना है।

(रहमतुल्लाहिलवासिआ जिल्द–4 सफ़्हा–242)

ज़मज़म की फज़ीलत व आदाब

बैतुल्लाह शरीफ़ से मशरिक़ की जानिब एक तारीख़ी कुंवा है। जिसको ज़मज़म कहते हैं, हदीस शरीफ़ में उस कुंवें की बड़ी फज़ीलत आई है और उसके पानी की भी बड़ी बरकत और फज़ीलत ब्यान की गई है।

हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने अल्लाह तआला के हुक्म से जब हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम और उनकी वालिदा हज़रत हाजिरा अलैहस्सलाम को मक्का के बेआब व गियाह रेगिस्तान में ला कर छोड़ दिया तो अल्लाह तआला ने उन पर रहम खा कर उस चटियल मैदान में उनके लिए ज़मीन का ये चश्मा जारी फ़रमाया। हदीस शरीफ़ में है– "هِىَ هَزْمَةُ جِبْرِيلَ وَسُقْيَا إِسْمٰعِيلَ" (दार कुतनी) ये जिब्रईल अलैहिस्सलाम का खुदा हुआ कुंवा और इस्माईल अलैहिस्सलाम का सक़ावा है।

तवाफ़ के बाद या सअी सफ़ा व मरवा के दरमियान और बाल कटवाने से फ़ारिग़ हो कर ज़मज़म का पानी ख़ूब ही पेट भर कर पीना चाहिए।

ज़मज़म का पानी इस इफ़रात के साथ पीना कि पस्लियाँ तन जाएँ। ईमान की अलामत है। ईमान से महरूम मुनाफ़िक़ इतना नहीं पी सकता कि उसकी पस्लियाँ तन सकें। इब्न माजा में आप (स.अ.व.) का इरशाद है कि– "हमारे और मुनाफ़िक़ीन के दरमियान एक इम्तियाज़ी अलामत ये है कि मुनाफ़िक़ ज़मज़म का पानी इतना पेट भर कर नहीं पीते कि उनकी पस्लियाँ तन जाऐं।"

आबे ज़मज़म की फ़ज़ीलत व बरकत ब्यान करते हुए आंहज़रत (स.अ.व.) ने ब्यान फ़रमाया है– "आबे ज़मज़म जिस मक़्सद से पिया जाए, वह उसी मक़्सद के लिए मुफ़ीद हो जाता है, शिफ़ा के लिए पिया तो अल्लाह तआ़ला शिफ़ा बख़्शेगा, पेट भरने और आसूदा होने के लिए पिया तो ख़ुदा तुम्हें आसूदा कर देगा। प्यास बुझाने के लिए पियो तो अल्लाह तआ़ला तुम्हारी प्यास बुझा देगा, ये वह कुंवा है जिसको जिब्रईल अलैहिस्सलाम ने अपनी ठोकर की क़ूवत से "अल्लाह के हुक्म से" खोदा था और ये इस्माईल अलैहिस्सलाम की सबील है।"

(दारेक़ुतनी)

हज़रत अब्दुल्लाह इब्न अब्बास (रज़ि) का ब्यान है कि नबी करीम (स.अ.व.) ने इरशाद फ़रमाया– "रूए ज़मीन के हर पानी से ज़्यादा अफ़ज़ल ज़मज़म का पानी है, ये भूके के लिए ग़िज़ा है और बीमार के लिए शिफ़ा है।"

(इब्न माजा)

मस्अला: आबे ज़मज़म कसरत से पीना मुस्तहब और ईमान की अलामत है, नीज़ ज़मज़म को कुर्बत की नीयत से देखना भी इबादत है, जैसे कअबा को देखना इबादत है। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–303 व हाकज़ा तारीख़े मक्का सफ़्हा–85)

आबे ज़मज़म पीने का तरीक़ा

सवाल: आबे ज़मज़म के मुतअल्लिक़ हदीस शरीफ़ में हुक्म है कि खड़े हो कर पिया जाए, अर्ज़ ये है कि ये हुक्म सिर्फ़ हज व उम्रा अदा करते वक़्त है या किसी भी वक़्त और किसी भी जगह?

जवाब: आबे ज़मज़म खड़े हो कर और क़िब्ला रुख़ हो कर पीना मुस्तहब है, हज व उम्रा की तख़्सीस नहीं है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–116)

मस्अला: वुज़ू का बचा हुआ पानी और ज़मज़म के पानी को खड़े हो कर पीने की कराहत व इस्तेहबाब में इख़्तिलाफ़ है। राजेह ये है कि बिला कराहत जाइज़ है (खड़े हो कर पीना) मगर मुस्तहब नहीं है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–520 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–202 व जिल्द–1 सफ़्हा–121)

मस्अला: ज़मज़म पीते हुए ये दुआ पढ़े–

"اَللّٰھُمَّ اِنِّیْ اَسْئَلُکَ رِزْقًا وَّ اسِعًا وَعِلْمًا نَافِعًا وَّ شِفَاءً مِّنْ کُلِّ دَاءٍ"

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1076 व हाकज़ा मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–197)

आबे ज़मज़म अपने साथ लाना?

सवाल: ज़मज़म शरीफ़ को अपने साथ मुतबर्रक समझ कर हुज्जाजे किराम अपने वतन लाते हैं, क्या इसका

कोई सुबूत है?

जवाब: हदीस शरीफ़ में है– "उम्मुलमोमिनीन हज़रत आइशा सिद्दीक़ा (रज़ि.) अपने साथ ज़मज़म ले जाती थीं और फ़रमाती थीं कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ज़मज़म शरीफ़ ले जाते थे।"

(तिर्मिज़ी शरीफ़ किताबुलहज जिल्द–1 सफ़्हा–115)

इससे साबित हुआ कि हुज्जाजे किराम का ज़मज़म लाना जाइज़ है और बाइसे बरकत, इस पर एतेराज़ करना सही नहीं है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–298)

मस्अला: आबे ज़मज़म को दूसरे शहरों की तरफ़ तबर्रुकन ले जाना और लोगों को पिलाना मुस्तहब है और मरीज़ों पर डालना (छिड़कना) भी जाइज़ है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–303)

मस्अला: आबे ज़मज़म से इस्तिंजा करना मकरूह है, तबर्रुकन (हरम शरीफ़ में) ज़मज़म से वुज़ू या गुस्ल करना मकरूह नहीं है, बल्कि मुस्तहब है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–223 बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा–352 व हाकज़ा मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–303)

मस्अला: किसी नापाक चीज़ को आबे ज़मज़म से न धोया जाए, कपड़ा हो या कोई और नापाक चीज़। और जुनुबी यानी नापाक शख़्स को उससे गुस्ल भी न करना चाहिए।

मस्अला: आबे ज़मज़म का कुंवा मस्जिद के अन्दर है उसके चारों तरफ़ की ज़मीन मस्जिद है इसलिए उसमें नापाकी का गुस्ल करना जाइज़ नहीं है। नीज़ इस तरह थूकना या नाक की रेज़िश डालना या जनाबत की हालत

में दाख़िल होना भी जाइज़ नहीं है।

(रद्दुलमुह्तार जिल्द–1 सफ़्हा–691 अहकामे हज)

सअी क्या है?

मस्अला: सफ़ा व मरवा की दो पहाड़ियाँ जो मस्जिदे हराम के क़रीब ही हैं (अब मस्जिदे हराम में ही शामिल कर लिया गया) "सअी" के लफ़्ज़ी माना दौड़ने के हैं और शरअ़न सफ़ा व मरवा के दरमियान मख़्सूस तरीक़ा पर सात चक्कर लगाने को सअी कहते हैं। ये हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम की वालिदा हाजिरा अलैहस्सलाम के एक ख़ास अमल की यादगार है और उम्रा और हज दोनों में ये सअी करना वाजिब है।

(अहकामे हज सफ़्हा–53)

मस्आ (सअी करने की जगह) की लम्बाई 3945 मीटर है। ये पैमाइश सफ़ा की बुलंदी पर दीवार से शुरू हो कर मरवा की बुलंदी पर दीवार तक है। मस्आ पट्टी का अ़र्ज़ (चौड़ाई) बीस मीटर है। (तारीख़े मक्का सफ़्हा–94)

सअी के शराइत व आदाब

मस्अला: सअी का तवाफ़ के बाद होना शर्त है, अगर कोई तवाफ़ से पहले सअी कर ले तो सअी मोतबर नहीं, तवाफ़ के बाद दोबारा सअी करनी होगी।

मस्अला: सअी तवाफ़ के बाद फ़ौरन करना ज़रूरी नहीं, मगर तवाफ़ के मुत्तालिस करना सुन्नत है, अगर तकान या किसी दूसरी ज़रूरत की वजह से दरमियान में कुछ वक़्फ़ा कर ले तो मुज़ाएक़ा नहीं।

मस्अला: जो सअी वक़ूफ़े अरफ़ात के बाद तवाफ़े ज़ियारत के साथ की जाती है उसमें एहराम शर्त नहीं

बल्कि अफ़ज़ल व मुस्तहब ये है कि दसवीं तारीख़ को मिना में कुर्बानी और हल्क़ कर के एहराम खोल लेने के बाद तवाफ़े ज़ियारत करे, अगरचे ये भी जाइज़ है कि एहराम खोलने से पहले तवाफ़े ज़ियारत करे, लेकिन हज की जो सअ़ी वकूफ़े अरफ़ात से पहले की जाए, उसमें एहराम शर्त है, इसी तरह उम्रा की सअ़ी के लिए भी एहराम शर्त है।

मस्अला: सअ़ी पैदल करना वाजिब है, कोई उज़्र हो तो सवारी वग़ैरा पर भी कर सकते हैं, अगर बिला उज़्र के सवारी पर सअ़ी की तो दम यानी कुर्बानी वाजिब है।

(अहकामे हज सफ़्हा–54)

सअ़ी में ताख़ीर और चक्करों में फ़ासिला करना?

सअ़ी हमारे नज़दीक वाजिब है, तवाफ़ के बाद फ़ौरन करना सुन्नत है वाजिब नहीं, अगर किसी उज़्र या तकान की वजह से फ़ौरन तवाफ़ के बाद सअ़ी न कर सके तो मुज़ाएका नहीं। बिला उज़्र ताख़ीर मकरूह है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–143 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1077)

मस्अला: तवाफ़े ज़ियारत, हल्क़, रमी, कुर्बानी। हज के ये सारे आमाल अैयामे नह्र के अन्दर अन्दर करना वाजिब है, लेकिन सफ़ा व मरवा के दरमियान सअ़ी का अैयामे नह्र के अन्दर करना लाज़िम नहीं, बल्कि बाद में करना भी जाइज़ है, लिहाज़ा अगर किसी उज़्र या थकावट दूर करने के लिए आराम करना चाहे तो आराम कर सकता है। आज नहीं तो कल या दस पन्द्रह दिन के बाद भी सअ़ी करना जाइज़ है। इसी तरह सअ़ी के सातों

चक्करों को पै-दर-पै (मुसलसल) करना सुन्नत है वाजिब नहीं, लिहाज़ा अगर चंद चक्कर के बाद थकावट की वजह से बकिया चक्कर को मौकूफ़ कर दिया, बाद में किसी मौका पर उन चक्करों की तकमील की जाए तो सअी मुकम्मल और सही हो जाएगी और उस पर कोई जुर्माना भी वाजिब नहीं होगा।

मस्अला: अगर किसी ने मुतफ़र्रिक तौर पर सअी की मसलन एक दिन में सअी का एक चक्कर और सात दिन में सात चक्कर करना भी जाइज़ है, लेकिन ऐसा करना उज़्र की वजह से बिला कराहत जाइज़ है और बिला उज़्र खिलाफ़े सुन्नत है। (गुनयतुलमनासिक सफ़्हा-68 व हाकजा मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा-147 व अहकामे हज सफ़्हा-43)

(सअी के मुकम्मल होने के बाद ही हलाल होगा उस वक़्त तक ममनूआते एहराम से बचना लाज़िम है।)

सअी करने का मसनून तरीक़ा

जिस तवाफ़ के बाद सअी हो तो चाहिए कि तवाफ़ से फ़ारिग़ हो कर हजरे अस्वद का "इस्तीलाम" करे जैसे तवाफ़ के शुरू में और तवाफ़ के आखिर में इस्तीलाम किया था (हाथों को हजरे अस्वद के मुक़ाबिल कर के उनको बोसा दे और "بسم الله الله اكبر لا إله الا الله" कहे) ये दोनों इस्तीलाम एक मरतबा सअी करने वालों के लिए मुस्तहब हैं। इस्तीलाम करने के बाद आंज़रत (स.अ.व.) की सुन्नत के मुताबिक बाबुस्सफ़ा से बाहर आए और किसी दूसरे दरवाज़े से जाए तो ये भी जाइज़ है कि फिर सफ़ा पर इतना चढ़े कि बैतुल्लाह शरीफ़ भी नज़र आ

सके फिर क़िब्ला रुख़ खड़े हो कर सअी की नीयत इस तरह करे कि– "या अल्लाह में आपकी रज़ा के लिए सफ़ा व मरवा के दरमियान सात चक्कर सअी का इरादा करता हूं इसको मेरे लिए आसान और क़बूल फ़रमा।" (नीयत ज़बान से या दिल में किसी भी ज़बान में कर सकता है, अरबी ज़बान में ज़रूरी नहीं) और ये नीयत दिल में करना काफ़ी है, मगर ज़बान से भी कहना अफ़ज़ल है, फिर दोनों हाथों को इस तरह उठाए जैसे दुआ में उठाए जाते हैं (नमाज़ की तकबीरे तहरीमा की तरह न उठाए जैसे बहुत से नावाक़िफ़ लोग करते हैं) और तकबीर व तहलील यानी– "لَا إِلٰهَ إِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهُ لَا شَرِيكَ لَهُ لَهُ الْمُلْكُ وَلَهُ الْحَمْدُ يُحْيِي وَيُمِيتُ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ" बुलंद आवाज़ से कहे और दुरुद शरीफ़ आहिस्ता आवाज़ से पढ़े, फिर ख़ूब ख़ुशूअ़ व ख़ुज़ूअ़ से अपने लिए और दूसरों के लिए दुआ मांगे ये भी क़बूलियते दुआ का मक़ाम है और जो चाहे दुआ मांगे और दुआ मांगना सअी के आदाब में है।

अब सअी शुरू करे और ये बात ज़ेहन में रहे कि इज़्तिबाअ़ किया था ये इज़्तिबाअ़ ख़त्म हो गया, तवाफ़ की दो रकअ़त नमाज़ पढ़ने से पहेल पहले, लिहाज़ा उसी हालत में यानी मोंढा ढके होने की हालत में सअी करे, लोगों की देखा देखी सअी में इज़्तिबाअ़ न करे। फिर ज़िक्र करता हुआ सफ़ा से मरवा की तरफ़ चले, थोड़ी दूर चल कर वह हरे निशानात आ जाऐंगे जिसको किताबों में "मीलैन अख़ज़रैन" कहा गया है अब वहां न सुतून है, न पत्थर है अब तो सिर्फ़ हरे रंग की टियूब लाईट की पट्टी दीवारों और छत पर नज़र आएगी। ये टियूब लाईट

की हरी पट्टी दो जगह छत पर है इन दोनों जगहों के दर्मियान– यहां पर सिर्फ़ मर्दों को जब ये कुछ फ़ासिला पर रह जाए तो दौड़ कर चले, मगर तुमवस्सित तरीक़े से दौड़े (औरतों को दौड़ना नहीं है), जब दोनों मीलों से निकल जाए तो उसके बाद मरवा तक की मसाफ़त अपनी चाल और मियानारवी से चल कर पूरा करना है, यहां तक कि मरवा पर पहूंचे और कुशादा जगह पर रुक जाए, ज़रा दाहिनी जानिब को माइल हो कर ख़ूब बैतुल्लाह शरीफ़ की तरफ़ मुंह कर के खड़ा हो और फिर जिस तरह सफ़ा पर ज़िक्र और दुआ की थी यहां पर भी करे, यहां भी दुआ कबूल होती है। ये सफ़ा से मरवा तक एक शौत (चक्कर) हो गया, इसके बाद मरवा से फिर सफ़ा की तरफ़ चले और दोनों मीलों के दरमियान पहले की तरह मर्द दौड़ कर चलें और फिर सफ़ा पर पहुंच कर फिर उसी तरह दुआ और ज़िक्र करें जैसे शुरू में किया था। ये मरवा से सफ़ा तक दो फेरे हो गए। इसी तरह सात फेरे करे, फिर सअी के सात फेरे पूरे करने के बाद दो रकअत नमाज़े नफ़्ल मस्जिदे हराम में पढ़े। तवाफ़ के बाद दो रकअत नमाज़ जो है वह वाजिब है, लेकिन सअी के बाद दो रकअत नमाज़ मुस्तहब है। अगर किसी ने नहीं पढ़ी तो कज़ा नहीं करनी, नीज़ ये नमाज़ मरवा पर अदा नहीं करनी, बल्कि मस्जिदे हराम में पढ़नी है।

मस्अला: तवाफ़ में एक शौत मुकम्मल होता है ख़ानए कअ़बा के चारों तरफ़ एक चक्कर लगाने के बाद और सअी में सफ़ा से मरवा तक एक शौत और मरवा से सफ़ा तक दूसरा शौत होता है। पूरा फेरा करने का नाम शौत

नहीं है।

(अहकामे हज सफ़्हा—56 व हाकज़ा मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा—142 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द—1 सफ़्हा—1075)

सफ़ा के बजाए मरवा से सअ़ी करना?

मस्अलाः सफ़ा से सअ़ी करना वाजिब है, अगर बजाए सफ़ा के मरवा से सअ़ी शुरू की तो वाजिब छूटने की वजह से पहला चक्कर ग़ैर मोतबर है, उसके बाद सात चक्कर पूरे कर ले। अगर उस वक़्त सातवां चक्कर नहीं किया तो बाद में जब चाहे एक चक्कर कर ले, अलबत्ता सअ़ीये हज की तकमील से क़ब्ल वक़ूफ़े अरफ़ात कर लिया, तो पूरी सअ़ी दोबारा करे, अगर नहीं की तो दम वाजिब है। (अहसनुलफ़तावा जिल्द—4 सफ़्हा—518 व हज्जे बैतुल्लाह के अहम फ़तावा सफ़्हा—58)

मस्अलाः सअ़ी सफ़ा से शुरू करना और मरवा पर ख़त्म करना है। अगर मरवा से किसी ने इब्तिदा की तो ये फेरा सअ़ी का शुमार न होगा, बल्कि सफ़ा से लौट कर आएगा तो सअ़ी शुरू होगी और सात चक्कर उस फेरे के अलावा करने होंगे जो मरवा से शुरू किया था।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा—146)

मस्अलाः सअ़ी को सफ़ा से शुरू करना और मरवा पर ख़त्म करना वाजिब है।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा—144)

मस्अलाः नफ़्ली तवाफ़ तो होता है, लेकिन नफ़्ली सअ़ी नहीं होती। (मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा—150)

सअ़ी की ग़लती का हुक्म

मस्अलाः अगर पूरी सअ़ी या अक्सर चक्कर सअ़ी के

बिला उज़्र तर्क किए या बिला उज़्र सवार हो कर किए तो हज हो गया, लेकिन दम वाजिब होगा। और पैदल इआदा करने से दम साकित हो जाएगा। और अगर उज़्र की वजह से सवार हो कर सअी की तो कुछ वाजिब न होगा। और अगर एक या दो या तीन चक्कर सअी के छोड़ दिए या बिला उज़्र सवार हो कर किए तो हर चक्कर के बदले सदका लाज़िम होगा।

(अहकामे हज सफ़्हा–103)

मस्अला: सअी का एक चक्कर छोड़ दिया तो सदका दे, इसी तरह दो या तीन चक्कर छोड़ दिए तो हर चक्कर के एवज़ में सदका वाजिब है। चार या उससे ज़्यादा चक्कर छोड़ने पर दम लाज़िम है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–518 व हाकज़ा हज्जे बैतुल्लाह के अहम फ़तावा सफ़्हा–58)

सअी मुक़द्दम करना

मस्अला: अगर हाजी इज़्दिहाम (भीड़) से बचने के लिए सातवीं, आठवीं, ज़िलहिज्जा को मिना रवाना होने से क़ब्ल सअी से फ़रागत पाना चाहता है तो सअी से फ़ारिग़ हो जाना बिला कराहत जाइज़ है, लेकिन उसके लिए शर्त ये है कि सअी से क़ब्ल एहराम बांध कर एक नफ़्ली तवाफ़ करे, क्योंकि हर सअी से पहले एक नफ़्ली तवाफ़ का होना भी शर्त है और उस तवाफ़ में मर्दों के लिए एहराम की चादर का इज़्तिबाअ करना और दौराने तवाफ़ रमल करना भी मसनून है। अगर सअी मुक़द्दम नहीं करता तो तवाफ़े ज़ियारत के बाद सअी करे। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–221 बहवाला औजज़ुलमसालिक जिल्द–3 सफ़्हा–367)

सअ़ी के ज़रूरी मसाइल

मस्अला: अगर सवारी पर सअ़ी कर रहा है यानी व्हील चेयर वग़ैरा पर तो दोनों सब्ज़ मीलों के दरमियान सवारी को तेज़ कर दे बशर्तेकि दूसरे लोगों को इससे तकलीफ़ व ईज़ा न पहुचे और न अपने को तकलीफ़ हो।

मस्अला: पैदल या सवारी का दौड़ाना सअ़ी में इस हद तक सुन्नत है कि दूसरों को तकलीफ़ देने का सबब न बने। (अहकामे हज सफ़्हा–57)

मस्अला: मीलैन अख़ज़रैन (सब्ज़ टियूब) के दरमियान ज़्यादा तेज़ दोड़ना मसनून नहीं, बल्कि मुतवस्सित तरीक़े से इतना तेज़ चलना चाहिए कि रमल से ज़्यादा और बहुत दौड़ने से कम रफ़्तार हो।

मस्अला: मीलैन के दरमियान हर चक्कर में झपट कर तेज़ चलना मसनून है।

मस्अला: मीलैन के दरमियान झपट कर न चलना या तमाम सअ़ी में झपट कर चलना बुरा है, लेकिन इससे दम या सदक़ा वाजिब नहीं होता।

मस्अला: अगर हुजूम की वजह से मीलैन के दरमियान दौड़ने में दूसरों को या अपने नफ़्स को तकलीफ़ हो तो दौड़ना सुन्नत नहीं है, जहां मौक़ा पाये दौड़े या तेज़ चलने वालों की तरह हरकत करे। (मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–145)

मस्अला: अगर सअ़ी करते हुए जमाअ़त खड़ी हो जाए या नमाज़े जनाज़ा होने लगे तो सअ़ी छोड़ कर नमाज़ में शरीक हो जाए और फिर बाक़ी फेरे बाद में पूरे कर ले, इसी तरह अगर कोई उज़्र पेश आ जाए तो बाक़ी फेरे फिर पूरे कर सकता है।

मस्अला: जाइज़ बात चीत करनी हो तो जो मशगूल करने वाली और खुशूअ व खुजूअ के मुनाफ़ी न हो करे और ऐसा खाना पीना जो सअी के चक्करों में मूजिबे फ़स्ल न हो मुबाह है। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–149)

(तवाफ़ व सअी नमाज़ की तरह नहीं है कि ज़रूरी बात चीत वग़ैरा से टूट जाए।)

मस्अला: सअी के सात चक्कर हैं सफ़ा से मरवा तक एक चक्कर होता है और मरवा से सफ़ा तक दूसरा चक्कर होता है, इसी तरह सात चक्कर होने चाहिऐं।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–144)

मस्अला: खुद सअी करना अगरचे (माज़ूरी में) किसी सवारी पर सवार हो कर करे नीज़ सअी में नियाबत जाइज़ नहीं है, मगर ये कि एहराम से पहले कोई शख़्स बेहोश हो गया तो उसकी तरफ़ से दूसरा शख़्स सअी कर सकता है बशर्तेकि सअी के वक़्त तक होश न आया हो। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–146)

मस्अला: सत्रे औरत यानी नाफ़ से मर्दों को घुटने तक ढकना गो हर हाल में ये सत्र ढाकना फ़र्ज़ है मगर यहां एहराम में और ज़ियादा एहतेमाम की ज़रूरत है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–149)

(क्योंकि बाज़ मरतबा एहराम हवा से उड़ने लगता है या सोते वक़्त बेपर्दगी हो जाती है।)

मस्अला: सअी में बावुज़ू होना और कपड़ों का पाक होना मुस्तहब है और इसके बग़ैर भी सअी हो जाती है।

(अहकामे हज सफ़्हा–59 व हज्जे बैतुल्लाह के अहम फ़तावा सफ़्हा–55)

मस्अला: सअ़ी के दौरान वुज़ू शर्त नहीं है, अगर बग़ैर वुज़ू के सअ़ी कर ली तो अदा हो जाएगी. और यही हुक्म वकूफ़े अरफ़ात का है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–109 व हाकज़ा फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–319)

मस्अला: अगर तवाफ़ व सअ़ी के दरमियान बहुत ज़्यादा फ़ासिला हो जाए तब भी कोई जज़ा वाजिब नहीं होती।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–143)

मस्अला: तवाफ़ के बाद सअ़ी हो और सअ़ी के सात चक्कर हों, इनमें से हर फेरा वजिब है।

मस्अला: सअ़ी पैदल हो। अगर बिला उज़्र सवार हो कर सअ़ी की तो दोबारा सअ़ी करना या दम देना लाज़िम है।

मस्अला: सअ़ी तवाफ़ के बाद है अगर सअ़ी तवाफ़ से पहले कर ली और तवाफ़ बाद में किया तो वह सअ़ी शुमार में नहीं आएगी। और जहां तक मुमकिन हो उसको फिर करना वाजिब है। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1077 व हाकज़ा मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–148)

मस्अला: सफ़ा व मरवा के दरमियान सअ़ी में नियाबत जाइज़ नहीं है, अगर उज़्र हो तो सअ़ी सवारी पर की जा सकती है। (गुनयतुलमनासिक सफ़्हा–70)

सअ़ी से फ़ारिग़ हो कर क्या करना चाहिए?

मस्अला: अगर एहराम सिर्फ़ उम्रा का है या हज में तमत्तोअ़ का है तो अब एहराम और उम्रा के अफ़आ़ल तमाम हो गए, यानी अब उम्रा के तीन अमल मुकम्मल हो गए। एक एहराम, दूसरा तवाफ़, तीसरा सअ़ी।

और अब मुस्तहब ये है कि आप मताफ़ में अगर दो रकअ़त नमाज़ पढ़ें और तवाफ़ के बाद जो दो रकअ़त

नमाज़ है वह वाजिब है, लेकिन सओ़ी के बाद दो रकअ़त नमाज़ जो है वह मुस्तहब है। अगर किसी ने अदा नहीं की तो उसकी क़ज़ा नहीं करनी है। और ये नमाज़ मरवा पर नहीं पढ़नी है बल्कि मताफ़ पर आ कर अदा करे।

अब सिर्फ़ आख़िरी काम रह गया हल्क़ यानी बाल मुंडवाना और क़स्र बाल छोटे करवाना। मर्द नाई की दुकान पर जा कर अपने बाल मुंडवाए या छोटे करवाए या साथ में कुछ साथी हों वह आपस में मूंढ लें तो भी जाइज़ है। इसमें बाज़ लोगों को ग़लत फ़हमी होती है कि अगर दो साथी हैं तो एक दूसरे के बाल कैसे बनाऐं? लिहाज़ा पहले नाई से एक बनवाए तब वह दूसरे के बनाए।

ये ग़लत बात है। बल्कि जब वह सब काम उम्रा के या हज के कर चुका है और सिर्फ़ अब एहराम खोलना बाक़ी है तो अब उसके लिए सब जाइज़ है, चाहे तो अपने साथी के पहले बना दे या खुद अपने बना ले या साथी उसके पहले बना दे, हर सूरत जाइज़ है, इसमें कोई हरज नहीं है।

औरत के बाल काटने की ये सूरत होगी कि सर के सब बाल इकट्ठा कर के आख़िर के मुट्ठी में पकड़े जो दो चार बाल कुछ लम्बे हों उनको पहले काट कर निकाल दे फिर उसके बाद तक़रीबन उंगली के एक पोरवे के बराबर कैंची से चाहे औरत खुद ही काट ले या उसका शौहर या एक औरत दूसरी औरत के बाल काट दे, लेकिन किसी ग़ैर महरम से न कटवाए और न मस्जिद में बाल गिराए, बल्कि अपने कमरा पर या मरवा के बाहर बाल काटने की जगह पर काटे और हुदूदे हरम में ही बाल

काटना ज़रूरी है।

ग़रज़ बाल काटने के बाद उम्रा का अमल मुकम्मल हो गया। हज्जे तमत्तोअ़ में दो चीज़ें थीं एक हज दूसरे उम्रा तो उम्रा का अमल पूरा हो गया। अब आप मक्का मुकर्रमा में मुकीम हैं इसमें आपकी हैसियत अब वही है जो किसी मक्का मुकर्रमा के बाशिंदे की। मक्का के बाशिंदा की तरह वहां पर रहना है, मक्का मुकर्रमा में जिस तरीक़े से मक्की शख़्स हज का एहराम अपने घर से बांधता है उसी तरीक़े से आप को अपनी क़यामगाह से हज का एहराम बांधना है।

"बहरहाल मक्का मुकर्रमा में जो क़याम है उस क़याम के दौरान नफ़्ली तवाफ़ कसरत से करें, नमाज़ बाजमाअ़त का पूरा एहतेमाम करें, कम अज़ कम एक कुरआन करीम हरम शरीफ़ में ख़त्म करने की क़ोशिश करें और मौक़ा ब मौक़ा मक्का वालों की तरह मस्जिदे आइशा जा कर नफ़्ली उम्रा की नीयत से एहराम बांध कर नफ़्ली तवाफ़ किए जाऐंगे, इनमें इज़्तिबाअ़ और रमल नहीं होगा। इज़्तिबाअ़ और रमल हर उस तवाफ़ के बाद होता है जिस तवाफ़ के बाद सअी होती है, लेकिन नफ़्ली तवाफ़ के बाद भी दो रकअ़त तवाफ़ की पढ़ना वाजिब है।"

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

मस्अला: मुफ़रिद और क़ारिन जब तवाफ़े कुदूम और सअ़ी से फ़ारिग़ हो जाए तो उसको एहराम बांधे हुए ही मक्का मुकर्रमा में रहना चाहिए और ममनूआ़ते एहराम से बचता रहे और मुतमत्तेअ़ जिस वक़्त उम्रा के तवाफ़ और

सअी से फ़ारिग़ हो जाए तो बाल मुंडवाले या छोटे कर वाले, इसके बाद वह हलाल हो गया। जो चीज़ें एहराम की वजह से उसके लिए मना हो गई थीं अब वह हलाल हो गई और जब दोबारा एहराम न बांधेगा हलाल रहेंगी और हज के लिए आठ तारीख़ को या उससे पहले हज का एहराम बांधना होगा। (अहकामे हज सफ़्हा–58 व हाकज़ा मुअल्लिमुलहुज्जा सफ़्हा–150)

हज के फ़राइज़

हज के अस्ल फ़र्ज़ तीन हैं (1) एहराम (2) वकूफ़े अरफ़ात यानी नौ ज़िलहिज्जा को ज़वाले आफ़ताब के वक़्त से दस ज़िलहिज्जा की सुब्ह सादिक़ तक अरफ़ात में किसी वक़्त ठहरना, अगरचे एक लहज़ा ही क्यों न हो। (3) तवाफ़े ज़ियारत जो दसवीं ज़िलहिज्जा की सुब्ह से ले कर बारह्वीं ज़िलहिज्जा तक सर के बाल मुंडवाने या कतरवाने के बाद किया जाता है।

अरकाने हज

(1) तवाफ़े ज़ियारत (2) वकूफ़े अरफ़ा। इन दोनों में ज़ियादा अहम और अक़्वा वकूफ़े अरफ़ा है।

मस्अला: इन तीनों फ़र्ज़ों में से अगर कोई चीज़ छूट जाएगी तो हज सही न होगा और उसकी तलाफी दम यानी कुर्बानी वगैरा से भी नहीं हो सकती।

मस्अला: इन तीनों फ़राइज़ का तरतीब वार अदा करना और हर फ़र्ज़ को उसके मख़्सूस मकान (जगह) और वक़्त में करना भी वाजिब है।

हज के वाजिबात

हज के वाजिबात छः हैं (1) मुज़दलिफ़ा में वकूफ़ के

वक़्त ठहरना। (2) सफ़ा और मरवा के दरमियान सऔ करना। (3) रमी हिजार यानी कंकरियाँ मारना। (4) क़ारिन और मुतमत्तेअ को कुर्बानी करना। (5) सर के बाल मुंडवाना या कतरवना। (6) आफ़ाक़ी यानी मीक़ात से बाहर रहने वाले को तवाफ़े वदाअ़ करना।

मस्अला: वाजिबात का हुक्म ये है कि अगर उनमें से कोई वाजिब छूट जाएगा तो हज हो जाएगा। ख़्वाह क़स्दन छोड़ा हो या भूल कर, लेकिन उसकी जज़ा लाज़िम होगी ख़्वाह कुर्बानी या सदक़ा (जैसा कि जिनायात में आएगा) अलबत्ता अगर कोई फ़ेल किसी मोतबर उज़्र की वजह से छूट गया तो जज़ा लाज़िम नहीं आएगी।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–89 व फ़तावा आलमगीरी किताबुलहज सफ़्हा–11 व मज़ाहिरे हक़ जिल्द–3 सफ़्हा–416)

हज की सुन्नतें

(1) तवाफ़े कुदूम (2) तवाफ़े कुदूम में या तवाफ़े फ़र्ज़ में अकड़ कर चलना (3) दोनों सब्ज़ निशानों के दरमियान सऔ में जल्दी चलना (4) कुर्बानी की रातों में से एक रात मिना में क़याम करना (5) सूरज निकलने के बाद मिना से अरफ़ात जाना (6) सूरज निकलने से पहले मुज़दलिफ़ा से मिना आ जाना (7) मुज़दलिफ़ा में रात गुज़ारना (8) तीनों जमरात में तरतीब क़ाइम रखना।

(फ़तावा आलमगीरी किताबुलहज सफ़्हा–18)

मस्अला: सुन्नत का हुक्म ये है कि उनको क़स्दन छोड़ना बुरा है और करने से सवाब मिलता है और उनके तर्क यानी छोड़ने से जज़ा लाज़िम नहीं आती है।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–9 व किताबुलफ़िक़्ह

सफ़्हा—1044 व इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द—5 सफ़्हा—25)

मस्अला: मकरूहात का हुक्म ये है कि जिस अमल में किसी मुस्तहब को तर्क (छोड़ेगा) करेगा उसके सवाब में कमी आएगी और सुन्नते मुअक्कदा के तर्क पर सख़्ती और डाँट भी होगी और वाजिब के तर्क करने पर अज़ाब होगा (जबकि उस गुनाह से तौबा न करे) और जज़ा में दम (कुर्बानी) या सदक़ा देना भी लाज़िम होगा। और वाजिबात के अलावा और चीज़ों यानी मुस्तहब्बात व सुनन के तर्क पर कुर्बानी या सदक़ा कोई जज़ा लाज़िम नहीं होगी।

(फ़तवा रहीमिया जिल्द—8 सफ़्हा—317 बहवाला उम्दतुलफ़िक़्ह जिल्द—4 सफ़्हा—78)

हज की किस्में

हज की तीन किस्में हैं और तीनों के कुछ अलग अलग मसाइल हैं।

❑ हज्जे इफ़राद ❑ हज्जे क़िरान ❑ हज्जे तमत्तोअ़

हज्जे इफ़राद: इफ़राद के लुग़वी माना हैं अकेला करना, तन्हा काम करना वग़ैरा और इस्तिलाहे शरअ़ में इफ़राद से मुराद वह हज है जिसके साथ उम्रा न किया जाए। सिर्फ़ हज का एहराम बांधा जाए और सिर्फ़ हज के अरकान वग़ैरा अदा किए जाऐं। इस किस्म के हज का नाम इफ़राद है और ऐसा हज करने वाले को "मुफ़रिद" कहते हैं। मुफ़रिद एहराम बाधते वक़्त सिर्फ़ हज की नीयत करे और सारे अरकाने हज अदा करे नीज़ मुफ़रिद पर कुर्बानी वाजिब नहीं।

मस्अला: हज्जे इफ़राद में जो एहराम बांधा जाएगा (मक्का मुकर्रमा पहुंच कर पहले उम्रा नहीं करेगा) वह

अफ़आले हज पूरे करने तक बाक़ी रहेगा।

हज्जे क़िरानः क़िरान यानी हज और उम्रा को एक साथ करना। क़िरान के माना लुग़त में दो चीज़ों को बाहम मिलाने के हैं। और इस्तिलाहे शरअ़ में क़िरान हज और उम्रा का एहराम दोनों एक साथ बांध कर (यानी एक ही एहराम में दोनों की नीयत कर के) एक साथ हज और उम्रा के अरकान अदा करने को क़िरान कहते हैं। क्योंकि इस सूरत में हज और उम्रा दोनों को इकट्ठा किया जाता है।

क़िरान का तरीक़ाः क़िरान का तरीक़ा ये है कि हज के महीनों में मीक़ात पर पहुंच कर या उसके पहले गुस्ल वग़ैरा से फ़ारिग़ हो कर एहराम के कपड़े पहन कर दो रकअ़त नमाज़, सर एहराम की चादर से ढांक कर पढ़ो। सलाम के बाद सर खोलो और दिल में हज और उम्रा दोनों के एहराम की नीयत कर लो। और बाक़ी अहकाम एहरामे उम्रा के सब वही हैं जो हज्जे मुफ़रिद के लिए हैं।

जब मक्का मुकर्रमा पहुंचो तो मस्जिदे हराम में मस्जिद के आदाब के मुताबिक़ दाख़िल हो कर अव्वल उम्रा का तवाफ मअ़ इज़्तिबाअ़ (यानी एहराम की चादर को दाहिनी बग़ल के नीचे से निकाल कर बाऐं कंधे पर डाल कर) और "रमल" (यानी तीन चक्करों में अकड़ कर शाना हिलाते हुए क़रीब क़रीब क़दम रख कर भीड़ न हो तो तेज़ी से चलना तवाफ़ में) के तवाफ़ से फ़ारिग़ हो कर नमाज़े तवाफ़ दो रकअ़त और आबे ज़मज़म वग़ैरा से फ़ारिग़ हो कर हजरे अस्वद का इस्तीलाम (यानी हाथ से

उसकी तरफ़ इशारा कर के चूमना अगर बोसा न हो सके तो) कर के बाबुस्सफ़ा से निकल कर उम्रा की सअी करो, सअी के बाद उम्रा के अफ़आल पूरे हो गए लेकिन उम्रा की सअी के बाद हजामत (बाल) न बनवाओ क्योंकि तुम ने हज का एहराम भी बांधा है। सअी के फ़ौरन बाद या ठहर कर मगर जहां तक हो सके तवाफ़े कुदूम जल्दी कर लो, वरना वकूफ़े अरफ़ा से पहले पहले तवाफ़े कुदूम से फ़ारिग़ हो जाओ।

उम्रा और तवाफ़े कुदूम से फ़ारिग़ हो कर एहराम बांधे हुए एहराम की पाबंदी की रिआयत रखते हुए मक्का मुकर्रमा में कयाम करो और उसके बाद आठ ज़िलहिज्जा को मिना जाओ और नवीं को अरफ़ात जाओ। मिना, अरफ़ात और मुज़दलिफ़ा के अहकाम में हज्जे किरान और हज्जे इफ़राद के अहकाम में कुछ फ़र्क़ नहीं। फिर दसवीं तारीख़ को मिना में आ कर जमरए उख़रा की रमी करो, उसके बाद किरान के शुक्रिया में कुर्बानी करो और उसके बाद सर के बाल मुंडवा कर या कतरवा कर तुम हलाल हो गए। अलावा औरत से सोहबत व बोस व किनार के वह सब चीजें जो एहराम की वजह से मना थीं जाइज़ हो गईं। उसके बाद तवाफ़े ज़ियारत कर लो।

(इल्मुलफ़िक्ह जिल्द–5 सफ़्हा–37 व मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–113 अहकामे हज सफ़्हा–28 मआरिफ़ुलकुरआन जिल्द–1 सफ़्हा– व मआरिफ़ुल हदीस किताबुलहज)

हज्जे तमत्तोअ: तमत्तोअ के लुग्वी माना हैं कुछ वक़्त तक फ़ाएदा उठाना। और इस्तिलाहे शरअ में तमत्तोअ के माना हैं हज्जे तमत्तोअ करना, हज्जे तमत्तोअ ये है

कि आदमी उम्रा और हज साथ साथ करे, लेकिन इस तरह कि दोनों के एहराम अलग अलग बांधे और उम्रा कर लेने के बाद एहराम खोल कर उन सारी चीज़ों से फ़ाएदा उठाए जो एहराम की हालत में ममनूअ़ हो गई थीं, और फिर हज का एहराम बांध कर हज अदा करे, इस तरह हज में चूंकि उम्रे और हज की दरमियानी मुद्दत में एहराम खोल कर हलाल चीज़ों से फ़ाएदा उठाने का कुछ वक़्त मिल जाता है। इसलिए इसको हज्जे तमत्तोअ़ कहते हैं। बख़िलाफ़ क़ारिन के वह उम्रे से फ़ारिग़ हो कर भी एहराम की हालत में रहता है और इन चीज़ों से फ़ाएदा नहीं उठा सकता है।

मस्अला: तमत्तोअ़ क़िरान से अफ़ज़ल नहीं है, लेकिन इफ़राद से अफ़ज़ल है।

तमत्तोअ़ का तरीक़ा

तमत्तोअ़ करने का तरीक़ा ये है कि मीक़ात से पहले उम्रा की नीयत से एहराम बांध कर हज के महीनों में उम्रा किया जाए।

उम्रा से फ़ारिग़ हो कर बाल मुंडवा कर या कतरवा कर हलाल हो जाए, यानी एहराम उतार कर आ़म कपड़े पहन ले, एहराम की पाबंदियाँ ख़त्म हो जाऐंगी। उसके बाद मक्का मुकर्रमा में क़याम करे या किसी और जगह जाना चाहे जाए (मदीना, जद्दा वग़ैरा) मगर अपने वतन न जाए और जब हज का वक़्त आ जाए तो हज का एहराम बांध कर हज करे और दस ज़िलहिज्जा को रमी, क़ुर्बानी और बाल कटवा कर एहराम खोला जाए।

मस्अला: तमत्तोअ़ के लिए अफ़ाक़ी यानी मीक़ात से

बाहर रहने वाला होना शर्त है। मक्का मुकर्रमा में रहने वाले और मीक़ात के अन्दर रहने वाले को तमत्तोअ़ जाइज़ नहीं है।

मस्अला: हज्जे तमत्तोअ़ करने वाला एक उम्रा के बाद दूसरा उम्रा हज से पहले कर सकता है।

मस्अला: दसवीं ज़िलहिज्जा को मिना में क़ुर्बानी करना, क़ारिन, मुतमत्तेअ़ पर वाजिब है, मुफ़रिद के लिए मुस्तहब है।

मस्अला: हज की तीनों क़िस्मों में नीयत का दिल से कर लेना काफ़ी है और ज़बान से अपने अपने महावरा में अदा कर लेना दुरुस्त है और अरबी ज़बान में कहे तो बेहतर है मसलन हज्जे इफ़राद में नीयत इस तरह करे–

"اَللّٰهُمَّ اِنِّیْ اُرِیْدُ الْحَجَّ فَیَسِّرْهُ لِیْ وَتَقَبَّلْهُ مِنِّیْ"

या अल्लाह मैं हज का इरादा करता हूं, इसे मेरे लिए आसान फ़रमाइये और क़बूल फ़रमाइये।

और हज्जे क़िरान में इस तरह नीयत करें–

"اَللّٰهُمَّ اِنِّیْ اُرِیْدُ الْحَجَّ وَالْعُمْرَةَ فَیَسِّرْهُمَا لِیْ وَتَقَبَّلْهُمَا مِنِّیْ"

या अल्लाह मैं हज व उम्रा दोनों का इरादा करता हूं ये दोनों मेरे लिए आसान फ़रमा दीजिए और क़बूल फ़रमाइये।

और तमत्तोअ़ की सूरत में पहले एहराम के वक़्त इस तरह नीयत करे–

"اَللّٰهُمَّ اِنِّیْ اُرِیْدُ الْعُمْرَةَ فَیَسِّرْهَا لِیْ وَتَقَبَّلْهَا مِنِّیْ"

या अल्लाह मैं उम्रा का इरादा करता हूं इसको मेरे लिए आसान फ़रमा दीजिए और क़बूल फ़रमाइये।

यहाँ पर नीयत के अरबी और उर्दू दोनों तरह के अलफ़ाज़ लिख दिए गए हैं, किसी को अरबी अलफ़ाज़

याद करने में दुश्वारी हो तो उर्दू, फ़ारसी, पंजाबी, सिंधी, बंगला, पश्तू ग़रज़ ये कि जो भी अपनी मादरी ज़बान हो उसमें ये मज़मून अदा कर देना सही है।

(अहकामे हज सफ़्हा–30 व मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–220 इल्मुलफ़िक्ह जिल्द–5 आलमगीरी, मआरिफुल कुरआन जिल्द–1 सफ़्हा–426 मअ़रिफुलहदीस किताबुलहज, किताबुलफ़िक्ह सफ़्हा–1138 व आप के मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–77)

मस्अला: हज का एहराम बांधने वाले को इफ़राद या क़िरान या तमत्तोअ़ का इख़्तियार है। अलबत्ता हज्जे क़िरान बाक़ी दोनों से अफ़ज़ल है और तमत्तोअ़ इफ़राद से बेहतर है।

याद रहे कि क़िरान का अफ़ज़ल होना उसी हालत में है कि जब ममनूआते एहराम में से किसी अम्रे ममनूअ़ के सरज़द हो जाने का अंदेशा न हो, क्योंकि हज्जे क़िरान में लम्बे अरसा तक हालते एहराम में रहना होता है। अगर किसी को ऐसी बात के सरज़द होने का अंदेशा हो तो तमत्तोअ़ ही सब से अफ़ज़ल है, क्योंकि उसमें एहराम की हालत में एहराम के अन्दर थोड़े दिन रहना होता है और इसमें इंसान के लिए अपने नफ़्स पर क़ाबू रखना आसान है। (किताबुलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ़्हा–113)

हज के बाज़ ज़रूरी मसाइल

मस्अला: भीक मांग कर हज करना जाइज़ नहीं है, अलबत्ता इस तरह हज करने से हज अदा हो जाएगा मगर सवाल करने का गुनाह भी होगा।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–17 सफ़्हा–190 व तहतावी

जिल्द–2 सफ़्हा–394 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–518 बहवाला बहर्रुराइक़ जिल्द–2 सफ़्हा–335)

मस्अला: कोई शख़्स ग़रीब को हज के लिए रक़म दे और वह क़बूल कर ले तो उस पर हज फ़र्ज़ हो जाएगा बशर्तेकि दूसरा कोई उज़्र न हो। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–213 व शामी जिल्द–1 सफ़्हा–196)

मस्अला: जिस पर हज फ़र्ज़ हो उसको पहले हज करना चाहिए, उसके बाद अगर गुंजाइश हो मस्जिद भी तामीर कराए वह भी कारे सवाब है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–521 रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–190)

"हज फ़र्ज़ होने के बाद पहले उसकी अदाएगी ज़रूरी है, बक़िया चीज़ों का दर्जा उसके बाद है।"

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

मस्अला: यतामा व फ़ुक़रा को रुपये देने से फ़रीज़ए हज से सुबुकदोश नहीं हो सकता, अलबत्ता दूसरी सूरत यानी हज्जे बदल हो सकती है। (जब कि जाने से माज़ूर हो।) (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–532)

मस्अला: जो शख़्स हज्जे तमत्तोअ़ का एहराम बांध कर मक्का मुकर्रमा पहुंचा और उम्रा के अफ़आल अदा कर के हलाल हो गया तो उसके बाद वह मदीना मुनव्वरा जा सकता है। और जब दमीना मुनव्वरा से वापस लौटे तो बेहतर ये है कि हज्जे इफ़राद का एहराम बांध कर आए और अगर उम्रा का एहराम बांध कर आए और उम्रा कर के हलाल हो जाए और अैयामे हज आने पर फिर हज का एहराम बांध कर हज कर ले उसका तमत्तोअ़ सही होगा और तमत्तोअ़ का इन्इिकाद पहले उम्रा से

होगा। अलबत्ता क़िरान का एहराम बांध कर आना ममनूअ है। इसलिए कि ये हुकमन मक्की है, अगर क़िरान का एहराम बांध कर आएगा तो दम लाज़िम होगा।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–6 सफ़्हा–394)

मस्अला: हवाई जहाज़ में परवाज़ से क़ब्ल नमाज़ सही है। हालते परवाज़ में बिला ज़रूरत सही नहीं, क़ज़ा का ख़तरा हो तो बहालते परवाज़ ही पढ़ लें, बाद में इआदा वाजिब नहीं।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–566)

मस्अला: आफ़ाक़ी हाजी का अश्हुरे हज में मीक़ात से बाहर निकलने से तमत्तोअ बातिल नहीं होता, मगर निकलना बेहतर नहीं है और अगर निकल जाए तो हज्जे इफ़राद का एहराम बांध कर आना बेहतर है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–6 सफ़्हा–299 बहवाला ज़ुब्दतुलमनासिक जिल्द–2 सफ़्हा–15)

मस्अला: ग़ैर शादी शुदा हज कर सकता है, जबकि हज फ़र्ज़ हो चुका हो।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–236)

मस्अला: काफ़िर के रुपये से मुसलमान हज कर सकता है, जबकि उसने हिबा कर दिया हो।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–17 सफ़्हा–192)

मस्अला: हुज्जाजे किराम के लिए मुसाफ़िर ख़ाना तामीर हो उसमें तआवुन करना बड़ा सवाब का काम है। किसी मरहूम के लिए भी उसमें रक़म दे सकते हैं। मरहूम को सवाब पहुंच जाएगा। लेकिन ज़कात व सदक़ाते वाजिबा उसमें देना दुरुस्त नहीं है, अलबत्ता सदक़ाते नाफ़िला दे

सकते हैं। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–19)

मस्अलाः तमाम उम्र में एक मरतबा हज करना फ़र्ज़ है, जबकि शराइते हज मौजूद हों, नीज़ एक मरतबा से ज़्यादा हज करेगा तो वह नफ़्ल होगा।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–74)

तरीक़ा हज्जे तमत्तोअ़ एक नज़र में

(1) मीक़ात से एहराम बांधें। (2) मक्का आ कर तवाफ़ करें (ये सात चक्कर हैं जो हजरे अस्वद से शुरू होंगे और उसी पर ख़त्म होंगे, इसके लिए वहाँ फ़र्श पर एक मोटी सी लकीर होती है और दीवार पर उसकी सीध में सब्ज़ रंग का राड।)

तवाफ़ के बाद दो रकअ़तें वाजिब हैं। (मकरूह वक़्त में फ़ौरन न पढ़ें, बल्कि मकरूह वक़्त ख़त्म होने के बाद पढ़ें) ये दो रकअ़तें कअ़बा की तरफ़ मुंह कर के मक़ामे इब्राहीम को सामने ले कर के पढ़ें। फिर ज़मज़म पी कर सअ़ी के लिए जाएं। सफ़ा से शुरू करें मरवा तक एक चक्कर, इसी तरह सात चक्कर लगाएं। इसके बाद दो रकअ़त पढ़ें, और अब सर पर उस्तुरा फिराएं। (हल्क़ कराएं।)

ये उम्रा हुआ। अब एहराम खोलो। इस तरह से हज्जे तमत्तोअ़ होगा। अब मक्का में अपने कपड़ों में रहे। तवाफ़ करता रहे, वहां पर बड़ी इबादत तवाफ़ ही है जितना वक़्त फ़र्ज़ वग़ैरा और सुन्नतों से बचे उसी में लगाए। और हरमे पाक में ज़्यादा से ज़्यादा वक़्त गुज़ारे। यहां तक कि ज़िलहिज्जा की आठ तारीख़ आए। 8 ज़िलहिज्जा को तवाफ़ कर के अ़ी करे और मिना जाए। (ये सअ़ी

मुक़द्दम होगी।)

8 ज़िलहिज्जा से मिना में जूहर से लेकर 9 ज़िलहिज्जा को सूरज निकल आए तो वहां से अ़रफ़ात के लिए चले। ज़वाल से पहले अ़रफ़ात पहुंचे। वहां कुछ देर लेटे बैठे। जुहर का वक़्त आए तो जुहर पढ़े। (अगर इमामुलहज के पीछे पढ़े ता जुहर और अस्र इकट्ठे पढ़ेगा, पहले जुहर फिर अस्र, अगर अपने ख़ेमा में हो तो सिर्फ़ जुहर पढ़ेगा) फिर वकूफ़ करें। दुआऐं पढ़े, कलिमए तय्यबा, शहादत, तमजीद, इस्तिग़फ़ार जिस क़दर हो सके पढ़े, खड़े हो कर पढ़ता रहे, खड़े खड़े थक जाए तो बैठ कर पढ़े।

अस्र का वक़्त आए तो अस्र पढ़े। फिर गुरूब तक उसी तरह दुआ और ज़िक्र में मशग़ूल रहे। यहां तक कि सूरज गुरूब हो जाए। गुरूब के बाद वहां से मुज़दलिफ़ा के लिए रवाना हो जाए, अभी मग़रिब की नमाज़ न पढ़े। मुज़दलिफ़ा में मग़रिब और इशा इकट्ठे ही इशा के वक़्त में पढ़ ले। फिर जी चाहे सो जाए। वैसे बेदारी भी बेहतर है, उठ कर तस्बीह, दुरूद, इस्तिग़फ़ार में मशग़ूल हो जाए। तहज्जुद पढ़ ले। हत्ता कि सुब्ह सादिक़ हो जाए। फ़ज्र की नमाज़ ग़ल्स (अंधेरे) में लेकिन सुब्ह सादिक़ के बाद पढ़ ले। यहां वकूफ़ करे और खड़ा हो कर कुछ देर दुआ करे, ये 10 ज़िलहिज्जा आ गई। यहीं मुज़दलिफ़ा से कंकरियाँ उठाए 49 या 70 (उनचास या सत्तर) एहतियातन कुछ ज़ाएद कंकरियाँ साथ रखे और यहां से रवाना हो कर वापस मिना आए। जमरए अक़बा पर सात कंकरियाँ मारे। वापस आए और मिना में ही कुर्बानी करे, सर मुंडवाए। अब एहराम खोले, कपड़े पहन कर मक्का आए, अब तवाफ़े

ज़ियारत करे। ये तवाफ़ रुक्न (फ़र्ज़) है। तवाफ़ के बाद वापस मिना आए। रात को वहीं रहे। सुब्ह को उठ कर ये 11 ज़िलहिंज्जा है, बादे ज़वाल पहले शैतान को सात कंकरियाँ मार कर एक तरफ़ हो कर दुआ करे। फिर दूसरे शैतान को कंकदियाँ मार कर कुछ दूर हो कर दुआ करे, फिर तीसरे को कंकरी मारे और दुआ किए बग़ैर वापस आए। अब फिर मिना में रात को रहे। सुब्ह को ये 12 ज़िलहिज्जा की सुब्ह है फिर ज़वाल के बाद उसी तरह कंकरियाँ मारे, रात को फिर मिना में ठहरना चाहिए और सुब्ह 13 ज़िलहिज्जा को उसी तरह कंकरियाँ मार कर तब मक्का वापस आए। अगर 12 को ही कंकरियाँ मार कर मक्का वापस जाना चाहे तो भी जाइज़ है, मगर गुरूब से क़ब्ल मिना से निकले। मक्का आए हज मुकम्मल हो गया।

(ब्यान फ़रमूदा: हज़रत मौलाना अक़्दस मुफ़्ती महमूद हसन गंगोही (रह.) मुफ़्तिये आज़म दाररुलउलूम देवबंद)

(माहनामा अन्नूर जनवरी 2002 ई0)

❑❑❑

मनासिके हज एक नज़र में

हज का पहला दिन 8 ज़िलहिज्जा

- मक्का से मिना की रवानगी
- मिना में आज के दिन
- ज़ुहर
- अस्र
- मग़रिब
- इशा पढ़नी है
- रात मिना में क़याम

हज का दूसरा दिन 9 ज़िलहिज्जा

- फ़ज्र की नमाज़ मिना में अदा कर के अरफ़ात को रवानगी
- ज़ुहर की नमाज़ अरफ़ात में पढ़नी है
- वक़ूफ़े अरफ़ात
- अस्र की नमाज़ अरफ़ात में पढ़नी है
- मग़रिब के वक़्त मग़रिब की नमाज़ पढ़े बग़ैर मुज़दलिफ़ा को रवानगी
- मग़रिब और इशा की नमाज़ें इशा के वक़्त मुज़दलिफ़ा में अदा करनी है
- रात में मुज़दलिफ़ा में क़याम करना

हज का तीसरा दिन 10 ज़िलहिज्जा

- मुज़दलिफ़ा में फ़ज्र की नमाज़ के बाद मिना को रवानगी
- पहले
- बड़े शैतान की रमी
- फिर
- क़ुर्बानी करना
- फिर
- सर के बाल मुंडवाना या कतरवाना
- उसके बाद एहराम उतारे
- फिर
- तवाफ़े ज़ियारत को मक्का जाना
- रात मिना में क़याम

हज का चौथा दिन 11 ज़िलहिज्जा

- मिना में रमी करना ज़वाल के बाद से ग़ुरूबे आफ़ताब तक
- पहले
- छोटे शैतान की
- फिर
- दरमियानी शैतान की
- फिर
- बड़े शैतान की
- रमी करना है
- तवाफ़े ज़ियारत अगर कल नहीं किया तो आज कर लें
- रात मिना में क़याम

हज का पाँचवाँ दिन 12 ज़िलहिज्जा

- मिना में रमी करना ज़वाल के बाद से ग़ुरूबे आफ़ताब तक
- पहले
- छोटे शैतान की
- फिर
- दरमियाने शैतान की
- फिर
- बड़े शैतान की
- रमी करना है
- तवाफ़े ज़ियारत अगर नहीं किया था तो आज मग़रिब से पहले ज़रूर कर लें
- 13 ज़िलहिज्जा को अगर क़याम का इरादा है तो कंकरियाँ ज़वाल से पहले मारी जा सकती है

नोटः रमी जमरए अक़बा व कुर्बानी व सर के बाल मुंडवाना। इन तीनों में तरतीब वाजिब है, लेकिन तवाफ़े ज़ियारत की तरतीब वाजिब नहीं है।

तवाफ़े ज़ियारत का वक़्त 10 ज़िलहिज्जा की फ़ज्र से 12 ज़िलहिज्जा के गुरूबे आफ़ताब यानी मग़रिब तक है। नीज़ तवाफ़े ज़ियारत से रात के किसी हिस्से में भी फ़ारिग़ हो सकते हैं। (मुहम्मर दफ़अत क़ासमी)

हज का पहला दिन 8 ज़िलहिज्जा

आठ ज़िलहिज्जा के सूरज निकलने के बाद एहराम की हालत में सब हाजियों को मिना जाना है। मुफ़रिद जिस का एहराम हज का है और क़ारिन जिसका एहरामे हज व उम्रा दोनों का है उनके एहराम तो पहले से बंधे हुए हैं। मुतमत्तेअ़ जिसने उम्रा कर के एहराम खोल दिया था। इसी तरह अह्ले हरम आज पहले एहराम बाँधें, सुन्नत के मुताबिक़ गुस्ल कर के एहराम की चादरें पहन कर मस्जिदे हराम में आऐं और मुस्तहब ये है कि तवाफ़ करें और दोगाना तवाफ़ अदा करने के बाद एहराम के लिए दो रकअ़त पढ़ें और हज की नीयत इस तरह करें कि– "या अल्लाह मैं आपकी रज़ा के लिए हज का इरादा करता हूं इसको मेरे लिए आसान कर दीजिये और क़बूल फ़रमाइये।" इस नीयत के साथ तल्बिया पढ़ें– "لَبَّيْکَ اَللّٰھُمَّ لَبَّیْکَ، لَبَّیْکَ لَا شَرِیْکَ لَکَ لَبَّیْکَ، اِنَّ الْحَمْدَ وَالنِّعْمَةَ لَکَ وَالْمُلْکَ لَا شَرِیْکَ لَکَ" तल्बिया पढ़ते ही एहरामे हज शुरू हो गया। अब एहराम की तमाम पाबंदियाँ लाज़िम हो गईं। इसके बाद मिना को रवाना हो जाऐं (मक्का मुकर्रमा से

मिना तक़रीबन तीन मील के फ़ासिले पर है) आठवीं तारीख़ की जुहर से नवीं तारीख़ की सुब्ह तक मिना में पाँच नमाज़ें पढ़ना और उस रात को मिना में क़याम करना सुन्नत है, अगर उस रात को मक्का मुकर्रमा में रहा या पहले अरफ़ात में पहुंच गया तो मकरूह है।

(अहकामे हज सफ़्हा–60)

मस्अला: अगर कोई शख़्स आठवीं तारीख़ से पहले ही मिना में मौजूद हो तो वह वहीं से एहराम की नीयत करेगा, और तल्बिया कहना शुरू कर देगा। मक्क मुकर्रमा आने की ज़रूरत नहीं है।

(हज्जे बैतुल्लाह के अहम फ़तावा सफ़्हा–34)

हज का दूसरा दिन 9 ज़िलहिज्जा (यौमे अरफ़ा)

मस्अला: नवीं ज़िलहिज्जा यौमे अरफ़ा, आज हज का सब से बड़ा रुक्न अदा करना है। जिसके बग़ैर हज नहीं होता, आज सूरज निकलने के बाद जब धूप फैल जाए मिना से अरफ़ात को रवाना हो जाइये। (तक़रीबन मक्का से नौ मील के फ़ासिला पर अरफ़ात हुदूदे हरम से बाहर है) वकूफ़ के लफ़्ज़ी माना ठहरने के हैं। नवीं ज़िलहिज्जा को ज़वाल के बाद से सुब्ह सादिक़ तक के दरमियानी हिस्सा में किसी क़द्र ठहरना हज का रुक्ने आज़म है और नवीं के ग़ुरूब तक अरफ़ात में ठहरना वाजिब है।

मस्अला: मुस्तहब ये है कि ज़वाले आफ़ताब से पहले ग़ुस्ल कर के और अगर इसका मौक़ा न मिले तो वुज़ू भी काफ़ी है। इस तरह तैयारी कर के जाए, वहां पर इमाम ख़ुतबा देगा जो कि सुन्नत है वाजिब नहीं है, फिर जुहर व अस्र की दोनों नमाज़ें जुहर ही के वक़्त में एक साथ

पढ़ाएगा। इस सूरत में जुहर की दो सुन्नतें भी छोड़ दी जाऐंगी।

मस्अला: वकूफ़े अरफ़ात जो हज का रुक्ने आज़म है हुदूदे अरफ़ात से बाहर न हो, नीज़ मस्जिदे नमरा मैदाने अरफ़ात के बिल्कुल किनारा पर है उसकी मग़रिबी दीवार के नीचे का हिस्सा अरफ़ात से ख़ारिज है, उसको बत्ने अरफ़ा कहा जाता है, ये हिस्सा अरफ़ात में दाख़िल नहीं है। लिहाज़ा यहां का वकूफ़ मोतबर नहीं, बत्न वाले वकूफ़ के वक़्त उससे निकल कर हुदूदे अरफ़ात में आ जाएं तो हज दुरुस्त हो जाएगा, वरना उनका हज ही नहीं होगा।

इस बात को ख़ूब समझ लिया जाए, बाज़ मुअल्लिमों के कहने पर न रहें। अरफ़ात के पूरे मैदान में जिस जगह चाहे ठहर सकता है।

मस्अला: नौ ज़िलहिज्जा की नमाज़े फ़ज्र के बाद से तकबीरे तशरीक़ हर नमाज़ के बाद बुलंद आवाज़ से पढ़ें और तेरह ज़िलहिज्जा की अस्र तक तमाम फ़र्ज नामज़ों के बाद ये तकबीर पढ़नी ज़रूरी है।

(अहकामे हज सफ़्हा–61)

अरफ़ात से मुज़दलिफ़ा को रवानगी

जैसे ही सूरज ग़ुरूब हो जाए तो अरफ़ात से मुज़दलिफ़ा रवाना हो जाएं और मुज़दलिफ़ा मिना से मश्रिक़ की तरफ़ तक़रीबन तीन मील के फ़ासिला पर हुदूदे हरम के अन्दर है। अरफ़ात के वक़ूफ़ से फ़ारिग़ हो कर दसवीं ज़िलहिज्जा की शब में मुज़दलिफ़ा पहुचना है। और मग़रिब और इशा की दोनों नमाज़ों को इशा के वक़्त में जमा कर के पढ़ना है। उसके रास्ता में ज़िकरुल्लाह और तल्बिया पढ़ता हुआ

चले। उस रोज़ हुज्जाज के लिए मग़रिब की नमाज़ अरफ़ात में या रास्ता में पढ़ना जाइज़ नहीं है। वाजिब है कि मग़रिब को मुअख़्ख़र कर के मुज़दलिफ़ा में इशा के साथ पढ़े और मग़रिब के फ़र्ज़ के फ़ौरन बाद इशा के फ़र्ज़ पढ़े मग़रिब की सुन्नत और इशा की सुन्नतें और वित्र सब बाद में पढ़े। (अहकामे हज सफ़्हा–67)

ये रात आप को मुज़दलिफ़ा में गुज़ारनी है। मुज़दलिफ़ा में सारी रात जागना अफ़ज़ल है, लेकिन लेटना या सोना मना नहीं है। अरफ़ात से थकावट ज़रूर होगी इसलिए आप को चाहिए कि मग़रिब व इशा से फ़ारिग़ हो कर थोड़ी देर सो जाऐं और फिर ताज़ा दम हो कर इबादत में मशगूल हो जाऐं।

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

मस्अला: वकूफ़े मुज़दलिफ़ा वाजिब है, उसका वक़्त सुब्ह सादिक़ से ले कर सूरज निकलने से कुछ पहले तक है, अगर कोई तुलूअे फ़ज्र के बाद थोड़ी देर ठहर कर मिना को चला जाए, तुलूअे आफ़ताब का इंतिज़ार न करे तो भी वाजिब वकूफ़ अदा हो गया और वाजिब की अदाएगी के लिए इतना भी काफ़ी है कि नमाज़े फ़ज्र मुज़लिदफ़ा में पढ़ ले, मगर सुन्नत यही है कि सूरज निकलने तक ठहरे।

मस्अला: जब सूरज निकलने में कुछ देर बक़द्र दो रकअत के बाक़ी रहे तो मुज़दलिफ़ा से मिना के लिए रवाना हो जाए, उसके बाद ताख़ीर करना ख़िलाफ़े सुन्नत है, और रवाना होने से क़ब्ल ही रमी के लिए तक़रीबन

सत्तर कंकरियाँ बड़े चने या खजूर की गुठली के बराबर मुज़दलिफ़ा से उठा कर साथ ले जाए या रास्ता में या किसी और जगह से उठाना दुरुस्त है, लेकिन जमरात के पास से न उठाए। हुदूदे हरम में जहां से चाहे उठा सकता है। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–200 व अहकामे हज सफ्हा–76)

हज का तीसरा दिन दस ज़िलहिज्जा

आज ज़िलहिज्जा की दसवीं तारीख़ है और हज का तीसरा दिन है इसमें हज के बहुत से काम वाजिबात व फ़राइज़ अदा करने हैं। पहला वाजिब वकूफ़े मुज़दलिफ़ा का है इसी लिए हुज्जाजे किराम से नमाज़े ईद मआफ़ कर दी गई है। जैसे ही आप मुज़दलिफ़ा से मिना लौट कर आएं सब से पहले अपने ख़ेमे पहुंच कर अपना सामान वग़ैरा रख कर अगर अराम वग़ैरा करना चाहें तो कर लें उसके बाद आपको मिना में तीन काम बित्तरतीब करने हैं और उस तरतीब का बाक़ी रखना वाजिब है, ख़िलाफ़ वर्ज़ी की सूरत में दम वाजिब होगा।

☐ मिना में आने के बाद सब से पहला काम जमरए अक़बा (बड़े शैतान) की रमी है, जो आज के दिन वाजिब है यानी सात कंकरियाँ मारना वाजिब है। ☐ दूसरा काम हज की कुर्बानी करना है। ☐ तसीरा काम सर के बाल मुंडवाना या कतरवाना है।

आज दस ज़िलहिज्जा को बड़े शैतान को कंकरियाँ मारनी हैं और कंकरियाँ मारने से पहले जो मक्का मुकर्रमा में एहराम बांधने के बाद तल्बिया का सिलसिला शुरू हुआ था वह अब कंकरियाँ मारने के वक़्त बंद हो

जाता है।

मिना में तीन मक़ामात पर जमरात के निशान नसब हैं यहां पर मुख़्तलिफ़ ज़बानों में लिखा हुआ है। पहला जमरा मस्जिदे खीफ़ के नज़दीक है उसको "जमरए ऊला" कहते हैं। और दूसरा जमरा उससे थोड़ी दूर पर उसी रास्ता में आता है उसको "जमरए उस्ता" कहते हैं। तीसरा जमरा मिना के आख़िर में है उसको "जमरए अक़बा" कहते हैं। आज दसवीं तारीख़ को सिर्फ़ जमरए अक़बा (बड़े शैतान) पर सात कंकरियों से रमी करना है और रमी के माना कंकरी या पत्थर मारने के हैं। दसवीं तारीख़ ज़िलहिज्जा को सिर्फ़ जमरए अक़बा की रमी की जाती है, उसका वक़्त तलूअे आफ़ताब से शुरू हो जाता है।

रमी करने का तरीक़ा ये है कि एक एक कंकरी दाहिने हाथ के अंगूठे और शहादत की उंगली से चुटकी में पकड़ें और मर्द हाथ इतना उठाऐं कि बग़ल खुल जाए और हर कंकरी मारते वक़्त "بسم الله الله اكبر" कहता रहे और याद रहे तो ये दुआ भी पढ़े।

"رَجْمًا لِلشَّيطَانِ وَرِضَى لِلرَّحمٰنِ اَللّٰهُمَّ اجْعَلْهُ
حَجًّا مَبْرُورًا وَسَعْيًا مَشْكُورًا وَ ذَنْبًا مَغْفُورًا"

पहले दिन रमी के बाद दुआ के लिए ठहरना सुन्नत नहीं है और उस तारीख़ में दूसरे जमरात की रमी करना जिहालत है।

दसवीं तारीख़ का तीसरा वाजिब, क़ारिन और मुतमत्तेअ पर कुर्बानी वाजिब है कि जमरए अक़बा की रमी से फ़ारिग़ हो कर उस वक़्त तक बाल न कटवाए जब तक कि अपनी वाजिब कुर्बानी न कर ले, अगर इससे पहले बाल

कटवा लिए तो दम वाजिब होगा। अलबत्ता मुफ़रिद बिलहज यानी जिसने सिर्फ़ हज का एहराम (यानी मीक़ात से) बांधा है उसके लिए कुर्बानी वाजिब नहीं है, मुस्तहब है। वह कुर्बानी न करे और बाल कटवा ले तो जाइज़ है।

कुर्बानी से फ़ारिग़ होने के बाद मर्द के लिए बाल मुंडवाना या कतरवाना वाजिब है। औरत के लिए उंगली के एक पोरवे के बराबर काटना है। अगर किसी वजह से दस ज़िलहिज्जा को कुर्बानी नहीं कर सका तो फिर ग्यारह को कुर्बानी करें। और अगर ग्यारह ज़िलहिज्जा को भी न कर सकें तो बारह को गुरूबे आफ़ताब से पहले पहले ज़रूर कुर्बानी कर लें। और जब तक कुर्बानी नहीं होगी उस वक़्त तक न तो एहराम उतार सकते हैं और न बाल कटवा सकते हैं।

दसवीं तारीख़ का सब से बड़ा काम तवाफ़े ज़ियारत है। एहराम के बाद हज के रुक्न और फ़र्ज़ कुल दो हैं। एक वकूफ़े अरफ़ात, दूसरे तवाफ़े ज़ियारत, जो दस तारीख़ को होता है। उस तवाफ़ की सुन्नत ये है कि रमी, कुर्बानी और हल्क़ के बाद किया जाए। अगर उनसे पहले तवाफ़े ज़ियारत कर लेगा तो भी फ़र्ज़ अदा हो जाएगा।

मस्अला: मिना के क़याम के दौरान मक्का जा कर तवाफ़े ज़ियारत कर के फिर मिना वापस आना है, नीज़ अगर कुर्बानी कर के बाल कटवा लिए तो रोज़मर्रा के लिबास में तवाफ़ करें।

मस्अला: जो औरत हालते हैज़ या निफ़ास में हो उसके लिए तवाफ़े ज़ियारत करना जाइज़ नहीं है। दसवीं तारीख़ को या उससे पहले हैज़ या निफ़ास शुरू हो गया और

बारह्वीं तारीख़ तक भी फ़रागत हो तो वह तवाफ़े ज़ियारत मुअख़्ख़र करे और उस के ज़िम्मा दम लाज़िम नहीं है, जब तह हैज़ व निफ़ास से पाक न हो जाए तवाफ़े ज़ियारत्त नहीं हो सकता। और तवाफ़े ज़ियारत के बग़ैर अपने वतन वापस नहीं हो सकती। अगर वापस हो जाए तब भी उम्र भर ये फ़र्ज़ लाज़िम रहेगा और दोबारा हाज़िर हो कर तवाफ़ करना पड़ेगा। इसलिए हैज़ व निफ़ास से पाक होने का इंतिज़ार लाज़मी है। लेकिन हज के तमाम उमूर अंजाम दें, सिर्फ़ तवाफ़ पाक होने तक न करें। (अहकामे हज सफ़्हा–79 व मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–175)

हज का चौथा दिन ग्यारह ज़िलहिज्जा

अब हज के वाजिबात में मुख़्तसर काम रह गए हैं दो या तीन दिन मिना में रह कर तीनों जमरात की रमी करना है उन दिनों की रातें भी मिना में गुज़ारना सुन्नते मुअक्कदा है।

अगर क़ुर्बानी या तवाफ़े ज़ियारत किसी वजह से दस तारीख़ को नहीं कर सका तो आज ग्यारह्वीं तारीख़ को कर ले और बेहतर ये है कि ज़ुहर से पहले उससे फ़ारिग़ हो जाए, ज़वाले आफ़ताब के बाद नमाज़े ज़ुहर के बाद तीनों जमरात की रमी करने के लिए रवाना हो जाए और ग्यारह्वीं तारीख़ की रमी इस तरतीब से करे कि पहले जमरए ऊला पर आ कर सात कंकरियों से रमी उसी तरीक़ा से करे जिस तरह दस तारीख़ को जमरए अक़बा की रमी कर चुका है। उसकी रमी से फ़ारिग़ हो कर मजमा से हट कर क़िब्ला रुख़ हो कर हाथ उठा कर दुआ करें। (अगर वक़्त व मौक़ा हो तो दुआ करे) उसके

बाद जमरए वुस्ता पर आए और उसी तरह सात कंकरियाँ जमरा की जड़ में मारे, जिस तरह पहले कर चुका है, उसके बाद भी मजमा से हट कर क़िब्ला रुख़ हो कर पहले की तरह दुआ व इस्तिग़फ़ार में कुछ देर मशग़ूल रहे फिर जमरए अक़बा पर आए और यहां भी हसबे साबिक़ सात कंकरियों से रमी करे और उसके बाद दुआ के लिए न ठहरे, क्योंकि आख़िरी जमरा की रमी के बाद दुआ करना सुन्नत नहीं है।

आज की तारीख़ का इतना ही काम था जो पूरा हो गया, बाक़ी औक़ात अपनी जगह पर मिना में गुज़ारे, ज़िकरुल्लाह और तिलावत और दुआ में मशग़ूल रहे, ग़फ़लतों और फ़ुज़ूल कामों में वक़्त न ज़ाये करे।

(अहकामे हज सफ्हा–80 व मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ्हा–180)

हज का पाँचवाँ दिन बारह ज़िलहिज्जा

मस्अला: अगर क़ुर्बानी व तवाफ़े ज़ियारत ग्यारह्वीं तारीख़ को भी न कर सका तो आज बारह्वीं तारीख़ को करे और आज का अस्ल काम सिर्फ़ तीनों जमरात की रमी करना है। ज़वाल के बाद बिल्कुल उसी तरीक़ा से तीनों जमरात की रमी करे जिस तरह ग्यारह ज़िलहिज्जा को की है। अब तेरह्वीं तारीख़ की रमी के लिए मिना में मज़ीद क़याम करने या न करने का इख़्तियार है, अगर चाहे तो आज बारह्वीं की रमी से फ़ारिग़ हो कर मक्का मुकर्रमा जा सकता है। बशर्तेकि ग़ुरूबे आफ़ताब से पहले मिना से निकल जाए।

अगर बारह्वीं तारीख़ का आफ़ताब मिना में ग़ुरूब हो गया तो अब मिना से निकलना मकरूह है, अगर चला

गया तो कराहत के साथ जाइज़ है। और अगर मिना में तेरहवीं तारीख़ की सुब्ह हो गई तो रमी उस दिन की भी उसके ज़िम्मा वाजिब हो जाती है, अगर बग़ैर रमी के जाएगा तो दम वाजिब होगा, अलबत्ता तेरहवीं तारीख़ की रमी में ये सहूलत है कि वह ज़वाले आफ़ताब से पहले भी जाइज़ है। (अहकामे हज सफ़्हा–82)

मस्अला: ग्यारह, बारह ज़िलहिज्जा को रमी का वक़्त ज़वाले आफ़ताब से शुरू हो कर सुब्ह सादिक़ तक रहता है, अगर कोई उससे पहले करेगा तो उसकी रमी अदा नहीं होगी, और अगर उस रोज़ सुब्ह सादिक़ से पहले उसका इआदा नहीं किया तो उसके ज़िम्मा दम वाजिब होगा।

(अहकामे हज सफ़्हा–82 व मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–185)

मुक़ीम व मुसाफ़िर होने के मस्अला में

अब मिना और मुज़दलिफ़ा का हुक्म मक्का मुअज़्ज़मा की तरह है

मुशाहदा के बाद हिन्द व पाक के मोतबर उलमा व मुफ़्तियान का अहम फ़तवा

हर साल हज के मौक़ा पर हिन्द व पाक से जाने वाले हुज्जाज के लिए ये मस्अला बहस व मुबाहसा का मौज़ूअ़ बना रहता है कि उन्हें मिना, मुज़दलिफ़ा और अ़रफ़ात में नमाज़ें पूरी पढ़नी हैं या क़स्र कर के पढ़नी है? वजह यह है कि हनफ़ीया के अलावा दीगर बाज़ मज़ाहिब में नमाज़ों का क़स्र करना हज के आमाल में शामिल है, यानी ख़्वाह हाजी मुक़ीम ही क्यों न हो, वह ऐयामे हज में क़स्र करेगा। जब कि हनफ़ीया के नज़दीक क़स्र व

इतमाम का मदार हज पर नहीं, बल्कि हाजी के मुक़ीम या मुसाफ़िर होने पर है, अगर हाजी शरअन मुक़ीम है तो उसे अैयामे हज में पूरी नमाज़ें पढ़नी होंगी। और अगर मुसाफ़िर है तो वह क़स्र करेगा। इसी बिना पर क़स्र व इतमाम से मुतअ़ल्लिक़ सवालात का जवाब देते वक़्त इसका लिहाज़ रखा जाता था कि साइल मिना जाने के दिन से पहले मक्का मुअ़ज़्ज़मा में मुक़ीम है या नहीं? इसी तरह मिना से वापसी के बाद उसे मक्का मुअ़ज़्ज़मा में पन्द्रह दिन रहना है या नहीं? इसी एतेबार से हुक्म बता दिया था, लेकिन हज 1420 हिजरी में मक्का मुअ़ज़्ज़मा के बाज़ मोतबर उलमा ने इस जानिब तवज्जोह दिलाई कि अब मक्का मुअ़ज़्ज़मा की आबादी मिना तक पहुंच रही है और मिना को भी मक्का मुअ़ज्जमा की म्यूनिस्पलटी की हुदूद में शामिल कर लिया गया है, और वहां का बड़ा अस्पताल साल भर अपनी ख़िदमत अंजाम देता रहता है। नीज़ राबितए आलमे इस्लामी का दफ़्तर भी खुला रहता है, और शाही महल भी आबाद रहता है, चुनांचे उस मौक़ा पर मौजूद हिन्द व पाक के चुनीदा मुफ़्तियाने किराम ने मुशाहदा कर के उनके ब्यान कर्दा हक़ाइक़ की तौसीक़ की और ये फ़तवा जारी किया कि अब फ़िनाए शहर में दाख़िल होने की वजह से क़स्र व इतमाम, इक़ामते जुमा और माली क़ुर्बानी के वजूब के मसाइल में मिना का हुक्म भी मक्का मुअ़ज़्ज़मा के मानिन्द हो गया है। (ये फ़तवा निदाए शाही के हज व ज़ियारत नम्बर में शाये हो चुका है)

ताहम गुज़श्ता साल 1424 हिजरी में मुशाहदा से ये बात सामने आई कि न सिर्फ़ मिना बल्कि मुज़दलिफ़ा भी

मक्का मुअ़ज़्ज़मा के "फ़िना" में दाख़िल हो चुका है, और उसको मक्का मुअ़ज़्ज़मा से अलग क़रार देने की कोई वजह नहीं है, क्योंकि शहर की ज़रूरीयात (मसलन जुमेरात, जुमा को अह्ले शहर का तफ़रीह और पिकनिक के लिए यहां जमा होना और यहां के मैदानों में नौजवानों का खेल कूद करना वग़ैरा) इससे किसी न किसी हद तक मुतअ़ल्लिक़ हैं, और अ़ज़ीज़िया की आबादी मुज़दलिफ़ा की हुदूद तक पहुंच चुकी है।

लिहाज़ा अब हनफ़ी हुज्जाज के लिए क़स्र व इतमाम का मस्अला तैय करना बहुत आसान हो गया कि वह मक्का मुअ़ज़्ज़मा पहुंचने के बाद बस ये देख लें कि मक्का से वापसी तक उनके क़याम की मुद्दत पन्द्रह दिन हो रही है या नहीं? अगर हो रही है तो वह मक्का में रहते हुए और मिना व मुज़दलिफ़ा, अ़रफ़ात सब जगह नमाज़ें पूरी पढ़ेंगे, और अगर वापसी तक की मुद्दत 15 दिन से कम है तो फिर हर जगह क़स्र पढ़ेंगे, इसी तरह अैयामे मिना में अगर जुमा का दिन पड़े तो जुमा की नमाज़ अदा की जाएगी और जो मालदार लोग उन अैयाम में मुक़ीम हैं उन्हें माली क़ुर्बानी भी अदा करनी होगी ख़्वाह वह अपने वतन में करवायें।

ज़ैल में अह्ले इल्म के मुलाहज़ा के लिए मुतअ़ल्लिक़ा फ़िक़्ही इबारात लिखी जाती है—

(ا) فالقول بالتحديد بمسافة يخالف التعريف المتفق على ما صدق عليه بانه المعد لمصالح المصر، فقد نص الأمة على أن الفناء ما أعد لدفن الموتى وحوائج المصر كركض الخيل والدواب و جمع العساكر والخروج للرمى وغير ذلک، والى موضع يحد بمسافة يسع عساكر

مصر، ويصلح ميدانا للخيل والفرسان و رمی النبل والبندق والبارود و اختيار المدافع و هذا يزيد علی فراسخ فظهر أن التحديد بحسب الأمصار (شامی بيروت: ۹/۳)

(۲) أقول وينبغی تقييد مافی الخانية والتاتر خانية بما اذالم يكن فی فناء المصر لما مر أنها تصح اقامتها فی الفناء ولو منفصلاً بمزارع فاذا صحت فی الفناء لأنه ملحق بالمصر يجب علی من كان فيه ان يصليها لأنه من أهل المصر كما يعلم من تعليل البرهان والله الموفق. (شامی بيروت: ج ۳/ص۲٦)

(۳) (ومنی مصر لا عرفات) فتجوز الجمعة بمنی ولا تجوز بعرفات، اماالأول فهو قولهما وقال محمد: لا تجوز بمنی كعرفات واختلفوا فی بناء الخلاف فقيل مبنی علی انها من توابع مكة عند هما خلافا له، وهذا غير سديد لأن بينهما أربع فراسخ، وتقدير التوابع للحصرية غير صحيح، والصحيح أنها مبنی علی انها تتمصر فی ايام الموسم عندهما الخ، وشمل التجميع بها فی غير ايام الموسم وفی المحيط قيل: انما تجوز الجمعة عندهما بمنی فی ايام الموسم لافی غيرها، وقيل تجوز فی جميع الايام لان منی من فناء مكة وقد علمت فساد كونها من فناء مكة فترجح تخصيص جوازها بأيام الموسم وانها تصير مصراً فی تلك الايام وقرية فی غيرها. (البحر الرائق ج ۲/ص ۱۴۲)

(۴) وانما اقتصر المصنف علی هذا الوجه من التعليل دون التعليل بان منی من افنية مكة لأنه فاسد لأن بينهما فرسخين و تقدير الفناء بذلك غير صحيح، قال محمد فی الأصل إذا نوی المسافر أن يقيم بمكة و منی خمسة عشريوما لا يصير مقيمًا فعلم اعتبار هاشرعًا موضعين. (فتح القدير: ج ۲/ص ۵۴)

(۵) وقال بعض مشائخنا أن الخلاف بين أصحابنا فی هذا بناء علی ان منی من توابع مكة عندهما، و عند محمد ليس من توابعها، وهذا غير سديد لأن بينهما أربعة فراسخ وهذا قول بعض الناس فی تقدير التوابع،

فأما عندنا فبخلافه على مامر، والصحيح أن الخلاف فيه بناء على أن المصر الجامع شرط عندنا إلا أن محمداً يقول: إن منى ليس بمصر جامع بل هو قرية فلا تجوز الجمعة بها كمالا تجوز بعرفات، وهما يقولان: إنها تتمصر في أيام الموسم. (بدائع الصنائع: ج ١/ص ٥٨٥، ٥٨٦)

नोट: इन इबारात से मालूम हुआ कि शैख़ैन के क़ौल की तअ़लील करते हुए बाज़ क़दीम फ़ुक़हा ने भी मिना को फ़िनाए मक्का में शामिल क़रार दिया था। जिसकी उस वक़्त इस बिना पर तरदीद की गई थी कि मिना और मक्का मुअ़ज़्ज़मा में 4 फ़रसख़ का तवील फ़ासिला था, लेकिन अब जबकि मक्का की आबादी मिना और मुज़दलिफ़ा तक पहुंच चुकी है तो अब उनके फ़िनाए मक्का होने से इनकार की कोई वजह नहीं है।

इस तम्हीद के बाद अब वह फ़तवा मुलाहज़ा फ़रमाऐं जो हिन्द व पाक के मोतबर उलमा व मुफ़्तियान ने हज 1424 हिजरी के मौक़ा पर मुशाहदा के बाद जारी फ़रमाया था। (मुरत्तिब)

"نحمده و نصلي على رسوله الكريم. امابعد:"

पहले दौर में मक्का मुअ़ज़्ज़मा, मिना, मुज़दलिफ़ा और अ़रफ़ात सब अलग अलग मक़ामात थे और उन मुक़ामात के दरमियान आबादी का कोई इत्तिसाल नहीं था, चुनांचे अरसए दराज़ से उसी एतेबार से क़स्र व इतमाम के मसाइल बताए जाते थे, लेकिन गुज़श्ता चंद सालों से मक्का मुअ़ज़्ज़मा की आबादी इस तेज़ी से फैलनी शुरू हुई कि तीन जानिब से मक्का मुअ़ज़्ज़मा आबादी से मुत्तसिल हो गया, चुनांचे 1420 हिजरी में मोतबर उलमा व मुफ़्तियाने किराम ने बज़ाते ख़ुद मुशाहदा कर के मिना को मक्का मुअ़ज़्ज़मा में

शामिल होने का फ़तवा जारी किया।

अब इस साल 1424 हिजरी में दोबारा मज़कूरा मक़ामात का मुशाहदा किया गया तो मालूम हुआ कि अब मुज़दलिफ़ा भी मक्का मुअ़ज़्ज़मा की आबादी से अज़ीज़िया की जानिब मुत्तसिल हो चुका है, लिहाज़ा अब क़स्र व इतमाम के बारे में मुज़दलिफ़ा का हुक्म भी मक्का मुअ़ज़्ज़मा और मिना ही के हुक्म में है, और जिन हुज्जाजे किराम का मक्का मुअ़ज़्ज़मा में आमद और वापसी का दरमियानी वक़्फ़ा पन्द्रह दिन का हो रहा हो वह सब इतमाम करेंगे और इस मुद्दत में मिना और मुज़दलिफ़ा में रात गुज़ारना उनके मुक़ीम होने में मानेअ़ नहीं होगा, क्योंकि मिना और मुज़दलिफ़ा अब मक्का मुअ़ज़्ज़मा ही के हुक्म में हैं और अ़रफ़ात में चूंकि सिर्फ़ दिन का क़याम होता है, लिहाज़ा वहां भी इतमाम का हुक्म होगा।

वाज़ेह रहे कि इस फ़तवे का तअ़ल्लुक मशाइरे मुक़द्दसा (मिना, मुज़दलिफ़ा, अ़रफ़ात) की हूदूदे शरईया से नहीं है, क्योंकि वह सब तौक़ीफ़ी हैं उनमें तरमीम व इज़ाफ़ा का किसी को हक़ नहीं है। अलबत्ता क़स्र व इतमाम के मसाइल में हुक्म वह होगा जो मज़कूरा फ़तवे में ब्यान किया गया है। फ़क़त वल्लाहु तआ़ला आ़लमु।

(17 ज़िलहिज्जा 1424 हिजरी बरोज़ शं. बर मदरसा सौलतिया मक्का मुअ़ज़्ज़मा)

❑ (हज़रत मौलाना) अब्दुलहक़ आज़मी ग़ुफ़िरलहू।
(मुहद्दिस दारुलउलूम देवबंद)

❑ (हज़रत मौलाना) मुफ़्ती महमूद हसन बुलंद शहरी ग़ुफ़िरलहू। (मुफ़्ती दारुलउलूम देवबंद)

□ (हज़रत मौलाना मुफ़्ती) शब्बीर अहमद अफ़ल्लालहु अन्हु (मुफ़्ती जामिया क़ासमीया मदरसा शाही मुरादाबाद)

□ (हज़रत मौलाना मुफ़्ती) शेर मुहम्मद अली।

(मुफ़्ती दारुलइफ़्ता जामिया अशरफ़ीया लाहौर)

□ (हज़रत मौलाना मुफ़्ती) मुहम्मद सलमान मनसूरपुरी गुफ़िरलहू।

(नाइब मुफ़्ती जामिया क़ासमीया मदरसा शाही मुरादाबाद)

□ (हज़रत मौलाना मुफ़्ती) मुशर्रफ़ अली थानवी।

(दारुलउलूम इस्लामिया इक़बाल टाउन लाहौर)

□ (हज़रत मौलाना मुफ़्ती) मुहम्मद फ़ारूक़ गुफ़िरलहू।

(जामिया महमूदिया अली पुर हापूड़ रोड़ मेरठ)

□ (हज़रत मौलाना) मुबीन अहमद क़ासमी।

(जामिया अरबीया खादिमुलइस्लाम हापूड़)

□ (हज़रत मौलाना मुफ़्ती) मक़सूद आलम।

(खादिमुलइस्लाम हापूड़, ज़िला ग़ाज़ियाबाद, यूपी, हिन्द)

□ (हज़रत मौलाना मुफ़्ती) मुहम्मद अबुलकलाम।

(मरकज़ी दारुलइफ़्ता जामिया इस्लामिया अरबीया भोपाल, एम. पी.)

□ (हज़रत मौलाना मुफ़्ती) अब्दुस्सत्तार।

(दारुलइफ़्ता अफ़ज़लुलउलूम ताज गंज आगरा)

(बशुक्रिया निदाए शाही दिसम्बर 2004 ई0)

दौराने सफ़र हज व उम्रा में क़स्र

मस्अला: कराची (अपने वतन) से मक्का मुकर्रमा एक सफ़र है इसलिए क़स्र करेगा लेकिन अगर मक्का मुकर्रमा में पन्द्रह दिन या इससे ज़्यादा ठहरने का मौक़ा हो तो मुक़ीम होगा और पूरी नमाज़ पढ़ेगा। और अगर मक्का

मुकर्रमा में पन्द्रह दिन ठहरने का मौक़ा नहीं मिला तो मक्का मुकर्रमा में भी मुसाफ़िर ही रहेगा और नमाज़ें क़स्र करेगा। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–123)

(नमाज़े क़स्र के मुकम्मल मसाइल देखिए अहक़र की मुरत्तबा कर्दा किताब मसाइले सफ़र)

आठवीं ज़िलहिज्जा को किस वक़्त मिना जाना चाहिए?

मस्अला: आठवीं ज़िलहिज्जा को किसी भी वक़्त मिना जाना मसनून है, अलबत्ता मुस्तहब ये है कि सूरज निकलने के बाद जाए और ज़ुहर की नमाज़ वहां पर पढ़े। सूरज निकलने से पहले जाना ख़िलाफ़े औला है, मगर जाइज़ है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़हा–121)

मस्अला: मुअ़ल्लिम हज़रात सातवीं ज़िलहिज्जा को बहुत से हुज्जाज को मिना ले जाते हैं तो सातवीं ज़िलहिज्जा को हज का एहराम बांध कर मिना जा सकते हैं कोई कराहत नहीं बल्कि अफ़ज़ल है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़हा–298 व शरह वक़ाया जिल्द–1 सफ़हा–344)

मिना की हुदूद से बाहर क़याम किया तो हज हुआ या नहीं?

सवाल: जद्दा से ग्रूप के साथ मिना पहुंचने पर मालूम हुआ कि ग्रूप वालों के ख़ेमे हुकूमत की बनाई हुई मिना की हुदूद के ऐन बाहर हैं, अब ऐसे वक़्त में न रक़म वापस मिल सकती है और न बावजूद कोशिश करने के किसी और जगह मुतबादिल इंतिज़ाम हो सकता है। लिहाज़ा हम सब ने तमाम मनासिके हज वहां पर ही (हुदूदे हरम के बाहर) पूरे किए और मिना में वहीं क़याम किया जो कि मिना से चंद क़दम बाहर था। क्या हमारे हज में कोई

नुक़्सान रहा या नहीं?

जवाबः मिना की हुदूद से बाहर रहने की सूरत में मिना में रात गुज़ारने की सुन्नत अदा नहीं होगी, लेकिन हज अदा हो जाएगा। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–122)

मस्अलाः मिना की हुदूद शरअ़न मुतअैयन हैं जहां हुकूमते सऊदिया ने बड़े बड़े नीले बोर्ड लगा रखे हैं, लेकिन मौसमे हज 1420 हिजरी से हुकूमत ने ख़ेमों की पलानिंग ज़्यादा महफ़ूज़ तरीक़ा पर करने के लिए ख़ेमों का सिलसिला मिना के अन्दर तक महदूद न रख कर मुज़दलिफ़ा के काफ़ी हिस्सा तक वसीअ़ कर दिया है।

मुज़दलिफ़ा में बने हुए उन ख़ेमों में हज़ारहा हाजियों के ठहरने का इंतिज़ाम है, अब सूरते हाल में मिना में रात गुज़ारने की जो ख़ास सुन्नत है वह मतरूक हो रही है। इसलिए मुज़दलिफ़ा में ठहरने वाले हुज्जाज अगर बसहूलत मिना के हुदूद में (आने का) इंतिज़ाम कर सकें तो फ़बिहा (बहुत ही अच्छा) वरना अगर मुज़दलिफ़ा में ही रहना पड़े जैसा कि आम हुज्जाज का हाल है तो उसकी वजह से उन पर कोई दम वग़ैरा लाज़िम नहीं है, और हुकूमती निज़ाम की मजबूरी की वजह से इंशाअल्लाह वह तर्के सुन्नत के गुनहगार भी न होंगे और यहां ठहरने वाले हज़रात अगर अरफ़ात से लौट कर मुज़दलिफ़ा की हुदूद में अपने बने हुए ख़ेमों में आ कर रात गुज़ारें तो उनका वक़ूफ़ मुज़दलिफ़ा का अमल मुहक़्क़क़ हो जाएगा।

इंशाअल्लाह तआ़ला!

(निदाए शाही जनवरी 2001 ई0 बहवाला छटा फ़िक़्ही इजतिमा 1417 हिजरी)

रात मिना से बाहर गुज़ारना?

सवालः एक शख़्स ने मिना में कुर्बानी करने के बाद और एहराम खोलने के बाद दस और ग्यारह ज़िलहिज्जा की दरमियानी रात मुकम्मल और ग्यारह ज़िलहिज्जा का आधा दिन मक्का मुकर्रमा में गुज़ारा और बाक़ी दिन मिना में और वहां बारह ज़िलहिज्जा की रमी तक रहा। उस शख़्स का क्या हुक्म है?

जवाबः मिना में रात गुज़राना सुन्नत है, इसलिए उसने ख़िलाफ़े सुन्नत किया। मगर उसके ज़िम्मा दम वग़ैरा वाजिब नहीं। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–122)

अरफ़ात में ज़वाल के बाद पहुंचना?

मस्अलाः अरफ़ात के मैदान में ज़वाल से गुरूबे आफ़ताब तक वकूफ़ वाजिब है, अगर कोई शख़्स अपनी ग़फ़लत और सुस्ती या किसी उज़्र मसलन सवारी न मिलने या रास्ता भूल जाने से गुरूब से कुछ क़ब्ल अरफ़ात में पहुंचे और गुरूब के बाद मैदान से निकल जाए तो उसका वकूफ़ हो जाएगा। दम वाजिब नहीं है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–536)

अरफ़ात में गुरूब के बाद पहुंचना?

सवालः अरफ़ात के मैदान में सवारी न मिलने, या रास्ता भूल जाने की वजह से कोई शख़्स नवीं ज़िलहिज्जा के गुरूब तक भी न पहुंच सके और गुरूब के बाद दसवीं की सुब्ह सादिक़ से पहले पहुंच जाए तो फ़र्ज़े वकूफ़ तो हो जाएगा, लेकिन क्या उसको नवीं ज़िलहिज्जा की गुरूब तक वाजिब वकूफ़ न करने की वजह से क्या दम देना होगा?

जवाबः अगर किसी कुदरती उज़्र की वजह से ताख़ीर हुई तो दम नहीं है, और अगर अपनी ग़फ़लत या मख़लूक़ की तरफ़ से उज़्र के बाइस ताख़ीर हुई तो दम वाजिब है। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–538 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–217 व हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–275)

मस्अलाः अगर किसी शख़्स को किसी मजबूरी से नवीं तारीख़ के ज़वाल से मग़रिब तक वकूफ़े अरफ़ा का मौक़ा नहीं मिला तो वह गुरूबे आफ़ताब के बाद दसवीं शब में सुब्ह सादिक़ से पहले पहले वकूफ़ करे, ऐसा करने से फ़र्ज़ अदा हो जाएगा। (अहकामे हज सफ़्हा–68)

अरफ़ात में कब तक रहे?

मस्अलाः मैदाने अरफ़ात में गुरूबे आफ़ताब तक रहना चाहिए, अगर सूरज गुरूब होने से पहले वापस चला गया तो दम लाज़िम है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–547 रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–236)

मस्अलाः जो शख़्स गुरूबे आफ़ताब से क़ब्ल अरफ़ात की हुदूद से निकल गया उस पर लाज़िम है कि वापस आए और गुरूब के बाद अरफ़ात से बाहर निकले, अगर ऐसा न किया तो उस पर दम वाजिब है यानी क़ुर्बानी।

(अहकामुल हज सफ़्हा–68)

मस्अलाः हज के दो रुक्न हैं वकूफ़े अरफ़ात और तवाफ़े ज़ियारत, बहालते एहराम अदा कर लेने से हज अदा हो जाएगा। बक़िया उमूर हज में वाजिब, सुन्नत और मुस्तहब हैं, जिनके तर्क से सदक़ा वग़ैरा लाज़िम होता है या सवाब में कमी आती है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–17 सफ़्हा–194)

मस्अला: "मैदाने अरफ़ात" अरफ़ा के माना पहचानने के हैं। हज़रत आदम व हौवा अलैहिमस्सलाम जन्नत से ज़मीन पर उतरे तो दोनों एक दूसरे से दूर थे, बिलआख़िर उस मैदान में पहुंच कर उन्होंने एक दूसरे को पहचाना, उसी मुनासिबत से उस जगह को अरफ़ात कहा जाने लगा। दूसरी वजह ये ब्यान की गई कि हज़रत जिब्राईल अलैहिस्सलाम ने हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम को अहकामे हज सिखाए और यहां आ कर पूछा— "هل عرفت" क्या आप ने मतअल्लिका अहकाम को पहचान लिया? आप ने इस्बात में जवाब दिया। एक क़ौल ये भी है कि यहां पर लोग अपने अपने गुनहों का एतेराफ़ कर के तौबा करते हैं इसलिए उसको अरफ़ात कहा जाता है।

(तारीख़े मक्का सफ़्हा—127)

वक़ूफ़े अरफ़ा की नीयत कब करनी चाहिए?

मस्अला: वक़ूफ़े अरफ़ा का वक़्त ज़वाल से शुरू होता है। यौमे अरफ़ा को ज़वाल के बाद जिस वक़्त भी मैदाने अरफ़ात में दाख़िल हो जाए वक़ूफ़े अरफ़ा की नीयत कर लेनी चाहिए। अगर नीयत न भी करे और वक़ूफ़ हो जाए तो फ़र्ज़ अदा हो जाएगा।

(आपके मसाइल जिल्द—4 सफ़्हा—124)

वक़ूफ़े अरफ़ात नवीं ज़िलहिज्जा के रोज़ ज़वाले आफ़ताब के बाद से यौमे नहर की फ़ज्र तक है। इसमें न नीयत शर्त है और न अक़्ल का बजा होना शर्त है। पस जो शख़्स इन औक़ात में अरफ़ात पहुंच गया उसका हज दुरुस्त हो गया, ख़्वाह उसने नीयत की हो या न की हो, और ख़्वाह ये जानता हो कि अरफ़ा में है या न जानता

हो या हालते जुनून या बेहोशी के आलम में हो, सो रहा हो या बेदार हो।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1082)

अरफ़ात में ज़ुहर व अस्र की नमाज़ क़स्र क्यों?

सवालः नौ ज़िलहिज्जा को मक़ामे अरफ़ात में मस्जिदे नमरा में ज़ुहर व अस्र की नमाज़ एक साथ पढ़ी जाती हैं वह हमेशा क़स्र क्यों पढ़ी जाती है, जबकि मक्का मुकर्रमा से अरफ़ात के मैदान का फ़ासिला तीन चार मील है?

जवाबः हमारे नज़दीक अरफ़ात में क़स्र सिर्फ़ मुसाफिर के लिए है। मुक़ीम पूरी नमाज़ पढ़ेगा। सऊदी हज़रात के नज़दीक क़स्र मनासिक की वजह से है इसलिए इमाम ख़्वाह मुक़ीम हो, क़स्र ही करेगा।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–125)

अरफ़ात में नमाज़े ज़ुहर व अस्र जमा करने की शर्त क्या है?

मस्अलाः मस्जिदे नमरा के इमाम के साथ ज़ुहर व अस्र की नमाज़ें जमा करना जाइज़ है, मगर इसके लिए चंद शराइत हैं, उनमें से एक ये है कि क़स्र सिर्फ़ इमाम मुसाफ़िर कर सकता है, अगर इमाम मुक़ीम हो तो उसको पूरी नमाज़ पढ़नी होगी। सुना ये था कि मस्जिदे नमरा का इमाम मुक़ीम होने के बावजूद क़स्र करता है, इसलिए हनफ़ी हज़रात उनके साथ जमा नहीं करते थे। लेकिन अगर तहक़ीक़ ये हो जाए कि इमाम मुसाफ़िर होता है तो हनफ़ीया के लिए इमाम की नमाज़ों में शरीक होना सही है। वरना दोनों नमाज़ें अपने अपने वक़्त पर अपने अपने ख़ेमों में अदा करें। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–126)

मस्अलाः अगर तहक़ीक़ से मालूम हो जाए कि मस्जिदे

नमरा में इमाम मुक़ीम होने के बावजूद क़स्र करते हैं तो उनकी इक़्तिदा में मुसाफ़िर हनफ़ी मुक़्तदियों की नमाज़ सही न होगी। (फ़तावा रहीमिया जिल्द-8 सफ़्हा-320 व शामी जिल्द-2 सफ़्हा-238 व अहकामे हज सफ़्हा-93)

मस्अलाः अरफ़ात में जुहर और अस्र जमा करने के लिए इमामे अकबर के साथ जो मस्जिदे नमरा में जुहर व अस्र की नमाज़ पढ़ाता है उस जमाअत में शिर्कत शर्त है, पस जो लोग मस्जिदे नमरा की दोनों नमाज़ों (जुहर व अस्र) या किसी एक की जमाअत में शरीक न हों उनके लिए जुहर व अस्र को अपने अपने वक़्त पर पढ़ना लाज़िम है, ख़्वाह जमाअत करायें या अकेले अकेले नमाज़ पढ़ें, उनके लिए जुहर व अस्र को जमा करना (एक साथ पढ़ना) जाइज़ नहीं। (आपके मसाइल जिल्द-4 सफ़्हा-125 व मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा-157)

मस्अलाः अरफ़ात में नवीं तारीख़ को जुहर व अस्र, जुहर के वक़्त में एक अज़ान और दो तकबीरों के साथ इकट्ठी पढ़ी जाती हैं उसके जमा करने में मुक़ीम और मुसाफ़िर दोनों बराबर हैं, ख़्वाह मक्का मुकर्रमा का रहने वाला हो या मक्का मुकर्रमा में मुक़ीम हो।

मस्अलाः जब इमाम ख़ुतबा से फ़ारिग़ हो जाए तो मुअज़्ज़िन तकबीर कहे और जुहर की नमाज़ पढ़ाए, उसके बाद फिर दूसरी तकबीर कहने के बाद अस्र की नमाज़ पढ़ाए, दोनों नमाज़ों में क़िराअत आहिस्ता पढ़े, ज़ोर से न पढ़े। नीज़ ख़ुतबा उन नमाज़ों से पहले सुन्नत है शर्त नहीं है।

मस्अलाः जुहर के फ़र्ज़ों के बाद तकबीरे तशरीक़ तो

कह ले लेकिन सुन्नते मुअक्कदा या नफ़्ल न पढ़े। और अस्र की नमाज़ के बाद भी जुहर की नफ़्ल या सुन्नत न पढ़े। नीज़ दोनों नमाज़ों के दरमियान और कोई काम करना, खाना पीना वग़ैरा मकरूह है।

मस्अला: अगर इमाम मुक़ीम हो तो अरफ़ा में दोनों नमाज़ें पूरी पढ़े और मुक़्तीद भी पूरी पढ़ें, ख़्वाह मुक़ीम हों या मुसाफ़िर। और अगर इमाम मुसाफ़िर है तो क़स्र करे और जो मुक़्तीद मुसाफ़िर हैं वह भी क़स्र करें और जो मुक़ीम हों वह पूरी पढ़ें।

मस्अला: मुक़ीम शख़्स को क़स्र करना जाइज़ नहीं ख़्वाह मुक़्तदी हो या इमाम। और अगर मुक़ीम इमाम हो और क़स्र करे तो उसकी इक़्तिदा न मुसाफ़िर को जाइज़ है न मुक़ीम को, अगर कोई इमाम मुक़ीम क़स्र करेगा तो इमाम और मुक़्तदी दोनों की नमाज़ न होगी।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–157)

मैदाने अरफ़ात में क़स्र का हुक्म?

इस ज़माने में तहक़ीक़ से ये बात मालूम हो चुकी है कि अरफ़ात, मुज़दलिफ़ा, मिना में नमाज़ पढ़ाने वाला इमाम सूबा नज्द से आता है और मुसाफ़िर ही रहता है इसलिए मौजूदा ज़माना में अमीरे हज के पीछे शाफ़ई, हनफ़ी मस्लक के लोग भी नमाज़ पढ़ सकते हैं। लिहाज़ा हनफ़ी और शाफ़ई मस्लक के मुसाफ़िर हुज्जाज इमाम के साथ साथ सलाम फेर दिया करें और मुक़ीम हुज्जाज इमाम के सलाम के बाद दो रकअ़त मज़ीद पढ़ कर अपनी अपनी नमाज़ की तकमील कर लिया करें और दोनों रकअ़तों में किसी क़िस्म की क़िराअत करने की ज़रूरत नहीं है।

(ईज़ाहुलमसालिक सफ़्हा–141 बहवाला ईज़ाहुत्तहावी जिल्द–3 सफ़्हा–515)

वक़ूफ़े अरफ़ात का मसनून तरीक़ा?

मस्अला: मुस्तहब वक़्त अरफ़ात में जाने का ये है कि यौमे अरफ़ा नवीं ज़िलहिज्जा में सूरज निकलने के बाद मिना से अफ़रफ़ात रवाना हो और वहां पहुंच कर हसबे क़ाएदा नमाज़े जुहर व अस्र से फ़ारिग़ हो कर वक़ूफ़े अरफ़ात करे और वक़ूफ़े अरफ़ात का वक़्त ज़वाले यौमे अरफ़ा से तुलूए फ़ज्र यौमे नह्र तक है, यानी दसवीं तारीख़ की तमाम रात भी वक़ूफ़ का वक़्त है इस अरसा में से किसी वक़्त भी अरफ़ात पहुंच गया तो फ़र्ज़े वक़ूफ़ अदा हो गया।

और मुज़दलिफ़ा की तरफ़ लौटने का मुस्तहब वक़्त वही है जो मशहूर है कि सूरज ग़ुरूब होने के बाद (नवीं तारीख़ का) चल कर मुज़दलिफ़ा पहुंचे और रात को वहां रहे और सुब्ह की नमाज़ अंधेरे में पढ़ कर वक़ूफ़े मुज़दलिफ़ा करे, और इस वक़ूफ़ का वक़्त तुलूए फ़ज्र यौमे नह्र से तुलूए आफ़ताब तक है और ये वक़ूफ़ वाजिब है।

और जो हाजी अरफ़ा के दिन शाम को बाद ग़ुरूबे आफ़ताब या इशा के वक़्त या उसके भी बाद में सुब्ह सादिक़ से पहले पहले अरफ़ात पहुंच गया उसका हज हो गया। वह अरफ़ात में कुछ देर ठहर कर उसी वक़्त वहां से लौट कर मुज़दलिफ़ा पहुंच कर वक़ूफ़े मुज़दलिफ़ा भी अगर वक़्त वक़ूफ़े मुज़दलिफ़ा का बाक़ी हो कर ले ताकि वाजिब साक़ित न हो। और अगर वक़ूफ़े मुज़दलिफ़ा न हो सका कि उसका वक़्त न मिला तो तर्के वाजिब

हुआ। इसलिए दम वाजिब हो गया। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़हा–548 व रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़हा–202 किताबुलहज)

मस्अला: नवीं ज़िलहिज्जा को ज़वाले आफ़ताब के बाद गुरूबे आफ़ताब तक पूरे मैदाने अरफ़ात में जहां चाहे वकूफ़ कर (ठहर) सकता है। नीज़ वकूफ़े अरफ़ात के लिए पाक होना भी शर्त नहीं है, अगर कोई औरत हैज़ व निफ़ास की वजह से नापाकी की हालत में हो या मर्द नापाक हो तो उस हालत में भी वकूफ़े अरफ़ात दुरुस्त हो जाएगा।

मस्अला: अफ़ज़ल व औला तो ये है कि क़िब्ला रुख़ खड़े हो कर मग़रिब तक वकूफ़ करे, फिर अगर पूरे वक़्त में खड़ा ने हो सके तो जिस क़दर खड़ा हो सकता है खड़ा रहे फिर बैठ जाए, फिर जब कूवत व हिम्मत हो खड़ा हो जाए और पूरे वक़्त में ख़ुशूअ व ख़ुज़ूअ के साथ बार बार तल्बिया पढ़ता रहे। गिरयावज़ारी के साथ ज़िकरुल्लाह और तिलावत और दुरूद शरीफ़ और इस्तिग़फ़ार में मशगूल रहे और दीनी व दुनियवी मक़ासिद के लिए अपने वास्ते और अपने मुतअ़ल्लिक़ीन व अहबाब के और तमाम मुसलमानों के लिए दुआऐं मांगता रहे, ये वक़्त मक़्बूलियते दुआ का ख़ास वक़्त है और ये हमेशा नसीब नहीं होता। इसलिए उस दिन बिला ज़रूरत आपस की जाइज़ गुफ़्तगूओं से भी परहेज़ करे, पूरे वक़्त को दुआओं और ज़िक्र में सर्फ़ करे।

मस्अला: वकूफ़ की दुआओं में दुआ की तरह हाथ उठाना सुन्नत है, जब थक जाए हाथ छोड़ कर भी दुआ

मांग सकता है। आंहज़रत (स.अ.व.) से रिवायत है कि आप (स.अ.व.) ने हाथ उठा कर तीन मरतबा– "الله اكبر" "ولله الحمد" कहा और फिर ये दुआ पढ़ी–

"لَا اِلٰـهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ لَهُ الْمُلْكُ وَلَهُ الْحَمْدُ، اَللّٰهُمَّ اَهْدِنِيْ بِالْهُدٰى وَنَقِّنِيْ بِالتَّقْوٰى وَاغْفِرْلِيْ فِي الْاٰخِرَةِ وَالْاُوْلٰى"

कोई मअ़बूद नहीं अल्लाह के सिवा, वह तन्हा है उसका कोई शरीक नहीं, उसके लिए मुल्क है और उसी के लिए हम्द है, ऐ अल्लाह तू मुझे हिदायत पर रख और तक़वा के ज़रीआ पाक फ़रमा और मुझे दुनिया वा आख़िरत में बख़्श दे।

और फिर हाथ छोड़ दिए, इतनी देर जितनी देर में अलहम्दु शरीफ़ पढ़ी जाती है। उसके बाद फिर हाथ उठा कर वही कलिमात और दुआ पढ़ीं फिर इतनी देर हाथ छोड़े रखे और फिर तीसरी मरतबा वही कलिमात और दुआ मांगी।

अस्ल बात ये है कि जो दुआ दिल से और ख़ुशूअ़ व ख़ुज़ूअ़ के साथ मांगी जाए वही बेहतर है, ख़्वाह किसी ज़बान में मांगे। याद रहे कि दुआ का पढ़ना मक़्सूद नहीं बल्कि दुआ मांगना मक़्सूद है। (अहकामे हज सफ़्हा–65 व मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–155)

अ़रफ़ात के ज़रूरी मसाइल?

मस्अला: अ़रफ़ात मक्का मुकर्रमा से मशरिक़ की जानिब तक़रीबन नौ मील और मिना से छः मील एक मैदान है। नवीं ज़िलहिज्जा को ज़वाल के बाद से दसवीं की सुब्ह सादिक़ तक किसी वक़्त उसमें ठहरना गो एक लहज़ा ही हो हज का रुक्ने आज़म है। (गोया उस मैदान में नवीं

तारीख़ को जो शख़्स एक लहज़ा के लिए एहराम के साथ पहुंच गया उसका हज हो गया।)

मस्अला: अरफ़ात का मैदान सारा मौकफ़ यानी ठहरने की जगह है जहां जी चाहे ठहरे अलावा बत्ने अरफ़ा के।

मस्अला: अरफ़ात में पहुंच कर तल्बिया, दुआ और दुरूद शरीफ़ वग़ैरा कसरत से पढ़ता रहे, जब ज़वाल हो जाए वुज़ू करे, गुस्ल अफ़ज़ल है, ज़रूरीयात खाना, पीना वग़ैरा से ज़वाल से पहले फ़ारिग़ हो जाए और बिल्कुल इत्मीनान व सुकूने क़ल्ब के साथ अपने ख़ालिक़ की तरफ़ मुतवज्जेह हो।

मस्अला: वकूफ़े अरफ़ा के लिए नीयत शर्त नहीं, अगर नीयत न की तब भी वकूफ़ हो जाएगा।

मस्अला: अरफ़ात में वकूफ़ के वक़्त खड़ा रहना मुस्तहब है शर्त और वाजिब नहीं है, बैठ कर, लेट कर जिस तरह हो सके सोते, जागते वकूफ़ करना जाइज़ है।

मस्अला: वकूफ़ में हाथ उठा कर हम्द–व–सना, दुरूद, दुआ, अज़ाकर, तल्बिया वग़ैरा पढ़ते रहना मुस्तहब है और खूब दुआऐं करें ये क़बूलियत का वक़्त है।

मस्अला: वकूफ़ के लिए हैज़ न निफ़ास व जनाबत से पाक होना शर्त नहीं है।

मस्अला: नवीं ज़िलहिज्जा को ज़वाल से लेकर गुरूब होने तक अरफ़ात में रहना वाजिब है, अगर सूरज गुरूब होने से पहले अरफ़ात की दह से निकल जाएगा तो दम वाजिब होगा, लेकिन अगर सूरज गुरूब होने से पहले फिर वापस अरफ़ात में आ जाएगा तो दम साक़ित हो जाएगा, और अगर गुरूब के बाद अरफ़ात में वापस आएगा

तो दम साक़ित न होगा।

मस्अला: जुमा के रोज़ अगर वकूफ़े अरफ़ा (हज) हो तो उसकी फ़ज़ीलत और दिन के वकूफ़ से सत्तर दर्जा ज़्यादा है। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–163)

मस्अला: अरफ़ात में जुमा जाइज़ नहीं है।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–157)

मैदाने अरफ़ात में क्या पढ़े?

मस्अला: एक रिवायत में आया है कि जो मुसलमान अरफ़ा को ज़वाल के बाद मौक़फ़ में वकूफ़ करे और क़िब्ला रुख़ हो कर सौ मरतबा– "لَا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ لَهُ الْمُلْكُ وَلَهُ الْحَمْدُ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْر." फिर सौ मरतबा– "قل هو الله احد" पूरी सूरत, फिर सौ मरतबा नमाज़ का दुरूद शरीफ़ (दरूदे इब्राहीमी) पढ़े तो बारी तआला फ़रमाते हैं– "मेरे फ़रिश्तो! क्या जज़ा है मेरे इस बंदे की कि उसने मेरी तस्बीह व तहलील की और बड़ाई व अज़मत की और सना की और मेरे नबी पर दुरूद भेजा।"

मैंने उसको बख़्श दिया और उसकी शफ़ाअत को उसके नफ़्स के बारे में क़बूल किया, और अगर मेरा बंदा अह्ले मौक़फ़ की भी शफ़ाअत करेगा तो क़बूल करूंगा, और जो दुआ चाहे मांगे। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–9 सफ़्हा–118 व मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–175 व अहकामे हज सफ़्हा–125 व हज्जे बैतुल्लाह के अहम फ़तावा सफ़्हा–60)

गुरूब के बाद अरफ़ात से वापसी की वजह?

जमानए जाहिलियत में लोग अरफ़ा से गुरूबे आफ़ताब से पहले ही लौट आते थे और मुज़दलिफ़ा में पहुंच कर फ़ख़्र व मुबाहात की महफ़िलें जमाते थे और नुमूद का

बाज़ार गर्म होता था।

रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने उनकी मुख़ालफ़त की और हज्जतुलवदाअ में गुरूब के बाद वापसी फ़रमाई। क्योंकि गुरूब से पहले वापसी के लिए कोई ऐसा वक़्त मुक़र्रर नहीं किया जा सकता था, जिसमें किसी का इब्हाम न हो।

जबकि ऐसे बड़े इजतिमा के लिए ऐसी वाज़ेह तअ़यीन ज़रूरी है और गुरूब एक ऐसी वाज़ेह अ़लामत थी जिसमें ज़रा भी इब्हाम नहीं था, चुनांचे वापसी के वक़्त का इंज़िबात गुरूबे शम्स से किया गया।

अ़लावा अज़ीं ख़ित्ता गर्म है, एलाक़ा पहाड़ी है और शाम को तपिश तेज़ होती है। इसलिए गुरूब से पहले वापसी में परेशानी है। इसलिए भी वापसी के लिए मौज़ूं वक़्त गुरूब के बाद है, जैसे मिना से अ़रफ़ात के लिए रवानगी फ़ज्र के फ़ौरन बाद तजवीज़ की गई, ताकि ठंडे वक़्त में लोग ठिकाने पहुंच जाऐं।

(रहमतुल्लाहिलवासिअ़ जिल्द–4 सफ़्हा–202)

मुज़दलिफ़ा में शब गुज़ारने की वजह?

अ़रफ़ात से वापसी में मुज़दलिफ़ा में रात गुज़ारना एक क़दीमी दस्तूर था। शरीअ़त ने उसको बाक़ी रखा है, क्योंकि हज का इज्तिमा एक अ़ज़ीम इज्तिमा है। लोगों ने ऐसा इज्तिमा शायद ही कभी देखा हो। और अ़रफ़ात से वापसी गुरूब के बाद होती है यानी रात शुरू हो जाती है, इसलिए अंदेशा था कि लोग वापसी में धक्का धक्की करेंगे और एक दूसरे को चूर चूर कर देंगे। फिर लोग दिन भर के थके मांदे होते हैं। दूर दराज़ से चल कर अ़रफ़ात में

आए हुए होते हैं और अक्सरीयत पैदल चलने वालों की होती है। इसलिए अगर उनको हुक्म दिया जाता कि मिना में पहुंचो तो वह और भी टूट जाते और आइंदा कल के लिए न रहते, इसलिए रास्ता में क़याम तजवीज़ किया गया ताकि सुस्ता कर सुब्ह को अगली मंज़िल का रुख़ करें। (रहमतुल्लाहिलवासिआ जिल्द–4 सफ़्हा–203)

नीज़ मग़रिब की नमाज़ मुज़दलिफ़ा में पढ़ने की वजह ये है कि वकूफ़े अ़रफ़ा, गुरूबे आफ़ताब के बाद ख़त्म किया जाता है, अब अगर लोग मग़रिब की नमाज़ पढ़ कर मुज़दलिफ़ा के लिए रवाना होंगे तो बहुत ताख़ीर हो जाएगी और रात का बड़ा हिस्सा सफ़र की नज़्र हो जाएगा और वकूफ़े मुज़दलिफ़ा में ख़लल पड़ेगा। इसलिए वकूफ़े अ़रफ़ा ख़त्म करते ही मुज़दलिफ़ा के लिए रवानगी हो जाती है। लोग जल्द अज़ जल्द मुज़दलिफ़ा पहुंच कर दोनों नमाज़ें (मग़रिब व इशा) एक साथ अदा कर के आराम करते हैं और सुब्ह ताज़ा दम हो कर वकूफ़े मुज़दलिफ़ा करते है। (रहमतुल्लाहिलवासिआ जिल्द–4 सफ़्हा–234)

मुज़दलिफ़ा में मग़रिब व इशा को जमा करना?

सवाल: मुज़दलिफ़ा में मग़रिब और इशा की नमाज़ें जो जमा कर के एक साथ पढ़ते हैं उसकी क्या शराइत हैं? औरत व मर्द तमाम पर ज़रूरी है?

जवाब: मुज़दलिफ़ा में मग़रिब व इशा का जमा करना हाजियों के लिए ज़रूरी है। मग़रिब को मग़रिब के वक़्त पढ़ना उनके लिए जाइज़ नहीं है। इसमें मर्द और औरत दोनों का हुक्म एक ही है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–126)

मस्अला: यौमे अरफ़ा की शाम को गुरूबे आफ़ताब के बाद अरफ़ात से मुज़दलिफ़ा जाते हैं और नमाज़े मग़रिब व इशा दोनों मुज़दलिफ़ा पहुंच कर अदा करते हैं।

अगर किसी ने मग़रिब की नमाज़ अरफ़ात में या रास्ता में पढ़ ली तो जाइज़ नहीं है।

मुज़दलिफ़ा पहुंच कर दोबारा मग़रिब की नमाज़ पढ़े। उसके बाद इशा की नमाज़ पढ़े।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–125)

मस्अला: अगर कोई तन्हा या जमाअत के साथ अरफ़ा के दिन मग़रिब की नमाज़ अरफ़ात में पढ़े और इशा की नमाज़ मुज़दलिफ़ा में पढ़े तो उस शख़्स को मग़रिब की नमाज़ का इआदा करना लाज़िम है।

(इमदादुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–17)

मस्अला: मुज़दलिफ़ा में मग़रिब व इशा के जमा करने में इमामुलहज की शर्त नहीं है, पस अगर तन्हा पढ़ें या चंद आदमी जमा हो कर जमाअत से पढ़ें हर तरह सही है। (इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़्हा–171)

मस्अला: मुज़दलिफ़ा पहुंच कर मग़रिब व इशा जमाअत के साथ पढ़ी जाएं, अगर जमाअत न मिले तो अकेले पढ़ लें। नीज़ दोनों नमाज़ें एक अज़ान और एक इक़ामत के साथ पढ़ी जाएं। दोनों नमाज़ों के दरमियान सुन्नतें न पढ़ी जाएं, बल्कि सुन्नतें बाद में पढ़ें। और अगर मग़रिब की नमाज़ पढ़ कर उसकी सुन्नतें पढ़ें तो इशा की नमाज़ के लिए दोबारा इक़ामत कही जाए। (आप के मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–125 अहकामे हज सफ़्हा–68)

मस्अला: मुज़दलिफ़ा में मग़रिब व इशा की नमाज़ें

इशा के वक़्त जमा करना यानी दोनों को एक साथ पढ़ना वाजिब है और इसके लिए जमाअ़त भी शर्त नहीं है।

मस्अला: अगर इशा के वक़्त से पहले मुज़दलिफ़ा पहुंच गया तो अभी मग़रिब की नमाज़ न पढ़े, इशा के वक़्त का इंतिज़ार करे और इशा के वक़्त दोनों नमाज़ों को जमा करे।

मस्अला: मुज़दलिफ़ा की रात में जागना और इबादत करना मुस्तहब है।

मस्अला: दसवीं शब ज़िलहिज्जा यानी ईद की शब मुज़दलिफ़ा में क़याम करना सुन्नते मुअक्कदा है

(अहकामे हज सफ़्हा–99)

मस्अला: मुज़दलिफ़ा में मग़रिब व इशा को इकट्ठा पढ़ने के लिए जमाअ़त शर्त नहीं, जमाअ़त से पढ़े या तन्हा दोनों को इकट्ठा पढ़े, लेकिन जमाअ़त से पढ़ना अफ़ज़ल है।

मस्अला: मुज़दलिफ़ा में दोनों नमाज़ों को इकट्ठा पढ़ना वाजिब है। बख़िलाफ़े ज़ुहर व अस्र के अरफ़ात में उनका जमा करना मसनून है और मुज़लिदफ़ा में जमा के लिए बादशाह या उसका नाइब होना शर्त नहीं और जमाअ़त भी शर्त नहीं और ख़ुतबा भी यहां नमाज़ से पहले मसनून नहीं। और तकबीर भी दोनों नमाज़ों के लिए एक ही होती है और एक ही अज़ान यानी एक अज़ान और एक तकबीर से मग़रिब व इशा की नमाज़ पढ़े।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–165)

मस्अला: मुज़दलिफ़ा में मग़रिब व इशा में तरतीब वाजिब है, पहले मग़रिब पढ़ें फिर इशा। और अगर पहले इशा पढ़ ली तो बतरतीब इआ़दा वाजिब है।

(इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़्हा–171)

मस्अला: मुज़दलिफ़ा में मग़रिब की नमाज़ में अदा की नीयत करे कज़ा की नीयत न करे। गो कज़ा की नीयत से भी नमाज़ हो जाएगी।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़हा–164)

मस्अला: अगर रास्ता में अरफ़ात वापस होते हुए कोई ऐसी वजह पेश आ जाए कि अंदेशा हो कि मुज़दलिफ़ा पहुंचने तक फ़ज्र की नमाज़ का वक़्त हो जाएगा तो रास्ता में मग़रिब और इशा पढ़ना जाइज़ है।

(तनवीरुल अब्सार मअ़ दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़हा–509 व मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़हा–165)

मुज़दलिफ़ा में वित्र व सुन्नतों का हुक्म?

मस्अला: मुज़दलिफ़सा पहुंच कर मग़रिब की नमाज़ पढ़ने के बाद वित्र नमाज़ तो वाजिब है और उसका अदा करना मुक़ीम और मुसाफ़िर हर एक के ज़िम्मा लाज़िम है। बाक़ी रही सुन्नतें! सनने मुअक्कदा का अदा करना मुक़ीम के लिए तो ज़रूरी है। मुसाफ़िर को इख़्तियार है कि पढ़े या न पढ़े।

(आपके मसाइल जिल्द–5 सफ़हा–218)

मस्अला: मुज़दलिफ़ा में इशा का वक़्त दाख़िल होने के बाद, मग़रिब व इशा दोनों एक अज़ान और एक इक़ामत के साथ पढ़ें और दरमियान में सुन्नत व नफ़्ल कुछ न पढ़ें, बल्कि मग़रिब और इशा की सुन्नत और वित्र इशा की नमाज़ के बाद पढ़ें। अगर इत्तिफ़ाक़ से जमाअ़त से नमाज़ न पढ़ सका और तन्हा नमाज़ अदा की तो तब भी सुन्नतों का यही हुक्म है। इसी तरह तकबीरे तशरीक़ भी इशा की नमाज़ के बाद कहे मग़रिब के बाद न कहे।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–218)

मश्अ़रे हराम में वक़ूफ़ की वजह?

मश्अ़रे हराम एक पहाड़ का नाम है जो मुज़दलिफ़ा में वाक़ेअ़ है। रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने उसके पास वक़ूफ़ फ़रमाया है। पस वहां वक़ूफ़ करना अफ़ज़ल है और तमाम मुज़दलिफ़ा में जहां भी क़याम और वक़ूफ़ करे जाइज़।

मुज़दलिफ़ा में लोग पहुंच कर मग़रिब व इशा एक साथ अदा कर के सो जाते हैं, सुब्ह फ़ज्र के बाद वक़ूफ़े मुज़दलिफ़ा शुरू होता है और ये वक़ूफ़ इसलिए मशरूअ़ किया गया है कि ज़मानए जाहिलीयत में लोग यहां पर तफ़ाख़ुर नुमूद की महफ़िलें जमाते थे। इस्लाम ने उसको कसरते ज़िक्र से बदल दिया।

सूरए बक़रा आयत 198 में है–

"فَإِذَا أَفَضْتُم مِّنْ عَرَفَاتٍ فَاذْكُرُوا اللَّهَ عِندَ الْمَشْعَرِ الْحَرَامِ،
وَاذْكُرُوهُ كَمَا هَدَاكُمْ وَإِن كُنتُم مِّن قَبْلِهِ لَمِنَ الضَّالِّينَ."

यानी जब तुम लोग अ़रफ़ात से लौटो तो मश्अ़रे हराम के पास अल्लाह को याद करो और इस तरह याद करो जिस तरह तुम को बतला रखा है, अगरचे क़ब्ल अज़ीं तुम गुमराहों में से थे। यानी जाहिलीयत में जो कुछ यहां किया जाता था वह गुमराही थी।

यहां पर कसरत से अल्लाह तआ़ला को याद करने का हुक्म इसलिए दिया कि जाहिलीयत की आदत का इंसिदाद हो जाए, यानी ये ज़िक्र उनको तफ़ाख़ुर का मौक़ा ही न दे।

नीज़ उस जगह ज़िक्रे इलाही के ज़रीआ तौहीद की शान बुलंद करना एक तरह मुनाफ़सत और रेस की तरग़ीब

है कि देखें तुम खुदा की याद ज़्यादा करते हो या मुश्रिकीन की तफ़ाखुरत का पल्ला भारी है।

(रहमतुल्लाहिलवासिआ जिल्द–4 सफ़्हा–203)

मस्जिदे मश्अ़रे हराम कहां है?

ये मस्जिद सड़क नम्बर पाँच पर वाक़ेअ़ है। रसूलुल्लाह (स.अ.व.) उसके क़िब्ला की सिम्त में क़याम फ़रमाते थे। उस जगह पर मस्जिद बाद में बनी है। बिलआख़िर सऊदी हुकूमत ने उस मस्जिद की तामीरे जदीद व तौसीअ़ की है, उसकी लागत तक़रीबन पच्चास लाख रियाल है। उसका तूल मश्रिक़ से मग़रिब की जानिब 90 मीटर और अर्ज़ 56 है और कुल रक़बा 50, 40 मुरब्बा मीटर है। उसमें बारह हज़ार से ज़्यादा अफ़राद नमाज़ अदा कर सकते हैं।

मस्जिद मश्अ़रे हराम से मस्जिदे ख़ीफ़ का फ़ासिला पाँच किलो मीटर है, जबकि मस्जिदे नमरा का फ़ासिला सात किलो मीटर है।

(तारीख़े मक्का मुकर्रमा–125 डॉ0 अब्दुलग़नी साहब)

मुज़दलिफ़ा में वक़ूफ़ कब होता है?

सवालः मुज़दलिफ़ा में तो रात को मैदाने अरफ़ात से पहुंचेंगे उसके बाद उसका वक़ूफ़ कब से शुरू होता है और कब तक रहता है। नीज़ फ़ज्र की नमाज़ किस वक़्त पढ़ेंगे? और अगर कोई वादिये मुहस्सर में जिसमें असहाबे फ़ील का वाक़िआ पेश आया था नमाज़ पढ़ ले?

जवाबः वक़ूफ़े मुज़दलिफ़ा का वक़्त दस ज़िलहिज्जा को सुब्ह सादिक़ से लेकर सूरज निकलने से पहले तक है। सुन्नत ये है कि सुब्ह सादिक़ होते ही अव्वले वक़्त

नमाज़े फ़ज्र अदा की जाए। नमाज़ से फ़ारिग़ हो कर वकूफ़ किया जाए और सूरज निकलने से पहले तक दुआ व इस्तिग़फ़ार और तज़र्रोअ व इब्तिहाल में मशगूल हों। जब सूरज निकलने के क़रीब हो तो मिना की तरफ़ चल पड़ें। और वादिये मुहस्सर में नमाज़ पढ़ना मकरूह है। अगर बेख़बरी में पढ़ ली तो ख़ैर नमाज़ तो हो गई, लेकिन वादिये मुहस्सर में वकूफ़ जाइज़ नहीं है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–128)

मस्अला: मुज़दलिफ़ा सब का सब ठहरने की जगह है मगर वादिये मुहस्सर में न ठहरे।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–166)

मस्अला: फ़ज्र से पहले मुज़दलिफ़ा में आना ख़्वाह घड़ी भर के लिए हो, अगर तुलूए फ़ज्र से पहले मुज़दलिफ़ा की मौजूदगी रह गई तो क़ुर्बानी (दम) लाज़िम होगी, अलबत्ता अगर उसकी ताख़ीर का सबब कोई ख़ास उज़्र हो या मरज़ तो कुछ लाज़िम नहीं आता। (किताबुलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1089 व शामी जिल्द–1 सफ़्हा–511)

वकूफ़े मुज़दलिफ़ा छूट जाए?

सवाल: सूरज निकलने से पहले मुज़दलिफ़ा नहीं पहुंचा तो उसका शरअी हुक्म क्या है?

जवाब: अगर वकूफ़े मुज़दलिफ़ा किसी क़ुदरती उज़्र की वजह से न हो सका, मसलन कोशिश के बावजूद अरफ़ात से मुज़दलिफ़ा तुलूए आफ़ताब से पहले न पहुंच सका तो कोई जज़ा वाजिब नहीं, अलबत्ता मख़लूक़ की तरफ़ से किसी रुकावट की वजह से या अमदन (जान बूझ कर) तर्के वकूफ़ से दम वाजिब है। (अहसनुलफ़तावा

जिल्द–4 सफ़्हा–531 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–194 व अहकामे हज सफ़्हा–103)

मिना व मुज़्दलिफ़ा में क़याम का हुक्म?

मस्अलाः अैयामे नहर की रातों को मिना में रहना और कुर्बानी की रात अरफ़ात से निकलने के बाद रात को मुज़्दलिफ़ा में रहना और मुज़लिदफ़ा से आफ़ताब निकलने से पहले मिना को रवाना हो जाना सुन्नत है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1093)

सुब्ह सादिक़ से पहले मुज़्दलिफ़ा से मिना जाना?

मस्अलाः मरीज़, ज़ईफ़, मस्तूरात, उज़्र की वजह से मुज़्दलिफ़ा में वक़ूफ़ न करें तो जाइज़ है, मगर उनके साथ की वजह से तंदुरुस्त मर्द भी वक़ूफ़ न करे, और सुब्ह सादिक़ से पहले मुज़्दलिफ़ा से मिना चला जाए तो उस तंदुरुस्त पर दम वाजिब होगा। इसलिए कि उसका तर्के वक़ूफ़ बिला उज़्र है। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–21 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–6 सफ़्हा–401 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–181)

मस्अलाः जो कोई कमज़ोर लोगों और औरतों के साथ मुज़्दलिफ़ा से मिना के लिए रवाना हो जाए उसका हुक्म उन्हीं लोगों यानी माज़ूरों जैसा हुक्म है।

(हज्जे बैतुल्लाह के अहम फ़तावा सफ़्हा–67)

(जो माज़ूरों के साथ है वह भी माज़ूरों के हुक्म में है)

मस्अलाः मुज़्दलिफ़ा में वक़ूफ़ का वक़्त सुब्ह सादिक़ से सूरज निकलने तक है। अगर कोई शख़्स सूरज निकलने के बाद या सुब्ह सादिक़ से पहले मुज़्दलिफ़ा का वक़ूफ़ करेगा तो वक़ूफ़ सही न होगा।

उस वक़्त वकूफ़ करना वाजिब है गो ज़रा सी देर हो। अगर रास्ता चलते भी उस वक़्त में मुज़दलिफ़ा से गुज़र जाएगा तो वकूफ़ हो जाएगा। ख़्वाह सोते, जागते, बेहोशी या किसी हाल में हो, मुज़दलिफ़ा का इल्म हो या न हो, जैसे वकूफ़े अरफ़ात का हुक्म है कि हर हाल में सही हो जाता है।

मस्अला: अगर औरत हुजूम की वजह से न ठहरे तो दम वाजिब न होगा। लेकिन अगर मर्द हुजूम की वजह से न ठहरेगा तो दम वाजिब होगा। और अगर सुब्ह सादिक़ के बाद अंधेरे ही में मुज़दलिफ़ा से चल दिया तो दम वाजिब न होगा। क्योंकि मिक़्दारे वाजिब वकूफ़ हो गया।

> "क्योंकि वकूफ़े मुज़दलिफ़ा का वाजिब वक़्त सुब्ह सादिक़ से सूरज निकलने तक है उसमें एक लम्हा भी वहां पर चला जाए या गुज़र जाए तो वाजिब अदा हो जाएगा।"
>
> (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

मस्अला: अगर मुज़दलिफ़ा में उस वक़्त (सुब्ह सादिक़ के बाद से सूरज निकलने तक) वकूफ़ न किया और रात ही को सुब्ह सादिक़ से पहले वहां से चला गया तो दम वाजिब होगा, अलबत्ता अगर उज़्र की वजह से न ठहरा मसलन मरीज़ है या कमज़ोर है तो दम वाजिब न होगा।

नीज़ मग़रिब व इशा की नमाज़ से फ़ारिग़ हो कर मुज़दलिफ़ा में ठहरे और मुज़दलिफ़ा में सुब्ह सादिक़ तक ठहरना सुन्नते मुअक्कदा है।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–167)

(सुब्ह सादिक़ से सूरज निकलने तक का वक़्त वाजिब है)

मस्अला: अगर कोई शख़्स अरफ़ात में बिल्कुल अख़ीर वक़्त यानी सुब्ह सादिक़ के क़रीब पहुंचा और सुब्ह सादिक़ के बाद सूरज निकलने तक मुज़दलिफ़ा में न आ सका तो उस पर भी दम वाजिब न होगा।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–167)

मस्अला: सुब्ह सादिक़ से पहले मुज़दलिफ़ा में ठहरने से वाजिब अदा नहीं होगा और तर्के वाजिब की वजह से दम लाज़िम होगा। (यानी सुब्ह सादिक़ से पहले मुज़दलिफ़ा से न निकले) अगर रात को मुज़दलिफ़ा नहीं पहुंच सका यहां तक कि सुब्ह सादिक़ हो गई उस वक़्त ही पहुंचा तो उस पर दम लाज़िम है।

मस्अला: सूरज निकलने में जब दो रकअ़त की मिक़्दार वक़्त बाक़ी रह जाए उस वक़्त तक ठहरना सुन्नते मुअक्कदा है, लेकिन ज़ईफ़ और औरत अगर सुब्ह सादिक़ होते ही नमाज़े फ़ज्र पढ़ कर मिना के लिए रवाना हो जाए तो उनके लिए इजाज़त है, बल्कि जो ज़्यादा ज़ईफ़ हो और बरदाश्त न कर सकें (मुज़दलिफ़ा में ठहरना) वह अगर अंधेरे ही में सुब्ह सादिक़ से भी पहले रवाना हो जाऐं तो उन पर उज़्र की वजह से दम लाज़िम नहीं आएगा।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–181)

शैतान को कंकरियाँ मारने की क्या इल्लत है?

सवाल: हज के मौक़ा पर शैतान (जमरात) को जो कंकरियाँ मारी जाती हैं क्या उसकी इल्लत हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम का वाक़िआ है। जिसमें शैतार ने मुतअ़द्दद दफ़ा बहकाया था?

जवाब: ग़ालिबन इब्राहीम अलैहिस्सलाम वाला वाक़िआ

ही उसका सबब है, मगर ये इल्लत नहीं। ऐसे उमूर की इल्लत तलाश नहीं की जाती। बस जो हुक्म हो उस की तामील की जाती है, और हज के अक्सर अफ़आल और अरकान आशिक़ाना अंदाज़ के हैं कि उक़ला (दानिश्वर) उनकी इल्लतें तलाश करने से क़ासिर हैं।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–130)

कंकरियाँ मारने का वक़्त

मस्अला: पहले दिन दसवीं ज़िलहिज्जा को सिर्फ़ जमरए अक़बा (बड़ा शैतान) की रमी की जाती है। उसका वक़्त सुब्ह सादिक़ से शुरू हो जाता है, मगर तुलूए आफ़ताब से पहले रमी करना ख़िलाफ़े सुन्नत है। उसका मसनून वक़्त तुलूए आफ़ताब से ज़वाल तक है। ज़वाल से गुरूब तक बिला कराहत जवाज़ का वक़्त है और गुरूब से अगले दिन की सुब्ह सादिक़ तक कराहत के साथ जाइज़ है। लेकिन अगर कोई उज़र हो तो गुरूब के बाद भी बिला कराहत जाइज़ है। ग्यारह्वीं और बारह्वीं की रमी का वक़्त ज़वाल के बाद से शुरू होता है। गुरूबे आफ़ताब तक बिला कराहत और गुरूब से सुब्ह सादिक़ तक कराहत के साथ जाइज़ है। मगर आज कल हुजूम व रश की वजह से गुरूब से पहले रमी न कर सके तो गुरूब के बाद बिला कराहत जाइज़ है।

मस्अला: तेरह्वीं तारीख़ की रमी का मसनून वक़्त तो ज़वाल के बाद है, लेकिन सुब्ह सादिक़ के बाद ज़वाल से पहले उस दिन की रमी करना इमाम अबूहनीफ़ा (रह.) के नज़दीक कराहत के साथ जाइज़ है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–132 व मआरिफुल

कुरआन जिल्द–1 सफ़्हा–436)

कंकरियाँ मारने का सही मक़ाम क्या है?

मस्अला: मिना में तीन मक़ाम हैं जिन पर क़द्दे आदम सुतून बना कर चारों तरफ़ निशान लगा दिया गया है यानी सुतून के चारों तरफ़ गोल हौज़ सी बना दी गई है। और उन तीनों जगह को जमरात या जिमार कहते हैं, आम तौर पर लोग उन सुतूनों को बुत या शैतान समझते हैं और उन्ही में कंकरियाँ मारते हैं। जिमार यानी कंकरी फेंकने की जगह सुतून के नीचे की और निशान नुमा हौज़ के अन्दर की ज़मीन है। इसलिए कंकरियाँ सुतून में न मारना चाहिए बल्कि उसी जगह पर मारनी चाहिए जहां कंकरियाँ जमा होती हैं। अगर सुतून पर कंकरी मारी और वह नीचे गिर गई तो रमी हो जाएगी और अगर सुतून के ऊपर जा कर ठहर गई नीचे न गिरी तो रमी न होगी। (मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–355)

मस्अला: कंकरी का जमरा (सुतून) पर लगना ज़रूरी नहीं है, अगर कंकरी जमरा के क़रीब (हौज़ के अन्दर) गिर गई तो भी जाइज़ है और क़रीब की हद दीवार का एहाता है जो हर जमरा के गिर्द (हौज़ नुमा) बना दिया गया है और जो कंकरी एहाता में न गिरी तो उसकी जगह दूसरी कंकरी मारे। (अहकामे हज सफ़्हा–76 व अहसुनलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–568 किताबुल हज)

कंकरियाँ कैसी और कितनी हों?

मस्अला: मुज़दलिफ़ा से कंकरियाँ खजूर की गुठली या चने और लूबिये के दाने के बराबर उठाना रमी करने के लिए मुस्तहब है और किसी जगह से या रास्ता से भी

उठाना जाइज़ है, मगर जमरे के (जिस जगह पर कंकरी मारी जाती है उसके) पास से न उठाए, अगर कोई उनको वहां से उठा कर मारेगा, जाइज़ तो है मगर मकरूहे तंज़ीही है। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–9 सफ़्हा–1116 व मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–184)

मस्अला: बड़े पत्थर को तोड़ कर छोटी कंकरियाँ बनाना मकरूह है, अगर बड़े बड़े पत्थर मारे तो जाइज़ तो है लेकिन मकरूह है।

मस्अला: कंकरियों को धो कर मारना मुस्तहब है, अगरचे पाक जगह से उठाई हों, और जो कंकरियाँ यक़ीनन नापाक हों उनको मारना मकरूह है और शक का एतेबार नहीं है। नीज़ नापाक जगह की कंकरियों से रमी करना मकरूह है। इसलिए नापाक जगह से न उठाए।

मस्अला: सात कंकरियाँ पहले दिन दस तारीख़ को सिर्फ़ जमरए अक़बा पर मारी जाती हैं और बाक़ी ग्यारह बारह को इक्कीस इक्कीस कंकरियाँ तीनों जमरात यानी हर एक पर सात सात मारी जाती है।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–168)

मिना से उठा कर कंकरियाँ मारना

सवाल: अगर हाजी कंकरियाँ मुज़दलिफ़ा से नहीं जाए बल्कि मिना से उठा कर मारे तो क्या दम लाज़िम होगा?

जवाब: संगरेज़े अगर मुज़दलिफ़ा से नहीं लाया, बल्कि मिना से उठा कर रमी की तो उससे दम लाज़िम नहीं आता, लेकिन अगर जमरा (शैतान) के पास से उठाए तो मकरूहे तंज़ीही है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–555 व आलमगीरी मिस्री जिल्द–1 सफ़्हा–218 किताबुलहज)

जमरात के क़रीब से कंकरियाँ उठाना?

सवालः क्या जमरात के आस पास से कंकरियाँ ले कर मारना जाइज़ है?

जवाबः हाँ जाइज़ है, इसलिए कि क़रीने क़यास यही है कि उन कंकरियों से रमी नहीं की गई है। अलबत्ता जो कंकरियाँ जमरात के होज़ में हैं उनसे रमी करना सही नहीं है। (हज्जे बैतुल्लाह के अहम फ़तावा सफ़्हा–71)

कौन से हाथ से रमी की जाए?

मस्अलाः सीधे हाथ से कंकरी मारना मसनून है, सवाब ज़्यादा मिलता है, लिहाज़ा हत्तलइम्कान सीधे ही हाथ से रमी करे, अगर सीधे हाथ से रमी कर ही न सके तो बायें (उलटे) हाथ से रमी करे (कंकरी मारने में कोई हरज नहीं है।) (फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–229)

मस्अलाः जिन कंकरी से रमी की गई हो और वह कंकरी जमरे के क़रीब गिरी हुई हो वह कंकरी वहां से उठा कर उससे रमी करना मकरूह है कि वह मरदूद है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–9 सफ़्हा–116)

दसवीं ज़िलहिज्जा को मग़रिब के वक़्त रमी करना?

सवालः दसवीं ज़िलहिज्जा को रमी करने में काफ़ी दुश्वारी होती है। हम ने सुब्ह के बजाए मग़रिब के वक़्त रमी की। क्या ये अमल सही है?

जवाबः मग़रिब तक रमी की ताख़ीर में कोई हरज नहीं। लेकिन ये शर्त है कि जब तक रमी न कर लें तब तक, तमत्तोअ़ और क़िरान की क़ुर्बानी नहीं कर सकते और जब तक क़ुर्बानी न कर लें, बाल नहीं कटा सकते। अगर आप ने इस शर्त को मलहूज़ रखा तो ठीक किया

है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–132)

मस्अला: दसवीं तारीख़ की रमी अगरचे औरतों और बीमारों के अलावा दूसरों के लिए मग़रिब के बाद मकरूह है, मगर रात में तुलूए फ़ज्र से पहले पहले करने से वाजिब अदा हो जाता है।

मस्अला: अगर दसवीं तारीख़ के बाद की रात गुज़र गई और रमी नहीं की तो उसकी क़ज़ा भी वाजिब है और रात के बाद करने से दम देना भी लाज़िम है।

(अहकामे हज सफ़्हा–74)

मस्अला: रमी और कुर्बानी करने में इतनी जल्दी करना कि इज़्दिहाम (भीड़) की वजह से अपने नफ़्स को या किसी दूसरे को तकलीफ़ पहुंचने का ख़तरा हो हराम है। गुरूब से कुछ क़ब्ल इत्मीनान से रमी करें, अगर उस वक़्त भी हुजूम व इज़्दिहाम हो तो गुरूब के बाद रमी करें, ऐसी हालत में गुरूब के बाद रमी करने में कोई कराहत नहीं है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–568 किताबुलहज)

रात के वक़्त रमी करना?

ताक़तवर मर्दों को रात के वक़्त रमी करना मकरूह है। अलबत्ता औरतें और कमज़ोर मर्द अगर उज़्र की बिना पर रात को रमी करें तो उनके लिए न सिर्फ़ जाइज़ बल्कि मुस्तहब है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–131 व उम्दतुलफ़िक़्ह सफ़्हा–233)

सुन्नत ये है कि हर कंकरी फेंकने के वक़्त– "بسم الله الله اكبر" कहा जाए।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1089)

रम्ये जिमार की तरतीब बदल गई?

सवाल: एक साहब ने तीन यौम में भूल या ग़लती से जमरए अक़बा से शुरू हो कर जमरए ऊला पर रमी ख़त्म कीं तो उस ग़लती या भूल की सज़ा क्या है? उससे हज में फ़र्क़ आया क्या?

जवाब: चूंकि जमरात में तरतीब सुन्नत है, वाजिब नहीं है और तर्के सुन्नत पर दम नहीं आता। इसलिए हज में कोई ख़राबी नहीं आएगी, और न दम वाजिब होगा। अलबत्ता तर्के सुन्नत से कुछ इसाअत आती है, यानी ख़िलाफ़े सुन्नत काम किया।

सूरते मस्ऊला में अगर ये शख़्स जमरए ऊला की रमी के बाद अ़लत्तरतीब जमरए उस्ता और जमरए अक़बा की रमी दोबारा कर लेता तो उसका फ़ेल सुन्नत के मुताबिक़ हो जाता और इसाअत ख़त्म हो जाती। लेकिन हज हो गया दम वग़ैरा नहीं आया है।

(आप के मसाइल जिल्द-4 सफ़्हा-131 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द-6 सफ़्हा-556 व आलमगीरी मिस्री जिल्द-1 सफ़्हा-219 व फ़तावा रहीमिया जिल्द-6 सफ़्हा-42 व मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा-183)

तर्के रमी का हुक्म

सवाल: अगर कोई शख़्स दसवीं ज़िलहिज्जा की रमी न कर सके तो क्या उसकी क़ज़ा ग्यारह्वीं या बारह्वीं को भी कर सकता है? इसी तरह जो शख़्स ग्यारह्वीं या बारह्वीं की रमी न कर सके तो क्या उसकी क़ज़ा बारह्वीं या तेरह्वीं को कर सकता है। दरयाफ़्त तलब ये अम्र है कि अगर किसी दिन रमी मुअ़ैयन वक़्त में न कर सकें तो

उसकी क़ज़ा तेरहवीं तारीख़ तक किसी दिन कर सकता है या सिर्फ़ दूसरे ही दिन कर सकता है और बाद में सिर्फ़ दम दे?

जवाबः क़ज़ा और दम दोनों वाजिब हैं, क़ज़ा का वक़्त तेरहवीं तक है उसके बाद नहीं और दम की तफ़सील ये है कि सब अैयाम की या एक दिन की पूरी या निस्फ़ से ज़ाएद कंकरियाँ छोड़ दें तो दम वाजिब है, और एक दिन की निस्फ़ से कम छोड़ें तो हर कंकरी के एवज़ निस्फ़ साअ़ सदक़ा वाजिब है। अगर सदक़ा का मजमूआ़ दम की क़ीमत के बराबर हो जाए तो उससे कुछ कम कर दे।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़हा–535 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़हा–225 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़हा–232)

रमी मुअख़्ख़र होने पर क़ुर्बानी बाद में?

सवालः हुजूम की वजह से अगर औरत रात तक रमी मुअख़्ख़र कर दे तो क्या उसके हिस्से की क़ुर्बानी पहले की जा सकती है?

जवाबः जिस शख़्स का तमत्तोअ़ या क़िरान का एहराम हो, उसके लिए रमी और क़ुर्बानी में तरतीब वाजिब है कि पहले रमी करे, फिर क़ुर्बानी, फिर एहराम खोले। पस जिस औरत ने तमत्तोअ़ या क़िरान किया हो अगर वह हुजूम की वजह से रात तक रमी को मुअख़्ख़र करे तो क़ुर्बानी को भी रमी से फ़ारिग़ होने तक मुअख़्ख़र करना लाज़िम होगा। जब तक वह रमी न कर ले उसके हिस्सा की क़ुर्बानी नहीं हो सकती और जब तक क़ुर्बानी न हो

जाए। उसका एहराम नहीं खुल सकता है।

(आप के मसाइल जिल्द–4 सफ्हा–137 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–17 सफ़्हा–195)

12 ज़िलहिज्जा को ज़वाल से पहले रमी करना?

सवाल: अक्सर देखा गया कि लोग 12 ज़िलहिज्जा को ज़वाल से पहले रमी करने निकल जाते हैं कि बाद में रश हो जाएगा। इसलिए क़ब्ल अज़ वक़्त मार कर निकल जाते हैं। क्या ये अमल दुरुस्त है?

जवाब: सिर्फ़ दस ज़िलहिज्जा की रमी ज़वाल से पहले है। ग्यारह, बारह की रमी ज़वाल के बाद ही हो सकीत है, अगर ज़वाल से पहले कर ली तो वह रमी अदा नहीं हुई, इस सूरत में दम वाजिब होगा, अलबत्ता तेरह्वीं तारीख़ की रमी ज़वाल से पहले कर के जाना जाइज़ है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–133 व मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–182 व अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–568)

बारह ज़िलहिज्जा की दरमियानी शब में रमी करना?

सवाल: औरतों और ज़ईफ़ों के लिए तो रात को कंकरियाँ मारना जाइज़ है, लेकिन बारह्वीं ज़िलहिज्जा को अगर गुरूबे आफ़ताब के बाद ठहरें और रात को रमी करें तो क्या उन पर तेरह्वीं की रमी भी लाज़िम होती है या नहीं?

जवाब: बारह्वीं तारीख़ को भी औरतें व दीगर ज़ईफ़ व कमज़ोर हज़रात रात को रमी कर सकते हैं। बारह्वीं तारीख़ को मिना से गुरूबे आफ़ताब के बाद भी तेरह्वीं की फ़ज्र से पहले आना कराहत के साथ जाइज़ है। इसलिए अगर तेरह्वीं तारीख़ की सुब्ह सादिक़ होने से पहले मिना से निकल जाऐं तो तेरह्वीं तारीख़ की रमी

लाज़िम नहीं होगी और उसके छोड़ने पर दम लाज़िम नहीं आएगा। हाँ! अगर तेरहवीं की फ़ज्र भी मिना में होगी तो फिर तेरहवीं की रमी भी वाजिब हो जाती है। उसके छोड़ने से दम लाज़िम आएगा।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–134)

मस्अलाः तेरहवीं तारीख़ की शब में मिना का क़याम और तेरहवीं तारीख़ की रमी अस्ल से वाजिब नहीं मगर अफ़ज़ल है, अलबत्ता तेरहवीं की सुब्ह मिना में हो जाए तो उस दिन की रमी भी वाजिब हो जाती है।

(अहकामे हज सफ़्हा–83)

मिना से बारहवीं के ग़ुरूब के बाद निकलना?

सवालः बारहवीं तारीख़ को हम ने रात में रमी का फ़ेल अदा किया, ग़ुरूब के बाद निकलने से तेरह का ठहरना ज़रूरी तो नहीं होगा, क्योंकि यहां पर लोगों ने बताया कि बारह को मिना से देर से निकलने पर तेरह की रमी करना वाजिब हो जाती है?

जवाबः बारहवीं तरीख़ का सूरज ग़ुरूब होने के बाद मिना से निकलना मकरूह है, मगर इस सूरत में तेरहवीं तारीख़ की रमी लाज़िम नहीं होती, बशर्तेकि सुब्ह सादिक़ से पहले मिना से निकल गया हो। और अगर मिना में तेरहवीं तारीख़ की सुब्ह सादिक़ होगी तो अब तेरहवीं तारीख़ की रमी भी वाजिब हो गई। अब अगर रमी किए बग़ैर मिना से जाएगा तो दम लाज़िम होगा। अलबत्ता तेरहवीं तारीख़ की रमी में ये सहूलत है कि ज़वाले आफ़ताब से पहले भी जाइज़ है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–135)

रमी के लिए कंकरियाँ दूसरों को दे कर चले जाना?

सवाल: इस मरतबा हज करने का इरादा भी और अपने वतन जा कर घर वालों के साथ ईद करने का भी। चांद की दस तारीख़ जुमेरात को है, इस तरह से हज जुमेरात को हो जाता है, लेकिन शैतान को कंकरियाँ मारने के लिए तीन दिन तक मिना में रुक्ना पड़ता है। हम चाहते हैं कि सुब्ह वाली फ़लाईट से अपने वतन रवाना हो जाएें और अपनी कंकरियाँ मारने के लिए किसी दूसरे को दे दें? क्या इस सूरत में हज के तमाम फ़राईज़ अदा हो जाते हैं या नहीं?

जवाब: जमरात की रमी वाजिब है, और उसके छोड़ने पर दम लाज़िम आता है। बारहवीं तारीख़ को ज़वाल के बाद रमी कर के जाना चाहें तो जा सकते हैं। अपनी कंकरियाँ किसी दूसरे के हवाले कर के खुद चले आना जाइज़ नहीं है। हज नाक़िस रहेगा। दम लाज़िम आएगा और क़स्दन हज का वाजिब छोड़ने की वजह से गुनहगार होंगे।

तअज्जुब है कि एक शख़्स इतना ख़र्च कर के आए और फिर हज को अधूरा और नाक़िस छोड़ कर भाग जाए। अगर एक साल ईद घर वालों के साथ न की जाए तो क्या हरज है?

वाज़ेह रहे कि जो शख़्स खुद रमी करने पर क़ादिर हो उसकी तरफ़ से किसी दूसरे शख़्स का रमी कर देना काफ़ी नहीं। बल्कि उसके ज़िम्मा बज़ाते खुद रमी करना लाज़िम है। अलबत्ता अगर कोई ऐसा बीमार हो या माजूर हो कि खुद जमरात तक आने की ताक़त नहीं रखता

उसकी तरफ़ से नियाबत जाइज़ है कि उसके हुक्म से दूसरा शख़्स उसकी तरफ़ से रमी कर दे।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–134)

किसी से कंकरियाँ मरवाना?

सवालः एक शख़्स बीमारी या कमज़ोरी की हालत में हज करता है अब वह जमरात की रमी किस तरह करे? क्या वह किसी दूसरे से रमी करा सकता है?

जवाबः जो शख़्स बीमारी या कमज़ोरी की वजह से खड़े हो कर नमाज़ न पढ़ सकता हो और जमरात तक पैदल या सवार होकर आने में सख़्त तकलीफ़ होती हो तो वह माज़ूर है। और अगर उसको आने में मरज़ बढ़ने या तकलीफ़ होने का अंदेशा नहीं है तो अब उसको खुद रमी करना ज़रूरी है और दूसरे से रमी कराना जाइज़ नहीं है। हाँ! अगर सवारी या उठाने वाला न हो तो वह माज़ूर है और माज़ूर दूसरे से रमी करा सकता है। जिसको माज़ूरी न हो उसका दूसरे के ज़रीआ रमी कराना जाइज़ नहीं है।

बहुत से लोग महज़ हुजूम की वजह से दूसरे को कंकरियाँ दे देते हैं, उनकी रमी नहीं होती, अलबत्ता सख़्त हुजूम में ज़ईफ़ व नातवाँ लोग पिस जाते हैं गो वह चलने से माज़ूर नहीं। लिहाज़ा उनके लिए रात को रमी करना अफ़ज़ल है। (आपके मसाइल जिल्द–1 सफ़्हा–132 व अहकामे हज सफ़्हा–74)

हुजूम के वक़्त ख़्वातीन का किसी से कंकरियाँ मरवाना?

सवालः हुजूम के वक़्त ख़्वातीन खुद कंकरियाँ मारने के बजाए दूसरों से कंकरियाँ मरवा सकती हैं या नहीं?

जवाबः रात के वक़्त रश नहीं होता, औरतों को उस वक़्त रमी करना चाहिए, ख़्वातीन की जगह किसी दूसरे का रमी करना सही नहीं है, अलबत्ता अगर कोई ऐसा मरज़ हो कि रमी करने पर क़ादिर न हो तो उसकी जगह रमी करना जाइज़ है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–132 व हज्जे बैतुल्लाह के अहम फ़तावा सफ़्हा–66)

रमी में औरतों की तरफ़ से मजबूरी में नियाबत

सवालः ज़ैद ने रमी जमरात में 12 तारीख़ को औरतों की तरफ़ से नियाबत की क्योंकि क़ाफ़िला चल रहा था, औरतों का रमी करना बहुत दुश्वार था, क्या ये रमी सही हुई या नहीं? या दम वाजिब होगा?

जवाबः रमी जिमार वाजिब है और तर्के वाजिब अगर बराबब किसी उज़्र के हो तो उसमें कुछ नहीं आता। पस इस सूरत में बसबब उज़्रे इज़्दिहाम के जो औरतों की रमी तर्क हुई तो उसमें दम वाजिब नहीं होगा। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–554 बहवाला बहरुराइक़ व रद्दुलमुहतार बाबुलजिनायात जिल्द–2 सफ़्हा–275)

रमी में माज़ूर की तारीफ़?

मस्अलाः जो शख़्स खड़े हो कर नमाज़ न पढ़ सकता हो या जमरात तक पैदल या सवार हो कर आने में सख़्त तकलीफ़ हो या मरज़ बढ़ जाने या मरज़ पैदा हो जाने का क़वी अंदेशा हो तो वह माज़ूर है।

(मुन्तख़बाते निज़ामुलफ़तावा सफ़्हा–157 बहवाला ज़ुब्दतुलमनासिक सफ़्हा–165)

मस्अलाः ऐसे मरीज़ और कमज़ोर और बूढ़े और अपाहिज

वग़ैरा की तरफ़ से रमी जमरात में नियाबत जाइज़ है जो अज़ खुद जमरात पहुंच कर रमी करने पर कुदरत नहीं रखते और रमी करने वाला नाइब बवक़्ते रमी उनकी तरफ़ से रमी की नियाबत करेगा। (गुनयतुलमनासिक सफ़्हा–100)

मस्अला: अगर माज़ूर का उज़्र दूसरे से रमी कराने के बाद रमी के वक़्त के रहते हुए ज़ाएल हो जाए तो भी दोबारा खुद रमी करना ज़रूरी नहीं रहता और न ही उन पर कोई फ़िदया लाज़िम है। (मुन्तख़बाते निज़ामुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–157 बहवाला जुब्दतुलमनासिक सफ़्हा–166 व मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–185)

दूसरे की तरफ़ से रमी करने का तरीक़ा

मस्अला: हर जमरा पर अपनी सात कंकरियाँ फेंकने के बाद ही दूसरे की तरफ़ से उसी वक़्त सात कंकरियों से रमी कर दी फिर दूसरे और तीसरे जमरा पर इसी तरह किया, यानी पहले अपनी सात कंकरियाँ ख़त्म कर के फिर दूसरे की तरफ़ से सात कंकरियाँ मारना जाइज़ है और आज कल शदीद इज़्दिहाम की वजह से इसमें सहूलत है।

मस्अला: माज़ूर की तरफ़ से दूसरे को रमी करने के लिए ये शर्त है कि वह उसको अपना नाइब बना कर खुद भेजे, यानी इजाज़त व इख़्तियार दे, अगर बग़ैर माज़ूर की इजाज़त के दूसरे ने रमी कर दी तो वह मोतबर नहीं, अलबत्ता बेहोश और छोटे बच्चों और मजनून की तरफ़ से उनके औलिया खुद बग़ैर इजाज़त के रमी कर दें तो ये जाइज़ है। (अहकामे हज सफ़्हा–75 व आपके मसाइल जिल्द–1 सफ़्हा–133)

रमी के ज़रूरी मसाइल

मस्अला: अगर किसी रोज़ की रमी उसके वक़्ते मुऐयना में न हो सकी तो क़ज़ा वाजिब होगी और दम भी वाजिब होगा। इसी तरह अगर बिल्कुल किसी रोज़ भी रमी नहीं की और रमी का वक़्त गुज़र गया तब भी एक ही दम वाजिब होगा।

मस्अला: रमी की क़ज़ा का वक़्त तेरहवीं के गुरूब तक है। गुरूब के बाद रमी का वक़्त ख़त्म हो जाता है और क़ज़ा का वक़्त नहीं रहता, सिर्फ़ दम वाजिब होता है।

मस्अला: अगर किसी ने दसवीं या ग्यारहवीं या बारहवीं को रमी नहीं की तो उस रोज़ के बाद वाली रात में रमी कर सकता है, मसलन दसवीं को रमी नहीं की तो दसवीं और ग्यारहवीं की दरमियानी शब में रमी जाइज़ है, क्योंकि अैयामे हज में बाद वाली रात पहले दिन की शुमार होती है।

मस्अला: रमी में कंकरियाँ पै दर पै (लगातार) मारना मसनून है, ताख़ीर और फ़ासिला कंकरियों में मकरूह है, नीज़ एक जमरा की रमी के बाद दूसरे जमरा की रमी में अलावा दुआ के ताख़ीर करना भी मकरूह है।

मस्अला: रमी करने के लिए कोई ख़ास हालत और हैअत शर्त नहीं, बल्कि जिस हालत में और जिस जगह खड़े हो कर रमी करेगा सही हो जाएगी, अलबत्ता उमूरे मज़कूरा की रिआयत मसनून है।

मस्अला: रमी हाथ से करना ज़रूरी है, अगर कमान या तीर वग़ैरा से रमी की तो सही न होगी।

मस्अला: सात कंकरियाँ अलाहिदा अलाहिदा मारना, अगर एक से ज़ाएद या सातों एक दफ़ा मारे तो एक ही

शुमार होगी, अगरचे सब अलग अलग गिरी हों, बाक़ी छः पूरी करना ज़रूरी होंगी।

मस्अलाः कम अक़्ल, मजनून, बच्चा और बेहोश अगर बिल्कुल रमी न करें तो उन पर फ़िदया वाजिब नहीं, अलबत्ता अगर मरीज़ रमी न करेगा तो तर्के रमी की जज़ा वाजिब होगी।

मस्अलाः औरत और मर्द के लिए रमी के अहकाम बराबर हैं, कोई फ़र्क़ नहीं, अलबत्ता औरत को रमी रात में करना अफ़ज़ल है।

मस्अलाः हर जमरा पर सात कंकरी से ज़्यादा क़स्दन मारना मकरूह है, शक हो जाने की वजह से ज़्यादा मारे तो कोई हरज नहीं। (मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा—187)

मस्अलाः तेरहवीं तारीख़ की रमी उस वक़्त वाजिब होती है जब कि मिना में तेरहवीं तारीख़ की सुब्ह हो जाए इस सूरत में अगर किसी ने सिर्फ़ तेरहवीं तारीख़ की रमी छोड़ दी तब भी दम वाजिब होगा।

(अहकामे हज सफ़्हा—104)

आज कल तरतीब बदलने पर दम क्यों?

सवालः यौमे नह्र के चार काम हैं। रमी, ज़िब्ह, सर मुंडवाना और तवाफ़े ज़ियारत करना। आंहज़रत (स.अ.व.) के ज़माना में सहाबए किराम (रज़ि.) से भूल की वजह से तरतीब में तक़द्दुम व तअख़्ख़ुर हुआ। हर शख़्स आ कर आप (स.अ.व.) से अर्ज़ करता है कि मुझ से बजाए इसके ऐसा हो गया। आंहज़रत (स.अ.व.) फ़रमाते हैं कोई गुनाह नहीं। अब उस तरतीब में तक़दीम व ताख़ीर हो तो दम वाजिब बताया जाता है, क्या वजह है?

जवाब: यौमे नहर के चार अफ़आल हैं। यानी रमी, ज़िब्ह, हल्क़ और तवाफ़े ज़ियारत। अव्वलुज़्ज़िक्र तीन चीजों में तक़दीम व ताख़ीर की सूरत में दम वजिब होगा, मगर तवाफ़े ज़ियारत और तीन अफ़आले मज़कूरा के दरमियान तरतीब वाजिब नहीं, बल्कि मुस्तहब है। पस अगर तवाफ़े ज़ियारत उनमें से पहले कर लिया जाए तो कोई दम लाज़िम नहीं।

हदीस शरीफ़ में इन तीन अफ़आल के आगे पीछे करने वालों को जो फ़रमाया गया है कि कोई हरज नहीं, हनफ़ीया (रह.) उसमें ये तावील करते हैं कि उस वक़्त अफ़आले हज की तशरीअ़ हो रही थी, इसलिए ख़ास मौक़ा पर भूल चूक कर तक़दीम व ताख़ीर करने वालों को गुनाह से बरी क़रार दिया। मगर चूंकि दूसरे दलाइल से उन अफ़आल में तरतीब का वजूब साबित होता है इसलिए दम वाजिब होगा। वल्लाहुआलम!

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–128)

मस्अला: हालते एहराम में ग़लती क़स्दन करे या भूल कर या ख़तअन मस्अला जानता हो या न जानता हो, अपनी खुशी से करे या किसी की ज़बरदस्ती से, सोते हुए या जागते हुए, नशा में हो या बे होश हो, मालदार हो या तंगदस्त, खुद करे या किसी के कहने पर, माज़ूर हो या ग़ैर माज़ूर, सब सूरतों में जज़ा वाजिब होगी।

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–242)

दम कहां अदा किया जाए?

मस्अला: हज व उम्रा के सिलसिला में जो दम वाजिब होता है, उसका हुदूदे हरम में ज़िब्ह करना ज़रूरी है।

दूसरी जगह ज़िब्ह करना दुरुस्त नहीं है। (आप पर अगर दम वाजिब हो और अपने वतन आ जाएं तो) आप किसी हाजी के हाथ इतनी रक़म भेज दें और उसको ताकीद कर दें कि वह वहां बकरा ख़रीद कर हुदूदे हरम में ज़िब्ह करा दे। उसका गोश्त सिर्फ़ फ़ुक़रा व मसाकीन खा सकते हैं, मालदार लोग नहीं खा सकते।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–129 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–299)

मस्अला: दम अदा होने के लिए मसाकीन का अदद शर्त नहीं है, अगर एक मिस्कीन को सारा गोश्त एक ही दफ़ा दे दिया जाए तब भी जाइज़ है।

मस्अला: दम का गोश्त हर फ़क़ीर को देना जाइज़ है। हरम शरीफ़ का फ़क़ीर होना शर्त नहीं। और हरम में सदक़ा करना भी शर्त नहीं, इसलिए अगर हरम से निकल कर फ़ुक़रा को दे दिया तो भी जाइज़ है, सिर्फ़ हरम में ज़िब्ह करना शर्त है। अलबत्ता हरम के फ़ुक़रा को देना अफ़ज़ल है, लेकिन अगर दूसरे फ़ुक़रा हरम के फ़ुक़रा से ज़्यादा मुहताज हों तो उनको देना अफ़ज़ल है।

मस्अला: दम के बदला क़ीमत देना जाइज़ नहीं, अलबत्ता अगर किसी ने अपने दम से खा लिया कि जिससे खाना जाइज़ नहीं था या उसको तलफ़ कर दिया तो उस खाये हुए और तलफ़ किए हुए की क़ीमत का सदक़ा करना वाजिब है। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–264)

क्या हाजी पर ईद की भी कुर्बानी वाजिब है?

सवाल: [illegible] यहां हज के दौरान एक कुर्बानी वाजिब है या दो वाजिब हैं?

जवाबः जो हाजी साहबान मुसाफ़िर हों, उन्होंने हज्जे तमत्तोअ़ या क़िरान किया हो उन पर सिर्फ़ (एक) हज की कुर्बानी वाजिब है। और अगर उन्होंने हज्जे इफ़राद किया हो (हज्जे इफ़राद ये है कि मीक़ात से गुज़रते वक़्त सिर्फ़ हज का एहराम बांधा जाए। उसके साथ उम्रा का एहराम न बांधा जाए (उम्रा की नीयत न हो) हज से फ़ारिग़ होने तक ये एहराम रहेगा) तो उनके ज़िम्मा कोई कुर्बानी वाजिब नहीं। और जो हाजी मुसाफ़िर न हों बल्कि मुक़ीम हों उन पर बशर्ते इस्तिताअ़त ईद की कुर्बानी भी वाजिब है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–136)

मस्अलाः हज्जे इफ़राद में कुर्बानी नहीं होती। ख़्वाह पहला हज हो या दूसरा, तीसरा। तमत्तोअ़ या क़िरान हो तो कुर्बानी लाज़िम होती है, ख़्वाह पहला हो या दूसरा या तीसरा। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–136)

मस्अलाः कुर्बानी दो तरह की होती है, एक कुर्बानी तो वह है जो साहबे निसाब मुक़ीम पर वाजिब होती है ख़्वाह हज करने जाए या न जाए।

अगर हाजी साहबे निसाब है और मक्का मुकर्रमा या मदीना तैयबा का मकीन भी, पन्द्रह दिन से ज़्यादा क़याम की नीयत करे तो ये कुर्बानी वाजिब हो जाएगी। इसके बारे में इख़्तियार है चाहे तो मक्का मुकर्रमा में या मदीना तैयबा में या घर पर ही (अपने वतन में) करने का इंतिज़ाम करे या अपने वतन में इस कुर्बानी के लिए रक़म भेज दे या दे कर आए कि वतन के लोग वतन में उसकी तरफ़ से कुर्बानी कर दें। (मुन्तख़बाते निज़ामुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–148 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–219)

मस्अला: हज में सफ़र के दौरान हाजी सफ़र में होता है इसलिए उस पर ईदुलअज़हा की कुर्बानी वाजिब नहीं, अलबत्ता हाजी ने हज्जे तमत्तोअ़ या किरान का एहराम बांधा है तो उस पर हज की कुर्बानी वाजिब होगी, ईदुलअज़हा की नहीं, अलबत्ता ईदुलअज़हा की कुर्बानी भी कर ले तो सवाब होगा। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–136 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–185)

कुर्बानी के तीन दिन हैं?

मस्अला: कुर्बानी के तीन दिन मुकर्रर हैं, ईद का दिन और उसके बाद दो दिन, ये दिन क़िरान या तमत्तोअ़ की कुर्बानी के हैं, इस कुर्बानी को जमरए अक़बा पर कंकरियाँ मारने के बाद ज़िब्ह करना चाहिए, अगर इन अैयामे नह्र के बाद ज़िब्ह किया तो तब भी कुर्बानी हो जाएगी, लेकिन इस ताख़ीर के बाइस भी कुर्बानी लाज़िम होगी।

(कुर्बानी तक एहराम की पाबंदियाँ लाज़िम होंगी)

मस्अला: क़िरान और तमत्तोअ़ की कुर्बानियों के अलावा किसी और कुर्बानी के ज़िब्ह करने के लिए वक़्त की कोई पाबंदी नहीं है, लेकिन ज़िब्ह बहरहाल हरम में होना चाहिए। और जो कुर्बानी अैयामे नह्र में ज़िब्ह की जाए उसे मिना में ज़िब्ह करना सुन्नत है। अलबत्ता नज़्र की कुर्बानी हो तो उसको हरम में ज़िब्ह करने की पाबंदी नहीं है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1146)

हज में कुर्बानी करें या दमे शुक्र?

सवाल: एक मौलवी साहब ने बताया कि कुर्बानी के दिनों में जो कुर्बानी होती है वह दम है हज का। और कुर्बानी करना हाजी पर ज़रूरी नहीं, क्योंकि वह मुसाफ़िर

होता है?

जवाब: जिस शख़्स का हज्जे तमत्तोअ़ या क़िरान हो उस पर हज की वजह से कुर्बानी वाजिब है, उसको दमे शुक्र कहते हैं। इसी तर अगर हज या उम्रा में कोई गलती हुई हो तो उसकी वजह से बाज़ सूरतों में कुर्बानी वाजिब होती है उसको "दम" कहते हैं। बक़रईद की आ़म कुर्बानी दो शर्तों के साथ वाजिब है, एक ये कि आदमी मुक़ीम हो, मुसाफ़िर न हो, दोम ये कि हज के ज़रूरी इख़राजात अदा करने के बाद उसके पास कुर्बानी की गुंजाईश हो। अगर मुक़ीम नहीं तो कुर्बानी वाजिब नहीं और अगर हज के ज़रूरी इख़राजात के बाद कुर्बानी की गुंजाईश नहीं तब भी उसके ज़िम्मा कुर्बानी वाजिब नहीं। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–137 व अहकामे हज व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1143)

मस्अला: हज्जे तमत्तोअ़ या क़िरान में जो जानवर मिना में ज़िब्ह किया जाता है उसे "दमे शुक्र" कहते हैं, और ईद की कुर्बानी से अलग वाजिब है। हाजी पर सफ़र की वजह से ईद की कुर्बानी वाजिब नहीं, अलबत्ता अगर कोई 8 ज़िलहिज्जा से कम अज़ कम 15 रोज़ क़ब्ल मक्का मुकर्रमा में आकर रहा तो वह मुक़ीम हो गया। इसलिए कुर्बानी के दिनों में अगर वह साहबे निसाब हो तो उस पर दमे शुक्र के अलावा ईद की कुर्बानी भी वाजिब है। ख़्वाह मिना में ज़िब्ह करे या अपने वतन में कराये, अगर किसी ने दमे शुक्र को ईद की कुर्बानी समझ कर अदा किया तो दमे शुक्र अदा नहीं हुआ, अगर दमे शुक्र अदा करने से पहले एहराम खोल दिया तो उस

पर दमे शुक्र के अलावा एक और दम भी वाजिब हो जाएगा, और अगर ऐयामे नह्र के अन्दर दमे शुक्र नहीं दिया तो ताख़ीर की वजह से तीसरा दम वाजिब हो जाएगा। इस तरह उसे चार जानवर ज़िब्ह करने पड़ेंगे।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–568 किताबुलहज)

हज में कुर्बानी से पहले रक़म चोरी हो गई?

सवालः मिना में कुर्बानी करने से पहले किसी की रक़म चोरी हो गई, अब वह कुर्बानी नहीं कर सकता तो क्या करे?

जवाबः अगर सिर्फ़ हज्जे इफ़राद था तो उस पर कुर्बानी वाजिब नहीं, और अगर हज्जे तमत्तोअ़ या क़िरान था तो हल्क़ कर के (बाल मुडवा कर) एहराम खोल डाले, और जब कुदरत हो तो एक जानवर बनीयते दमे शुक्र हुदूदे हरम में ज़िब्ह करे या ज़िब्ह करवा दे और उस पर दमे जिनायत भी नहीं, क्योंकि ये माज़ूर है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–525 बहवाला बहरुर्राइक़ जिल्द–2 सफ़्हा–362)

ये शक्ल जब ही हो सकती है कि रक़म बिल्कुल न रहे और न साथी से क़र्ज़ मिले।

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

मस्अलाः अगर कोई शख़्स कुर्बानी की ताक़त नहीं रखता (गुंजाईश नहीं) तो उसे ऐयामे हज में तीन रोज़े रखने होंगे, सात रोज़े अपने मुल्क वापस जाने के बाद।

(हज्जे बैतुल्लाह के अहम फ़तावा सफ़्हा–14)

किसी इदारा को रक़म दे कर कुर्बानी करवाना?

सवालः कुर्बानी के लिए मक्का मुकर्रमा में मदरसा

"सौलतिया" में रक़म जमा करवाई, अपने हाथ से ये क़ुर्बानी नहीं की ये अमल सही हुआ या नहीं?

जवाबः हाजी को मुज़दलिफ़ा से मिना आ कर चार काम करने होते हैं। (1) रमी (2) क़ुर्बानी (3) हल्क (बाल मुडवाना) (4) तवाफ़े इफ़ाज़ा। पहले तीन कामों में तरतीब वाजिब है यानी सब से पहले रमी करे फिर क़ुर्बानी करे (जब कि हज्जे तमत्तोअ़ या क़िरान का हो) उसके बाद बाल कटवाए, अगर उन तीन कामों में तरतीब क़ाइम न रही मसलन रमी से पहले क़ुर्बानी कर दी या हल्क़ करा लिया, या क़ुर्बानी से पहले हल्क़ करा लिया तो दम वाजिब है।

अब आप ने जो मदरसा सौलतिया में रक़म जमा करवाई तो ज़रूरी था कि वह क़ुर्बानी आपकी रमी के बाद और हल्क़ से पहले हो, अगर आप ने रमी नहीं की थी और उन्होंने आपकी तरफ़ से क़ुर्बानी कर दी तो दम लाज़िम आया या उन्होंने क़ुर्बानी नहीं की थी और आप ने हल्क़ करा लिया तब भी दम लाज़िम आ गया, उनसे तहक़ीक़ कर ली जाए कि उन्होंने क़ुर्बानी किस वक़्त की थी।

ये हुक्म उस सूरत में है जबकि आप ने हज्जे क़िरान या तमत्तोअ़ किया हो, लेकिन अगर आप ने सिर्फ़ हज्जे मुफ़रिद किया था तो क़ुर्बानी आप के ज़िम्मा वाजिब नहीं थी, आप रमी के बाद हल्क़ करा सकते हैं।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–138)

बैंक के ज़रीआ क़ुर्बानी करवाना?

मस्अलाः जिस शख़्स का हज तमत्तोअ़ या क़िरान का हो उसके ज़िम्मा क़ुर्बानी वाजिब है और ये भी वाजिब

है कि पहले कुर्बानी की जाए उसके बाद हल्क़ कराया जाए। अगर कुर्बानी से पहले हल्क़ करा लिया दम लाज़िम होगा। आप ने बैंक में जो रक़म जमा कराई, आप को कुछ मालूम नहीं कि आप के नाम की कुर्बानी हो जाने के बाद आप ने हल्क़ कराया या पहले करा लिया। इसलिए एहतियातन दम लाज़िम है।

मस्अला: जो लोग बैंक में कुर्बानी की रक़म जमा करा देते हैं उनके लिए ज़रूरी है कि बैंक वालों से वक़्त का तअैयुन करा लें और फिर कुर्बानी के दिन कुर्बानगाह में अपना आदमी भेज कर अपने नाम से कुर्बानी को ज़िब्ह करा दें उसके बाद हल्क़ कराऐं। जब तक किसी हाजी को ये मालूम न हो कि उसकी कुर्बानी हो चुकी है या नहीं उस वक़्त तक उसका हल्क़ (बाल कटवाना) जाइज़ नहीं, वरना दम लाज़िम आएगा। इसलिए या तो उस तरीका पर अमल किया जाए जो मैंने लिखा है या फिर बैंक में रक़म जमा ही न कराई जाए, बल्कि अपने तौर पर कुर्बानी का इंतिज़ाम किया जाए।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–139 तफ़सील के लिए देखिए फ़तावा रहीमिया जिल्द–10 सफ़्हा–184)

हनफ़ी मस्लक के लोगों को इस मआमला में बहुत एहतियात की ज़रूरत है, क्योंकि मस्लके हंबली में तरतीब वाजिब नहीं है इसलिए बैंक या मुअल्लिम के तवस्सुत से अगर कुर्बानी की जाती है और रमी, कुर्बानी, हल्क़ में तरतीब बदल जाती है तो उनके यहां पर दम नहीं होता, मगर हनफ़ी मस्लक

में तरतीब बदल जाने से दम लाज़िम हो
होता है। (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

एक कुर्बानी पर दो शख़्स दावा करें तो?

सवालः हज के दौरान मेरे दोस्त ने वहां मौजूद क़साई को कुर्बानी के लिए रक़म अदा की। जब जानवर ज़िब्ह हो गया तो मेरे दोस्त ने उसमें से कुछ गोश्त निकालना चाहा तो वहां कुछ लोग आ गए और उन्होंने कहा कि ये जानवर हमारा है, क़साई को हम ने इसकी रक़म अदा की, तहक़ीक़ करने पर मालूम हुआ कि क़साई ने दोनों पार्टियों से अलग अलग पैसे लिए और एक ही जानवर ज़िब्ह कर दिया। क्या मेरे दोस्त की कुर्बानी का फ़र्ज़ अदा हो गया या दोबारा करनी होगी?

जवाबः चूंकि क़साई ने दूसरी पार्टी से पहले सौदा किया था, इसलिए वह जानवर उनका था, पता चलने पर आप के दोस्त को अपनी रक़म वापस लेकर दूसरा जानवर ख़रीद कर ज़िब्ह करना चाहिए था। बहरहाल कुर्बानी उनके ज़िम्मा बाक़ी है और चूंकि उन्होंने कुर्बानी से पहले एहराम उतार दिया इसलिए एक दम इसका भी उनके ज़िम्मा लाज़िम आया।

अब दो कुर्बानियाँ करे। और ये मस्अला उस सूरत में है जबकि उनका एहराम तमत्तोअ़ या क़िरान का हो और अगर हज्जे इफ़राद का एहराम था तो उनके ज़िम्मा कोई चीज़ भी वाजिब नहीं है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–140)

मस्अलाः हज की कुर्बानी के अहकाम मिस्ल ईदुलअज़्हा की कुर्बानी के हैं, जो जानवर वहां जाइज़ है यहां भी

जाइज़ है और जिस तरह वहां ऊँट, भैंस, गाय में सात आदमी शरीक हो सकते हैं। यहां भी शरीक हो सकते हैं।

मस्अला: मिना में चूंकि ईदुलअज़हा की नमाज़ नहीं होती, इसलिए वहां पर ज़िब्ह के लिए नमाज़े ईद का पहले होना शर्त नहीं है। (लेकिन कुर्बानी का रमी के बाद होना शर्त और उसके बाद हलक़।)

(मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–174)

हाजी किस कुर्बानी का गोश्त खा सकता है?

मस्अला: हज्जे तमत्तोअ या हज्जे क़िरान करने वाला एक ही सफ़र में हज व उम्रा अदा करने की बिना पर जो कुर्बानी करता है उसे दमे "शुक्र" कहा जाता है। उसका हुक्म भी आम कुर्बानी जैसा है, उससे ख़ुद कुर्बानी करने वाला, अमीर व ग़रीब सब खा सकते हैं, अलबत्ता जिन लोगों पर हज व उम्रा में कोई जिनायत (ग़लती) करने की वजह से दम वाजिब होता है वह दमे "जब्र" कहलाता है। उसका फ़ुक़रा व मसाकीन में सदक़ा करना ज़रूरी है। मालदार और दम देने वाला ख़ुद उसको नहीं खा सकता। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–140)

मस्अला: कुर्बानी का गोश्त कुर्बानी करने वाले को खाना मुस्तहब है, लेकिन नज़्र (मन्नत की) और दम की कुर्बानी का गोश्त नहीं खा सकता, अगर खा लिया तो उस क़दर गोश्त की क़ीमत फ़क़ीरों को अदा करना चाहिए क्योंकि वह सदक़ा है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1148)

तरतीब क़ाइम न रहने पर गुंजाईश की शक्ल

मस्अला: नई सूरतेहाल में हनफ़ी हुज्जाजे किराम के

लिए रमी, कुर्बानी और हल्क़ के दमियान तरतीब क़ाइम रखना बहुत मुश्किल होता जा रहा है, हुकूमते सऊदिया का पूरा ज़ोर इस पर है कि लोग कुर्बानी खुद अपने हाथ से करने के बजाए बैंकों से कुर्बानी के टोकन ख़रीद लें और मुतमईन हो जाऐं। इसी तरह की मुश्किलात के मदावे के लिए इदारतुलमबाहिसिलफ़िक्हीया जमीअतुलउलमाए हिन्द के छटे फ़िक्ही इजतिमाअ मुनअक़द 16 ता 18 ज़ीक़ादा 1417 जिहरी में हनफ़ी हुज्जाज को सहूलत देते हुए ये तजवीज़ मंजूर की गई है: मुतमत्तेअ और क़ारिन के लिए रमी, ज़िब्ह और हल्क़ के दरमियान इमाम आज़म के क़ौल पर जो मुफ़्ता बिही है, तरतीब लाज़िम है, उसके तर्क करने से दम वाजिब हो जाता है, जबकि साहिबैन के नज़दीक ये तरतीब सुन्नत है उसके तर्क पर दम लाज़िम नहीं है। आज कल हुज्जाज, इज़्दिहाम या दीगर परेशान कुन आज़ार के पेशे नज़र अगर तरतीब क़ाइम न रख सकें तो साहिबैन के क़ौल पर अमल की गुंजाईश है।

इस तजवीज़ का मक़्सूद ये है कि अव्वलन तो पूरी कोशिश ये की जाए कि तरतीब क़ाइम रहे ख़्वाह उसके लिए कुछ दिक़्क़त ही उठानी पड़े, लेकिन अगर कोशिश के बावजूद तरतीब बाक़ी रहने की कोई शक्ल न रहे तो साहिबैन के क़ौल पर अमल करते हुए दम वाजिब न होगा। (निदाए शाही जनवरी 2001 सफ़्हा–175)

मिना व मैदाने अरफ़ात में जुमा आ जाए तो?

आप (स.अ.व.) के आख़िरी हज के दिन यानी उस साल वक़ूफ़े अरफ़ा के दिन जुमा का दिन था आंहज़रत (स.अ.व.) ने ज़वाल के बाद पहले खुतबा हज्जतुलवदा का

दिया, उसके बाद जुहर व अस्र की दोनों नमाजें जुहर ही के वक़्त में साथ साथ बिला फ़स्ल पढ़ीं।

हदीस शरीफ़ में साफ़ जुहर की नमाज़ का ज़िक्र है जिससे ज़ाहिर है कि आप (स.अ.व.) ने उस दिन जुमा की नमाज़ नहीं पढ़ी, बल्कि उसके बजाए जुहर पढ़ी और जो ख़ुतबा आप (स.अ.व.) ने दिया वह जुमा का ख़ुतबा नहीं था, बल्कि यौमुलअरफ़ात का ख़ुतबा था। जुमा न पढने की वजह ग़ालिबन ये थी कि अरफ़ात कोई आबादी और बस्ती नहीं है, बल्कि वादी, सेहरा है और जुमा बस्तियों में और आबादियों में पढ़ा जाता है।

(मआरिफ़ुल हदीस जिल्द–4 सफ़्हा–231)

मस्अला: मैदाने अरफ़ात में नमाज़े जुमा जाइज़ नहीं है। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–157)

मस्अला: अगर आठवीं तारीख़ को जुमा हो तो ज़वाल से पहले मिना को जाना है और अगर ज़वाल तक न गया तो ज़वाल के बाद जुमा पढ़ना वाजिब है फिर नमाज़े जुमा से क़ब्ल जाना मना है। जुमा की नमाज़ पढ़ कर ही जाए। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–153)

मस्अला: अगर मिना के अैयाम (10, 11, 12, 13 ज़िलहिज्जा) में जुमा का दिन पड़ जाए तो वहाँ (मिना में) जुमा क़ाइम करना ज़रूरी होगा, अगर मस्जिद में नमाज़े जुमा क़ाइम न हो तो ख़ेमों में अलग अलग जमाअतों के साथ जुमा की नमाज़ पढ़ी जाएगी, इसलिए कि ये भी मुकम्मल शहर के दर्जा में हो चुका है, हुज्जाजे किराम इसका ख़ास ख़्याल रखें। क्योंकि मक्का मुकर्रमा की आबादी मिना से भी तजावुज़ हो चुकी है और मिना मक्का मुकर्रमा

का एक मुहल्ला जैसा हो गया है। (निदाए शाही सफ़्हा—174 हज व ज़ियारत नम्बर जनवनी 2001)

मिना से मक्का मुकर्रमा को वापसी पर क्या करना है?

मिना से तीनों जमरात की रमी से फ़ारिग़ हो कर मक्का मुअज़्ज़मा वापस आने पर आपके ज़िम्मा हज के कामों में से सिर्फ़ एक तवाफ़े वदाअ़ बाक़ी रहा है जो मक्का मुकर्रमा से वापस होने के वक़्त वाजिब है। मीक़ात से बाहर रहने वालों पर वाजिब है कि जब मक्का शरीफ़ से वापस जानें लगें तो रुख़्सती तवाफ़ करें और ये हज का आख़िरी वाजिब है और इस में हज की तीनों क़िसमें बराबर हैं, क्योंकि हर क़िस्म का हज करने वाले पर वाजिब है। और जब तक मक्का मुकर्रमा में क़याम रहे दूसरे नफ़्ली तवाफ़ अपनी कुदरत के मुताबिक़ कसरत से करता रहे और दीगर इबादत भी करता रहे।

मस्अला: जो औरत हज के सब अरकान व वाजिबात अदा कर चुकी है और उसका महरम रवाना होने लगे और औरत को उसी वक़्त हैज़ या निफ़ास शुरू हो जाए तो तवाफ़े वदाअ़ उस औरत के ज़िम्मा वाजिब नहीं रहता, उसको चाहिए कि मस्जिदे हराम में दाख़िल न हो, मगर दरवाज़ा के पास खड़ी हो कर दुआ मांग कर रुख़्सत हो जाए। नीज़ औरत पर उज़्र की वजह से दम वाजिब नहीं होगा।

मस्अला: तवाफ़े वदाअ़ के लिए नीयत भी ज़रूरी नहीं है अगर वापसी से पहले कोई तवाफ़ नफ़्ली कर लिया है तो वह तवाफ़े वदाअ़ के क़ाइम मक़ाम हो जाता है, लेकिन अफ़ज़ल यही है कि मुस्तक़िल नीयत से वापसी के ऐन

वक़्त पर ये तवाफ़ करे।

मस्अला: अगर तवाफ़े वदाअ़ करने के बाद किसी ज़रूरत से फिर मक्का में क़याम करे तो फिर चलने के वक़्त (अगर वक़्त हो तो) तवाफ़े वदाअ़ का इआदा मुस्तहब है।

मस्अला: तवाफ़े वदाअ़ के बाद दोगाना तवाफ़ पढ़े फिर क़िब्ला रुख़ खरे हो कर ज़मज़म पीये फिर हरम शरीफ़ से रुख़्सत हो।

मस्अला: तवाफ़े वदाअ़ रोज़मर्रा के लिबास में किया जाएगा और उस तवाफ़ में रमल नहीं है और न बाद में सअ़ी है।

मस्अला: तवाफ़े वदाअ़ से पहले मक्का मुकर्रमा में क़याम के जमाना में ये भी इख़्तियार है कि उम्रे ज़्यादा करता रहे जिसके लिए हुदूदे हरम से बाहर जा कर (मस्जिदे आइशा वग़ैरा से) एहराम बांधना ज़रूरी है। (अहकामे हज सफ़्हा–85 व मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–187)

बाज़ हज़रात बारहवीं या तेरहवीं तारीख़ को कंकरियाँ मारने से क़ब्ल मिना से मक्का आते हैं और तवाफ़े वदाअ़ करते हैं, फिर मिना जा कर कंकरियाँ मारते हैं और वहीं से अपने शहर या मुल्क की तरफ़ वापस हो जाते हैं। ऐसी सूरत में आख़िरी काम रमी जिमार होता है न कि तवाफ़े बैतुल्लाह, जबकि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) का फ़रमान है– "मक्का मुकर्रमा से रवानगी से क़ब्ल आख़िरी काम बैतुल्लाह का तवाफ़ होना चाहिए।" इसलिए ज़रूरी है कि तवाफ़े वदाअ़ (रुख़्सती तवाफ़) हज के कामों से फ़राग़त के बाद और मक्का मुकर्रमा से सफ़र के कुछ पहले होना चाहिए।

नीज़ बाज़ हज़रात तवाफ़े वदाअ के बाद मस्जिदे हराम से उलटे पाँव और कअबा की तरफ़ हाथ हिलाते हुए वापस निकलते हैं और रुख़ बैतुल्लाह की तरफ़ होता है, वह समझते हैं कि इसमें ख़ानए कअबा की ताज़ीम है हालांकि ये सरा सर बिदअत है। दीन में इसकी कोई हकीकत नहीं है, ऐसा करना रसूलुल्लाह (स.अ.व.) या सहाबए किराम (रज़ि.) से मनकूल नहीं है। और उलटे पाँव चलने में ख़ुद के चोट लगने और दूसरों को इज़ा का अंदेशा है।

> इस आख़िरी तवाफ़े वदाअ के मौक़ा पर जो कुछ चाहें दिल खोल कर अपने लिए और अपने अइज़्ज़ा व अक़ारिब के लिए दुआऐं मांगें। मग़फ़िरत, सेहत व तंदुरुस्ती, सलामतीये ईमान, दोबारा हज व उम्रा और कारोबार में ख़ैर व बरकत व ख़ातमा बिलख़ैर ग़रज़ जो भी मुरादें हों मांग कर हुज़्न व मलाल के साथ वापसी करें और अहक़र को भी अपनी दुआओं में याद रख लें।
>
> (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

तवाफ़े वदाअ की हिकमत

हदीस शरीफ़: हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ि.) फ़रमाते हैं कि लोग (हज से फ़ारिग़ हो कर मिना से) हर तरफ़ चल देते थे। पस रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने फ़रमाया– "तुम में से कोई हरगिज़ कूच न करे, यहां तक कि उसकी आख़िरी मुलाक़ात बैतुल्लाह से हो जाए। मगर बेशक आप (स.अ.व.) ने हाएज़ा से हुक्म हलका किया।"

(मिश्कात शरीफ़ हदीस-2668)

तशरीहः तवाफ़े वदाअ़ कर के ही वतन लौटने में दो हिकमतें हैं।

पहली हिकमतः मनासिक की तरतीब में ग़ौर करने से मालूम होता है कि सफ़रे हज का अहम मक़्सद बैतुल्लाह की ताज़ीम व तकरीम और उसके साथ अपनी वाबस्तगी का इज़हार है। चुनांचे मक्का मुकर्रमा में हाज़िरी के बाद सब से पहला अमल तवाफ़े कुदूम है यानी हाज़िरी का तवाफ़। मस्जिदे हराम में दाख़िल होते ही ये तवाफ़ किया जाता है। तहीयतुलमस्जिद भी नहीं पढ़ी जाती। फिर हज से फ़ारिग़ होने के बाद आफ़ाक़ी जब वतन की तरफ़ को रुख़ करता है तब भी यही हुक्म है कि आख़िरी वदाई तवाफ़ कर के लौटे। ये इस बात की मंज़र कशी है कि मक़्सूद सिर्फ़ बैतुल्लाह ही है।

दूसरी हिकमतः लोग जब बादशाहों से रुख़सत होते हैं तो अलवदाई मुलाक़ात कर के ही कूच करते हैं। तवाफ़े वदाअ़ में उसकी मुवाफ़क़त पेशे नज़र है यानी हुज्जाजे किराम को भी जो बारगाहे ख़ुदावंदी में हाज़िर हुए हैं, अल्लाह पाक से मुलाक़ात कर के अपने वतनों को मुराज़अ़त करनी चाहिए और अल्लाह तआ़ला की मुलाक़ात की यही सूरत है कि उसके घर के फेरे लगा कर लौटे क्योंकि उसकी हस्ती ग़ैर महसूस है।

(रहमुतुल्लाहिलवासिआ़ जिल्द-4 सफ़्हा-214)

तवाफ़े वदाअ़ कब किया जाए?

सवालः क्या तवाफ़े वदाअ़ के बाद हरम शरीफ़ में न जाना चाहिए यानी मग़रिब बाद अगर तवाफ़े वदाअ़ किया

और इशा के बाद मक्का मुकर्रमा से जाना है, (रवानागी है) तो इशा की नमाज़ के लिए हरम शरीफ़ में न जाए। क्या ये ख़्याल दुरुस्त है?

जवाबः अगर किसी ने तवाफ़े वदाअ़ कर लिया और उसके बाद मक्का मुकर्रमा में रहा तो वह मस्जिदे हराम में जा सकता और उस पर तवाफ़े वदाअ़ का इआ़दा वाजिब नहीं। अलबत्ता बेहतर ये है कि जब मक्का शरीफ़ से चलने लगे (वक़्त हो) तो तवाफ़े वदाअ़ करे ताकि आख़िरी मुलाक़ात बैतुल्लाह के साथ हो। (दूसरा तवाफ़ करे ताकि निकलने के साथ उसका तवाफ़ मुत्तसल हो) अलग़रज़ ये ख़्याल कि तवाफ़े वदाअ़ के बाद हरम शरीफ़ में नहीं जाना चाहिए ग़लत है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–149)

मस्अलाः मक्का मुकर्रमा से वापसी रुख़सत होने का तवाफ़ यानी तवाफ़े वदाअ़ फ़र्ज़ नहीं है वाजिब है, उसके तर्क से सिर्फ़ एक दम लाज़िम आता है। वापस जाने की और उस तवाफ़ को करने की ज़रूरत नहीं सिर्फ़ दम देना होगा हरम शरीफ़ में।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–551)

तवाफ़े वदाअ़ अगर रह जाए?

सवालः इस साल ख़ानए कअ़बा के हादसा की वजह से बहुत से हाजी साहबान को ये सूरत पेश आई कि हादसे से पहले वह जब तक मक्का शरीफ़ में रहे नफ़्ली तवाफ़ करते रहे मगर आते वक़्त तवाफ़े वदाअ़ की नीयत से तवाफ़ नहीं कर सके?

जवाबः फ़तहुलक़दीर जिल्द–2 सफ़्हा–88 में है–

"मुस्तहब तो ये है कि इरादए सफ़र के वक़्त तवाफ़े वदाअ़ करे। लेकिन उसका वक़्त तवाफ़े ज़ियारत के बाद शुरू होता है। जबकि सफ़र का अज़्म हो। (मक्का मुकर्रमा रहने का इरादा न हो।)

रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–523 में है कि– "अगर सफ़र का इरादा होने के बाद नफ़्ल की नीयत से तवाफ़ करें तो तवाफ़े वदाअ़ के क़ाइम मक़ाम हो जाएगा। इस इबारत से दो बातें मालूम हुई हैं।

एक ये कि तवाफ़े वदाअ़ का वक़्त तवाफ़े ज़ियारत के बाद शुरू हो जाता है बशर्तेकि हाजी मक्का शरीफ़ में रिहाईश पज़ीर होने की नीयत न रखता हो, बल्कि वापसी का अज़्म रखता हो।

दूसरी बात ये मालूम हुई कि तवफ़े वदाअ़ के वक़्त में अगर नफ़्ल की नीयत से तवाफ़ कर लिया जाए तब भी तवाफ़े वदाअ़ हो जाता है। अलबत्ता मुस्तहब ये है कि वापसी के इरादा के वक़्त तवाफ़े वदाअ़ करे। इससे मालूम हुआ कि जिन हज़रात ने तवाफ़े ज़ियारत के बाद नफ़्ली तवाफ़ किए हैं उनका तवाफ़े वदाअ़ अदा हो गया। उनके ज़िम्मा दम वाजिब नहीं है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–150 बहवाला तहतावी जिल्द–2 सफ़्हा–544 व रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–255)

मस्अला: जिसने तवाफ़े ज़ियारत के बाद कोई नफ़्ली तवाफ़ कर लिया वह तवाफ़े वदाअ़ का क़ाइम मक़ाम हो गया। इसलिए उस पर दम वाजिब नहीं और अगर नफ़्ल तवाफ़ नहीं किया तो उस पर दम वाजिब है, क्योंकि ये उज़्र (कई दिन तक मस्जिदे हराम बंद रही बवज्हे बाग़ियों

और मुद्दइयाने महदवीयत बंद रही) बंदों की जानिब से है जो मुस्क़ित हक़्क़ुल्लाह तआला नहीं।

उज़्र की वजह से तर्के वाजिब में तीन क़ौल हैं: एक ये कि उज़्र मुतलक़न मुस्क़िते दम है। दूसरा ये कि जिन आज़ार का मुस्क़िते होना मनसूस है उनके सिवा दूसरे आज़ार मुस्क़ित दम नहीं। तीसरा ये कि उज़्र बंदों की तरफ़ से न हो, उज़्रे समावी मुस्क़ित है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द-4 सफ़्हा-530)

तवाफ़े वदाअ़ का तरीक़ा

सवाल: क्या तवाफ़े वदाअ़ में रमल, इज़्तिबाअ़ और सअ़ी होगी?

जवाब: तवाफ़े वदाअ़ उस तवाफ़ को कहते हैं जो अपने वतन को वापसी के वक़्त बैतुल्लाह शरीफ़ से रुख़्सत होने के लिए किया जाता है। ये सादा तवाफ़ होता है। उसमें रमल और इज़्तिबाअ़ नहीं किया जाता। न उसके बाद सअ़ी होती। रमल और इज़्तिबाअ़ ऐसे तवाफ़ में मसनून है जिसके बाद सअ़ी हो।

(आपके मसाइल जिल्द-4 सफ़्हा-150)

(तवाफ़े वदाअ़ को तवाफ़े सद्र और तवाफ़े वाजिब व तवाफ़े इज़ाफ़ा और तवाफ़े रुख़्सत भी कहते हैं।)

तवाफ़े वदाअ़ किस पर वाजिब है?

सवाल: अक्सर मुक़ीमीन, जद्दा से मुअ़ल्लिम का इंतिज़ार करते हैं, जो जद्दा से सीधे मिना वग़ैरा और बारह तारीख़ को ज़वाल के बाद मिना से सीधे जद्दा ले जाते हैं तो इस तरह तवाफ़े वदाअ़ करना मुश्किल हो जाता है। क्या तवाफ़े वदाअ़, तवाफ़े ज़ियारत के बाद एक और तवाफ़

कर लेने से अदा हो जाता है?

जवाबः अह्ले जद्दा पर तवाफ़े वदाअ़ वाजिब नहीं, आफ़ाक़ी पर (जो शख़्स मीक़ात से बाहर रहता हो) वाजिब है। और तवाफ़े ज़ियारत के बाद अैयामे नह्र में भी (तवाफ़े वदाअ़) जाइज़ है अगरचे रमी बाक़ी है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–529 व अहकामे हज सफ़्हा–84)

मस्अलाः तवाफ़े वदाअ़ बाहर के रहने वाले हाजी पर वाजिब है, ख़्वाह हज्जे इफ़राद किया हो या क़िरान या तमत्तोअ़, बशर्तेकि आक़िल बालिग़ हो, माज़ूर न हो, अह्ले हरम, अह्ले हिल्ल, अह्ले मीक़ात और हाएज़ा, नुफ़सा व मजनून और नाबालिग़ पर वाजिब नहीं है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–8 सफ़्हा–389 मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–207)

मस्अलाः तवाफ़े वदाअ़ सिर्फ़ हज में वाजिब है उम्रा में नहीं। नीज़ मस्जिदे हराम की तहीयतुलमस्जिद तवाफ़ है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–109)

तवाफ़े वदाअ़ के ज़रूरी मसाइल

मस्अलाः तवाफ़े वदाअ़ मक्की और मीक़ाती के लिए मुस्तहब है।

मस्अलाः जो शख़्स मक्का मुकर्रमा या हवालिये मक्का मुकर्रमा को मुस्तक़िल तौर से वतन बना ले तो उससे ये तवाफ़े वदाअ़ साक़ित हो जाता है। बशर्तेकि बारह्वीं ज़िलहिज्जा से पहले नीयत इक़ामते दाइमी की करे, अगर बारह्वीं के बाद इक़ामत (ठहरने) की नीयत की तो ये तवाफ़ साक़ित न होगा।

मस्अलाः अगर नीयते इक़ामत के बाद मक्का मुकर्रमा से सफ़र करने का इरादा हो गया तो भी तवाफ़े वदाअ़ वाजिब न होगा, जैसे मक्का मुकर्रमा में रहने वाला अगर कहीं जाए तो उस पर वाजिब नहीं होता।

मस्अलाः अगर किसी ने मक्का मुकर्रमा में इक़ामत की नीयत की, लेकिन मुस्तक़िल वतन नहीं बनाया, तो तवाफ़े वदाअ़ साक़ित न होगा। अगरचे सालहा साल रहे।

मस्अलाः अव्वले वक़्त तवाफ़े वदाअ़ का तवाफ़े ज़ियारत के बाद है। नीज़ अगर तवाफ़े वदाअ़ के बाद कुछ क़याम हो गया तो चलने के वक़्त दोबारा तवाफ़े वदाअ़ (अगर वक़्त हो) मुस्तहब है।

मस्अलाः जो शख़्स बिला तवाफ़े वदाअ़ के मक्का मुकर्रमा से चल दिया है तो जब तक मीक़ात से न निकला हो उसको मक्का मुकर्रमा वापस आ कर तवाफ़ करना वाजिब है (जबकि वापस आना अपने इख़्तियार में हो) एहराम की ज़रूरत नहीं है। अगर मीक़ात से निकल गया तो अब उसको इख़्तियार है कि दम भेज दे।

मस्अलाः तवाफ़े ज़ियारत के बाद चलते वक़्त तवाफ़े वदाअ़ करना अफ़ज़ल है। तवाफ़े ज़ियारत के बाद अगर नफ़्ल तवाफ़ कर चुका है तो वह भी तवाफ़े वदाअ़ के क़ाइम मक़ाम हो जाएगा।

(मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा–192)

मक्का मुकर्रमा के अहम तारीख़ी मक़ामात

- औक़ाते नमाज़ में मस्जिदे हराम में बाजमाअ़त नमाज़ अदा करना अफ़ज़ल तरीन इबादत है, जिसका सवाब एक लाख नमाज़ के बराबर है।

❑ बक़िया औक़ात में हज व उम्रा के अरकान की अदाएगी के अलावा तवाफ़े कअ़बा का एहतेमाम कसरत से करना चाहिए।

❑ कुछ हज़रात तारीख़ी हवाला से बाज़ मक़ामात देखने का ज़ौक़ रखते हैं, उन्हें चाहिए कि उन मक़ामात पर कोई ऐसा अमल न करें जो शिर्क व बिदअ़त के ज़ुमरे में आता हो। ज़बानी इश्क़ व मजज़ूबी के दावे और होते हैं। पयम्बर (स.अ.व.) की इताअ़त के तक़ाज़े और होते हैं।

उन मक़ामात को चूमना, उनसे चिमटना या अपने मज़ऊमा मक़ासिद के लिए धागे बांधना, यहां रुक़्अ़े फेंकना और पैसे रखना कि उससे मुरादें पूरी होंगी। ये सब कुछ शरअ़ी तौर पर दुरुस्त नहीं इसलिए कि हमारे प्यारे नबी (स.अ.व.) ने यहां ऐसा करने का हुक्म नहीं दिया। और फिर आप (स.अ.व.) के सच्चे आशिक़ व मुहिब्ब हज़रात सहाबए किराम व औलियाए इज़ाम ने अपने तौर पर ऐसा नहीं किया। अन्दर ईं सूरतेहाल किसी शिरकीया अमल को तौहीद का उनवान नहीं दिया जा सकता, तो किसी बिदअ़त पर नाम निहाद मुहब्बत का लेबिल लगा देने से वह सुन्नत नहीं बन जाता, बल्कि सच्ची मुहब्बत का तक़ाज़ा है कि तौहीद व सुन्नत पर क़ाइम रहें और शिर्क व बिदअ़त से बचें।

❑ बाज़ लोग तारीखी मक़ामात से मिट्टी या पत्थर उठा कर ले जाते हैं जबकि हरम की मिट्टी और पत्थर को हुदूद हरम से बाहर ले जाना शरअ़न मना है।

सरवरे काइनात (स.अ.व.) की जाए पैदाईश

ये वह घर है जिसमें रसूलुल्लाह (स.अ.व.) की मुबारक

हस्ती इस दुनिया में तशरीफ़ लाई, मरवा के मुक़ाबिल और शिअ़ब अबी तालिब के क़रीब आज भी ये जगह मशहूर व मारूफ़ है। उसी शिअ़बे अबी तालिब के गिर्दो नवाह में आंहज़रत (स.अ.व.) का क़बीला बनूहाशिम आबाद था।

शैख़ अ़ब्बास क़त्तान (रह.) ने 1370 हिजरी 1950 ई0 में एक लाएब्रेरी तामीर करा दी थी। जो अब मस्जिदे हराम के मश्रिक़ी सेहन से मुत्तसिल बर लबे सड़क है। उस पर "मकतबता मक्कतुलमुकर्रमा" का बोर्ड लगा हुआ है। उस मक़ाम की तारीख़ी हैसियत व अहमियत मुसल्लम है, मगर उसको चूमना, उससे चिमटना, उसके दरवाज़े खिड़कियों पर मज़ऊमा मक़ासिद के लिए धागे बांधना शरअ़ी तौर पर साबित नहीं, और हज़रात सहाबए किराम (रज़ि.) व औलिया इज़ाम (रह.) ने ऐसा नहीं किया।

ग़ारे हिरा

ये ग़ार जबले नूर की चोटी पर मस्जिदे हराम के शुमाल में वाक़ेअ़ है, उसे जबले हिरा कहते हैं। सतहे समंद्र से उसकी बुलंदी 621 मीटर और सतहे ज़मीन से 281 मीटर है, उस पहाड़ की चोटी पर मौजूद ग़ार तक पहुंचने में तक़रीबन एक घंटा सर्फ़ होता है, उस मुबारक ग़ार में रसूलुल्लाह (स.अ.व.) अपनी बेअ़सत से क़ब्ल इबादत किया करते थे। ग़ार की शुमाली सिम्त दरवाज़ा है जिस तक पहुंचने के लिए दो पत्थरों के दरमियान से गुज़र कर जाना पड़ता है, जिनका दरमियानी फ़ासिला सिर्फ़ 60 सेन्टी मीटर है। ग़ार की लम्बाई तीन मीटर, बुलंदी दो मीटर और चौड़ाई कहीं कम कहीं ज़्यादा है, ज़्यादा से

ज़्यादा चौड़ाई 1.30 मीटर है, उसमें दो आदमी एक दूसरे के आगे पीछे नमाज़ पढ़ सकते हैं, दाहिनी सिम्त भी थोड़ी सी जगह है, जिस पर एक आदमी बैठ कर नमाज़ पढ़ सकता है।

इस ग़ार की अहमियत व अज़मत का दूसरा पहलू ये है कि यहां जिब्राईल अलैहिस्सलाम रसूलुल्लाह (स.अ.व.) पर पहली वह्य लेकर तशरीफ़ लाए।

"اِقْرَا بِاسْمِ رَبِّکَ الَّذِیْ خَلَقَ. (سورة العلق: ١)"

ग़ारे सौर

ये ग़ार जबले सौर में मस्जिदे हराम से चार किलो मीटर जुनूबी सिम्त में वाक़ेअ है। सतहे समंद्र से इस पहाड़ की बुलंदी 758 मीटर है, और सतहे ज़मीन से 458 मीटर है। ये ग़ार उस कश्ती के मशबेह है जिसका निचला हिस्सा ऊपर को कर दिया जाए। इस ग़ार की अन्दरूनी बुलंदी 1.25 मीटर है और तल अर्ज़ 3535 मीटर है। इस ग़ार के दो दहाने हैं एक मग़रिब सिम्त में है जिससे रसूलुल्लाह (स.अ.व.) दाख़िल हुए थे इस दरवाज़े से लेट कर ही अन्दर जाया जा सकता था। नवीं सदी हिजरी के आग़ाज़ से तेरहवीं सदी हिजरी तक इस धाने को मरहला वार वसीअ किया जाता रहा, अब इसकी ऊँचाई नीचे वाली सीढ़ी को मिला कर तक़रीबन एक मीटर है। दूसरा दरवाज़ा मशरिक़ी सिम्त में है जो मग़रिबी दहाने से ज़्यादा कुशादा है और बाद में बनाया गया है, ताकि लोगों को ग़ार में दाख़िल होने और निकलने में सहूलत हो, इन दोनों दरवाज़ों का दरमियानी फ़ासिला 35 मीटर है। इस ग़ार तक चढ़ना दुश्वार है उमूमन ग़ार तक पहुंचने में डेढ़

घंटा सर्फ़ होता है, ग़ार का महल्ले वक़ूअ़ पहाड़ की चोटी से ज़रा नीचे है।

मस्जिदे बैअ़त

ये मस्जिद मिना में उस जगह वाक़ेअ़ है जहां अन्सारे मदीना ने नुबूवत के बारह्वें साल 621 ई0 में आंहज़रत (स.अ.व.) के दस्ते मुबारक पर बैअ़त की जिसमें क़बीलए औस और ख़ज़रज के बारह सर बर आवुर्दा अफ़राद शरीक थे, दूसरी बैअ़त जिसको बैअ़ते अक़बा सानिया कहा जाता है वह नुबूवत के तेरह्वें साल 622 ई. में उसी जगह मुनअ़क़िद हुई इसमें बैअ़त करने वाले 73 मर्द और दो औरतें थी, इस दफ़ा अन्सारे दमीना ने आप (स.अ.व.) को मदीना आने की दावत भी दी, इस बैअ़त को बैअते कुबरा भी कहा जाता है।

यहीं जल्वा अफ़रोज़ थे मेरे आक़ा (स.)
बहर तरफ़ थे जाँ निसार, अल्लाह अल्लाह

अब्बासी ख़लीफ़ा अबूजाफ़र मनसूर ने 144 हिजरी 761 ई0 में इस जगह पर एक मस्जिद तामीर कर दी जिसके नाम का कतबा मस्जिद की क़िब्ला रुख़ दीवार में बैरूनी जानिब नसब है, इसका महल्ले वक़ूअ़ जमरए अक़बा से तक़रीबन 300 मीटर के फ़ासिला पर मिना से मक्का की तरफ़ उतरने वाले पुल के दाहिनी सिम्त पहाड़ की घाटी में है।

मस्जिदे जिन

ये मस्जिद मअ़लात जाते हुए बाईं जानिब है और करासिंग पुल से मुत्तसिल है। इसको "मस्जिदे जिन" इसलिए कहते हैं कि इस जगह पर जिन्नात की एक

बड़ी जमाअत ने रसूलुल्लाह (स.अ.व.) के दस्ते मुबारक पर इस्लमा कबूल किया, उस मौका पर आप (स.अ.व.) के हमराह हज़रत अब्दुल्लाह इब्न मसऊद (रज़ि.) थे। आप (स.अ.व.) ने उनके लिए जमीन पर एक ख़त हद्दे फ़ासिल के तौर पर खींच दिया, वाज़ेह रहे कि इससे कब्ल नुबूवत के दसवें साल ताइफ़ से वापसी पर मकामे नख़्ला में भी कुछ जिन्नात ने आप (स.अ.व.) से मुलाकात की थी। 1421 हिजरी में मस्जिदे जिन की तज्दीद हुई, इस मस्जिद का दूसरा नाम मस्जिदे हर्स भी है।

मस्जिदे राया

(झंडे वाली मस्जिद) इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाह रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने फ़त्हे मक्का के मौका पर इरशाद फ़रमाया कि आप (स.अ.व.) का झंडा हुजून के मकाम पर गाड़ दिया जाए।

इब्न हिशाम कहते हैं कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) फ़त्हे मक्का के मौका पर मक्का की बालाई जानिब (मअ़लात) की तरफ़ से दाख़िल हुए और वहीं पर आप (स.अ.व.) के लिए ख़ेमा नसब किया गया था, उसी जगह पर हज़रत अब्बास (रज़ि.) ने मस्जिद तामीर करा दी जो मस्जिदे राया के नाम से मशहूर हो गई, फ़ाकिही (मुत्वफ़्फ़ी 272 हिजरी) कहते हैं कि मक्का के बालाई हिस्सा में जुबैर इब्न मुतइम (रज़ि.) के कुवें के पास एक मस्जिद है, उस कुवें को "बीरे उल्या" भी कहते है उसके करीब ही वह बांध था जिसको हज़रत उमर इब्न ख़त्ताब (रज़ि.) ने मअ़लात की तरफ़ से मस्जिदे हराम आने वाले सैलाबी पानी को रोकने के लिए तामीर कराया था।

मस्जिदे शजरा

(दरख़्त वाली मस्जिद) अजरकी मुतवफ़्फी 244 हिजरी 858 ई0) कहते हैं कि मस्जिदे शजरा मस्जिदे जिन के मुकाबिल वाकेअ है उसके बारे में मशहूर है कि ये मस्जिद उसी जगह पर बनाई गई हैं जहां से आप (स.अ.व.) ने दरख़्त को बुलाया था। उस वक़्त आप (स.अ.व.) मस्जिदे जिन के क़रीब तशरीफ़ फ़रमाँ थे, दरख़्त चल कर आया जब आप (स.अ.व.) ने उसको वापस जाने का हुक्म दिया तो वह वापस चला गया।

मस्जिदे ख़ालिद इब्न वलीद (रज़ि.)

फ़त्हे मक्का के मौक़ा पर रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने हज़रत ख़ालिद इब्न वलीद (रज़ि.) को फ़रमाया कि वह मक्का मुकर्रमा के नशेबी एलाक़ा से शहर में दाख़िल हों और आबादी के शुरू में इस्लामी झंडा गाड़ दें। एक रिवायत में है कि आप (स.अ.व.) ने उनको हुक्म दिया कि अललीत (जरवल की सिम्त नशेबी जगह का नाम) से शहर में दाख़िल हों। चुनांचे जिस जगह हज़रत ख़ालिद इब्न वलीद (रज़ि.) ने झंडा गाड़ा था वहां एक मस्जिद तामीर कर दी गई। उस मस्जिद और उससे मुत्तसिल सड़क को हज़रत ख़ालिद (रज़ि.) के नाम से मनसूब कर दिया गया। "हारतुलबाब" में ये मस्जिद रैउर्रसाम के मक़ाम पर वाक़ेअ है। उसकी तामीरे जदीद 1377 जिहरी 1958 ई0 में मुकम्मल हुई।

जमूम की मस्जिदे फ़त्ह

मर्रुज़्ज़हरान वादी से पहले जमूम भी एक मंज़िल है जहां बनू सलीम क़बीला आबाद था, अब ये जगह मदीना

मुनव्वरा रोड (तरीक़ हिजरत) पर मक्का मुकर्रमा के शुमाल में 25 किलो मीटर के फ़ासिला पर है, मस्जिदे आइशा से उसका फ़ासिला सिर्फ़ 18 किलो मिटर है। रसूले पाक (स.अ.व.) ने 6 हिजरी में हज़रत ज़ैद इब्न हारसा (रज़ि.) की क़यादत में एक ग्रूप को बनू सलीम से जंग के लिए रवाना फ़रमाया। आप (स.अ.व.) ने जमूम में जहां क़याम फ़रमाया और नमाज़ें अदा कीं उस जगह पर एक मस्जिद तामीर कर दी गई जो मस्जिदे फ़त्ह के नाम से मौसूम है।

मस्जिदे सख़रा

ये मस्जिद अ़रफ़ात में जबले रहमत के दामन में दाईं तरफ़ की चढ़ाई पर सतहे ज़मीन से थोड़ी बुलंद पर वाक़ेअ़ है, इसके गिर्द छोटी सी चाहार दीवारी है जिसके अन्दर चट्टानें हैं, जिनके नज़दीक रसूलुल्लाह (स.अ.व.) अ़रफ़ात के दिन क़ुस्वा ऊँटनी पर तशरीफ़ फ़रमाँ दुआ़ओं में मशगूल थे, जैसा कि हज़रत जाबिर (रज़ि.) की रिवायत है कि– "आप (स.अ.व.) ने ज़ुहर व अ़स्र की नमाज़ मस्जिदे नमरा की जगह पर अदा फ़रमाई, फिर ऊँटनी पर सवार हो कर मौक़फ़ पर तशरीफ़ लाए और अपनी ऊँटनी की पुश्त चट्टनों की तरफ़ की, अपने सामने लोगों के गुज़रने के लिए रास्ता छोड़ दिया और ख़ुद क़िब्ला रू हो कर गुरूबे शम्स तक दुआ़ओं में मशगूल रहे।"

यहीं ये आयते करीमा नाज़िल हुई– "اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ وَاَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِيْ وَرَضِيْتُ لَكُمُ الْاِسْلَامَ دِيْنًا" (سورہ مائدہ:۳)

तर्जुमा: आज के दिन मैंने तुम्हारे लिए तुम्हारे दीन को मुकम्मल कर दिया है, और मैंने अपनी नेअ़मत तुम पर पूरी कर दी है, और मैंने तुम्हारे लिए इस्लाम को दीन

मुन्तख़ब किया है।

इसी जगह की निशानदिही के लिए एक चहार दीवारी बना दी गई है। क़िब्ला की सिम्त वाली दीवार की लम्बाई 13.3 मीटर दाहिनी और बाईं जानिब की दीवार की लम्बाई आठ मीटर है, जबकि अक़बी दीवार दाएरा की शक्ल में गोल है।

शैख़ बकर अबूज़ैद कहते हैं कि पहाड़ की चढ़ाई के दाहिनी तरफ़ जुनूबी सिम्त में एक हमवार टीला है जिसको तक़रीबन निस्फ़ मीटर ऊँची दीवार से घेर दिया गया है, यही मस्जिदे सख़्रा है।

जबले रहमत

ये एक छोटा पहाड़ है जिसका मशहूर नाम "जबले रहमत" (रहमत का पहाड़) है इसको इलाल और नाबित भी कहते हैं। क़रीन भी एक नाम है, मैदाने अ़रफ़ात की मश्रिक़ी सिम्त में सड़क नम्बर 7 और 8 के दरमियान है, ये सख़्त पत्थर वाली पहाड़ी है। इसका महल्ले व वक़ूअ़ ख़त्ते अ़र्ज़ 102, 22, 21 शुमाल में और ख़त्ते तूल 39, 69, 5 मश्रिक़ में है मस्जिदे नमरा से इसका फ़ासिला तक़रीबन डेढ़ किलो मीटर है, उस पर चढ़ने के लिए जो सीढ़ियाँ बनाई गई हैं उनकी तादाद 168 है इस पहाड़ी की सतह कुशादा और हमवार है, जिसके चारों तरफ़ 57 सेन्टी मीटर की ऊँची मुंडेर है, उसके दरमियान में तक़रीबन 40 सेन्टी मीटर ऊँचा चबूतरा है जिसके एक तरफ़ आठ मीटर बुलंद, मुरब्बअ़ सुतून है, जो दूर से उस पहाड़ को नुमायाँ करता है, उसका हर ज़िल्अ़ 180 मीटर है उस पहाड़ी के नीचे मस्जिदे सख़्रा है। क़रीब ही नहरे

ज़ुबैदा की गुजरगाह थी, उस पहाड़ी के इर्द गिर्द तक़रीबन 4 मीटर बुलंद पाइप हैं जिनसे हल्की हल्की फुवार फ़ज़ा में फैल कर मौसम को ख़ुशगवार बनाती है और गर्मी की शिद्दत में तख़्फ़ीफ़ होती है।

दारुन्नदवा

आंहज़रत (स.अ.व.) की वलादत से तक़रीबन डेढ़ सौ साल पहले क़ुसैय इब्न कुलाब ने दारुन्नदवा तामीर कराया। उसमें मश्वरे होते, जंग व जिदाल के लिए झंडे तक़्सीम होते नीज़ इज्तिमाई उमूर से मुतअल्लिक़ मश्वरे के लिए इस इमारत का इस्तेमाल होता, गोया ये क़बीला क़ुरैश की पारलियामेंट थी, यही वह मकान है जिसमें क़ुरैश के सरदार इकट्ठे होते और इस्लाम के ख़िलाफ़ मश्वरे करते, हत्ता कि वह आख़िरी मश्वरा भी यहीं तैय पाया जिसमें मआमलात पर इस अंदाज़ में सोचा गया कि बहुत से सहाबए किराम (रज़ि.) मदीना हिजरत कर चुके हैं अब इम्कान है कि मुहम्मद (स.अ.व.) भी मदीना चले जाऐंगे और इन सब का वहां जमा होना हमारे लिए ख़तरनाक है। लिहाज़ा आंहज़रत (स.अ.व.) को यहीं क़त्ल कर दिया जाए, मगर अल्लाह की क़ुदरत से आप (स.अ.व.) उनके दरमियान से निकल कर हिजरत फ़रमा गए और अल्लाह तआला का दीन सर बुलंद हुआ, ये दारुन्नदवा चूंकि मस्जिदे हराम से मुत्तसल था इसलिए हज व उम्रा के दौरान बहुत से उमरा व ख़ुलफ़ा इसमें क़याम करते। एक दफ़ा अमीरुलमोमिनीन हज़रत उमर (रज़ि.) ने भी उसमें क़याम फ़रमाया, फिर अब्बासी ख़लीफ़ा मोतज़िद बिल्लाह ने सन 284 हिजरी 897 ई0 में उस जगह को मस्जिदे हराम में

शामिल कर दिया। उसका रक़बा 1332=36×37 मुरब्बा मीटर है उसकी जगह कअबा के शुमाल मगरिब में मताफ़ और मुसक़्क़फ़ हिस्से में है। यादगार के तौर पर उसी सिम्त में एक दरवाज़ा का नाम बाबुन्नदवा रख दिया गया है।

मक़बरतुलमअ़ला

ये मक़बरा मक्का मुकर्रमा के तारीख़ी मक़ामात में से एक है जो मस्जिदे हराम की मशरिक़ी जानिब एक पहाड़ी की घाटी में वाक़ेअ़ है। फ़ाकिही कहते हैं कि मक्का मुकर्रमा के पाहाड़ों की घाटियों का तबअ़ी रुख़ ठीक क़िब्ला की तरफ़ नहीं है सिवाए मक़बरतुलमअ़लात की उस घाटी के कि उसका रुख़ ख़त्ते मुस्तक़ीम से क़िब्ला की तरफ़ है। इस मक़बरा की फ़ज़ीलत में कुछ रिवायात कुतुबे हदीस में मज़कूर हैं जिनमें से एक रिवायत में आप (स.अ.व.) ने इरशाद फ़रमाया– "ये क़ब्रस्तान क्या ही अच्छा है।"

(हदीस हसन)

इसी क़ब्रस्तान में उम्मुलमोमिनीन हज़रत ख़दीजा (रज़ि.) की क़ब्र मुबारक है, नीज़ बहुत से सहाबा व ताबईन और बुज़रगाने दीन की क़ब्रें हैं इस क़ब्रिस्तान के अलावा मक्का मुकर्रमा में और भी तारीख़ी क़ब्रस्तान हैं।

(माख़ूज़ तारीख़ मक्कतुलमुकर्रमा अज़ डॉ0 मुहम्मद इलयास अब्दुलग़नी साहब)

जन्नतुलमअ़ला मक्का मुअ़ज़्ज़मा का तारीख़ी क़ब्रस्तान है उसके दो हिस्से हैं, दरमियान में सड़क है, सड़क के शुमाली जानिब क़ब्रस्तान का जो हिस्सा है उसमें इस्लाम की शेर दिल और सब से पहली मुहसिना ख़ातून उम्मुलमोमिनीन व सैयदतुलमोमिनात हजरत ख़दीजतुलकुबरा (रज़ि.) का

मज़ारे मुबारक है। जन्नतुलमअला के दोनों हिस्सों में तक़रीबन छः हज़ार जलीलुलक़द्र सहाबा और लातादाद नामी गिरामी उलमाए इस्लाम और सुलहाए उम्मत पैवंदे ज़मीने हरमे मुहर्रम हैं। उस ख़ाक पाक का हर जर्रा अपनी ज़बाने हाल से तरजुमाने माज़ी है। ये मक़ाम जवारे बैतुल्लाह में आलमे अरवाह का मक्का मुअज़्ज़मा है।

हज़रत ख़दीजतुलकुबरा (रज़ि.) के मज़ारे मुबारक से पहले चंद क़दम पर हिन्दुस्तान की क़ाबिले फ़ख़्र और माया नाज़ दो मुक़द्दस हस्तियाँ (1) मुजाहिदे इस्लाम हज़रते अक़्दस मौलाना रहमतुल्लाह साहब (रह.) बानिये मदरसा सौलतिया (2) हज़रते अक़्दस हाजी इमदादुल्लाह साहब (रह.) हिन्दुस्तानी, महाजिरे मक्की एक छोटे से एहाते में मकीने जन्नत व क़रीने रहमत हैं।

क़ब्रस्ताने शबीका

मक्का मुअज़्ज़मा का दूसरा तारीख़ी क़ब्रस्तान मदरसा सौलतिया के क़रीब है। इस्लाम के इब्तिदाई दौर में जब कि कुफ़्फ़ारे कुरैश की अदावत व हालात की पेचीदगी से मुसलमानों की तदफ़ीन में दुश्मनाने इस्लाम मुज़ाहिम हुए तो उम्मुलमोमिनीन हज़रत ख़दीजतुलकुबारा (रज़ि.) ने अपनी ये ज़मीन मुसलमानों के क़ब्रस्तान के लिए दे दी जिसमें उस ज़माने से तक़रीबन नव्वे साल क़ब्ल तक बेशुमार अल्लाह के सालेह व मक़्बूल बंदे उस यादगारे ज़माना क़ब्रस्तान में दफ़्न होते रहे। 1310 हिजरी के तबाह कुन हैज़ा में जिसकी इब्तिदा मिना से हुई और हज़ारों हुज्जाज और मक़ामी लोग इस वबाई मोहलिक मरज़ का शिकार हुए, इसलिए मजबूरन मक्का मुअज़्ज़मा के दोनों क़ब्रस्तान

(जन्नतुलमअ़ला और मक़बरा शबीका) खोल दिए गए। ये क़ब्रस्तान शबीका अरसा से चारों तरफ़ आबादी के वस्त में आ चुका था। इसलिए हुकूमते उस्मानिया की वज़ारते सेहत के हुक्म से उस मुतअ़द्दी मरज़ के बाद यहां तदफ़ीन बंद कर दी गई, हज के ज़माना में हुज्जाज यहां भी फ़ातिहा और ईसाले सवाब के लिए बकसरत आते रहते हैं।

मकान हज़रत ख़दीजतुलकुबरा (रज़ि.)

मकान मुहल्ला क़शाशिया के ज़ुक़ाक़ (गली) इब्ने हजर जिसका अब नया नाम "शारेअ़स्साग़ा" है। यहां दो तरफ़ा सुनारों की दुकाने हैं और आम तौर पर मौलदे सैयदा फ़ातिमा (रज़ि.) के नाम से मशहूर है, इस मकान में नबी करीम (स.अ.व.) की शादी हज़रत ख़दीजतुलकुबरा (रज़ि.) से हुई, यहीं नबी करीम (स.अ.व.) की साहबज़ादियाँ सैयदह रुक़ैया (रज़ि.) सैयदह ज़ैनब (रज़ि.), सैयदह उम्मे कुलसूम (रज़ि.), सैयदह फ़ातिमतुज़्ज़हरा (रज़ि.) और आप के साहबज़ादे क़ासिम व अ़ब्दुल्लाह (जिनकी कुन्नियत तैयब व ताहिर है) पैदा हुए, आप (स.अ.व.) की ये चारों साहबज़ादियाँ मदीना मुनव्वरा (जन्नतुलबक़ीअ़) में और दोनों साहबज़ादे मक्का मुअ़ज़्ज़मा (जन्नतुलमअ़ला) में आराम फ़रमाँ हैं।

हज़रत ख़दीजतुलकुबरा (रज़ि.) के इंतिक़ाल के बाद हिजरते मदीना मुनव्वरा तक नबी करीम (स.अ.व.) इसी मकान में क़याम फ़रमाँ रहे, उस यादगारे ज़माना मकान में एक कमरा आपकी इबादत के लिए मख़्सूस था और उसी में आप (स.अ.व.) पर वह्य नाज़िल होती थी।

मज़ार हज़रत मैमूना (रज़ि.)

मदीना मुनव्वरा जाते हुए मौक़ा मिले या न मिले ज़मानए

क़यामे मक्का मुअ़ज़्ज़मा में यहां से तक़रीबन पाँच छः मील की मसाफ़त पर "वादिये फ़ातिमा" (एक मशहूर आबादी) के क़रीब पुख़्ता सड़क के बाईं तरफ़ पन्द्रह बीस क़दम पर पहाड़ के दामन में "उम्मुलमोमिनीन हज़रत मैमूना (रज़ि.) की क़ब्र मुबारक है। उस मक़ाम का नाम "सरफ़" है, ये अजीब तारीख़ी इत्तिफ़ाक़ है कि 7 हिजरी में नबी करीम (स.अ.व.) उम्रा के लिए तशरीफ़ लाए तो उस मक़ामे "सरफ़" में हज़रत मैमूना (रज़ि.) से आप (स.अ.व.) का निकाह हुआ (ये आपकी आख़िरी बीवी) यहीं वह नबी करीम (स.अ.व.) की ख़िदमत में हाज़िर हुईं और 51 हिजरी में उसी मक़ाम पर आपका इंतिक़ाल हुआ।

हज़रत अब्दुल्लाह इब्न उमर (रज़ि.) का मज़ार

अमीरुलमोमिनीन हज़रत उमर इब्नुलख़त्ताब (रज़ि.) के साहबज़ादे ज़बरदस्त मुहद्दिस और अपने मुत्तक़ी, फ़ातेह व ग़ाज़ी बाप के हम पल्ला थे, आप मक्का मुअ़ज़्ज़मा में मदफ़ून हैं। उम्रा के लिए तनओ़ीम को जाते हुए मुहल्ला "शोहदा" से आप गुज़रेंगे, यहां सड़क से बाईं तरफ़ एक बहुत छोटी सी मस्जिद से चंद क़दम पर पहाड़ के दामन में आप की क़ब्र मुबारक है। उस जगह सिर्फ़ तीन क़ब्रें हैं, एक हज़रत अब्दुल्लाह इब्न उमर (रज़ि.) की, दूसरी आप के वफ़ादार गुलाम की, तीसरी क़ब्र के मुतअल्लिक़ कुछ नहीं कहा जा सकता कि वह किस की है। ज़ी इल्म और बाख़बर हुज्जाजे किराम फ़ातिहा व ईसाले सवाब के लिए यहां आते रहते हैं।

मस्जिदे हज़रत बिलाल (रज़ि.)

ये मस्जिद जबले अबूक़ुबैस की चोटी पर है, जो मस्जिदे

हरम मुहतरम के सेहन से बजानिबे मश्रिक़ नज़र आती है। उस पहाड़ की बुलंदी कुछ ज़्यादा नहीं, उसी मुबारक पहाड़ पर नबी करीम (स.अ.व.) से मोअ़जिज़ा शक़्क़ुलक़मर (चाँद के दो टुकड़े हो जाना) ज़ुहूर में आया।

मस्जिदे हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि.)

ये मस्जिद मुहल्ला "मिस्फ़ला" में है। यहां हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि.) का मकान था। जो दर हक़ीक़त मक्का मुअ़ज़्ज़मा में सब से पहली मस्जिद है। उस मकान में हिजरत से क़ब्ल मुसलमान बाजमाअ़त नमाज़ पढ़ा करते थे। यहीं से हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि.) नबी करीम (स.अ.व.) के साथ हिजरते मदीना मुनव्वरा के लिए रवाना हुए।

मस्जिदे इस्तिराहत

मिना से आते हुए मक्का मुकर्रमा का पहला मुहल्ला "मुआ़हदा" है, नबी करीम (स.अ.व.) ने 13 ज़िलहिज्जा को हज से वापसी पर इस जगह ज़ुहर और अ़स्र की नमाज़ पढ़ी और आराम फ़रमाया। इसलिए इस मस्जिद का नाम "मुस्जिदे इस्तिराहत" है इस एलाक़े में गुनजान आबादी की वजह से ये मस्जिद सड़क से कुछ दूर है।

मस्जिदे तनअ़ीम

ये मस्जिदे आइशा के नाम से मशहूर है। तनअ़ी उस मक़ाम का नाम है जो हद्दे हरम से बाहर है, और यहां से नबी करीम (स.अ.व.) ने हज्जतुलवदा (अपने आख़िरी हज) में हज़रत आइशा (रज़ि.) को उम्रा करने के लिए हुक्म दिया था। इसलिए यहां से उम्रा करना अफ़ज़ल है। ये मस्जिद उस जगह के क़रीब बनाई गई है जहां उम्मुलमोमिनीन

हज़रत आइशा सिद्दीक़ा (रज़ि.) ने एहरामे उम्रा की नीयत फ़रमाई थी।

मस्जिदे हुदैबिया

अब ये जगह "शमीसी" के नाम से मशहूर व मारूफ़ है नबी करीम (स.अ.व.) ने यहां बीस रोज़ क़याम फ़रमाया।

मस्जिदे जअ़राना

नबी करीम (स.अ.व.) ने हज्जतुलवदा, (अपने आख़िरी हज) में यहां से उम्रा का एहराम बांधा। ये जगह भी हद्दे हरम है, यहां एक मस्जिद और तारीख़ी कुंवाँ है, जिसका पानी पथरी और गुर्दा की सफ़ाई के लिए मुसलसल पिया जाए तो अल्लाह तआ़ला शिफ़ा अ़ता करता है। इस मक़ाम से उम्रा करने को आम इस्तिलाह में "बड़ा उम्रा" और तनीअ़ीम से उम्रा करने को "छोटा उम्रा" कहा जाता है। इन दोंनो मक़ामात की मसाफ़त के लिहाज़ से ये नाम रख दिए गाए हैं, वरना उम्रा का छोटा या बड़ा होना कोई हक़ीक़ी चीज़ नहीं, दोनों मक़ामात (जअ़राना व तनअ़ीम) से उम्रा के अज्र व सवाब में कोई फ़र्क़ नहीं।

मस्जिदे ख़ीफ़ व गारे मुरसलात

ये मिना में सब से बड़ी और मशहूर मस्जिद है, जिसमें दस हज़ार से ज़्यादा आदमी बैयक वक़्त नमाज़ पढ़ सकते हैं। ख़ीफ़ पहाड़ के दामन को कहते हैं, ये मस्जिद चूंकि पहाड़ के नीचे है, इसलिए इसका नाम "मस्जिदे ख़ीफ़" है। इसके वस्त में एक गोल इमारत (गुबंद) है। हज्जतुलवदा में उस जगह नबी करीम (स.अ.व.) का ख़ेमा लगाया गया था और आप ने यहां पाँच नमाज़ें (8 ज़िलहिज्जा को जुहर, अस्र, मग़रिब व इशा और 9 ज़िलहिज्जा को सुब्ह

की नमाज़ पढ़ कर अरफ़ात के लिए रवाना हो गए) अदा फ़रमाई, इस लिहाज़ से मस्जिदे ख़ीफ़ क़ाबिले ज़िक्र व ज़ियारत है। मस्जिदे ख़ीफ़ की जुनूबी सिम्त में "जबले सफ़ाएह" के दामन में एक छोटा सा ग़ार है, नबी करीम (स.अ.व.) ने उस पहाड़ के साये में आराम फ़रमाया। आप ग़ार में तशरीफ़ ले गए तो "सूरए मुरसलात" (पारा 29) नाज़िल हुई, इसलिए ये "ग़ारे मुरसलात" के नाम से मशहूर है। इस बाबरकत मक़ाम की ज़ियारत के लिए हुज्जाज बकसरत जाते हैं।

मस्जिदे नमरा

ये मस्जिद हद्दे हरम और हुदूदे अरफ़ात से बाहर "वादिये उरना" में है। उस ख़ास जगह का नाम "नमरा" है जहां ये मस्जिद बनी हुई है। इसलिए उसका नाम मस्जिदे नमरा है, नबी करीम (स.अ.व.) ने उस जगह क़याम फ़रमाया। यहाँ जुहर व अस्र की नमाज़ और ख़ुतबा के बाद आप ने "जबले रहमत" के क़रीब वकूफ़े अरफ़ात का वक़्त (ज़वाल के बाद से गुरूबे आफ़ताब तक) पूरा किया। आज यहां इमाम व ख़तीब मस्जिदे नमरा में खड़ा होता है। इसी बाबरकत जगह पर नबी करीम (स.अ.व.) ने नमाज़ पढ़ाई थी।

मस्जिदे मुज़दलिफ़ा

इसको मस्जिदे "मशअ़रुलहराम" भी कहते हैं। नबी करीम (स.अ.व.) हज्जतुलवदा (आख़िरी हज) के मौक़ा पर मुज़दलिफ़ा की बाबरकत रात में जिस जगह ज़िक्र व फ़िक्र, इबादत व दुआ में हमा तन मुतवज्जेह रहे ये मस्जिद उस मुबारक मक़ाम की याद को सदियों से ज़िन्दा किए

हुए है। मुज़दलिफ़ा की रात बड़ी अज़मत व फ़ज़ीलत की रात है।

मस्जिदे अक़बा

मक्का मुकर्रमा से जाते हुए मिना के इब्तिदा में बाईं जानिब पुख़्ता सड़क से हट कर पहाड़ के दामन में ये तारीख़ी मस्जिद है, इस जगह अन्सारे मदीना मुनव्वरा की एक जमाअत ने नबी करीम (स.अ.व.) से आपके चचा हज़रत अब्बास इब्न अब्दुल्लमुत्तलब (रज़ि.) की मौजूदगी में बैअत की, इसलिए इसको "मस्जिदे बैअत" भी कहते हैं, बाख़बर हुज्जाज यहाँ हाज़िरी की सआदत हासिल करते रहते हैं।

मस्जिदे कौसर

ये मिना की आबादी के वस्त में दरमियानी शैतान के क़रीब एक छोटी सी मस्जिद है, इस जगह नबी करीम (स.अ.व.) पर "सूरए कौसर" नाज़िल हुई जिसकी यादगार में ये मस्जिद है। यहां भी हुज्जाज ज़ियारते मस्जिद के लिए आते हैं।

मस्जिदे मिना

इसको "मस्जिदे नहर" भी कहते हैं, ये जमरए ऊला (पहला शैतान) और जमरए उस्ता के दरमियान अरफ़ात के लिए जाने वाली सड़क के दाहिनी जानिब वाक़ेअ है। नबी करीम (स.अ.व.) ने इस जगह ईदुलअज़्हा की नमाज़ पढ़ी और कुर्बानी के जानवर ज़िब्ह किए। (मीम नामा हज सफ़्हा–25 ता 27 मदरसा सौलतिया मक्का मुअज़्ज़मा)

वादिये मुहस्सर

मिना और मुज़दलिफ़ा के दरमियान वह जगह है जहां

अल्लाह तआला ने अबरहा के हाथियों वाले लश्कर को तबाह किया था, जिस का ज़िक्र सूरए फ़ील में है। यहां पर हाजियों के लिए मसनून ये है कि तेज़ी से चलें जैसा कि हज़रत जाबिर (रज़ि.) से मरवी है कि– "रसूलुल्लाह (स.अ.व.) वादिये मुहस्सर से गुजरे तो आप (स.अ.व.) ने रफ़्तार तेज़ कर दी।

(सही मुस्लिम किताबुलहज हदीस नम्बर–1218)

इब्न कैयिम (रह.) इसकी वजह ब्यान करते हुए लिखते हैं कि आप (स.अ.व.) की आदत शरीफ़ा ये थी कि जब किसी ऐसी जगह से गुज़रते जहां अज़ाबे इलाही नाज़िल हुआ हो तो तेज़ी के साथ गुज़र जाते। इस वादिये मुहस्सर में भी हाथियों वाले लश्कर पर अज़ाब नाज़िल हुआ था। एक दूसरी वजह ये भी है कि ज़मानए जाहिलीयत में अरब के क़बाइल यहाँ जमा होते और अपने आबा व अजदाद के कारनामे बढ़ा चढ़ा कर ब्यान करते, लिहाज़ा उनकी मुख़ालफ़त के तौर पर शरीअ़ते इस्लामिया में ये मुस्तहब क़रार पाया कि यहाँ से जल्दी गुज़रा जाए।

(ज़ादुलमआद जिल्द–1 सफ़्हा–274)

मदीना मुनव्वरा की हाज़िरी

मदीना तैय्यबा में हाज़िरी बिला शुब्हा हज का कोई रुक्न नहीं है, लेकिन मदीने की ग़ैर मामूली अज़मत व फ़ज़ीलत, मस्जिदे नबवी में नमाज़ का बेपायाँ अज्र व सवाब और दरबारे नबवी में हाज़िरी का शौक़, मोमिन को कशाँ कशाँ मदीने पहुंचा देता है। और उम्मत का हमेशा से यही दस्तूर भी रहा है। आदमी दूर दराज़ का सफ़र कर के बैतुल्लाह पहुंचे और दरबारे नबवी में दुरूद व

सलाम का तोहफ़ा पेश किए बग़ैर वापस आए, ये ज़बरदस्त महरूमी है। ऐसी महरूमी कि उसके तसव्वुर से मोमिन का दिल दुखने लगता है।

मदीना मुनव्वरा के फ़ज़ाइल

मदीना मुनव्वरा का तक़द्दुस और उसकी अज़मते शान सिर्फ़ इसी बात से ज़ाहिर है कि वह बेहतरीन अंबिया (स.अ.व.) का मस्कन था और अब उनका मदफ़न है, ये एक ऐसी बड़ी फ़ज़ीलत है जो किसी दूसरे मक़ाम को नसीब नहीं और कोई दूसरी फ़ज़ीलत कैसी ही क्यों न हो उसकी हमसरी किसी तरह नहीं कर सकती।

मदीना मुनव्वरा के नाम अहादीस में बकसरत वारिद हुए हैं, ये भी एक शोअबा उसकी फ़ज़ीलत का है मिन्जुमला इनके चंद नाम यहाँ लिखता हूं– "طابہ طَیبہ طَیّبہ طائبہ" और भी बहुत से नाम हैं जो उलमा ने ज़िक्र किए हैं, सब से ज़्यादा मशहूर नाम मदीना है। आहादीस में मदीना मुनव्वरा के फ़ज़ाइल बहुत वारिद हुए हैं, इस मक़ाम पर सिर्फ़ चंद हदीसें सही सही लिखी जाती हैं–

❑ जब शुरू शुरू में रसूलुल्लाह (स.अ.व.) हिजरत कर के मदीना मुनव्वरा तशरीफ़ लाए हैं, उस वक़्त वहाँ की आब व हवा निहायत नाक़िस व ख़राब थी, अक्सर वबाई बीमारियाँ रहती थीं। चुनांचे हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि.) और हज़रत बिलाल (रज़ि.) आते ही सख़्त बीमार हो गए थे, उस वक़्त रसूले ख़ुदा (स.अ.व.) ने ये दुआ माँगी थी कि ऐ अल्लाह मदीना की मुहब्बत हमारे दिलों में डाल दे, जैसा कि हम लोगों को मक्का से मुहब्बत है बल्कि उससे भी ज़्यादा, ऐ अल्लाह हमारे साअ़ और मुद

में बरकत दे और मदीना की आबो हवा को दुरुस्त कर दे और उसका बुख़ार हजफ़ा की तरफ़ भेज दे। (सहीह बुख़ारी)

❑ आंहज़रत (स.अ.व.) को मदीना मुनव्वरा से इस क़दर मुहब्बत थी कि जब कहीं सफ़र में तशरीफ़ ले जाते तो लौटते वक़्त जब मदीना मुनव्वरा क़रीब रह जाता और उसकी इमारतें दिखाई देने लगतीं तो हज़रत (स.अ.व.) अपनी सवारी को कमाले शौक़ में तेज़ कर देते और फ़रमाते कि ये ताबा आ गया। (सहीह बुख़ारी) और अपनी चादर मुबारक अपने शानए अक़्दस से गिरा देते और फ़रमाते कि ये तय्यबा की हवाऐं हैं। सहाबा (रज़ि.) में जो कोई बवज्हे गर्द व गुबार के अपना मुंह बंद करता तो आप मना करते और फ़रमाते कि मदीना की ख़ाक में शिफ़ा है। (जज़्बुलकुलूब)

❑ नबी करीम (स.अ.व.) ने फ़रमाया है कि ईमान मदीना की तरफ़ लौट आएगा जैसे कि साँप अपने सूराख़ की तरफ़ लौट आता है। (सहीह बुख़ारी)

❑ नबी करीम (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि दज्जाल का गुज़र हर शहर में होगा, मगर मक्का व मदीना न आने पाएगा, फ़रिशते इन शहरों की मुहाफ़ज़त करेंगे।

❑ नबी करीम (स.अ.व.) ने फ़रमाया है कि मदीना बुरे आदमियों को इस तरह निकाल देता है जैसे लोहे की भट्टी लोहे के मैल को निकाल देती है। (सहीह बुख़ारी)

ये ख़ासियत मदीना मुनव्वरा में हर वक़्त मौजूद है और ख़ास कर इस ख़ासियत का ज़ुहूर क़यामत के क़रीब बहुत अच्छे तौर पर होगा। तीन मरतबा मदीना मुनव्वरा में ज़लज़ला आएगा कि जिस क़दर बद बातिन लोग उस

वक़्त वहाँ पनाह गुज़ीं होंगे निकल जाऐंगे।

☐ नबी करीम (स.अ.व.) जब मक्का से हिजरत कर के चलने लगे तो दुआ की कि ऐ परवरदिगार अगर तू मूझे इस शहर से निकालता है जो तमाम मक़ामात से ज़्यादा मुझे महबूब है तो उस मक़ाम में मुझे ले जा जो तमाम शहरों से ज़्यादा तुझे महबूब है।

☐ नबी करीम (स.अ.व.) ने फ़रमाया है कि जिससे ये बात हो सके कि मदीना में मरे उसको चाहिए कि मदीना में मरे, क्योंकि जो शख़्स मदीना में मर जाएगा क़यामत के दिन में उसकी शफ़ाअ़त करूँगा और उसके ईमान की गवाही दूंगा। और दूसरी हदीस में आया है कि सब से पहले जिन लोगों को मेरी शफ़ाअ़त की दौलत नसीब होगी वह अह्ले मदीना होंगे, बाद इसके अह्ले मक्का, बाद इसके अह्ले ताइफ़।

☐ नबी करीम (स.अ.व.) ने फ़रमाया है कि मदीना मेरी हिजरत का मक़ाम है और वही मेरा मदफ़न है और वहीं से मैं क़यामत के दिन उठूंगा, जो शख़्स मेरे पड़ोसियों यानी अह्ले मदीना के हुकूक़ की हिफ़ाज़त करेगा, क़यामत के दिन उसकी शफ़ाअ़त करूंगा और उसके ईमान की गवाही दूंगा। दूसरी हदीस में आया है कि जो शख़्स अह्ले मदीना के साथ बुराई करेगा वह ऐसा घुल जाएगा जैसे नमक पानी में घुल जाता है।

☐ मदीना की ख़ाक पाक में और वहाँ के मेवाजात में हक़ तआ़ला ने तासीरे शिफ़ा वदीअ़त फ़रमाई है जैसा कि अहादीसे सहीहा से साबित है। एक मक़ाम है जिसका नाम वादिये बतहान है वहाँ की मिट्टी सरवरे आलम (स.अ.व.)

मरज़े पित में तजवीज़ फ़रमाते थे और फ़ौरन ही शिफ़ा होती थी, अक्सर उलमा ने उस मिट्टी के मुतअ़ल्लिक़ अपना तजरबा लिखा है। चुनांचे शैख़ अब्दुलहक़ मुहद्दिस देहलवी भी जज़्बुलकुलूब में लिखते हैं कि जिस ज़माना में मैं मदीना मुनव्वरा में मुक़ीम था मेरे पैर में एक सख़्त मरज़ पैदा हो गया कि तमाम अतिब्बा ने इस अम्र पर इत्तिफ़ाक़ कर लिया कि इस मरज़ का आख़िरी नतीजा मौत है, सेहत दुश्वार है, मैंने उसी ख़ाक पाक से अपना इलाज किया, थोड़े ही दिनों में बहुत आसानी से सेहत हासिल हो गई। इस क़िस्म की ख़ासियतें वहां की खजूर में भी मरवी हैं और लोगों ने तजरबा भी किया है।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–5 सफ़्हा–79)

मस्जिदे नबवी (स.अ.व.) की ज़ियारत की नीयत से सफ़र करना?

मस्अला: ये आपने ग़लत सुना या ग़लत समझा है कि मस्जिदे नबवी (स.अ.व.) की नीयत से सफ़र नहीं कर सकते। इसमें तो किसी का इख़्तिलाफ़ नहीं है कि मस्जिदे नबवी शीफ़ (स.अ.व.) की नीयत से सफ़र करना सही है अलबत्ता बाज़ लोग इसके क़ाएल हैं कि रौज़ए अक़्दस की ज़ियारत की नीयत से सफ़र जाइज़ नहीं। लेकिन जमहूर अकाबिरे उम्मत के नज़दीक रौज़ा शरीफ़ की ज़ियारत की भी ज़रूर नीयत करनी चाहिए। और रौज़ए अतहर पर हाज़िर हो कर शफ़ाअ़त की दरख़्वास्त ममनूअ़ नहीं, फ़ुक़हाए उम्मत ने ज़ियारते नबवी (स.अ.व.) के आदाब में तहरीर फ़रमाया है कि बारगाहे आली में सलाम पेश करने के बाद शफ़ाअ़त की दरख़्वास्त करे। इमाम जज़री "हिस्ने हसीन" में तहरीर फ़रमाते हैं कि अगर आंहज़रत (स.अ.व.)

की क़ब्र मुबारक के पास दुआ क़बूल न होगी तो और कहां होगी? सलात व सलाम और शफ़ाअत की दरख़्वास्त पेश करने के बाद क़िब्ला रुख़ हो कर दुआ मांगिए और मदीना तय्यबा में दुरूद शरीफ़ कसरत से पढ़ना चाहिए और कुरआन करीम की तिलावत की मिक़्दार भी बढ़ा देनी चाहिए। (आप के मसाइल जिल्द-4 सफ़्हा-152 व फ़तावा महमूदिया जिल्द-17 सफ़्हा-177)

क्या रौज़ए मुबारक की ज़ियारत में भी बदलीयत है?

मस्अला: हज्जे बदल में ज़ियारते रौज़ए अतहर (स.अ.व.) दाख़िल नहीं है, अगर वह शख़्स जो हज्जे बदल के लिए भेजा गया है, ज़ियारते रौज़ए अतहर करे तो उसके लिए बहुत अच्छा है और मूजिबे सवाब है, मगर इसमें नियाबत और बदलीयत नहीं है। जो कोई ज़ियारत करेगा उसको सवाब होगा और जिसने इस काम (हज्जे बदल) के लिए रुपया दिया है उसको सदक़ा का सवाब होगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द-6 सफ़्हा-567)

हाजी का रौज़ए मुबारक की ज़ियारत किए बग़ैर आ जाना?

सवाल: अगर कोई हज के लिए जाए और ज़ियारते रौज़ा (स.अ.व.) किए बग़ैर आ जाए तो उसका हज मुकम्मल हो जाएगा या नहीं?

जवाब: आंहज़रत (स.अ.व.) के रौज़ए अतहर की ज़ियारत किए बग़ैर जो शख़्स वापस आ जाए, हज तो उसका अदा हो जाएगा लेकिन उसने बेमुरौवती से काम लिया और ज़ियारते शरीफ़ा की बरकत से महरूम रहा। यूँ कह लीजिए कि आंहज़रत (स.अ.व.) के रौज़ए अतहर की ज़ियारत के लिए जाना एक मुस्तक़िल अमले मन्दूब है जो हज के

आमाल में तो दाख़िल नहीं मगर जो शख़्स हज पर जाए उसके लिए ये सआदत हासिल करना आसान है। इसलिए हदीस शरीफ़ में फ़रमाया– "जिस शख़्स ने बैतुल्लाह शरीफ़ का हज किया और मेरी ज़ियारत को न आया उसने मुझ से बेमुरौवती की।" (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–151)

मस्अला: जो शख़्स हज करे और मजबूरन पैसे की कमी की वजह से मदीना मुनव्वरा न जा सके तो उसका हज कामिल और पूरा होने में कुछ शुब्हा और तरद्दुद नहीं है। अलबत्ता इस्तिताअत के बावजूद अगर मदीना शरीफ़ न जाता तो बुरा था और बड़ी महरूमीये क़िस्मत की बात थी, लेकिन जब ख़र्चा की कमी की वजह से मजबूर रहा तो उस पर कुछ मुवाख़ज़ा नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–581 व मिश्कात शरीफ़ जिल्द–32 सफ़्हा–352)

मस्जिदे नबवी में क्या चालीस नमाज़ें पढ़ना ज़रूरी है?

सवाल: उम्रा अदा कर के मस्जिदे नबवी (स.अ.व.) में हाज़िरी दी और वापस आ गया यानी मदीना तय्यबा में चालीस नमाज़ें पूरी नहीं की क्या कोई गुनाह है?

जवाब: गुनाह तो कोई नहीं, मगर मस्जिदे नबवी (स.अ.व.) में इस तरह चालीस नमाज़ें पढ़ने की एक ख़ास फ़ज़ीलत है कि तकबीरे तहरीमा फ़ौत न हो। ये फ़ज़ीलत आई है। उसके अलफ़ाज़ ये हैं– "हज़रत अनस (रज़ि.) आंहज़रत (स.अ.व.) से रिवायत करते हैं कि आप ने फ़रमाया जिस शख़्स ने मेरी मस्जिद में चालीस नमाज़ें इस तरह अदा कीं कि उसकी कोई भी नमाज़ (बाजमाअत) फ़ौत न हो उसके लिए दोज़ख़ से और अज़ाब से बराअत लिखी

जाएगी और निफ़ाक़ से बरी होगा।" (मुसनद अहमद जिल्द-3 सफ़्हा-155, आपके मसाइल जिल्द-4 सफ़्हा-153 व फ़तावा महमूदिया जिल्द-3 सफ़्हा-186)

मस्अला: मस्जिदे नबवी (स.अ.व.) में चालीस नमाज़ें बाजमाअत अदा करना अफ़ज़ल है, मुलाज़मत की वजह से (वक़्त न मिल सका) न हो सके तो कोई क़बाहत नहीं। हज में कोई ख़लल नहीं आएगा।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द-5 सफ़्हा-222)

मस्अला: रोज़ाना पाँचों वक़्त या जिस वक़्त मौक़ा हो रौज़ए अक़्दस (स.अ.व.) पर हाज़िर हो कर दुरूद व सलाम पढ़ना जाइज़ है।

मस्अला: रौज़ए अक़्दस का तवाफ़ करना हराम है और रौज़ा के सामने झुकना और सज्दा करना हराम है।

मस्अला: रौज़ा की तरफ़ बिला ज़रूरते शदीदा पुश्त न करे, न नमाज़ में और न नमाज़ के अलावा।

मस्अला: जब कभी रौज़ए मुबारक के बराबर से गुज़रे, हसबे मौक़ा थोड़ा बहुत ठहर कर सलाम पढ़े अगरचे मस्दिज से बाहर ही हो।

मस्अला: मदीना मुनव्वरा के क़याम में दुरुद व सलाम, रोज़ा, सदक़ा और मस्जिद के ख़ास सुतूनों के पास नमाज़ और दुआ की कसरत रखे, बिलखुसूस हुज़ूर (स.अ.व.) के ज़माना की जो मस्जिद है उसका ख़्याल रखे, अगरचे सवाब सारी मस्जिद में बराबर है।

मस्अला: रौज़ए मुबारका की तरफ़ देखना सवाब है और अगर मस्जिद के बाहर हो तो कुब्बा को भी देखना सवाब है। (मुअल्लिमुलहुज्जाज सफ़्हा-325)

मस्जिदे नबवी (स.अ.व.) की अज़मत व तारीख़

मस्जिदे नबवी (स.अ.व.) की अज़मत और फ़ज़ीलत के लिए यही बात क्या कम है कि उसकी तामीर ख़ुद नबी (स.अ.व.) ने अपने मुबारक हाथों से फरमाई और बरसों उसमें नमाज़ पढ़ी उसकी निस्बत अपनी तरफ़ फ़रमाई और उसको अपनी मस्जिद कहा है, आप (स.अ.व.) का इरशाद है— "मेरी मस्जिद में एक नमाज़ पढ़ना दूसरी मस्जिदों में हज़ार नमाज़ पढ़ने से ज़्यादा अफ़ज़ल है, सिवाए मस्जिदे हराम के।"

हज़रत अनस (रज़ि.) का ब्यान है कि नबी (स.अ.व.) ने इरशाद फ़रमाया— "जिस शख़्स ने मेरी इस मस्जिद में मुसलसल चालीस वक़्त की नमाज़ें इस तरह पढ़ीं कि दरमियान में कोई नमाज़ भी फ़ौत नहीं हुई तो उसके लिए जहन्नम की आग और हर अज़ाब से बराअत लिख दी जाएगी और इसी तरह निफ़ाक़ से बराअत लिख दी जाएगी।" (मुसनद अहमद, अत्तरग़ीब).

सरवरे काएनात (स.अ.व.) जब मक्का मुकर्रमा से हिजरत फ़रमा कर मदीना मुनव्वरा तशरीफ़ लाए तो आप (स.अ.व.) ने मुसलमानों की इज्तिमाओ़ी ईबादत के लिए एक मरकज़ की ज़रूरत महसूस की, चुनांचे आप (स.अ.व.) ने नमाज़ अदा करने के लिए एक मस्जिद की तामीर के लिए हुक्म फ़रमाया।

हज़रत अबूऐयूब अन्सारी (रज़ि.) के मकान के सामने एक नाहमवार ज़मीन का टुकड़ा था जो दरअस्ल नख़्लिस्तान था।

ये ज़मीन दो यतीम बच्चों "सहल" और "सुहैल" की मिलकियत थी। बच्चे हज़रत असअ़द इब्न ज़ुरारा (रज़ि.)

के ज़ेरे परवरिश थे। हुज़ूर अकरम (स.अ.व.) ने उन यतीम बच्चों से इरशाद फ़रमाया कि ये ज़मीन हमारे हाथ फ़रोख़्त कर दो। हम चाहते हैं कि यहां मस्जिद तामीर की जाए। उन यतीम बच्चों ने अर्ज़ किया या रसूलुल्लाह (स.अ.व.)! हम ये ज़मीन बिला मुआवज़ा आप की ख़िदमत में पेश करते हैं। मगर अल्लाह के रसूल (स.अ.व.) राज़ी नहीं हुए और ये ज़मीन दस दीनार में ख़रीद ली और ये दस दीनार हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि.) ने अदा किए।

चुनांचे आप (स.अ.व.) ने हुक्म दिया कि खजूर के दरख़्त काट दिए जाएें और टीलों को बराबर कर दिया जाए। चंद रोज़ तक उसी हालत में आप (स.अ.व.) ने नमाज़ अदा फ़रमाई। फिर उसकी तामीर का इंतिज़ाम फ़रमाया।

मस्जिदे नबीव (स.अ.व.) की बुनियाद आप (स.अ.व.) ने अपने दस्ते मुबारक से रखी। सहाबए किराम (रज़ि.) तामीरे मस्जिद के लिए पत्थर उठा कर लाते थे। आप (स.अ.व.) भी बनफ़्से नफ़ीस सहाबए किराम (रज़ि.) के साथ तामीरे मस्जिद में मसरूफ़ रहते। इब्तिदाए इस्लाम में क़िब्ला शुमाल की जानिब बैतुलमुक़द्दस की सिम्त था, सन दो हिजरी में तहवीले क़िब्ला का हुक्म आया तो कअबतुल्लाह को क़िब्ला मुक़र्रर किया गया।

मस्जिदे नबवी (स.अ.व.) की तामीर में खजूर के पत्ते इस्तेमाल हुए थे। बारिश होती थी तो छत टपकती थी और हुज़ूर अकरम (स.अ.व.) और जलीलुलक़द्र रुफ़क़ा उस गीली ज़मीन पर भी बारगाहे एज़दी में सज्दा रेज़ हो जाते।

तक़रीबन दस साल तक सरवरे काएनात (स.अ.व.) ने

उस मस्जिद में नमाज़ें अदा फ़रमाईं।

रियाजुलजन्नत

मस्जिदे नबवी का वह हिस्सा जो मिम्बर और क़ब्र शरीफ़ के दरमियान है वह रियाजुलजन्नत कहलाता है। उस मक़ाम के मुतअ़ल्लिक़ हुजूर (स.अ.व.) ने इरशाद फ़रमाया है कि जो जगह मेरे घर और मिम्बर के दरमियान है वह जन्नत के बाग़ों में से एक बाग़ है।

यानी ये जगह हक़ीक़त में जन्नत का एक टुकड़ा है जो इस दुनिया में मुन्तक़िल कर दिया गया है और क़यामत के दिन ये टुकड़ा जन्नत में शामिल हो जाएगा।

मेहराबुन्नबी (स.अ.व.)

इस रियाजुलजन्नत में हुजूर (स.अ.व.) का मुसल्ला भी है जहाँ आप (स.अ.व.) खड़े हो कर इमामत फ़रमाया करते थे। उस जगह अब ख़ूबसूरत मेहराब बनी हुई है, जो मेहराबे नबवी (स.अ.व.) कहलीती है।

हुजूर अक़्दस (स.अ.व.) के विसाल के बाद मुसल्लए रसूल जैसी मतबर्रक जगह की ताज़ीम को बरक़रार रखने की ग़रज़ से हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि.) ने हुजूर अक़्दस (स.अ.व.) की नमाज़ पढ़ने की जगह पर दीवार बनवा दी थी, अलबत्ता क़दम मुबारक की जगह छोड़ दी थी, ताकि आप (स.अ.व.) के सज्दा की जगह लोगों के क़दमों से महफ़ूज़ रहे। चुनांचे अब अगर कोई हाजी मुसल्लए रसूल के सामने खड़े हो कर नमाज़ पढ़े तो सज्दे में उसकी पेशानी हुजूर अक़्दस (स.अ.व.) के क़दमों की जगह होती है।

गुम्बदे ख़ज़रा

रौज़ए अक़्दस के ऊपर गुम्बद है, उस सब्ज़ गुम्बद

से नूर फूटता हुआ महसूस होता है जो अतराफ़ व अकनाफ़ को रौशन कर रहा है। उसके साथ ही मीनारे नूरे है। मुसलमान दुनिया में जहां कहीं भी हो, उसकी सब से बड़ी तमन्ना व आरज़ू यही होती है कि गुम्बदे खज़रा को एक नज़र देख ले, खुशनसीब हैं वह लोग जिन्हें बार बार उसे देखने की सआदत नसीब होती है।

सब से पहले 678 हिजरी में अल मलिकुलमन्सूर कलादिन सालेही के अहद में रौज़ए अक्दस पर गुम्बद (कुब्बा) बनाया गया। गुम्बद नीचे से मुरब्बअ़ और ऊपर से मुसम्मन (यानी आठ गोशा) था। दीवारों के सिरों पर लकड़ी की तख्तियाँ और उनके ऊपर सीसे की प्लेटे लगा दी गईं।

886 हिजरी में अल मलिक अशरफ़ क़ाइत बाई ने सनकर जमाली को मस्जिद की तामीर व मरम्मत की ख़िदमत अंजाम देने के लिए भेजा। सनकर जमाली ने रौज़ए अक्दस की दीवारों पर एक गुम्बद बनाया और उस गुम्बद के ऊपर एक दूसरा गुम्बद भी तामीर कराया। फिर उसके बाद एक बहुत बड़ा गुम्बद बनाया जिसने दोनों गुम्बदों को घेर रखा था, उन्होंने मस्जिद शरीफ़ की मरम्मत और छत में भी चंद और गुम्बद तामीर कराए। उस वक़्त रौज़ए अक्दस के गुम्बद का रंग सफ़ेद था और उसे कुब्बतुल बैज़ा के नाम से याद किया जाता था।

888 हिजरी में सुलतान क़ाइत बाई ने रौज़ए अक्दस की लकड़ी की मुबारक जालियों की जगह नई जालियाँ नुहासे अस्फ़र यानी पीतल की बेहद ख़ूबसूरत बनवाईं। उसमें रियाजुलजन्नत की तरफ़ (मग़रिब में) जो दरवाज़ा

बनवाया गया उसे बाबुर्रहमत या बाबुलवफूद कहा जाता है। क़िब्ला की जानिब रौज़ए अक़्दस में झरोका बनवाया गया और एक दरवाज़ा भी रखा। मश्रिक़ी सिम्त वाले दरवाज़े को बाबे फ़ातिमा (रज़ि.) और शुमाली दवाज़ा को बाबे तहज्जुद कहा जाता है। सुलतान ने रौज़ए अक़्दस के उस कच्चे फ़र्श को जिस पर हुज़ूर सरवरे कौनैन रहमतुललिलआलिमीन (स.अ.व.) के क़दम मुबारक पड़ चुके थे तबर्रुकन उसी हाल में रहने दिया।

सुलतान सुलैमान रूमी ने दसवीं सदी हिजरी के वस्त में रौज़ए अक़्दस का संगेमरमर का फ़र्श बनवाया जो अब तक मौजूद है। रौज़ए अक़्दस (मक़सूरा शरीफ़) का तूल शुमालन जुनूबन 16 मीटर यानी तक़रीबन 52 फ़िट और शरक़न व ग़रबन 15 मीटर यानी तक़रीबन 49 फ़िट हैं, चारों गोशों में संगेमरमर के बड़े बड़े सुतून हैं जिनकी बुलंदी छत के बराबर तक है।

980 हिजरी में सुलतान सलीम सानी ने रौज़ए अक़्दस का क़ाबिले रश्क गुम्बद बनवाया, उसे रंगीन पत्थरों से सजाया और फिर ज़रदोज़ी ने उसके हुस्न को और उजागर कर दिया, गुम्बद पर सब्ज़ रंग कराया, जब कि पहले गुम्बद का रंग सफ़ेद था उसी दिन से आशिक़ाने रसूल (स.अ.व.) उस बेनज़ीर कुब्बा मुबारक को गुम्बदे ख़ज़रा के नाम से याद करते हैं।

यहाँ एक बात याद रखने की हैं कि हुज़ूर पाक के मज़ारे मुबारक के सामने तीन जालियाँ हैं और तीनों में सूराख़ हैं। आम लोग बल्कि अक्सर अ़रब हज़रात भी इस ग़लतफ़हमी में मुब्तला हैं कि पहली जाली में हुज़ूर पाक

(स.अ.व.), दूसरी जाली में हज़रत अबूबक्र (रज़ि.) और तीसरी में हज़रत उम्र फ़ारूक़ (रज़ि.) आराम फ़रमा रहे हैं। हालांकि ऐसा नहीं है, बल्कि दरमियान वाली ही में तीनों आराम फ़रमा रहे हैं। दरमियान वाली जाली में एक गोल सूराख़ रखा गया है। ये आप (स.अ.व.) के चेहरा मुबारक के सामने है, उसी सूराख़ से थोड़ा हट कर हुजूर अकरम (स.अ.व.) का सीनए मुबारक है, जहाँ पर हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि.) का सर है, यहाँ भी एक गोल सूराख़ है जो हज़रत अबूबक्र के चेहरा मुबारक के सामने है और हज़रत अबूबक्र के सीने के पास हज़रत उमर फ़ारूक़ का सर है। उनके चेहरए मुबारक के सामने भी एक गोल सूराख़ बना हुआ है। गोया दरमियान की जाली में तीनों आराम फ़रमा रहे हैं।

जब आप दरमियान की जालियों के सामने खड़े होंगे तो उस जगह की पहचान ये है कि दरमियान की जाली में बाएँ हाथ पर एक गोल सूराख़ है। ये हुजूर (स.अ.व.) के चेहरए मुबारक के सामने है, उसके साथ ही मिला हुआ एक दरवाज़ा है जो बंद रहता है। उसके फ़ौरन बाद दाएँ हाथ की ही तरफ़ एक गोल सूराख़ है, ये हज़रत के चेहरए मुबारक के सामने है। (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

मस्जिदे नबवी के मख़्सूस सात सुतून

सतूने हनाना: ये मेहराबुन्नबी (स.अ.व.) के करीब है हुजूर अक़्दस (स.अ.व.) इस सुतून के पस खड़े हो कर खुत्बा इरशाद फरमाया करते थे। यहीं वह खजूर का तना दफ़्न है जो लकड़ी का मिम्बर बन जाने के बाद आप के फ़िराक़ (जुदाई) में बच्चों की तरह रोया था।

सतूने आइशा (रज़ि.): एक मरतबा हुज़ूर अक्दस (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि– "मेरी मस्जिद में एक ऐसी जगह है कि अगर लोगों को वहां नमाज़ पढ़ने की फ़ज़ीलत का इल्म हो जाए तो वह कुरआ अंदाज़ी करने लगें।" (तिबारानी) इस जगह की निशानदिही हज़रत आइशा (रज़ि.) ने फ़रमाई थी। सुतूने आइशा (रज़ि.) उसी मुकाम पर बना हुआ है।

सतूने अबूलुबाबा (रज़ि.): एक सहाबी हज़रत अबुलुबाबा (रज़ि.) से एक कुसूर हो गया था। उन्होंने अपने आपको यहां बने हुए सुतून से इस नीयत से बांध लिया था कि जब तक अल्लाह की जानिब से मेरा कुसूर मआफ़ नहीं होगा तब तक मैं अपने आपको इसी से बांध कर रखूंगा। चुनांचे एक मौका वह आया कि नबी करीम (स.अ.व.) ने अबूलुबाबा को उनके कुसूर की मआफ़ी की खुशख़बरी सुनाई। अब उसी मुकाम पर एक सुतून बना हुआ है जिसे सुतूने अबुलुबाबा कहते हैं।

सतूने सरीरः इस जगह नबीये अकरम (स.अ.व.) एतेकाफ़ फ़रमाते थे और रात को यहीं आप (स.अ.व.) के लिए बिस्तर बिछा दिया जाता था।

सतूने हर्सः इस मकाम पर हज़रत अली (रज़ि.) अक्सर नमाज़ पढ़ा करते थे और इस जगह बैठ कर सरकारे दो आलम (स.अ.व.) की पासबानी किया करते थे। इसको सुतूने अली (रज़ि.) भी कहते हैं।

सतूने वफ़ूदः इस जगह नबीये अकरम (स.अ.व.) बाहर से आने वाले वफ़ूद से मुलाकात फ़रमाते थे।

सतूने तहज्जुदः नबी करीम (स.अ.व.) इस जगह

तहज्जुद की नमाज़ अदा फ़रमाया करते थे।

ये तमाम सुतून मस्जिद के उस हिस्सा में हैं जो हुज़ूर अक्दस (स.अ.व.) के ज़माने में थी। इन सतूनों के पास जा कर दुआ, इस्तिग़फ़ार कीजिए और जब भी मौक़ा मिले उनके पास नवाफ़िल अदा कीजिए ये बड़े मुतबर्रक मक़ामात हैं।

असहाबे सुफ्फ़ा

"सुफ्फ़ा" साईबान को और सायादार जगह को कहा जाता है, क़दीम मस्जिदे नबवी के शुमाल मशरिक़ी किनारे पर मस्जिद से मिला हुआ एक चबूतरा था। ये जगह इस वक़्त बाबे जिब्राईल से अन्दर दाख़िल होते वक़्त मक़सूरा शरीफ़ के शुमाल में मेहराबे तहज्जुद के बिल्कुल सामने दो फ़िट ऊँचे कटहरे में घिरी हुई है, इसकी लम्बाई 40+40 फ़िट है इसके सामने ख़ुद्दाम बैठे रहते हैं और यहाँ लोग कुरआन पाक की तिलावत में मसरूफ़ रहते हैं अगर आप यहाँ बैठ कर तिलावत करना चाहें तो मुश्किल ही से जगह मिल सकेगी। यहाँ वह मुसलमान रहते थे जिनका कोई घरबार न था, न ही बीवी बच्चे और न कोई और। ये अह्ले सुफ़्फ़ा कहलाते थे, इसलिए इस जगह को "सुफ़्फ़ा" के नाम से याद करते हैं। ये लोग रसूलुल्लाह (स.अ.व.) से दीन की तालीम हासिल करते और वक़्तन फ़वक़्तन तबलीग़े इस्लाम के लिए दूसरे मक़ामात पर जाते थे। यूं तो तमाम सहाबा (रज़ि.) की ज़िन्दगी बहुत सादा थी, मगर असहाबे सुफ़्फ़ा की ज़िन्दगियों में और भी फ़क़्र व सादगी और दुनियावी चीज़ों से बेनियाज़ी और बेतअल्लुक़ी पाई जाती थी। ये लोग दिन रात तज़्कियए

नफ़्स और किताब व हिकमत के हुसूल की ख़ातिर फ़ैज़ाने मुस्तफ़वी से फ़ैज़याब होने के लिए ख़िदमते नबवी (स.अ.व.) में हाज़िर रहते थे। न उन्हें तिजारत से कोई मतलब था और न ज़राअत से कोई सरोकार। उन हज़रात ने अपनी आँखों को आप (स.अ.व.) के दीदार, कानों को आप के कलिमात और जिस्म व जान को आपकी सोहबत के लिए वक़्फ़ कर रखा था। ये लोग दीन की दौलत से माला माल थे, मगर दुनियावी ज़िन्दगी में इफ़लास व नादारी का ये आलम था कि हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि.) फ़रमाते हैं–

"मैंने सत्तर अस्हाबे सुफ़्फ़ा को देखा जिनके पास चादर तक नहीं थी, सिर्फ़ तहबंद था या फ़क़त कम्बल, चादर को गले में इस तरह बांध कर लटका लेते कि वह पिंडलियों तक और बाज़ के घुटनों तक पहुंच जाती थी और हाथ से उसे थामे रखते कि कहीं सत्र खुल न जाए।"

(बुख़ारी शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–63)

ज़ियारते रौज़ए मुक़द्दसा के फ़ज़ाइल

हज़रत सैयदुलमुरसलीन की ज़ियारत सरमायए सआ़दते दुनिया व आख़िरत है और अह्ले ईमान की मुहब्बत का मक़सदे अस्ली और हक़ीक़ी ग़ायत, उसके फ़ज़ाईल ब्यान करने की चंदा हाजत नहीं। मगर उस बारगाहे रहमत व करामत की फ़ैयाज़ी का मुक़्तज़ा है कि जो लोग आस्तानए आ़ली की ज़ियारत के लिए जाते हैं उनके लिए अलावा उस दौलते बेबहा यानी दीदारे जमाले बेमिसाल, रौज़ए सरवरे अंबिया के और भी बड़े बड़े आला मदारिज का वादा किया गया है, नमूना के तौर पर दोचार हदीसें लिखी जाती हैं।

❑ नबी करीम (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि जो शख़्स मेरी ज़ियारत के लिए आए और मेरी ज़ियारत के सिवा उसको कोई काम न हो तो मेरे ऊपर ज़रूरी है कि मैं क़यामत के दिन उसकी शफ़ाअ़त करूँ।

❑ नबी करीम (स.अ.व.) ने फ़रमाया है कि जो शख़्स हज करे, फिर बाद मेरी वफ़ात के मेरी क़ब्र की ज़ियारत करे वह मिस्ल उस शख़्स के होगा जिसने मेरी ज़िन्दगी में मेरी ज़ियारत की।

❑ नबी करीम (स.अ.व.) ने फ़रमाया है कि जो शख़्स क़स्द कर के मेरी ज़ियारत को आए, वह क़यामत के दिन मेरे पड़ोस में होगा। और जो शख़्स हरमैन में से किसी मक़ाम में मर जाएगा उसको अल्लाह क़यामत के दिन बेख़ौफ़ लोगों में उठाएगा।

❑ नबी करीम (स.अ.व.) ने फ़रमाया है कि जो शख़्स बाद वफ़ात मेरी ज़ियारत करेगा, गोया उसने मेरी ज़िन्दगी में मेरी ज़ियारत की। और जिसने मेरी क़ब्र की ज़ियारत की उसके लिए क़यामत के दिन मेरी शफ़ाअ़त वाजिब हो गई, और मेरी उम्मत में जिस किसी को मक़्दूर हो फिर वह मेरी ज़ियारत न करे तो उसका कोई उज़्र नहीं। (सुना जाएगा)।

हज़रत इब्न उमर की आदत थी कि जब किसी सफ़र से आते तो सब से पहले रौज़ए मुक़द्दस पर हाज़िर हो कर जनाबे नबवी (स.अ.व.) में सलाम अर्ज़ करते।

हज़रत उमर इब्न अब्दुलअ़ज़ीज़ मुल्के शाम से मदीना मुनव्वरा क़ासिद भेजा करते थे, इसलिए कि वह उनका सलाम बारगाहे रिसालत में पहुंचाए।

इसी क़िस्म की और भी बहुत सी रिवायतें हैं जिनसे मालूम होता है कि सहाबा और ताबईन इस ज़ियारत पर कैसे दिलदादा थे और उसके लिए कितना एहतेमाम करते थे और दरहक़ीक़त मोमिन के लिए हक़ सुब्हानहू के दीदार के बाद उससे ज़ियादा और कोन सी दौलत और नेमत हो सकती है कि वह अपनी आँखों से उस क़ुब्बए नूर की ज़ियारत करे और सरकारे दो जहाँन की ख़िदमत मे सलाम अर्ज़ करे और उसके जवाब से मुशर्रफ़ हो।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–5 सफ़्हा–85)

❑❑❑

रौज़ए अक़्दस (स.अ.व.) की ज़ियारत का तरीक़ा

हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा (स.अ.व.) की क़ब्र की ज़ियारत बिला शुब्हा कुर्बे इलाही का बहुत बड़ा ज़रीआ है और मुहतमम बिश्शान अमल है। हक़ीक़त ये है कि वह अर्ज़े पाक जहाँ पर ख़ैरुर्रुसुल सरवरे अंबिया (स.अ.व.) का मर्क़द है अल्लाह के नज़दीक उसे ऐसी एक ख़ास अहमियत और बरतरी हासिल है जिसे मअरज़े तहरीर में नहीं लाया जा सकता। मज़ीद बराँ ज़ियारते क़ुबूर का अस्ल मक़्सद आख़िरत के तसव्वुर का ताज़ा करना है, चुनांचे अहादीसे सहीहा में क़ब्रों की ज़ियारत करने की इजाज़त बसराहत आई है, ताकि इंसान उससे इबरत हासिल कर सके और आख़िरत की याद आए। बस अगर ज़ियारते क़ब्र का मक़्सद सही मानों में वही है जो शारेअ़ अलैहिस्सलाम ने बताया है तो बहरहाल वह अम्र मुस्तहसन होगा और ये अम्र तो ज़ाहिर है कि आंहज़रत (स.अ.व.) की क़ब्र की ज़ियारत से अह्ले दिल पर जितना असर होता है वह और दूसरी इबादतों से बहुत ज़्यादा है। पस जो शख़्स हुज़ूर (स.अ.व.) की क़ब्र के सामने पहुंच कर इस अम्र का तसव्वुर करे कि आप (स.अ.व.) को दावते हक़ देने और लोगों को शिर्क के अंधेरे में हिदायत की रौशनी दिखाने की राह में कैसे कैसे हालात से दो चार होना पड़ा और किस तरह

आप (स.अ.व.) को दुनिया में अख़्लाके फ़ाज़िला के फैलाने और दुनिया भर की बुराईयों को मिटाने और एक ऐसी शरीअत की तबलीग़ के लिए जिसकी बुनियाद तमाम बनी नौअ़ इंसान की इज्तिमाई बहबूद के हुसूल और बुराईयों का क़लअ़ क़मअ़ करने के लिए रखी गई है, कैसी कैसी मुश्किलात का सामना हुआ .तो यक़ीनन दिलों में उस रसूल (स.अ.व.) की मुहब्बत जा गुज़ीं हो जाएगी, जिसने अल्लाह की राह में जिहाद का हक़ अदा किया, तो ज़रूर है कि ऐसे आमाल के बजा लाने की रग़बत होगी जिनका हुज़ूर (स.अ.व.) ने हुक्म दिया और लामुहाल अल्लाह और उसके रसूल की नाफ़रमानी पर शर्मसार होगा और इतना हो जाए तो उसको बड़ी कामियाबी कहना चाहिए।

यक़ीनन आंहज़रत (स.अ.व.) की क़ब्र की ज़ियारत और नुज़ूले वह्य की सरज़मीन के मुशाहदा और ऐसे मुख़्लिस नेकूकारों के मज़ार पर हाज़िरी से जिन्होंने दीने हक़ की हिमायत में अपनी जान और अपने माल को अल्लाह की राह में कुर्बान किया, बग़ैर इसके कि उन्हें हुकूमत का शौक़ हो या उनका दिल हयाते दुन्यवी की लज़्ज़तों और दिल फ़रेबियों की जानिब राग़िब हो, बल्कि वह अपनी दौलते फ़रावाँ और ऐशे बेअंदाज़ को तर्क कर के अल्लाह की राह में और उसकी ख़ुशनूदी की ख़ातिर आदाए दीन के मुक़ाबले और दीन की हिमायत के लिए निकल पड़े उनकी पाएदार याद ताज़ा होती है और अल्लाह का कुर्ब हासिल होता है। इससे ज़ियारत करने वालों के दिलों को एक कारगर नसीहत हासिल होती है और इंसान इन बुज़ुर्गाने दीन के क़ौल व फ़ेल की पैरवी पर आमादा हो

जाता है।

अगर मुसलमान हक़ीक़ी मानों में उस तरीक़े अमल को इख़्तियार करें जो उन क़ब्रों में आराम करने वालों ने इख़्तियार किया था, जिनके कारनामों ने रोम व फ़ारस की सलतनतों को ज़क पहुंचाया, तो उन्हें नुमायाँ तक्वियत हासिल हो। हर चंद कि आज मुसलमानों की माद्दी क़ूवत दुश्मनाने इस्लाम के मुक़ाबिला में क़ाबिले ज़िक्र नहीं है ताहम मुस्लिम क़ौम एक ऐसी अहमियत की हामिल है जिसका मुक़ाबला कोई क़ौम नहीं कर सकती।

ग़रज़ आंहज़रत (स.अ.व.) की क़ब्र की ज़ियारत और हुज़ूर (स.अ.व.) के नेकूकार अस्हाब (रज़ि.) के मज़ारात (पर हाज़िरी) तक़र्रुबे इलाही का एक बड़ा ज़रीआ और ख़ुलूसे नीयत से अमल करने वालों के दिल पर जो ख़ुदाए वाहिद के परस्तार और ख़ुदा व रसूल (स.अ.व.) के अहकाम पर अमल करने और ममनूआत से बाज़ रहने वाले बामुराद लोग हैं, निहायत गहरा असर डालते हैं। पस जबकि क़ब्रे रसूल (स.अ.व.) की ज़ियारत बजाए ख़ुद एक बेहतरीन पंद और गहरे तअस्सुर का मूजिब हो तो उसे बेहतरीन आमाले सालिहा में से क़रार देने के लिए काफ़ी है। इसलिए दीने हनीफ़ ने इसकी रग़बत दिलाई है। फिर वह मुसलमान जिसे हज्जे बैतुल्लाह की तौफ़ीक़ हुई और जो क़ब्रे नबवी (स.अ.व.) पर हाज़िर होने के क़ाबिल है, अगर ज़ियारत से महरूम रहे तो उसके दिल को क़रार व सुकून किस तरह हासिल हो सकता है, और ये कैसे मुमकिन है कि एक मुसलमान मक्का में यानी महबते वह्य शहरे मदीना के क़रीब हो और उसके दिल में मदीना पहुंचने और

मज़ारे नबवी (स.अ.व.) की ज़ियारत का शौक़ रह रह कर न उभरता हो।

वाज़ेह हो कि फ़ुक़हा ने नबी (स.अ.व.) की क़ब्र मुबारक और दूसरी मसाजिद के लिए मुन्दरजा ज़ैल आदाब ज़ियारत मुक़र्रर किए हैं। उन्होंने बताया है कि जब कोई शख़्स ज़ियारत नबवी (स.अ.व.) के लिए जाने का इरादा करे तो तमाम रास्ते कसरत से सलाम और दुरूद पढ़ता हुआ जाए, और मक्का से मदीना को जाए तो जब मदीना मुनव्वरा की फ़सील नज़र आए तो हुजूर (स.अ.व.) पर दुरूद व सलाम भेजे और यूँ कहे–

"اَللّٰهُمَّ هٰذا حرم نبيک فاجعله وقاية لی من
النار و اماناً من العذاب وسوء الحساب."

"बारेइलाहा ये तेरे नबी का हरम है, इसकी बरकत से मुझे नारे जहन्नम से बचा ले, नीज़ अ़ज़ाब और सख़्त मुहासबा से अमान में रख।" और चाहिए कि मदीने में दाख़िल होने से पहले और मौक़ा हो तो फिर दाख़िल होने के बाद गुस्ल करे और ख़ुशबू लगाए और अपना बेहतरीन लिबास ज़ेबतन करे और मदीने में आजिज़ी, सुकून और वक़ार के साथ दाख़िल हो। अगर जगह व मौक़ा हो तो हुजूर (स.अ.व.) के मिम्बर के पास दो रकअ़त नमाज़ पढ़े, (नमाज़ के लिए) इस तरह खड़ा होना चाहिए कि मिम्बर का सुतून दाऐं शाने के महाज़ में हो। हुजूर (स.अ.व.) उस जगह खड़े होते थे। ये जगह क़ब्र शरीफ़ और मिम्बर के दरमियान है। (वरना जहां भी जगह मिले तो दो रकअ़त शुक्राना की पढ़े) फिर अल्लाह तआ़ला ने (यहां तक पहुंचने की) तौफ़ीक़ जो अता फ़रमाई उसका सज्दए शुक्र बजा

लाए और जो दिल चाहे दुआ मांगे। फिर वहां से चल कर आंहज़रत (स.अ.व.) की क़ब्र की जानिब आए और हुज़ूर (स.अ.व.) के सरहाने की तरफ़ क़िब्ला रू हो कर खड़ा हो, फिर क़ब्र के तीन चार हाथ के फ़ासिला पर पहुंच जाए, इससे आगे न बढ़े, और क़ब्र की दीवार पर हाथ न रहे और इस तरह आदब से खड़ा हो जैसे नमाज़ में खड़े होते हैं, और वहां पर हुजूर (स.अ.व.) की शक्ल मुबारक का तसव्वुर करे, कि गोया वह अपने मरक़द में सो रहे हैं और गोया उसकी मौजूदगी को जानते हैं और उसकी बात सुन रहे हैं फिर कहे–

"السلام علیک یا نبی اللّٰہ و رحمۃ اللّٰہ وبرکاتہ، اشھد
انک رسول اللّٰہ فقد بلغت الرسالۃ و ادیت الامانۃ."

"यानी अस्सलामु अलै–क या नबीयल्लाह व रहमतुल्लाहि व बरकातुहू, मैं इस अम्र का गवाह हूं कि बिला शुब्हा आप (स.अ.व.) अल्लाह के रसूल हैं। आप (स.अ.व.) ने हक़्के रिसालत पूरा कर दिया और अल्लाह की अमानत अदा कर दी।"

या अल्लाह! क़ब्रे नबी अलैहिस्सलाम पर हमारी इस हाज़िरी को आख़िरी मौक़ा न बना, बल्कि ऐ जुलजलाल वल इकराम हमें फिर वापस आने की तौफ़ीक़ अता फ़रमा। और इस दुआ के वक़्त न आवाज़ बहुत ऊँची करे और न बिल्कुल धीमी हो, इसके बाद उसका सलाम पहुंचाया जाए जिसने अपना सलाम पहुंचाने की दरख़्वास्त की हो। उसके लिए यूं कहना चाहिए–

"السلام علیک یا رسول اللّٰہ من فلان ابن فلان
یستشفع بک الی ربک فاشفع لہ و لجمیع المؤمنین."

"यानी ऐ रसूलुल्लाह! आप पर फ़लाँ इब्न फ़लाँ की जानिब से सलाम हो। वह आप के परवरदिगार की बारगाह में आप की शफ़ाअत का तालिब है। पस उसकी और तमाम मुसलमानों की शफ़ाअत फ़रमाइये।" फिर जिधर हुज़ूर (स.अ.व.) का चेहरा है उस तरह क़िब्ला की जानिब पुश्त कर के खड़ा हो और जौन सा दुरूद चाहे पढ़े और फिर कोई हाथ भर हट कर हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि.) के सर के सामने जाए और तब ये कहे–

"السلام علیک یا خلیفة رسول اللہ، السلام علیک یا
صاحب رسول اللہ فی الغار، السلام علیک یا رفیقه فی الاسفار."

"यानी ऐ ख़लीफ़ए रसूल (स.अ.व.) आप पर सलाम हो। ऐ ग़ार में रसूलुल्लाह (स.अ.व.) का साथ देने वाले आप पर सलाम और हुज़ूर (स.अ.व.) के शरीके सफ़र रहने वाले आप पर सलाम हो।" इसके बाद वहाँ से हट कर हज़रत उमर (रज़ि.) की क़ब्र की तरफ़ आना चाहिए, वहाँ पर यूँ कहना चाहिए–

"السلام علیک یا امیر المؤمنین، السلام علیک یا
مظهر الاسلام، السلام علیک یا مکسر الاصنام،
جزاک اللہ عنا افضل الجزاء ورضی اللہ عنه."

"यानी ऐ अमीरुलमोमिनीन आप पर सलाम हो, ऐ इस्लाम के पुश्तपनाह आप पर सलाम हो, ऐ बुतों को तोड़ने वाले आप पर सलाम हो। अल्लाह तआला हमारी तरफ़ से आपको बेहतरीन अज्र अ़ता फ़रमाए और उससे राज़ी हो जिसने आपको ख़लीफ़ा बनाया।"

उसके बाद जो दुआ याद हो वह करे और जो जी चाहे दुआ माँगे।

ज़ियारते क़ब्रे नबवी (स.अ.व.) से फ़ारिग़ हो कर (क़ब्रस्तान) बक़ीअ की जानिब जाना और क़ब्रों व मज़ारात पर हाज़िर होना चाहिए। यहाँ पर हज़रत अब्बास (रज़ि.), हज़रत हसन इब्न अली (रज़ि.) हज़रत ज़ैनुलआबिदीन (रज़ि.) उनके फ़रज़ंद मुहम्मद बाक़र और उनके बेटे जाफ़र सादिक़, अमीरुलमोमिनीन सैयदना, उस्मान (रज़ि) और नबी (स.अ.व.) के फ़रज़ंद इब्राहीम (रज़ि.) और मुतअ़द्दद अज़वाजे नबी (स.अ.व.) और आप (स.अ.व.) की फूफी सफ़ीया (रज़ि.) नीज़ दूसरे बहुत से सहाबा (रज़ि.) व ताबईन (रह.) बिलख़ुसूस इमाम मालिक (रह.) और सैयदना नाफ़ेअ़ (रह.) के मज़ारात की ज़ियारत की जाए, और मुस्तहब ये है कि जुमेअ़रात के रोज़ शोहदाए उहुद बिलखुसूस सैयदुश्शोहदा सैयदना हमज़ा (रज़ि.) के मज़ार की ज़ियारत की जाए और वहां पर कहे–

"سلام علیکم بما صبرتم فنعم عقبی الدار، سلام علیکم
دار قوم مؤمنین وانا ان شاء اللہ بکم لاحقون."

"यानी ऐ अह्ले क़ुबूर! वह सब्र व इस्तिक़ामत जिसका तुम ने मुज़ाहरा किया उस पर तुम्हें सलाम हो, दारे आख़िरत कैसी अच्छी जगह है। ईमान वालों की इस इक़ामतगाह पर सलाम हो हम भी इंशाअल्लाह तुम से मिलने वाले हैं।" यहां पर आयतुल कुर्सी और सूरए इख़लास "قل ھو اللہ احد" पढ़नी चाहिए और हफ़्ता के रोज़ मस्जिदे क़ुबा पर आना मुस्तहब है।

मुस्तहब ये है कि जब तक मदीना में रहना हो तमाम नमाज़ें मस्जिदे नबवी (स.अ.व.) में अदा की जाएं और जब अपने शहर में वापसी का इरादा हो तो दो रकअ़त नमाज़

वदाए मस्जिद में अदा की जाए और जो मुराद हो उसके लिए दुआ माँगी जाए और फिर हुजूर (स.अ.व.) की क़ब्र पर आ कर दुआऐं माँगे। अल्लाह दुआओं का क़बूल करने वाला है। (आमीन)

(किताबुलफ़िक्ह अललमज़ाहिबिलअरआ जिल्द–1 सफ़्हा–1180)

और ये तसव्वुर और ख़्याल करते हुए कि मैं बारगाहे आली मक़ाम में हाज़िर हूँ कि आक़ा (स.अ.व.) मेरी गुज़ारिश बनफ़्से नफ़ीस सुन रहे हैं। पूरे अदब के साथ हल्की आवाज़ से सलात व सलाम का नज़राना पेश करे और शफ़ाअत की दरख़्वास्त पेश करे। सलात व सलाम के सेगे मुख़्तसर भी हैं और तवील भी, जिस तरह का ज़ौक़ हो उसे इख़्तियार करे, अलबत्ता आम लोगों के लिए मुख़्तसर सलाम बेहतर होगा।

الصلوٰة والسلام علیک یا رسول اللہ

"ऐ अल्लाह के रसूल आप पर दुरूद व सलाम"

الصلوٰة والسلام علیک یا حبیب اللہ

"ऐ अल्लाह के महबूब आप पर दुरूद व सलाम"

الصلوٰة والسلام علیک یا خیر خلق اللہ

"ऐ अल्लाह के मख़लूक़ में सब से बेहतर आप पर दुरूद व सलाम"

السلام علیک ایها النبی و رحمة اللہ و برکاته

"ऐ अल्लाह के नबी आप पर सलाम और अल्लाह की रहमत और उसकी बरकतें"

मदीना मुनव्वरा में क़याम के एक एक लम्हा को ग़नीमत समझा जाए, जिस क़दर हो सके ताअत व इबादत में

सर्फ करे। हर नमाज़ जमाअत के साथ मस्जिदे नबवी (स.अ.व.) में अदा करे, बल्कि कोशिश करे कि रियाज़ुलजन्ना या उस हिस्से में पढ़े जो हुज़ूरे अक़्दस (स.अ.व.) के ज़माना में मस्जिद थी। दुरूद शरीफ़ का विर्द हर वक़्त जारी रखे, कसरत के साथ रौज़ए अक़्दस पर हाज़िरी देता रहे और सलाम अर्ज़ करता रहे क्योंकि फिर ये दौलत कहाँ नसीब होगी और ज़्यादा से ज़्यादा वक़्त मस्जिदे नबवी (स.अ.व.) में गुज़ारे।

अक्सर हुजूम की वजह से मुवाजहा शरीफ़ में पहुंच कर सुकून व इत्मीनान से सलात व सलाम और अर्ज़ व मनाजात का मौक़ा नहीं मिल पाता है। अलबत्ता तजरबा के मुताबिक़ मुन्दरजा ज़ैल तीन औक़ात में इसका मौक़ा मिल सकता है। (1) इशा के तक़रीबन एक घंटा बाद। (2) फ़ज्र के डेढ़ घंटा बाद। (3) जुहर के एक घंटा बाद।

अगर मवाजहा शरीफ़ में इत्मीनान व सुकून के साथ सलात व सलाम का मौक़ा न मिल सके तो मस्जिदे नबवी (स.अ.व.) में जिस जगह से बसहूलत हो सके सलात व सलाम और दुरूद शरीफ़ का विर्द रखे।

मदीना मुनव्वरा में क़याम के दौरान हर नमाज़ के बाद कोशिश करे कि अहादीस मुबारका में वारिद शुदा दुरूद व सलाम के चालीस सेगे एक बार पढ़ ले। इंशाअल्लाह उसके बहुत फ़वाइद महसूस करेगा। या नमाज़ में पढ़े जाने वाला दुरूद शरीफ़ ही पढ़ता रहे।

"आप से इल्तिजा है कि आप जब रौज़ए अक़्दस (स.अ.व.) पर अपना और अपने अक़ारिब व अहबाब का दुरूद व सलाम पेश फ़रमाएं

तो इस गुनहगार का दुरूद व सलाम भी पहुंचा दें। जो शख़्स मेरे सलाम व दुरूद को मेरे आक़ा तक पहुंचाए अल्लाह तआला उसको जज़ाए ख़ैर फ़रमाए। आमीन!"

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

मदीना मुनव्वरा की दीगर ज़ियारतगाहें

जन्नतुलबक़ीअ: मदीना तैयबा में मस्जिद शरीफ़ और रौज़ए मुक़द्दसा के बाद सब से अहम मक़ाम वहाँ का क़दीमी क़ब्रस्तान जन्नतुलबक़ीअ है जो हरमे नबवी से बहुत थोड़े फ़ास्ले पर है उसमें अक्सर अज़वाजे मुतह्हरात, बनाते ताहिरात और अहले बैते नुबूवत, जलीलुलक़द्र सहाबए किराम, ताबईन, तबअ ताबईन, बेशुमार अइम्मए एज़ाम और औलियाए किराम मह्वे इस्तिराहत हैं। अहलेबक़ीअ में सब से अफ़ज़ल उस्मान ग़नी (रज़ि.) का मर्क़द है। उम्मुलमोमिनीन हज़रत ख़दीजा (रज़ि.) और हज़रत मैमूना (रज़ि.) को छोड़ कर बाक़ी तमाम अज़वाजे मुतह्हरात उसी जन्नतुलबक़ीअ में मदफून हैं।

हुज़ूर अकरम (स.अ.व.) की दाई हलीमा सअदिया (रज़ि.) और हुज़ूर (स.अ.व.) के साहबज़ादे सैयदना इब्राहीम (रज़ि.), हज़रत फ़ातिमतुलज़्ज़हरा और हुज़ूर (स.अ.व.) की दीगर साहबज़ादियाँ, हज़रत सैयदना अब्बास (रज़ि.), हज़रत सैयदना इमाम हसन (रज़ि.), सैयदना अली इब्न हुसैन (ज़ैनुलआबिदीन "रज़ि.") इमाम बाक़र (रज़ि.), हुज़ूर (स.अ.व.) के रज़ाई भाई हज़रत उस्मान इब्न मज़ऊन (रज़ि.), हुज़ूर (स.अ.व.) की फूफी हज़रत सफ़ीया (रज़ि.), हज़रत अली की वालिदा फ़ातिमा बिन्ते असद (रज़ि.), अब्दुर्रहमान इब्न

औफ़ (रज़ि.), फ़ातेहे इराक़ सअद इब्न वक़ास (रज़ि.), अक़ील इब्न अबी तालिब (रज़ि.), अब्दुल्लाह इब्न मसऊद (रज़ि.) और साहबे मज़हब इमाम मालिक (रह.) इसी जन्नतुलबक़ीअ में आराम फ़रमा हैं।

जबले उहुदः उहुद वह पहाड़ है जिसके मुतअ़ल्लिक़ रसूले मक़बूल (स.अ.व.) ने फ़रमाया– "نحبه ويحبنا" (हम को उससे मुहब्बत है और उसको हम से मुहब्बत है)। इसी पहाड़ के दामन में जंगे उहुद शव्वाल 3 हिजरी में हुई थी जिसमें आंहज़रत (स.अ.व.) खुद शदीद ज़ख़्मी हुए थे और तक़रीबन सत्तर जाँ निसार सहाबा शहीद हुए थे। जिनमें आप (स.अ.व.) के चचा हज़रत हमज़ा (रज़ि.) भी थे। ये सब शुहदाए किराम यहीं मदफून हैं। रसूलुल्लाह (स.अ.व.) एहतेमाम से यहाँ तशरीफ़ लाते और इन शहीदों को सलाम व दुआ से नवाज़ते थे। मुतअ़द्दद रिवायतों से साबित है कि हज़रत अबूबक्र और हज़रत उमर भी यहां तशरीफ़ लाया करते थे। लिहाज़ा कम अज़ कम एक मरतबा यहाँ हाज़िरी ज़रूर दें और शुहदाए किराम को मसनून तरीके से सलाम अर्ज़ कर के उनके लिए अल्लाह तआ़ला से मग़फ़िरत व रहमत की दुआ कीजिए और अल्लाह व रसूल के साथ सच्ची वफ़ादारी और दीन पर अपनी इस्तिक़ामत की दुआ अपने लिए माँगिये।

मदीना मुनव्वरा की मसाजिद

फ़ज़ीलते मस्जिदे क़ुबाः अल्लाह तआ़ला ने इस मस्जिद को कुरआन मजीद में ज़िक्र फ़रमाया–

"لمسجد أسس على التقوىٰ من اوّل يوم احق ان تقوم فيه" (سورہ توبه)

तर्जुमाः जो मस्जिद अव्वल रोज़ से तक़वा पर क़ाइम

की गई थी वही इसके लिए ज़्यादा मौज़ूं है कि आप इसमें इबादत के लिए खड़े हों।

हदीस शरीफ़ में इसकी फ़ज़ीलत को इमाम बुख़ारी (रह.) ने इब्न उमर (रज़ि.) से रिवायत किया है कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) हफ़्ता के रोज़ पैदल या सवार हो कर मस्जिदे कुबा तशरीफ़ लाते और दो रकअ़त नमाज़ अदा फ़रमाते थे। आप (स.अ.व.) का इरशादे मुबारक है कि जो शख़्स घर में वुजू कर के मस्जिदे कुबा आए और दो रकअ़त नमाज़ अदा करे उसको उम्रा जितना सवाब मिलेगा।

मस्जिदे कुबा: मदीना मुनव्वरा से तीन मील के फ़ासिले पर जो आबादी है उसे कुबा कहा जाता है, यहाँ अन्सार के बहुत से ख़ानदान आबाद थे, उनमें अमर इब्न औफ़ का ख़ानदान भी था। उस ख़ानदान के सरबराह कुलसूम इब्न हदम थे। आप (स.अ.व.) ने कुबा में चार दिन क़याम फ़रमाया। ये शर्फ़ उसी ख़ानदान के मुक़द्दर में लिखा था।

क़यामे कुबा के दरमियान तारीख़े इस्लाम के ज़रीं बाब की तामीर मस्जिद जैसे मुक़द्दस शाहकार से शुरू किया गया। हज़रत कुलसूम इब्न हदम की एक दूर उफ़्तादा ज़मीन जहाँ खजूरें ख़ुश्क की जाती थीं। उसी मुबारक क़िताअ़ए ज़मीन पर आप (स.अ.व.) ने अपने दस्ते हक़ परस्त से मस्जिदे कुबा की बुनियाद रखी। मस्जिद की तामीर में मज़दूरों के साथ शाहे कौनैन (स.अ.व.) भी मसरूफ़ेकार रहे, भारी और वज़नी पत्थर उठाते, अक़ीदत मंद आते और अर्ज़ करते "या रसूलुल्लाह! (स.अ.व.) आप पर हमारे माँ बाप कुर्बान जाएं, आप छोड़ दें, हम उठाऐंगे।

आप (स.अ.व.) उनकी दरख़्वास्त को शर्फ़े कबूलियत से नवाज़ते हुए छोड़ देते, मगर फिर भी उसी वज़न का दूसरा पत्थर उठा लेते। इस्लाम की तारीख़ में यही मस्जिद सब से पहले तामीर हुई है।

मस्जिदे जुमा: इस मस्जिद के दो नाम और हैं, मस्जिदे अलवादी और मस्जिदे आतिका, ये मस्जिद मदीना तैयबा से कुबा जाते हुए रास्ता में मिलती है। हुज़ूर (स.अ.व.) जब कुबा से मदीना तैयबा तशरीफ़ ला रहे थे तो आप (स.अ.व.) ने उस जगह पर पहली नमाज़े जुमा पढ़ी थी। उस जगह मस्जिद बना दी गई है जो मस्जिदे जुमा कहलाती है।

मस्जिदे मुसल्ला: मदीना तैयबा से ग़रबी जानिब ये ईदगाह है। यहाँ हुज़ूर (स.अ.व.) ईदैन की नमाज़ अदा फ़रमाते थे इसको मस्जिदे अमामा भी कहते हैं।

मस्जिदे अबूबक्र (रज़ि.): ईदगाह के शुमाली जानिब एक मस्जिद है जिसमें बाज़ रिवायात में हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि.) का उस जगह नफ़्ल पढ़ना और बाज़ रिवायात में अपने ज़मानए ख़िलाफ़त में यहाँ नमाज़ पढ़ना मरवी है।

मस्जिदे अली (रज़ि.): ये मस्जिद भी ईदगाह से क़रीब एक वसीअ मस्जिद है। यहाँ हज़रत अली (रज़ि.) का ईदैन की नमाज़ पढ़ना मरवी है।

मस्जिदे बग़ला: इस मस्जिद का दूसरा नाम बनू ज़फ़र है। ये मस्जिद जन्नतुलबक़ीअ के पूरब में है। इस मस्जिद के पास एक पत्थर है उसके मुतअ़ल्लिक़ एक रिवायत है कि उस पर सरवरे काइनात (स.अ.व.) के ख़च्चर के सुम

का निशान है इसी वजह से उसको मस्जिदे बग़ला कहते हैं।

मस्जिदे अलइजाबा: ये मस्जिद जन्नतुलबक़ीअ के उत्तर जानिब है। बनू मुआविया इब्न मालिक जो औस के एक क़बीला के थे उनकी मस्जिद है। यहाँ हुज़ूर (स.अ.व.) एक दिन तशरीफ़ लाए और नमाज़ अदा की और देर तक दुआ करते रहे जो मक़्बूल हुई।

मस्जिदे सुक़्या: हुज़ूर अकरम (स.अ.व.) ने बदर जाते हुए यहाँ नमाज़ अदा फ़रमाई थी।

मस्जिदे अहज़ाब (फ़त्हे आला): ये मस्जिद सिल्अ़ पहाड़ी के पच्छिमी किनारे पर वाक़ेअ है, ग़ज़वए ख़नदक़ के मौक़ा पर तीन दिन मुसलसल कुफ़्फ़ार पर फ़त्ह पाने की हुज़ूर अकरम (स.अ.व.) ने यहाँ दुआ फ़रमाई। चौथे रोज़ दुआ क़बूल हुई और फ़त्ह नसीब हुई। इसी वजह से उसको मस्जिदे फ़त्ह भी कहते हैं। उसी के क़रीब पाँच मस्जिदें और हैं। मस्जिदे अबूबक्र, मस्जिदे उमर, मस्जिदे उस्मान, मस्जिदे अली और मस्जिदे सलमान फ़ारसी रज़ियल्लाहु अलैहिम अजमईन। ये छः मस्जिदें (मस्जिद सित्ता) कहलाती हैं। ये मस्जिदें ग़ालिबन उन मक़ामात पर हैं जहाँ सहाबए किराम जंगे अहज़ाब में मूरचा पर मुतऐयन थे।

मस्जिदे बनी हराम: मदीनए मुनव्वरा से मस्जिदे अहज़ाब जाते हुए दाहिनी तरफ़ है, यहाँ रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने नमाज़ पढ़ी है, इसके क़रीब एक ग़ार है जिसको कहफ़े बनू हराम कहते हैं। इस ग़ार में जंगे ख़न्दक़ के मौक़ा पर हुज़ूर अकरम (स.अ.व.) रात को आराम फ़रमाते थे। इस ग़ार में हुज़ूर (स.अ.व.) पर वह्य

भी नाज़िल हुई थी।

मस्जिदे ज़बाबः ये मस्जिद जबले ज़बाब पर है, जंगे ख़न्दक़ के मौक़ा पर इस जगह हुज़ूर (स.अ.व.) का ख़ेमा नसब हुआ था और उस जगह आप (स.अ.व.) ने नमाज़ भी पढ़ी थी।

मस्जिदे क़िब्लतैनः मदीना मुनव्वरा के शुमाल व ग़र्ब में वादिये अक़ीक़ के क़रीब वाक़ेअ़ है। इसमें दो मेहराब बनी हुई हैं। इसमें एक मेहराब बैतुलमुक़द्दस की तरफ़ और दूसरी ख़ानए कअ़बा की जानिब बनी हुई है। आंहज़रत (स.अ.व.) एक मरतबा वहां तशरीफ़ ले गए और जुहर का वक़्त हो गया, आप नमाज़ पढ़ा रहे थे कि ये आयत नाज़िल हुई– "فَوَلِّ وَجْهَكَ شَطْرَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ" (अब आप अपना चेहरा मस्जिदे हराम की तरफ़ किया कीजिए।)

मस्जिदे फ़ज़ीख़ः बनू नज़ीर यहूदियों का जब हुज़ूर (स.अ.व.) ने मुहासरा फ़रमाया, इसी जगह आप का ख़ेमा नसब हुआ था, और छः रोज़ तक आप (स.अ.व.) ने उस जगह नमाज़ अदा फ़रमाई। ये मस्जिद बुलंदी पर सियाह पत्थर की बुनियाद पर बशक्ले मुरब्बअ़ छत के मस्जिदे कुबा के मश्रिक़ी जानिब थी।

मस्जिदे बनी कुरैज़ाः यहूदे बनी कुरैज़ा के मुहासरा के वक़्त हुज़ूर (स.अ.व.) ने यहाँ क़याम फ़रमाया था और एक गोशा में नमाज़ पढ़ी थी।

मस्जिदे इब्राहीम (मारिया क़िब्तीया): मारिया क़िब्तीय इब्राहीम इब्न नबी करीम (स.अ.व.) की वालिदा माजिदा का एक छोटा सा बाग़ था। हज़रत इब्राहीम इब्ने रसूलुल्लाह यहीं पैदा हुए थे। हुज़ूर (स.अ.व.) इस बाग़ के एक हिस्सा

में नमाज़ अदा फ़रमाते थे, ये मस्जिद बनू कुरैज़ा की मस्जिद से शुमाल की तरफ़ वाक़ेअ़ है।

मस्जिदे बक़ीअ़ (मस्जिदे उबैय): ये मस्जिद जन्नतुलबक़ीअ़ के मुत्तसल है, इस जगह हज़रत उबैअ़ इब्न कअ़ब (रज़ि.) का मकान था। रसूलुल्लाह (स.अ.व.) अक्सर यहां तशरीफ़ लाते और नमाज़ पढ़ते।

मस्जिदे अबूज़र (मस्जिद तरीकुस्साफ़िला): ये मस्जिद सैयदुश्शुहदा हज़रत हमज़ा (रज़ि.) के मज़ारे मुक़द्दस को जो रास्ता गया है उस पर वाक़ेअ़ है। इस जगह हुज़ूर (स.अ.व.) ने दो रकअ़त नमाज़ अदा फ़रमाई है और उसी मक़ाम पर आप (स.अ.व.) को मुज़दह (ख़ुशख़बरी) दिया गया कि जो उम्मती आप (स.अ.व.) पर दुरूद भेजेगा उस पर अल्लाह तआ़ला दुरूद भेजेगा। इस मुज़दह पर आप ने बहुत ही तवील सज्दए शुक्र अदा फ़रमाया था।

(तफ़सील व मुकम्मल मालूमात देखिए मदीना मुनव्वरा की तारीख़ी मसाजिद अज़ डॉ मुहम्मद इलयास अब्दुलग़नी साहब)

❑❑❑

आदाबे मदीना तैयबा एक नज़र में

आदाबे मदीना तैयबा: ❑ रास्ते में कसरत के साथ दुरूद शरीफ़ पढ़ें, जब शहरे मदीना नज़र आए तो ज़्यादा इश्तियाक़ और बेक़रारी के साथ पढ़ें। ❑ मदीना तैयबा पहुंच कर अपना सामान इत्मीनान के साथ रखें, अगर हो सके तो गुस्ल कर के मस्जिदे नबवी में हाज़िर हों। ❑ मस्जिदे नबवी में दाख़िल होते हुए "بِسْمِ اللّٰه والصَّلوٰة والسَّلام علٰى رسول اللّٰه. اَللّٰهُمَّ افْتَحْ لِیْ اَبْوَابَ رَحْمَتِکَ" पढ़ कर पहले दहिना पैर रखें। जब भी मस्जिदे नबवी में दाख़िल हों एतेकाफ़ की नीयत करें। ❑ मस्जिदे नबवी में दाख़िल होने के बाद जगह मिल सके तो रौज़तुलजन्नत में दो रकअ़त तहीयतुलमस्जिद पढ़ें, वरना जहां जगह मिल जाए पढ़ लें, बशर्तेकि वक़्त मकरूह न हो। ❑ उसके बाद हुज़ूर (स.अ.व.) के रौज़ए अक़्दस पर हाज़िर हों और मुवाजहा शरीफ़ के सामने ज़रा सा बाईं तरफ़ मुड़ कर खड़े हो कर ये सलाम पढ़ें– "اَلسَّلامُ عَلیکَ یَا رَسُوْلَ اللّٰه، اَلسَّلامُ عَلیکَ یَا حَبِیبَ اللّٰهِ، السَّلامُ عَلیکَ یَا شَفِیعَ المُذْنِبِینَ، السَّلامُ علیکَ یَا خَاتَمَ النَّبِیِّیْنَ السَّلامُ علیکَ وعَلٰی آلِکَ و اصحابِکَ اجمعین، السَّلام علیکَ یَا اَیُّهَا النَّبِیُّ وَ رَحْمَةُ اللّٰهِ وَبَرکَاتُه" ❑ उसके बाद तक़रीबन एक हाथ हट कर दाहिनी जानिब हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि.) के चेहरए मुबारक के सामने हाज़िर हो

कर इस तरह सलाम करें– "اَلسَّلَامُ عَلَيْکَ يَا خَلِيفَةَ رَسُوْلِ اللّٰهِ اَبَابَکْرِ الصِّدِّيْقُ" ❑ उसके बाद फिर एक हाथ दाहिनी जानिब हट कर हज़रत उमर (रज़ि.) को इसी तरह सलाम करें– "اَلسَّلَامُ عَلَيْکَ يَا اَمِيرَ الْمُؤْمِنِينَ عمر الفاروقُ" ❑ जितने दिन क़याम मदीना तैयबा में रहे रोज़ाना इसी तरह हाज़िर हो कर सलाम करना चाहिए। ❑ क़यामे मदीना में दुरूद शरीफ़ की कसरत रहे दुरूद शरीफ़ मुख़्तसर ये है– "اَللّٰهُمَّ صَلِّ عَلٰى مُحَمَّدِ نِ النَّبِيِّ الْاُمِّيِّ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَسَلِّمْ تَسْلِيْمًا" सलात व सलाम की चिहल हदीस छपी हुई मिलती है उसको साथ रखें तो बेहतर है, उसको पढ़ा करें। ❑ मस्जिदे कुबा की ज़ियारत करें, हदीस शरीफ़ में है कि उसमें दो रकअ़त नफ़्ल का सवाब एक उम्रा के बराबर है। ❑ उहुद पहाड़ी की ज़ियारत करें, हदीस शरीफ़ में है कि हम को उससे मुहब्बत है और उसको हम से मुहब्बत है। ❑ उहुद पहाड़ के दामन में सत्तर जाँ निसार सहाबए किराम मदफ़ून हैं उनकी क़ब्रों की ज़ियारत करे और ईसाले सवाब करे। हुज़ूर (स.अ.व.) के चचा हज़रत हमज़ा (रज़ि.) भी उनमें दफ़्न हैं। ❑ जन्नतुलबक़ीअ़ की ज़ियारत करें वहाँ हुज़ूर (स.अ.व.) की अज़वाजे मुतह्हरात (रज़ि.), आप (स.अ.व.) की साहबज़ादियाँ (रज़ि.), आप (स.अ.अ.) के साहबज़ादे (रज़ि.), दूसरे अह्ले बैत (रज़ि.) बहुत से जलीलुलक़द्र सहाबए किराम (रज़ि.), बेशुमार अइम्मए इज़ाम (रह.) और शुहदा (रह.) मदफ़ून हैं। हज़रत उस्मान (रज़ि.) भी उसी क़ब्रस्तान में मदफ़ून हैं। ❑ मदीना तैयबा में आठ रोज़ क़याम रहे ताकि चालीस नमाज़ें पूरी हो जाऐं। हदीस शरीफ़ में है कि जो शख़्स मेरी मस्जिद में चालीस नमाज़ें अदा

करे और कोई नमाज़ उसकी फ़ौत न हो तो उसके लिए दोज़ख़ से बराअत लिखी जाएगी और अज़ाब और निफ़ाक़ से बराअत लिखी जाएगी। ❑ ज़ियारत के वक़्त रौज़ा की दीवारों को छूना या बोसा देना या लिपटना नाजाइज़ और बेअदबी है। ❑ रौज़ा की तरफ़ बिला ज़रूरते शदीदा पुश्त न करे, न नमाज़ में न ख़ारिजे नमाज़ में। ❑ जब कभी रौज़ए मुबारक के बराबर से गुज़रे हसबे मौक़ा थोड़ा बहुत ठहर कर सलाम पढ़े, अगरचे मस्जिद से बाहर ही हो। ❑ रौज़ा शरीफ़ की तरफ़ देखना सवाब है और अगर मस्जिद के बाहर हो तो कुब्बा को भी देखना सवाब है। ❑ जब मदीना तैयबा से वापसी हो तो मस्जिदे नबवी में दो रकअत नफ़्ल पढ़ कर रौज़ाए अक़्दस पर हाज़िर हो कर आख़िरी दुरूद व सलाम पढ़े और दुआ माँगे। ❑ जब अपना शहर क़रीब आए ये दुआ पढ़े– "آيِبُوْنَ تَائِبُوْنَ عَابِدُوْنَ لِرَبِّنَا حَامِدُوْنَ" ❑ अगर मकरूह वक़्त न हो तो अपनी बस्ती में पहुंच कर पहले दो रकअत नफ़्ल अपनी मस्जिद में पढ़ें उसके बाद घर आऐं। ❑ जब घर में दाख़िल हों तो ये दुआ पढ़ें– "اَوْبًا اَوْبًا لِرَبِّنَا تَوْبًا لَا يُغَادِرُ عَلَيْنَا حَوْبًا" (मसनून दुआऐं)। ❑ घर में पहुंच कर भी दो रकअत नफ़्ल पढ़ें और हक़ तआला का शुक्र अदा करें कि उसने सलामती और आफ़ियत के साथ सफ़र पूरा फ़रमाया और इस सआदते कुबरा, नेअमते उज़मा से मुशर्रफ़ फ़रमाया। ❑ जब हाजी लोग हज से वापस आऐं तो उनसे मुलाक़ात करो, सलाम व मुसाफ़हा करो और उनके घर पहुंचने से पहले अपने लिए दुआ कराओ। हाजी की दुआ क़बूल होती है। ❑ हाजी को रुख़सत करने या वापसी के वक़्त लेने के लिए औरतों

का साथ चलना, हंगामा और जश्न सा मनाना, औरतों से मुसाफ़हा करना, फ़ोटो ग्राफ़ी करना, विडियो रिकार्डिंग करना, फिर पुरतकल्लुफ़ दावतों का एहतेमाम करना ये सब बहुत बुरी हरकतें हैं। ❑ हज के मक़बूल होने की अलामत ये है कि हज के बाद आमाले सालिहा का एहतेमाम और पाबंदी ज़्यादा हो जाए, दुनिया से बेरग़बती और आख़िरत की तरफ़ रग़बत बढ़ जाए। इसलिए हज के बाद अपने आमाल व अख़्लाक़ का ख़ास तौर से ख़्याल रखना चाहिए और ताअत व इबादत में ख़ूब सअी करना चाहिए, मअसियत और अख़्लाक़े रज़ीला से नफ़रत और इज्तिनाब करना चाहिए और दीनी आमाल की तरफ़ ज़्यादा से ज़्यादा लगना चाहिए। बेहतर है कि दीनी माहौल में रहा करे, हो सके तो तबलीग़ी जमाअत में शरीक रहे। बुज़ुर्गों की ख़िदमत में हाज़िरी देता रहे, ताकि नेक सोहबत मुयस्सर हो, क्योंकि माहौल बहुत ख़राब है जो आदमी को जल्दी मुतअस्सिर कर देता है। अपनी हिफ़ाज़त मुश्किल हो जाती है। नीज़ उसके लिए दुआ भी करता रहे।

(ब्यान फ़रमूदा शैख़ मुफ़्ती महमूद हसन (रह.) मुफ़्तिये आज़म दारुलउलूम देवबंद, माहनामा अन्नूर 2002 ई0)

हाजियों का इस्तिक़बाल करना?

मस्अला: हाजियों का इस्तिक़बाल तो अच्छी बात है, उनसे मुलाक़ात और मुसाफ़हा व मुआनक़ा भी जाइज़ है और उनसे दुआ कराने का भी हुक्म है, लेकिन ये फूल और नारे वग़ैरा हुदूद से तजावुज़ है, अगर हाजी के दिल में उज्ब पैदा हो जाए, हज ज़ाए हो जाएगा। इसलिए इन चीज़ों से एहतिराज़ करना चाहिए।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–162)

मस्अला: हाजी के गले में हार वगैरा डालना ये सब तरीके ख़िलाफ़े सुन्नत और ग़लत और क़ाबिले तर्क हैं।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–202)

मस्अला: हज को जाने वाले को नारों के साथ रुख़सत करना ये एक नुमाईश है। (जोकि जाइज़ नहीं है)

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–10 सफ़्हा–82)

हज़रत अब्दुल्लाह (रज़ि.) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने फ़रमाया जब तुम हाजी से मिलो तो उसे सलाम करो और उससे मुसाफ़हा करो और उसके घर में जाने से पहले उससे अपने लिए दुआए मग़फ़िरत कराओ क्योंकि वह बख़्शा बख़्शाया आया है।

तशरीह: हज कर के वापस आने वाले के साथ वतन के लोगों को तीन काम करने चाहिएँ।

○ उसका इस्तिक़बाल करना, यानी कुछ फ़ासिला से लेने के लिए जाना।

○ सलाम व मुसाफ़हा के बाद उसको दुआ देना कि अल्लाह तआला तुम्हारा हज क़बूल फ़रमाए।

○ उससे अपने लिए दुआए मग़फ़िरत कराना।

उसकी एक उम्दा सूरत तो ये है कि स्टेशन पर या बस्ती में आ कर मस्जिद में (हाजी दो रकअत नफ़्ल पढ़ कर) सब दुआ करें, हाजी दुआ कराए और बाक़ी सब आमीन कहें, और ये भी मुनासिब है कि हर शख़्स के लिए मुलाक़ात के वक़्त अलाहिदा अलाहिदा मुख़्तसर और जामेअ़ अलफ़ाज़ में दुआ कर दी जाए।

(अत्तरग़ीब वत्तरहीब जिल्द–2 सफ़्हा–20 बहवाला

मुसनद अहमद जिल्द–7 सफ्हा–226 व मजमउज़्ज़वाइद जिल्द–4 सफ्हा–6)

अपने अज़ीज़ व अक़रबा को और दोस्त व अहबाब को खुशी के मौक़ा पर मुबारक बाद देने की आम हिदायत तो है ही ख़ास तौर से हुज़ूर (स.अ.व.) ने हज की मुबारक बाद भी दी है। आंहज़रत (स.अ.व.) ने हज़रत उरवा इब्न मुज़रीन ताई को हज की मुबारक बादी दी थी।

(मजमउज़्ज़वाइद जिल्द–3 सफ्हा–264)

"इसलिए हुज्जाजे किराम को उनके हज की मुबारक बाद भी दीजिएगा और उन्हें उनके हज के मक़बूल होने की दुआ भी दीजिए और इतना कहना भी काफ़ी है कि अल्लाह तआला आप का हज व उम्रा क़बूल फ़रमाए और अपने लिए दुआ की दरख़्वास्त करें, क्योंकि हाजी की दुआ क़बूल होती है।"

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

हाजियों की आमद पर दावत करना?

मस्अला: अगर रिश्तादार सिलहरहमी की नीयत से या कोई करीबी तअ़ल्लुक़ वाला इस मुबारक सफ़र की निस्बत पर हाजी के एज़ाज़ में सीधे सादे तरीक़ा पर पूरे इख़लास के साथ उसकी दावत करे या हदया पेश करे बशर्तेकि दोनों उसको ज़रूरी न समझते हों। देने वाला सिर्फ़ रज़ाए इलाही के लिए पेश करे, दिखावा, शोहरत और बड़ाई हरगिज़ मक़्सूद न हो और लेने वाले को भी पूरा इत्मीनान हो कि ये दिल से इख़लास के साथ हदया पेश कर रहा है या दावत कर रहा है, बदला चुकाने या

आइंदा वसूल करने का बिल्कुल शाइबा न हो तो ये फ़ीनफ़्सहि मुबाह और इंशाअल्लाह बाइसे अज्र है।

मगर आज कल इन चीज़ों पर जिस अंदाज़ से अमल हो रहा है वह उमूमन रस्म व रिवाज के तौर पर है इसलिए इस ज़माना में इन चीज़ों से एहतेराज़ ही ज़रूरत है और इन रस्म व रिवाज के बंद करने का ही हुक्म किया जाएगा।

आज कल उमूमन ऐसा होता है कि हज में जाने वाला अगर दावत न करे या लोग उसकी दावत न करें, तो जानिबैन में बुरा मानते हैं। और दावतों को इस क़दर ज़रूरी समझा गया है कि न करने पर शिकायतें होती हैं। ताने सुनाए जाते हैं और गाहे इन दावतों में फ़ज़ूल ख़र्ची होती है, ख़ूब धूम धाम होती है।

यही हाल हदाया और सौग़ात की लेन देन का भी है, इसको भी ज़रूरी समझ लिया गया है। यहां भी वही शिकायतें होती हैं और नीयत भी उमूमन सही नहीं होती, देने वाले उमूमन दिखावे, शोहरत और बड़ाई के ख़्याल से देते हैं, अगर नहीं देंगे तो लोग क्या कहेंगे, ख़ाली हाथ मुलाक़ात के लिए जाना मायूब और अपने लिए बाइसे ख़िफ़्फ़त समझते हैं, हदाया पेश करने में जो इख़लास, लिल्लाहियत और ख़ुश दिली होनी चाहिए वह उमूमन नहीं होती, सिर्फ़ लअ़न तअ़न के बचने या बदला चुकाने या आइंदा बदला वसूल करने के ख़्याल से होता है, और जो हदया इस ख़्याल से पेश किया जाए ऐसा हदया तो क़बूल करना भी जाइज़ नहीं, हदीस शरीफ़ में है– "किसी मुसलमान का माल उसकी दिल की ख़ुशी के बग़ैर हलाल

नहीं।" नीज़ हदीस शरीफ़ में है कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने मना फ़रमाया उन लोगों की दावत क़बूल करने से जो फख़्र के लिए खाना खिलाऐं।

हासिले कलाम ये है कि एक चीज़ जो मुबाह के दर्जा में थी उसे ज़रूरी समझ लिया गया है और लुज़ूम का दर्जा दे दिया गया है। और शरआी क़ाएदा ये है कि अगर मुबाह चीज़ को ज़रूरी समझ लिया जाए तो वह क़ाबिले तर्क है, और ख़ास कर अगर उसमें ग़ैर शरआी उमूर शामिल हो जाऐं तो उसका तर्क इंतिहाई ज़रूरी हो जाता है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–10 सफ़्हा–183 व इस्लाहुर्रुसूल–97)

हज से वापसी पर हाजी का दावत करना?

मस्अला: हज इस्लाम का अज़ीमुश्शान रुक्न है और बहुत बड़ी नेअ़मत है, उसकी अदाएगी पर अगर कोई शख़्स शुक्रिया के तौर पर ग़ुरबा व मसाकीन और अइज़्ज़ा व अहबाब को खाना खिलाए या कुछ हदया दे तो शरअ़न दुरुस्त है, लेकिन बाज़ जगह इसमें रिया (दिखावा) और फ़ख़्र की शान होती है गोया कि अपने हज का ऐलान होता है कि हज कर के आए हैं, और बाज़ जगह पर खाना लाज़िम और ज़रूरी तसव्वुर किया जाता है, यहां तक कि अगर अपने पास पैसा न हो तो क़र्ज़ ले कर खिलाया जाता है और बाज़ दफ़ा इसके लिए सूदी क़र्ज़ लिया जाता है। ऐसी सूरत में शरीअ़त की तरफ़ से इसकी इजाज़त नहीं, इससे परहेज़ किया जाए, इस तरह खिलाने से भी और ऐसा खाना खाने से भी।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–185)

हाजियों का तोहफ़े तहाइफ़ देना?

सवालः अक्सर लोग जब उम्रा या हज के लिए जाते हैं तो उनके अ़ज़ीज़ उन्हें तोहफ़ा में मिठाई, नक़द रुपये वग़ैरा देते हैं और जब ये लोग हज कर के वापस आते हैं तो तबर्रुक के नाम से एक रस्म अदा करते हैं जिसमें खजूरें, ज़मज़म, और उनके साथ दूसरी चीज़ें रस्मन बाँटते हैं, क्या ये रिवाज दुरुस्त है?

जवाबः अज़ीज़ व अक़ाबिर और दोस्त व अहबाब को तोहफ़ा तहाइफ़ देने का तो शरीअ़त में हुक्म है कि इससे मुहब्बत बढ़ती है। मगर दिली रग़बत व मुहब्बत के बग़ैर महज़ नाम के लिए या रस्म की लकीर पीटने के लिए कोई काम करना बुरी बात है। हाजियों को तोहफ़ा देना और उनसे तोहफ़े वसूल करना आज कल ऐसा रिवाज हो गया है कि महज़ नाम और शर्म की वजह से ये काम ख़्वाही व नख़्वाही किया जाता है। ये शरअ़न छोड़ने के लाइक़ है। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–161)

जो हज व उम्रा के बाद भी गुनाह से न बचे?

सवालः मेरे दोस्त ने जो कि तबूक में मुक़ीम हैं, हज व उम्रा कर के वापस आ कर वी, सी, आर पर उरयाँ फ़िल्में देखीं, उनके लिए क्या हुक्म है वह भी पछता रहे हैं?

जवाबः मालूम होता है कि उन्होंने सही मानों में हज व उम्रा नहीं किया, बस घूम फिर कर वापस आ गए हैं। हज के मक़्बूल होने की अ़लामत ये है कि हज के बाद आदमी की ज़िन्दगी में इंक़िलाब आ जाए और उसका रुख़ ख़ैर और नेकी की तरफ़ बदल जाए।

उन साहबान को अपने फ़ेल से तौबा करनी चाहिए।

फ़राइज़ की पाबंदी और मुहर्रमात से परहेज़ करना चाहिए, अगर सच्ची तौबा कर लेंगे तो अल्लाह तआला उनके कुसूर को मआफ़ फ़रमा देंगे। अल्लाह तआला हम सब को मआफ़ फ़रमाए। आमीन!

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–154)

हज के बाद आमाल में सुस्ती आई तो?

सवालः हज करने के बाद ज़्यादा इबादत में सुस्ती काहिली आ गई, हज से पहले दीनी कामों में दिल चस्पी लेता था, लेकिन अब उसके बाद बरअक्स हो गया है। आप से ये मालूम करना है कि हज करने में कोई फ़र्क़ तो नहीं हो गया, क्या दोबारा हज के लिए जाना होगा?

जवाबः अगर पहला हज सही हो गया तो दोबारा करना ज़रूरी नहीं है। हज के बाद आमाल में सुस्ती नहीं बल्कि चुस्ती होनी चाहिए।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–155)

मस्अलाः जो शख़्स हज से पहले भी गुनाहों में मुलव्वस था और हज के अन्दर भी बेपरवाई से काम लेता रहा और हज के बाद भी गुनाहों से परहेज़ न किया तो उसको उसका हज कोई फ़ाएदा न देगा, अगरचे उसने फ़राइजे हज को पूरा कर लिया।

(मआरिफ़ुल कुरआन जिल्द–1 सफ़्हा–438)

हज करने के बाद नाम के साथ "हाजी" लिखना?

मस्अलाः अपने नाम के साथ हज करने के बाद "हाजी" का लक़ब लगाना भी रियाकारी के सिवा कुछ नहीं है। हज तो रज़ाए इलाही के लिए क्या जाता है, लोगों से "हाजी" कहलाने के लिए नहीं, दूसरे लोग अगर "हाजी

साहब" कहें तो मुज़ाएक़ा नहीं लेकिन खुद अपने नाम के साथ "हाजी" का लफ़्ज़ लिखना बिल्कुल ग़लत है।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–161)

मस्अला: जो शख़्स हज्जे बदल कर के वापस आए वह "हाजी" कहलाएगा, अपने हज किए बग़ैर ही वह "हाजी" कलाएगा। (आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–76)

मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह.) देहात में नमाज़ के वक़्त मस्जिद पहुंचे, मौलाना मरहूम ने मस्जिद में नमाज़ियों से मालूम किया तुम्हारा क्या नाम है?

जवाब दिया हाजी इब्राहीम, मौलाना ने दूसरे शख़्स से मालूम किया तो बताया हाजी याकूब कई से मालूम किया तो हर एक ने आप अपने नाम के साथ लफ़्ज़ "हाजी" लगा कर ही नाम बताया।

बाद में उन लोगों ने मौलाना से मालूम किया अजी! थारा (तुम्हारा) क्या नाम है?

(मौलाना, हकीमुलउम्मत ही कहलाते थे और वाक़ई अल्लाह तआ़ला ने आपको उम्मत का नब्बाज़ बनाया था) फ़रमाया मेरा नाम अशरफ़ अली नमाज़ी है।

गाँव वाले ये सुन कर चौंके और बोले अजी! नमाजी (नमाज़ी) क्या होता है?

मौलाना ने फ़रमाया कि बताओ कि तुम ने कितने हज किए, अक्सर ने एक ही बताया, इस पर मौलाना ने फ़रमाया कि जब तुम एक हज करने के बाद अपने नाम के साथ "हाजी" का लफ़्ज़ लगाते हो, मैं तो दिन में पाँच वक़्त की नमाज़ पढ़ता हूं, मैं क्यों न अपने नाम के साथ नमाज़ी लगाऊँ।

इस बात पर गाँव वाले शरमिंदा हुए। और मौलाना थानवी (रह.) ने इस तरीक़े से उनकी इस्लाह फ़रमाई।

गरज़ ये कि हज करने के बाद नाम के साथ अज़ खुद ही लफ़्ज़ "हाजी" इस्तेमाल करना सही नहीं है, अगर कोई दूसरा एहतेरामन हाजी साहब कह दे तो कोई मुज़ाएक़ा भी नहीं।

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

मीज़ाने हज

तराज़ू के ज़रीआ आप हर चीज़ का सही तौर पर वज़न मालूम कर लेते हैं। हाथ में अगर तराज़ू है तो आँखें काँटे पर लगी रहती हैं कि मिक़्दार और वज़न का यक़ीनी इल्म और अंदाज़ा हो जाए, सफ़रे हज भी हक़ीक़ते हाल की तराज़ू है, जिसमें नीयत व जज़्बात का अस्ल वज़न मालूम होता है।

माशा अल्लाह आप "हाजी" हो गए (अल्लाह तआला कबूल फ़रमाए) हज के ज़रीआ आप ने इस्लाम का पाँचवाँ अहम रुक्न अदा कर के अपने दीन की तक्मील की है, इसी लिए कहा गया है कि– "हजजे मबरूर व मक़बूल के बाद एक नई ज़िन्दगी हासिल होती है, गुज़रे हुए ज़माना की कमज़ोरियों का जाइज़ा लीजिए और आज से नई ज़िन्दगी के लिए कोई ऐसी नई राह इख़्तियार कीजिए जिससे मालूम हो कि आप में नुमायाँ तौर पर तब्दीली पैदा हुई और दीनी, अख़्लाक़ी, मआशरती, एतेबार से आप के ख़्यालात, रुजहानात और इरादों की दुनिया बदल गई।

हज कोई रस्म या शोहरत या दिखावे की चीज़ नहीं "हाजी" बनने के लिए इस ज़हमते सफ़र, इस ज़ेर बारी के नतीजा में आप ने क्या कमाया, क्या हासिल किया, रोज़मर्रा के इज्तिमाअी माहौल में क्या ख़ैर व इस्लाह की शक्लें पैदा हुईं, मनासिके हज की अदाएगी, मक्का मुअज़्ज़मा व मदीना मुनव्वरा की बारयाबी व शर्फ़े ज़ियारत, कफ़न बरदोश मैदाने अरफ़ात व शबे मिना व मुज़दलिफ़ा की दुआओं और आह व ज़ारी के साथ साथ उन तमाम माराहिले हिदायत व इरशाद से गुज़र कर इस नमूनए सफ़र आख़िरत को पूरा कर के आप खुद "मीज़ान" (तराज़ू, काँटा) बन गए, अपने आप को तौलते रहिये, अपना वज़न खुद मालूम करते रहिये और तराजू के काँटे पर हर वक़्त निगाह रखिये।

क्योंकि हज हक़ीक़ते हाल की एक कसौटी भी है, कि किस ने खुदा की इस तौफ़ीक़ से वाक़ई फ़ाएदा उठाया है और कौन मौक़ा पाने के बावजूद महरूम रह गया।

हज के बाद की ज़िन्दगी और सरगर्मियाँ वाज़ेह कर देती हैं कि किसका हज वाक़ई हज है और कौन सारे अरकान अदा करने और बैतुल्लाह की ज़ियारत करने के बावजूद महरूम रह गया।

हज की तौफ़ीक़ अल्लाह तआला की तरफ़ से इस बात की तौफ़ीक़ है, कि इस्लाम हाल की तमाम मुस्तनद कोशिश के बावजूद बंदे की ज़िन्दगी में जो भी खोट और नक़्स व कमी रह जाए वह अरकाने हज और मक़ामाते हज की बरकत से दूर हो जाए और वहां से ऐसा पाक व साफ़ हो कर लौटे कि गोया उसने आज ही जन्म लिया है।

नीज़ ये भी याद रखने की बात है, कि हज अदा करने के बाद शैतान उमूमन इंसान के दिल में अपनी बड़ाई व बुजुर्गी का ख़्याल डालता है जो उसके तमाम आमाल को बेकार कर देने वाला है।

जिस तरह हज से पहले और हज के अन्दर अल्लाह तआला से डरना और उसकी इताअ़त लाज़िम है, उसी तरह हज के बाद उससे ज़्यादा डरना और गुनाहों से परहेज़ का एहतेमाम लाज़िम है कि कहीं ये करी कराई इबादत ज़ाए न हो जाए।

अब आप ख़ुद ग़ौर कीजिए और अपने अन्दरूनी हालात का जाइज़ा लीजिए कि हज के बाद वाली नई ज़िन्दगी में आप ने क्या कमाया और क्या खोया। जज़्बाते ख़ैर व इस्लाह, ख़ुलूस और मुहब्बत में इज़ाफ़ा हुआ या कमी हुई? नफ़ा व नुक़सान का आप ख़ुद हिसाब कीजिए, क्योंकि आप हज के बाद ख़ुद "मीज़ान" (तराज़ू) बन गए हैं।

"اَللّٰهُمَّ وَفِّقنَا لِمَا تُحِبُّ وَتَرْضٰى من القولِ والفعل والعمل والنيّة"

तालिबे दुआ:

मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी

ख़ादिमुत्तदरीस दारुलउलूम देवबंद

24 रमज़ानुलमुबारक 1425, 8 नवम्बर 2004 ई0

चंद लोगों से हज्जे बदल की रक़म ले कर हज्जे बदल करना करवाना?

(हवाला नम्बर 1064)

क्या फ़रमाते हैं उलमाए दीन व मुफ़्तियाने शरअ़े मतीन मस्अला ज़ैल के बारे में कि—

एक शख़्स हिन्दुस्तान से हज्जे बदल कराने के लिए मुख़्तलिफ़ लोगों से रक़म ले कर कुछ लोगों के ज़रीआ मक्का या उसके आस पास से हज्जे बदल करा देता है, ऐसी सूरत में हज्जे बदल दुरुस्त हो जाता है या नहीं? और उस शख़्स का ये कारोबार जाइज़ है या नहीं?

फ़क़त:

मुहम्मद शाह: इमाम मस्जिद शाकिर ख़ाँ, बुलंद शहर

باسمه سبحانه و تعالى

الجواب وبالله العصمة والتوفيق، حامدا و مصليا ومسلما

हिन्दुस्तान (वतने आमिर) से हज्जे बदल कराने की ख़ातिर लोगों से रक़म वसूल करना और मक्कतुलमुकर्रमा या उसके आस पास से हज्जे बदल करा देना जाइज़ नहीं, इस तरह हज कराने से हज्जे बदल अदा नहीं होता और जिन लोगों से रक़में ली हैं उनको पूरी पूरी रुक़ूम वापस करना वाजिब है। फ़तावा शामी में है—

"(قوله وَحَجُّ المامور بنفسه) فليس له احجاج غيره عن الميت و ان

مرض مالم یأذن له بذالک......... الثانی عشر (من شرائط صحة الحج عن الغیر) ان یحرم من المیقات فلو اعتمر و قد امره بالحج ثم حجّ من مکة لا یجوز ویضمن اھ ج ۲/ص ۲۳۹) (باب الحج عن الغیر)

शख़्से मज़कूर फ़िस्सवाल का ये कारोबार और धंदा झूट फ़रेब और दीगर हराम उमूर का मजमूआ, नीज़ इस्लाम के रुक्ने आज़म (हज) में ख़लल व बिगाड़ का मूजिब है पस इसका हराम होना ज़ाहिर है।

हज्जे बदल कराने वालों को भी बहुत एहतियात की ज़रूरत है उनको चाहिए कि ख़ूब देख भाल कर ऐसे शख़्स को तजवीज़ करें कि जो आलिम हो (और उस एक शख़्स की तरफ़ से ख़ुद ही हज्जे बदल करे) और बेहतर है कि अपना हज्जे फ़र्ज़ अदा कर चुका हो, लाइक़े एतेमाद हो, अदाए मनासिक पर अच्छी तरह क़ादिर हो, हज्जे बदल करवाने के उनवान पर लोगों से रक़में न ऐंठता फिरता हो। फ़क़त

"واللہ سبحانه تعالیٰ اعلم"

हर्ररहू अहक़र महमूद हसन ग़ुफ़िरलहू बुलंद शहरी
दारुलउलूम देवबंद
यौमुलजुमुआ 1426 हिजरी

ooo

हज से मुतअल्लिक़ अहम सवाल व जवाब

सवाल: अगर कोई शख़्स उम्रा करने के इरादा से मक्कतुलमुकर्रमा पहुंचा, और तवाफ़े कअ़बतुल्लाह के बाद सअ़ी से पहले सर मुंडा कर हलाल हो गया, तो उस शख़्स पर कितने दम वाजिब होंगे?

जवाब: अगर मोहरिम बिलउम्रा सअ़ी किए बग़ैर सर मूंडा कर हलाल हो जाए तो उस पर दो दम वाजिब होंगे, एक तरतीब के साकित होने की वजह से जो वाजिब है और दूसरा सअ़ी को तर्क करने की वजह से जो वाजिब है। (मुस्तफ़ाद ज़ुब्दतुलमनासिक सफ़्हा—373)

सवाल: एक शख़्स ने तवाफ़े इफ़ाज़ा मस्जिदे हराम की छत पर किया, और भीड़ की शिद्दत की वजह से सअ़ी गाह की छत पर से गुज़रने पर मजबूर हो गया, जब कि उसे ये मालूम है कि सअ़ी गाह मस्जिदे हराम से ख़ारिज है, तो क्या उसका तवाफ़ सही हो गया, अगर नहीं हुआ तो उस पर क्या वाजिब है? ख़ास तौर पर सूरतेहाल ये है कि वह अपने मुल्क वापस आ गया है और उसके पास इतनी उसअ़त नहीं है कि दोबारा जा कर हज कर सके?

जवाब: मज़कूरा शख़्स ने तवाफ़ मस्जिद से बाहर किया है। लिहाज़ा उसका तवाफ़ नहीं हुआ, क्योंकि तवाफ़

का मस्जिद के अन्दर होना ज़रूरी है। जिस क़दर मुमकिन हो तवाफ़ का इआदा लाज़िम है, और अगर ज़िन्दगी में इसकी इस्तित्ताअत न हो सकी तो मौत से पहले बुदना (ऊँट) की कुर्बानी की वसीयत उस पर वाजिब होगी। लेकिन अगर उसने बारहवीं तारीख़ के गुरूबे आफ़ताब से पहले तवाफ़े नफ़्ल कर लिया तो उसकी वजह से दमे वाजिब साक़ित हो जाएगा। और अगर बारह तारीख़ के बाद ज़िब्ह करता है तो ताख़ीर की वजह से दम लाज़िम होगा। (ज़ग्ब्दतुलमनासिक सफ़्हा–203)

सवालः किसी शख़्स ने कुर्बानी के ज़िम्मादार बैंक को हज्जे तमत्तोअ़ की हदी (कुर्बानी) का वकील बनाया, फिर उसे मालूम हुआ कि रमी, हदी (कुर्बानी) हल्क में तरतीब ज़रूरी है, जब कि बैंक में इसका ख़्याल नहीं रखा जाता, चुनांचे उसने दूसरी बकरी हदी के लिए ख़रीदी, और जिस बकरी का बैंक को वकील बनाया था, उसको अपने ज़िम्मा वाजिब दमे जब्र की तरफ़ से कुर्बानी करने की नीयत करता है। तो क्या सिर्फ़ नीयत बदल लेना उसके लिए काफ़ी होगा या बैंक को इस तब्दीलिये नीयत की इत्तिला ज़रूरी है। जबकि ये दुश्वार मरअला है तो क्या अगर बैंक दमे शुक्र की नीयत से जानवर को ज़िब्ह कर दे, जबकि यह शख़्स उस जानवर को दमे जब्र की तरफ़ से कुर्बानी करना चाहता है, तो उस पर वाजिब दमे जब्र साक़ित होगा या नहीं?

जवाबः जी हाँ! नीयत बदलना काफ़ी हो जाएगा इसलिए कि कुर्बानी के सिलसिला में मालदार अपने ग़ैर को क़ाइम मक़ाम कर सकता है और इस तब्दीली की

इत्तिला वकील को देनी ज़रूरी नहीं और यहाँ मुअक्किल की नीयत का एतेबार होता है न कि वकील की नीयत का, लेकिन बैंक उसकी कुर्बानी को दमे शुक्र की जानिब से ज़िब्ह करता है, लेकिन जब मुअक्किल ने दमे जब्र की नीयत कर ली तो मुअक्किल की नीयत का एतेबार होगा, वकील यानी बैंक की नीयत का एतेबार नहीं होगा।

(अलअशबाह सफ़्हा–4 व गुनयतुलमनासिक सफ़्हा–194)

सवालः अगर बाप ने अपने छोटे बेटे को अपने साथ उठाते हुए तवाफ़ किया और उस बेटे की तरफ़ से भी उसने तवाफ़ की नीयत कर ली, तो क्या बाप पर उस बेटे की तरफ़ से तवाफ़ की दो रक्अत नमाज़ पढ़ना होगी या नहीं?

जवाबः सूरते मस्ऊला में बाप पर अपने छोटे बेटे की जानिब से तवाफ़ की दो रक्अत लाज़िम नहीं होगी।

(गुनयतुलमनासिक सफ़्हा–73)

सवालः नाबालिग़ बच्चा ने अपने वालिद के साथ हज्जे तमत्तोअ़ किया, जबकि उसके पास हदी की क़ीमत नहीं तो क्या वालिद अपने बेटे की तरफ़ से तमत्तोअ़ की हदी अपने ऊपर लाज़िम कर सकता है या नहीं? क्योंकि वही उसकी किफ़ालत करता है। और अगर बाप अपनी वुसअ़त के बावजूद हदी न दे तो क्या वह गुनहगार होगा, और क्या उस मुमैयज़ बच्चा पर बालिग़ व इस्तिताअ़त के बाद कुछ वाजिब होगा या सग़ीर पर तमत्तोअ़ में न रोज़ा है न हदी?

जवाबः बच्चा जब तक बालिग़ न हो उस वक़्त तक वह किसी शरअ़ी हुक्म का मुकल्लफ़ नहीं, लिहाज़ा उस

पर हज भी फ़र्ज़ नहीं, अगर वह हज करता है तो नफ़्ली हज होगा। और अगर किसी महज़ूर का इरतिकाब करता है तो उस पर कुछ वाजिब नहीं और बाप को बेटे की जानिब से देना भी ज़रूरी नहीं, लिहाज़ा सवाले मज़कूर में तमत्तोअ़ की वजह से हदी (कुर्बानी) भी वाजिब नहीं, और बाप को बेटे की जानिब से देना भी ज़रूरी नहीं और न देने की वजह से गुनहगार भी न होगा। इसी तरह नाबालिग़ बच्चा पर रोज़ा भी वाजिब नहीं, लिहाज़ा बालिग़ होने के बाद क़ज़ा भी वाजिब नहीं।

(शामी जिल्द–3 सफ़्हा–466)

सवालः ज़ैद ने उम्रा के बाद पूरे सर के बालों को छाँटा (जैसा कि आज कल कैंची से कटाने का रिवाज है) लेकिन उंगली के पोरवे से (यानी एक इंच से भी कम) छोड़े फिर वह अपने मुल्क वापस आ गया, और कई साल इसी हालत में गुज़र गए तो उसके बावजूद उसका हलाल होना दुरुस्त है या वह मोहरिम ही रहेगा, और इतनी मुद्दत ममनूआत के इरतिकाब की वजह से उस पर दम वाजिब होगा या नहीं, और उस वक़्त उस पर क्या वाजिब है। क्या उन छोड़े हुए बालों को कटवाए बग़ैर हलाल न होगा, और उस शर्त पर क्या दलील है?

जवाबः अगर कोई शख़्स हल्क़ की बजाए तक़्सीर किराये तो हत्मी तौर पर उंगली के पोरवे के बक़द्र और एहतियातन उससे ज़्यादा कटवाना ज़रूरी है पोरवे से कम तादाद कटवाने से हलाल नहीं होगा, लिहाज़ा अगर उसी तरह वतन लौट आया और ममनूआते एहराम करता रहा तो उस पर दम लाज़िम होते रहेंगे।

(ईज़ाहुलमनासिक सफ़्हा–180)

सवालः ख़ालिद ने हज्जे फ़र्ज़ अदा किया, लेकिन उसने हज की सई नहीं की, और वह हलाल होने और तवाफ़ करने के बाद घर वापस आ गया, फिर अगले साल उसने नफ़्ली हज किया, और तमाम अरकान मुकम्मल किए, जब कि उस ने साले गुज़श्ता किए हुए हज की बाक़ी मांदा सई का तदारुक नहीं किया, तो अब उस पर क्या वाजिब होगा, क्या बाक़ी मांदा सई पूरी करने के साथ दमे जब्र भी लाज़िम होगा या सिर्फ़ सई की क़ज़ा काफ़ी है दम लाज़िम नहीं है?

जवाबः अगर कोई शख़्स हज के तमाम अरकान अदा कर ले और मुकम्मल सई या अक्सर सई को छोड़ दे तो ऐसी सूरत में उस पर दम वाजिब है, फिर अगर वह शख़्स घर आ गया और दोबारा आइंदा साल हज के लिए जाए तो उस पर उस सई की क़ज़ा लाज़िम नहीं बल्कि दमे जब्र काफ़ी है।

अलबत्ता अगर किसी उज़्रे शदीद की वजह से सई न कर सका तो उस पर कुछ भी वाजिब नहीं।

सवालः अगर आफ़ाक़ी तिजारत या अपने रिश्तादार से मिलने के लिए हिल्ल मसलन जद्दा जाना चाहे, लेकिन जिस रास्ता से वह सफ़र करेगा वह रास्ता दाख़िले हरम से हो कर निकलता है। लिहाज़ा ये शख़्स हरम का क़स्द किए बग़ैर दाख़िले मक्कतुलमुकर्रमा से गुज़रने पर मजबूर है, बल्कि मुसाफ़िर की तरह है, तो क्या उस शख़्स पर एहराम लाज़िम होगा, और अगर बग़ैर एहराम के गुज़र गया, तो उस पर दम लाज़िम होगा या नहीं, यहाँ कुछ

उलमा अदमे लुज़ूमे दम के क़ाइल हैं, क्योंकि दम तो उस पर लाज़िम होगा जो मक्कतुलमुकर्रमा का क़स्द करे न कि उसके अलावा का, तो क्या ये क़ौल दुरुस्त है?

जवाबः सूरते मज़कूरा में शख़्से मज़कूर पर एहराम बाँध कर मुरूरे (गुज़रना) हरम लाज़िम है, हज या उम्रा के एहराम के बग़ैर गुज़रने पर दम लाज़िम होगा, क़ाइल का क़ौल इस सूरत के मुवाफ़िक़ न होने की वजह से दुरुस्त नहीं है। (गुनयतुलमनासिक सफ़्हा-27)

सवालः ज़ैद ने हज्जे किरान की नीयत की, मगर तवाफ़े उम्रा कर लेने के बाद सअ़ी करना भूल गया और उसी एहराम के साथ हज के लिए रवाना हो गया, फिर वक़ूफ़ अरफ़ा कर लेने के बाद याद आया कि सअ़ीये उम्रा नहीं की, तो अब उस पर क्या लाज़िम है, क्या हरम जा कर सअ़ी कर सकता है और ये सअ़ी सअ़ीये उम्रा की किफ़ायत कर सकेगी या फ़िदया देना ज़रूर है।

जवाबः जी हाँ! ज़ैद के लिए हरम जा कर वक़ूफ़े अरफ़ा के बाद सअ़ी कर लेना जाइज़ है और ये सअ़ी सअ़ीये उम्रा की किफ़ायत कर सकेगी और उस पर कोई कफ़्फ़ारा लाज़िम नहीं, मगर ताख़ीर की वजह से कराहत ज़रूर आएगी। (गुनयतुलमनासिक सफ़्हा-109)

ooo

मआख़िज़ व मराजेअ़ किताब

मआरिफ़ुलक़ुरआन	मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ीअ़ (रह.) मुफ़्तिये आज़म पाकिस्तान
मआरिफ़ुलहदीस	मौलाना मुहम्मद मंज़ूर (रह.) नोमानी साहब
फ़तावा दारुलउलूम	मुफ़्ती अज़ीज़ुर्रहमान साबिक़ मुफ़्ती दारुलउलूम देवबंद
फ़तावा रहीमिया	मुफ़्ती अब्दुर्रहीम लाजपूरी (रह.)
फ़तावा महमूदिया	मुफ़्ती महमूद साहब (रह.) साबिक़ मुफ़्ती दारुलउलूम देवबंद
इमदादुलफ़तावा	मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह.)
इमदादुलअहकाम	मौलाना ज़फ़र उस्मानी व मुफ़्ती अब्दुलकरीम (रह.)
फ़तावा रशीदिया	मौलाना मुफ़्ती रशीद अहमद (रह.) गंगोही
अहसनुलफ़तावा	मौलाना मुफ़्ती रशीद अहमद साहब
जवाहिरुलफ़िक़्ह	मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ीअ़ (रह.) मुफ़्तिये आज़म पाकिस्तान
अहकामे हज	मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ीअ़ (रह.) मुफ़्तिये आज़म पाकिस्तान
रफ़ीक़ुलहुज्जाज	मौलाना मुफ़्ती महमूद हसन पाकिस्तान
हज्जे बैतुल्लाह के अहम फ़तावा	शैख़ अब्दुलअ़ज़ीज़ इब्न अब्दुल्लाह
मीम नामा हज	दारुलउलूम हरम
इल्मुलफ़िक़्ह	मौलाना अब्दुश्शकूर साहब
मुअ़ल्लिमुलहुज्जाज	मौलाना क़ारी सईद अहमद (रह.)
किताबुलफ़िक़्ह अ़लल़मज़ाहिबिलअरबआ़	अल्लामा अब्दुर्रहीम अल जज़री

दुर्रेमुख़्तार	अल्लामा इब्न आबिदीन (रह.)
अत्तरग़ीब व अत्तहज़ीब	अलइमामुलहाफ़िज़ ज़कीयुद्दीन अल मुंज़िरी
फ़तावा आलमगीरी उर्दू	हज़रात उलमाए औरंगज़ेब (रह.)
मज़ाहिरे हक़ जदीद	अल्लामा नवाब कुतुबुद्दीन ख़ाँ देहलवी (रह.)
आपके मसाइल और उनका हल	मौलाना मुहम्मद यूसुफ़ लुधियानवी (रह.)
रहमतुल्लाहिलविसिआ	मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद सईद साहब पालनपुरी
अलजवाबुलमतीन	मौलाना असग़र हुसैन (रह.) मुहद्दिसे दारुलउलूम
तारीख़ मक्कतुलमुर्रमा	डॉ० मुहम्मद इलयास अब्दुलग़नी साहब
मदीना मुनव्वरा की अहम तारीख़ी मसाजिद	डॉ० मुहम्मद इलयास अब्दुलग़नी साहब

कोशिशें कीं। झूट, दग़ा, फरेब, साजिश, धोखा सारे हथियार जमा किए परन्तु जब एक मुसलमान के दिल में जिहाद का जोश पैदा होता है तो ईमान की ताक़त के सामने ये सारे असत्य हथियार नाकाम हो जाते हैं।

फतह मिस्र

हज़रत अम्र बिन अल आस के मुजाहिदाना कारनामों पर आधारित एक ऐसा नाविल जिसमें हक़ व बातिल की कशमकश में मिस्र के बादशाह अरसतलीस की हुकूमत का ख़ात्मा बड़े ही चमत्कारी तौर पर होता है। इस्लामी सरफ़रोशों की बहादुरी की अनोखी दास्तान............।

सुलतान फ़ीरोज़ शाह तुग़लक़

इस्लाम को मिटाने के लिए इस्लाम के दुश्मनों ने नए नए तरीक़े अपनाए। झूठे नबी हुए और झूटे मेहदी होने के दावे किए सुलतान फ़ीरोज़ शाह तुग़लक़ के कार्य काल में ऐसे ही एक इस्लाम दुश्मन ने इमाम मेहदी होने का दावा कर के इस्लाम में फूट डालने का प्रयास किया। सुलतान ने किस प्रकार इस फ़ितने को दबाया......? यह इस नाविल में पढ़िए............।

अरबी दोशीज़ा

इस्लाम से पहले अरब में औरत की कोई हैसियत न थी। इस्लाम ने औरत को न केवल इज़्ज़त दी बल्कि उसने उसे बहादुरी व स्वाभिमान भी दिया। जब समय आया तो अरब महिला ही ने इस्लाम को बचाने के लिए अपना किरदार निभाया। ऐसी ही एक अरब दोशीज़ा के कमालात व ईमानी भावना की जीती जागती कहानी इस नाविल में है............।

ईरान की हसीना

ईरानी हुकूमत और अरब के शेरों के टकराव की एक लम्बी दास्तान हज़रत उमर रज़ि. के भेजे हुए लश्कर के मुजाहिदों के जंगी कारनामे जिन्होंने न केवल ईरानी हुकूमत को हराया बल्कि ईरानी हसीना के दिल को भी इस्लाम की रोशनी से मुनव्वर कर दिया............।

❑❑❑